शिक्षण-प्रशिक्षण-कला

('फ़न्ने-तालीम व तरबियत' का अनुवाद)

(भाग-1)

अफ़ज़ल हुसैन

(एम. ए., एल. टी.)

विषय-सूची

● भूमिका	13
● अनुवादक की ओर से	16
अध्याय-1 : शिक्षण-प्रशिक्षण	19
असफलता के कारण	21
लापरवाही के दुष्परिणाम	24
अध्याय-2 : शिक्षा का अर्थ	28
विचारधाराओं की भिन्नता	29
लक्ष्यों एवं आदर्शों में अन्तर	29
वातावरण में अन्तर	30
परिस्थितियों और आवश्यकताओं में अन्तर	30
व्यक्तित्व की पेचीदगी	30
शिक्षा-सम्बन्धी योजनाओं में अन्तर	30
शिक्षण-विधि में अन्तर	30
शिक्षा का अर्थ	31
शिक्षा का सीमित और व्यापक अर्थ	31
अध्याय-3 : शिक्षण-प्रशिक्षण को प्रभावित करनेवाले कारक	33
घर-परिवार	33
घर-परिवार के कर्तव्य	34
स्कूल/मदरसा	36
स्कूल/मदरसे की ज़िम्मेदारियाँ	36
निकटतम परिवेश	38
समाज	38
समाज की ज़िम्मेदारियाँ	39
सरकारी तंत्र और उनके कर्तव्य	40
अध्याय-4 : शिक्षा का उद्देश्य	42
शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य	44
अध्याय-5 : विभिन्न शिक्षा-सिद्धान्त	48
साम्यवादी शिक्षा-सिद्धान्त	48
शिक्षा का उद्देश्य	49
साम्यवादी शिक्षा-सिद्धान्त की विशेषताएँ	50
साम्यवादी शिक्षा-सिद्धान्त के गुण और दोष	52
प्रजातांत्रिक शिक्षा-प्रणाली	54
शिक्षा का उद्देश्य	56
प्रजातांत्रिक शिक्षा-सिद्धान्त की विशेषताएँ	56
समालोचना	59
इस्लामी शिक्षा-सिद्धान्त	60
इस्लामी व्यवस्था का मूल आधार	60
इस्लामी शिक्षा का उद्देश्य	63

इस्लामी शिक्षा-सिद्धान्त की विशेषताएँ	62	अध्याय-9 : मूल प्रवृत्तियाँ और संवेग	107
अध्याय-6 : शिक्षण-प्रशिक्षण-कला (क़ुरआन व हदीस की रौशनी में)	73	मूल प्रवृत्तियों की विशेषताएँ	108
शिक्षक का व्यक्तित्व और गुण	74	मूल प्रवृत्तियाँ और संवेग	111
शिक्षक की आवाज़	78	संवेग की विशेषताएँ	113
शिक्षक की भाषा	81	मूल प्रवृत्तियों और संवेगों का महत्त्व	116
शिक्षण-विधि	82	ध्यान देने योग्य बातें	117
वार्तालाप-विधि	84	अध्याय-10 : बाल-विकास के विभिन्न चरण	121
प्रश्नोत्तर-विधि	85	विभिन्न अवस्थाएँ	121
सूचनात्मक-वर्णनात्मक विधि	86	शैशवकाल	122
व्याख्यान-विधि	88	विशेषताएँ	122
व्याख्या और स्पष्टीकरण	88	बचपन	130
छात्रों के साथ व्यवहार	89	लड़कपन	136
अध्याय-7 : शिक्षा की आधुनिक प्रवृत्तियाँ	92	किशोरावस्था	143
अध्याय-8 : बच्चा और उसकी प्रकृति	97	अध्याय-11 : कुछ महत्त्वपूर्ण मूल प्रवृत्तियाँ	152
सहज क्रियाएँ	99	जिज्ञासा	152
सहज क्रियाओं की विशेषताएँ	99	संग्रह की प्रवृत्ति	155
मूल प्रवृत्तियाँ	99	रचनात्मक प्रवृत्ति	156
क्षमताएँ	100	आत्म-प्रदर्शन	159
सहज क्रियाएँ और शिक्षा-दीक्षा	100	विनम्रता की प्रवृत्ति	161
ऐसा क्यों होता है?	102	लड़ने-झगड़ने की प्रवृत्ति	162
ध्यान रखने योग्य बातें	104	अनुकरण	165
		दोहराने की प्रवृत्ति	168

खेल 170
बच्चे क्यों खेलते हैं? 171
खेलों के प्रकार 173
खेल, काम और बेगार 178
खेल-खेल में शिक्षा 180
खेल से लाभ 181
अध्याय-12 : बच्चों का व्यक्तित्व -निर्माण 184
मूल इच्छाएँ, उनका परिष्कार और प्रशिक्षण 185
इच्छाओं का परिष्कार और प्रशिक्षण 187
ध्याय-13 : माँ-बाप और प्रशिक्षण 193
ज़िम्मेदारियाँ 193
प्रशिक्षण 194
अध्याय-14 : शिक्षक और शिक्षण-प्रशिक्षण के सिद्धान्त 200
प्रशिक्षक का व्यवहार 201
शिक्षण-प्रशिक्षण की विधि 202
अध्याय-15 : आदतें और व्यवहार 205
आदतें क्या हैं? 205
आदतों से लाभ 207
शिक्षा-दीक्षा में आदतों का महत्त्व 208
अच्छी आदतें डलवाने का तरीक़ा 209
अच्छी आदतें और आचरण 211
बच्चे क्यों बिगड़ते हैं? 212
उपचार 216
बुरी आदतें और बुरे व्यवहार 218
छुड़वाने का तरीक़ा 218
अध्याय-16 : शिक्षण-संस्थाओं की कामयाबी की शर्तें 222
समर्पित स्टाफ़ 223
सुनिश्चित और सुस्पष्ट उद्देश्य 224
आम लोगों का सहयोग 224
अनुकूल भवन 226
ज़रूरी सामान 227
खेल का मैदान 227
कुशल प्रबन्धन 228
अध्याय-17 : शिक्षक के गुण 230
छात्रों की नज़र में शिक्षक को कैसा होना चाहिए? 230
अभिभावकों की नज़र में शिक्षक 232
ज़िम्मेदारों की नज़र में शिक्षक 233
जनता की नज़र में शिक्षक 234
शिक्षाविदों की नज़र में शिक्षक 234
अध्याय-18 : प्रधानाध्यापक और उसकी ज़िम्मेदारियाँ 236
प्रधानाध्यापक के गुण 236

कर्तव्य	237	उपयुक्त पोशाक	267
कुशल प्रबन्धन	237	सफ़ाई-सुथराई	268
देखभाल	239	गहरी नींद	270
शिक्षण-कार्य	243	प्रसन्नता और ख़ुशहाली	271
परीक्षा, जाँच, निरीक्षण और अवलोकन इत्यादि कार्य	243	अच्छा आचरण	272
सम्पर्क	244	बच्चों की तन्दुरुस्ती और स्कूल/मदरसा	272
अध्याय-19 : वर्ग-शिक्षक के कर्तव्य	**247**	मदरसे की ज़िम्मेदारियाँ	273
अध्याय-20 : विषय-शिक्षक के कर्तव्य	**252**	**अध्याय-22 : सीखना**	**277**
इस्लामी मदरसों के शिक्षकों की ज़िम्मेदारियाँ	255	ख़ुद करके सीखना	277
अध्याय-21 : शारीरिक प्रशिक्षण	**257**	प्रशिक्षण द्वारा सीखना	277
शारीरिक विकास के लिए ज़रूरी चीज़ें	257	निरीक्षण और अनुकरण द्वारा सीखना	278
सन्तुलित आहार	257	बुद्धि-विवेक द्वारा सीखना	278
साफ़ पानी	262	पूर्वानुभव के द्वारा सीखना	279
ताज़ा हवा	263	सीखने के नियम	279
हवा क्यों गन्दी हो जाती है?	264	तत्परता का नियम	279
हवा को साफ़ करने के प्राकृतिक साधन	264	परिणाम अथवा प्रभाव का नियम	280
रौशनी	265	अभ्यास का नियम	280
शारीरिक परिश्रम, व्यायाम और खेल	266	सीखने की गति	281
		सीखने में महारत	282
		बच्चों के सीखने की गति पर असर डालनेवाले कारक	284
		अध्याय-23 : ध्यान और अभिरुचि	**287**

ध्यान केन्द्रित करने की शर्तें	289
बाहरी शर्तें	289
आन्तरिक शर्तें	291
ध्यान के प्रकार	293
ध्यान और दिलचस्पी	295
अध्याय-24 : स्मृति	**300**
स्मृति के कारक	301
याद कराने की विधि और तरीक़े	306
स्मृति के प्रकार	309
ध्यान देने योग्य बातें	310
अध्याय-25 : शिक्षण (पढ़ाई-लिखाई)	**313**
सफल शिक्षण की विशेषताएँ	314
अध्याय-26 : शिक्षण-विधि : क़ुरआन मजीद की रौशनी में	**316**
छात्रों की अभिरुचि और तत्परता	316
शिक्षक के ज्ञान पर भरोसा	318
अल्लाह ही को ज्ञान का स्रोत मानना	318
कुछ बताने से पहले ख़ूब अच्छी तरह छात्रों का ध्यान आकर्षित करना	321
प्रस्तुतीकरण	324
स्पष्टीकरण और व्याख्या	325
प्रश्न	326
सारांश	327
पुनरावृत्ति और पुनराभ्यास	328
करने के काम देना	329
अध्याय-27 : शिक्षण-प्रशिक्षण के सामान्य नियम	**330**
तत्परता के नियम	330
चयन के नियम	331
व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध	332
ख़ुद करके सीखना	332
विभाजन के नियम	333
दोहराने के नियम	333
अध्याय-28 : शिक्षण-सूत्र	**335**
ज्ञात से अज्ञात की तरफ़ चलें	335
आसान से मुश्किल की तरफ़ चलें	336
सादा से पेचीदा की तरफ़ चलें	338
ठोस से अमूर्त की तरफ़ चलें	338
अनिश्चित और स्पष्ट संकल्पनाओं को सुनिश्चित और स्पष्ट करें	339
विशिष्ट से सामान्य की तरफ़ चलें	340
पूर्ण से अंश की तरफ़ चलें	341
प्रकृति का अनुसरण करें	341
तार्किक के बजाय मनोवैज्ञानिक क्रम से चलें	342
अपवादों से पहले सामान्य नियम	

सिखाएँ 343

अध्याय-29 : शिक्षण सहायक सामग्री और प्रयोग-विधि 344

प्रश्नोत्तर 344

प्रश्नों का महत्त्व और उपयोगिता 345

लक्ष्य और उद्‌देश्य 345

प्रश्न कैसे हों? 347

प्रश्न करने की विधि 349

छात्रों के उत्तर 351

व्याख्यान 353

महत्त्व और उपयोगिता 355

ध्यान देने योग्य बातें 356

कहानियाँ सुनाने का तरीक़ा 358

श्यामपट्ट 359

श्यामपट्ट का इस्तेमाल 359

व्याख्या और स्पष्टीकरण 362

मौखिक व्याख्याएँ 363

ध्यान देने योग्य बातें 364

चित्र, मॉडल, चार्ट इत्यादि 364

सहायक दृश्य सामग्री के प्रकार 365

मूल वस्तुएँ 365

मॉडल 366

चित्र, पोस्टर आदि 366

नक़्शे, चार्ट, ग्राफ़ इत्यादि 367

काम, प्रयोग और निरीक्षण 368

ध्यान देने योग्य बातें 368

शैक्षिक पर्यटन और पिकनिक 370

ध्यान देने योग्य बातें 371

अन्य सहायक सामग्री 372

गृह-कार्य (Homework) 373

महत्त्व और उपयोगिता 374

ध्यान देने योग्य बातें 376

लेखन-कार्य की जाँच और सुधार 378

पाठ्‌यपुस्तकें 379

उपयुक्त पुस्तकों का चयन 379

पाठ्‌यपुस्तकों का इस्तेमाल 381

लाइब्रेरी और वाचनालय 382

पाठ्‌यसामग्री का चयन 383

ध्यान देने योग्य बातें 384

परीक्षाएँ, जाँच और प्रगति 386

परीक्षाएँ 387

परीक्षाओं के दोष 387

परीक्षाओं को लाभदायक बनाने के उपाय 390

परीक्षाओं के बारे में दूसरी ज़रूरी बातें 392

पहली और दूसरी कक्षाओं के निर्धारित अंक 394

तीसरी और चौथी कक्षाओं के लिए निर्धारित अंक 395

पाँचवीं और छठी कक्षाओं के लिए निर्धारित अंक 396
सातवीं और उसके बाद की कक्षाएँ 397
परीक्षाफल 398
अंकपत्र 398
निरीक्षण, जाँच और प्रगति-पत्रक 401
शारीरिक दशा का निरीक्षण 401
व्यावहारिक, नैतिक और सामाजिक स्थिति का निरीक्षण 401
शैक्षिक स्थिति का निरीक्षण 402
अध्याय 30 : व्यक्तिगत और सामूहिक शिक्षा 404
वर्ग में बाँटकर शिक्षा देने के लाभ 405
हानियाँ 406
हानियों से बचने के उपाय 407
अध्याय-31 : विभिन्न विषयों के बीच आपसी सम्बन्ध 410
अनेक विषयों के बीच आपसी सम्बन्ध के विभिन्न रूप 412
विषयों के बीच आपसी सम्बन्ध 413
अध्याय-32 : शिक्षण-विधियाँ 414
निगमन शिक्षण-विधि 415
इस विधि के गुण 416
दोष 417
आगमन शिक्षण-विधि 418
दोष 419
गुण 419
तुलना 421
शोध-विधि 422
गुण 423
किंडर गार्टेन शिक्षण-विधि 425
निर्धारित पाठ्यक्रम और शिक्षण-विधि आदि 427
गुण 429
दोष 430
मॉण्टेसरी शिक्षण-विधि 431
बुनियादी शिद्धान्त 432
मॉण्टेसरी स्कूल भवन 433
शिक्षण-सामग्री और उपकरण 434
गुण 434
दोष 435
किंडर गार्टेन और मॉण्टेसरी शिक्षण-विधि में तुलना 436
समानताएँ 436
असमानताएँ 437
योजना-विधि 437

योजना-विधि को व्यावहारिक रूप कैसे दिया जाता है?	438	थकान	464
गुण	440	थकान के कारण	464
दोष	441	थकान की क़िस्में	465
डाल्टन प्लान	442	थकान के लक्षण	465
प्लान का परिचय	442	शारीरिक थकान के लक्षण	465
गुण	443	मानसिक थकान के लक्षण	466
दोष	445	जल्द थका देनेवाली परिस्थितियाँ	466
अध्याय-33 : वर्धा (बेसिक) स्कीम	**447**	थकान का इलाज	467
निर्धारित पाठ्यक्रम और समय-सारिणी	449	समय-सारिणी में थकान को ध्यान में रखना	468
पाठ्यक्रम के कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दु	449	समय-सारिणी	471
समय-सारिणी	450	ज़रूरत और फ़ायदे	471
बेसिक स्कीम में परिवर्तन	451	ध्यान देने योग्य बातें	472
विशेषताएँ	451	रजिस्टर और अन्य रिकॉर्ड	482
समालोचना	452	ज़रूरत और अहमियत	482
अध्याय-34 : विविध समस्याएँ	**455**	ध्यान देने योग्य बातें	482
हाज़िरी की समस्या	455	दाख़िल-ख़ारिज रजिस्टर	484
हाज़िरी का पाबन्द बनाने के उपाय	458	छात्र-हाज़िरी रजिस्टर	484
भगोड़े बच्चे	459	शिक्षक-हाज़िरी रजिस्टर	485
फिसड्डीपन	460	भुगतान रजिस्टर	485
फिसड्डीपन के कारण	461	आय-व्यय रजिस्टर	486
फिसड्डीपन का इलाज	462	स्टॉक रजिस्टर	486
		निरीक्षण रजिस्टर	487
		लाइब्रेरी रजिस्टर	487
		आदेश-निर्देश रजिस्टर	487
		पत्राचार रजिस्टर	487

पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ 488
कार्य-कलाप और गतिविधियाँ 489
महत्त्व और उपयोगिता 490
बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में घर और स्कूल का योगदान 492
अभिभावकों की मीटिंगें 493
मीटिंगों की अहमियत और उपयोगिता 495
शिक्षा-सप्ताह या वार्षिक समारोह 495
कार्यक्रम 496
ध्यान देने योग्य बातें 498
छात्रावास 499
छात्रावास में रहने के लाभ 499
ध्यान देने योग्य बातें 500
अध्याय-35 : पाठ और शिक्षण-विधियाँ 505
पाठ की तैयारी 505
तैयारी का महत्त्व 505
पाठ की तैयारी में ध्यान रखने योग्य बातें 506
पाठ-संकेत 507
पाठ की तैयारी के लिए अनिवार्य शर्तें 509
पाठों के प्रकार 509
ज्ञानपरक पाठों की शिक्षण-विधि 510
कला-कौशल-सम्बन्धी पाठ की शिक्षण-विधि 514
आलोचनात्मक या व्याख्यात्मक पाठ 516
पुनरावृत्ति या अभ्यासवाले पाठों को पढ़ाने की विधि 517
अध्याय-36 : विभिन्न विषयों की शिक्षण-विधि 519
इस्लामियात 519
शिक्षण-विधियों के बारे में निर्देश 520
मातृभाषा 524
बोलना सिखाने का तरीक़ा 525
पढ़ना सिखाने की विधि 526
लिखना सिखाने की विधि 527
रचना-कर्म की शिक्षण-विधि 527
पत्र-लेखन 528
गणित 529
ध्यान देने योग्य बातें 530
गिनती सिखाना 533
चार एकाकी नियम 533
भिन्नों की संकल्पना 534
भूगोल 535
शिक्षण-विधि 536
सामान्य विज्ञान 537

उद्देश्य 537
शिक्षण-विधि 538
अध्याय-37 : शिक्षण-प्रशिक्षण और इस्लामी शिक्षाशास्त्री 540
इमाम ग़ज़ाली (रह.) 541
अहनफ़-बिन-क़ैस का हज़रत अमीर मुआविया (रज़ि.) को सदुपदेश 544
इब्ने-ख़ल्दून (रह.) 544
मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह.) 545
अल्लामा इक़बाल 546
मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह.) 547
आदर्श शिक्षा-सिद्धान्त की विशेषताएँ 549

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त दयावान और कृपाशील है।'

भूमिका

बच्चों की समुचित शिक्षा-दीक्षा एक महत्त्वपूर्ण धार्मिक कर्तव्य है। इस कर्तव्य को पूरा करने का पूरा प्रयास होना चाहिए, वरना कड़ी पूछगछ की आशंका है। इस ज़िम्मेदारी में माँ-बाप और शिक्षकों के साथ यद्यपि पूरा समुदाय, समाज और सरकार भी शामिल हैं; परन्तु प्रत्यक्ष ज़िम्मेदारी माँ-बाप और शिक्षकों पर ही आती है। इसलिए उन्हीं को इस बारे में सबसे अधिक चिन्तित और प्रयासरत होना चाहिए। विशेष रूप से आज की परिस्थितियों में तो इस तरफ़ अत्यधिक ध्यान देने की आवश्यकता है; क्योंकि थोड़ी-सी लापरवाही अत्यन्त घातक परिणामों से दो-चार कर सकती है।

ख़ुदा का शुक्र है कि परिस्थिति की गम्भीरता का अब किसी हद तक एहसास हो चला है और विभिन्न संस्थाओं और संगठनों (इदारों और जमाअतों) के निजी और सामूहिक प्रयासों के फलस्वरूप लोग इस तरफ़ ध्यान देने लगे हैं। जो इस्लामी शिक्षण-संस्थाएँ कुंठित हो रही थीं, उन्हें शक्ति और सहायता उपलब्ध कराई जा रही है, जो अपनों की लापरवाही, उपेक्षा और दूसरों की संकीर्ण-दृष्टि का शिकार हो चुकी थीं, उन्हें नए सिरे से ज़िन्दा किया जा रहा है। नई-नई शिक्षण-संस्थाएँ स्थापित की जा रही हैं। प्रातःकालीन पाठशाला (Morning-school) और रात्रि-पाठशाला खोले जा रहे हैं। तात्पर्य यह कि जीवन के कुछ लक्षण उभरने लगे हैं। मुस्लिम-समुदाय की आवश्यकताओं की दृष्टि से यद्यपि जो कुछ हो रहा है, वह बहुत ही थोड़ा और अपर्याप्त है; लेकिन जिन सीमित साधनों-संसाधनों के साथ और जिन बाधाओं और कठिनाइयों में

घिर कर यह काम अंजाम पा रहा है, इसे सन्तोषजनक ही कहा जा सकता है।

समुचित शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था के मार्ग में यूँ तो विभिन्न प्रकार की अड़चनें और कठिनाइयाँ सामने आती रहती हैं, लेकिन निम्नलिखित उनमें से प्रमुख हैं—

नए शिक्षण-संस्थान के लिए योग्य शिक्षक नहीं मिलते।

जिन शिक्षकों से काम लिया जा रहा है, उनमें से अधिकतर शिक्षण-प्रशिक्षण-कला से अनभिज्ञ हैं।

बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में माता-पिता का पूरा सहयोग प्राप्त नहीं होता। शिक्षण-संस्थान जो कुछ सिखाता-पढ़ाता है, आम तौर पर माता-पिता का असहयोग उसपर पानी फेर देता है।

इन्हीं कठिनाइयों को दूर करने और बच्चों की शिक्षा-दीक्षा को प्रभावकारी बनाने में सहयोग प्रदान करने के लिए यह किताब लिखी गई है। इसमें बच्चों के मनोविज्ञान, शिक्षण-सिद्धान्तों, शिक्षण-विधियों, प्रशिक्षण के तरीक़े, स्कूल/मदरसे के प्रबन्धन, सहयोग प्राप्त करने के विभिन्न उपायों और तरीक़ों इत्यादि पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है और कोशिश की गई है कि—

भाषा आसान और सहज, वर्णन-शैली सरल और आकर्षक हो।

शिक्षक, माँ-बाप और शिक्षा-दीक्षा से दिलचस्पी रखनेवाले सारे लोगों के लिए समान रूप से रोचक और लाभप्रद हो।

शिक्षण-प्रशिक्षण से सम्बन्धित समस्त महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर रौशनी पड़ जाए।

हर मामले में इस्लामी दृष्टिकोण से विवेचना और विश्लेषण हो।

यथासम्भव पारिभाषिक शब्दों, गूढ़ और कठिन वर्णन-शैली से बचा जाए।

जो दिशा-निर्देश और परामर्श दिए जाएँ, वे व्यावहारिक हों।

- समुचित शिक्षण-प्रशिक्षण का एहसास उभरे और अपने दायित्वों और कर्तव्यों को पूरी तरह अंजाम देने की चिन्ता लगी रहे।
- माँ-बाप और शिक्षकों के प्रयास फलदायक हों; और
- बच्चों पर उनकी सहन-शक्ति और सामर्थ्य से अधिक बोझ न पड़ने पाए।

इन कोशिशों में हम कहाँ तक सफल हो सके हैं, इसका फ़ैसला प्रबुद्ध पाठक ही कर सकते हैं। विद्वानों और शिक्षा-प्रेमियों से आग्रह है कि वे अपने उपयोगी परामर्शों से हमें वंचित न रखें। अल्लाह इस छोटी-सी कोशिश को क़बूल फ़रमाए और अभीष्ट उद्देश्य के लिए इसे लाभप्रद एवं उपयोगी बनाए।

— अफ़ज़ल हुसैन

दिल्ली
10 जून 1963 ई॰

अनुवादक की ओर से

शिक्षण-प्रशिक्षण एक सतत् और सार्वभौमिक प्रक्रिया है। इसके द्वारा इनसान अपने परिवेश और वातावरण के विभिन्न घटकों (परिवार, सगे-सम्बन्धी, मित्र, पड़ोसी, शिक्षक, संचार के विभिन्न साधनों इत्यादि) से ज़िन्दगी भर कुछ-न-कुछ सीखता रहता है। महान शिक्षाशास्त्री मॉरिसन ने शिक्षण-प्रशिक्षण को 'शिक्षार्थियों को समाजोपयोगी बनानेवाली अनुशासित सामाजिक प्रक्रिया' कहा है—

> "शिक्षण एक ऐसी अनुशासित सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें शिक्षक अपने से कम अनुभवी लोगों के व्यवहार को प्रभावित करता है और उन्हें समाजोपयोगी बनाने में सहायक होता है।"

शिक्षण-प्रशिक्षण का उद्देश्य डॉक्टर मॉरिसन के उपर्युक्त कथन से बहुत हद तक स्पष्ट हो जाता है। संसार के प्रायः प्रत्येक शिक्षाशास्त्री ने इसके उद्देश्यों पर अपने-अपने ढंग से प्रकाश डाला है। उन विश्व प्रसिद्ध शिक्षाविदों द्वारा प्रकट किए गए विचारों को एक वाक्य में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

> "शिक्षण-प्रशिक्षण का उद्देश्य है— छात्रों में समाजोपयोगी व्यावहारिक बदलाव लाना; उनको उनकी सामाजिक मान्यताओं और आवश्यकताओं के अनुरूप ढालना और उन्हें एक आदर्श सामाजिक नागरिक बनाना।"

ये सभी चीज़ें तभी सम्भव हैं, जब समुचित शिक्षण-प्रणाली और नवीनतम शिक्षण-सहायक-सामग्री का उपयोग किया जाए।

शिक्षण-प्रक्रिया के तीन आधारभूत घटक हैं— शिक्षक, छात्र और पाठ्यसामग्री। इनमें से किसी एक के भी अभाव में शिक्षण-कार्य सम्भव नहीं है। शिक्षण-प्रक्रिया में शिक्षक की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है और प्रत्येक व्यक्ति में शिक्षक के गुण जन्मजात होते हैं। शिक्षण-प्रशिक्षण एवं शोध उनके गुणों को बढ़ाते और परिष्कृत करते हैं अर्थात् एक श्रेष्ठ शिक्षक को

श्रेष्ठतर तथा श्रेष्ठतर को श्रेष्ठतम बनाते हैं। शिक्षा किसी व्यक्ति के अन्दर मौजूद ज्ञान और अच्छाई को अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित और फलित करने का उपकरण है। इसी के द्वारा समाजोपयोगी, योग्य, कुशल और आदर्श नागरिक का निर्माण सम्भव है।

शिक्षा के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए शिक्षक को समय के साथ विकसित हुई विभिन्न शिक्षण-विधियों का उपयोग करना चाहिए। छात्रों में अवलोकन-निरीक्षण, चिन्तन-मनन, व्याख्या-विश्लेषण और सीखते रहने की आदत को विकसित करते रहना चाहिए। छात्रों के प्रश्न करने पर उन्हें यथोचित समाधान देना चाहिए और उनके प्रश्न पूछने की आदत को बढ़ावा देना चाहिए। किसी पाठ को पढ़ाते समय पहले उस पाठ के प्रति छात्रों में उत्सुकता और जिज्ञासा उत्पन्न करके उन्हें पूरी तरह उस विषय के साथ सहभागिता के लिए उत्प्रेरित करना चाहिए; क्योंकि छात्रों की सहभागिता के अभाव में सफल शिक्षण की आशा नहीं की जा सकती।

शिक्षा लोगों को जगाती है, योग्य और सफल इनसान बनाती है और यह किताब शिक्षण-प्रशिक्षण का सफल और सुगम मार्ग दिखाती है। इस किताब में शिक्षण-प्रशिक्षण के विभिन्न पहलुओं पर, विशेष कर इस्लामी शिक्षण-सिद्धान्तों और शिक्षण-विधियों पर मनोवैज्ञानिक ढंग से सविस्तार प्रकाश डाला गया है और बड़ी ही रोचक और मनमोहक शैली में बताया गया है कि ईश्वर की सर्वोत्तम कृति मानव के जीवन का परम लक्ष्य क्या है। आर्थिक-सांस्कृतिक विकास के इस दौर में इस्लामी शिक्षा की उपयोगिता क्या है? शिक्षा क्या है? शिक्षण-प्रशिक्षण की ज़रूरत क्या है? शिक्षा के उद्देश्य क्या हैं? उत्तम शिक्षा-सिद्धान्त और आदर्श शिक्षण-प्रशिक्षण-विधि क्या हैं? शिक्षण-प्रशिक्षण द्वारा शिक्षार्थी के आचरण और व्यवहार में मनोवांछित तथा सुखद बदलाव करके उन्हें समाज के लिए उपयोगी और आदर्श नागरिक कैसे बनाया जा सकता है? परिवेश में मौजूद बाधक तत्त्वों पर नियंत्रण करते और उनसे बचते हुए सफलता कैसे प्राप्त की जा सकती है? इत्यादि। यह किताब मानव-जीवन के परम और चरम लक्ष्य की तरफ़ इशारा करती है और अत्यन्त स्पष्ट रूप से बताती है कि अपने बाल-बच्चों को इस्लामी शिक्षा प्रदान करके

मानव-मूल्यविहीन वर्तमान उपभोक्तावादी दौर में शाश्वत मानव-मूल्यों की नींव पर एक कल्याणकारी आदर्श मानव-समाज का निर्माण कैसे किया जा सकता है। लोक-परलोक दोनों में मानव-जीवन को किस प्रकार सफल, सुखद और आनन्दमय बनाया जा सकता है इत्यादि। शिक्षण-प्रशिक्षण से सम्बन्ध रखनेवाले प्रत्येक व्यक्ति अर्थात् विभिन्न शिक्षण-संस्थानों के संचालकों, व्यवस्थापकों और अध्यापकों को इस किताब का अध्ययन ज़रूर करना चाहिए। साथ ही इनसान की प्रथम पाठशाला— घर-परिवार के सदस्यों को भी इससे मार्गदर्शन प्राप्त करके अपने जिगर के टुकड़ों को 'ख़ानदान का रौशन चराग़' बनाने मे शिक्षण-संस्थानों का सहयोग करना चाहिए।

शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में हुए नए शोधों और परिवर्तनों का मंथन करके डॉक्टर बदरुल-इस्लाम साहब ने नवीनतम शिक्षण-प्रणालियों और शिक्षण-सहायक सामग्रियों का परिचय कराने के लिए इस किताब की अगली कड़ी के रूप में 'शिक्षण-प्रशिक्षण-कला, भाग-2' का संकलन और सम्पादन किया है, जिसका हिन्दी अनुवाद, अगर अल्लाह ने चाहा तो निकट भविष्य में आपके हाथों में होगा।

प्रस्तुत पुस्तक के अनुवाद में जनाब अशफ़ाक़ अहमद साहब, सचिव, शिक्षा-विभाग, जमाअत इस्लामी हिन्द का बहुमूल्य मार्गदर्शन, प्रेरणा और प्रोत्साहन प्राप्त रहा है। मौलाना नसीम ग़ाज़ी साहब और सनाउल्लाह 'सुमन' ने इसके फ़ाइनल स्वरूप पर नज़र डालकर इसे दोष-रहित बनाने का प्रयास किया। हम अपने प्रयासों में कितने सफल हुए हैं, इसका वास्तविक मूल्यांकन तो शिक्षकगण, अभिभावक और पढ़ने-पढ़ाने में रुचि रखनेवाले ज्ञानीजन के सुझावों, विचारों और टिप्पणियों से ही हो सकेगा।

अन्त में हम उन सभी सज्जनों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने इस किताब को पाठकों तक पहुँचाने में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहयोग दिया है।

—मुहम्मद इलियास हुसैन

15 दिसम्बर, 2015 ई.

अध्याय-1

शिक्षण-प्रशिक्षण

शादी के बाद हर जोड़े की यही इच्छा होती है कि जल्द उसकी गोद हरी हो। देर होती है तो सौ जतन करता है। रोता है, गिड़गिड़ाता है, दुआएँ माँगता है, मन्नतें मानता है और न जाने क्या-क्या करता है। खुदा-खुदा करके उसकी कामना पूरी होती है; दिल की कली खिलती है और माँगी मुराद मिल जाती है। अल्लाह उसकी गोद भरता और खुशी का सामान करता है। नाते-रिश्तेदार खुशी के बाजे बजाते और दोस्त इत्यादि उपहार पेश करते हैं।

बच्चा बेशक अपने साथ अनगिनत खुशियाँ लाता है। उसके साथ घर में बरकत आती है। उसकी प्यारी-प्यारी सूरत और कामिनी-सी मूरत सबकी आँखों को ठंडक पहुँचाती है। माँ-बाप अपने दिल के टुकड़े को फलता-फूलता देखकर बाग़-बाग़ हो जाते हैं। शायद उनके लिए इससे बढ़कर कोई खुशी नहीं होती। माँ दिन का सुख और रात का चैन क़ुरबान करके भी खुश रहती है। सूरत देखते ही बाप की सारी उलझनें छूमन्तर हो जाती हैं। माँ-बाप की ही नहीं, बच्चों के मासूम चेहरे और उनकी भोली-भाली बातें किसका दिल नहीं मोह लेतीं? कौन है जो उन्हें हंसता-खेलता देखकर खुश नहीं होता? गंभीर से गंभीर आदमी भी बच्चों की भोली-भाली हरकतों पर अनायास मुस्करा देता है। जन्नत के इन फूलों के खिलने से हर घर में रौनक़ और हर चमन में बहार आ जाती है। चारों तरफ़ खुशियों की हवाएँ चलती हैं। खुशबू फैलाती और हर एक को गुदगुदाती हैं। पौधे लहलहाते, पंछी चहचहाते, कलियाँ मुस्कराती हैं और फूल हँसते हैं। मतलब यह कि हर तरफ़ खुशी और हर्ष की एक

लहर दौड़ जाती है।

बच्चे के जन्म पर यह असाधारण प्रसन्नता और आनन्द अकारण नहीं है—

- जन्नत का यह फूल वास्तविक स्रष्टा की कारीगरी का उत्कृष्ट नमूना और अनमोल उपहार है।
- उसके कारण घर में भलाई और बरकत आती है।
- माँ-बाप के बीच रिश्ते को मज़बूत बनाए रखने का वह सर्वोत्तम माध्यम है।
- उसके अन्दर अल्लाह ने असाधारण आकर्षण और सम्मोहन रखा है।
- उससे मिलकर आँखें ठंडी, दिल संतुष्ट और ग़म दूर हो जाता है।
- उसके कारण परिवार का क्रम जारी रहता है।
- वह इच्छाओं और आकांक्षाओं का केन्द्र होता है। भविष्य में उससे तरह-तरह की उम्मीदें जुड़ी होती हैं।

स्पष्ट है, ऐसा बहुमूल्य उपहार, ऐसी अनमोल नेमत और मनचाही चीज़ पाकर कौन अभागा ख़ुश और आनन्दित न होगा। मगर ख़ुशियों के साथ बच्चा अनगिनत ज़िम्मेदारियाँ भी लाता है—

- ख़ुशी-ख़ुशी उसका पालन-पोषण करना।
- प्रेम-मुहब्बत का बरताव करना।
- प्रेम और सहानुभूति से उसे सिखाना-पढ़ाना।
- क्रमशः अच्छी आदतें डलवाना।
- विभिन्न अवसरों के शिष्टाचार और तौर-तरीक़े बताना।
- शिष्ट और शालीन आचार-व्यवहार सिखाना।
- आस्थाओं (अक़ीदों) को निखारना, चाल-चलन को सुधारना और चरित्र को सँवारना।
- उसकी तन्दुरुस्ती और आराम-चैन, विकास और सफलता की चिन्ता और कोशिश करना।

ये वे महत्त्वपूर्ण ज़िम्मेदारियाँ हैं, जो बच्चों की भलाई और हित के लिए माँ-बाप पर आती हैं। शायद ही कोई बाप ऐसा हो, जिसे इन ज़िम्मेदारियों का एहसास न हो और वह इन ज़िम्मेदारियों को पूरी करने की इच्छा न रखता हो। अपनी सन्तान पर जान छिड़कना तो एक नैसर्गिक अमल है। जान-बूझकर कौन लापरवाही और कोताही करेगा? बाप ही तो वह आदमी है, जो औलाद को अपने से भी बढ़-चढ़कर देखना चाहता है। लेकिन ऐसे खुशनसीब कम ही होते हैं, जिनकी यह कामना पूरी होती है और जो अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरी कर पाते हैं; क्योंकि केवल इच्छा ही से तो सारे काम नहीं बन जाते; यह आवश्यक है कि शिक्षण-प्रशिक्षण की एक उत्तम विधि भी चाहिए और अत्यन्त कठोर परिश्रम भी। जब इनमें ही कमी और त्रुटि हो, तो किसी अच्छे परिणाम की उम्मीद किस तरह हो सकती है?

असफलता के कारण

बच्चों की समुचित शिक्षा-दीक्षा में आम तौर पर क्यों असफलता हाथ लगती है? इसके निम्नलिखित कारण हैं—

1. शिक्षा-दीक्षा बहुत ही सब्र और पित्ता मारी का काम है। यह काम जितनी लगन, सहानुभूति और कठोर परिश्रम चाहता है, इसके लिए व्यावहारिक रूप से कम ही लोग तैयार होते हैं।
2. आम तौर पर बच्चों की उम्र और योग्यताओं से कहीं अधिक उनसे उम्मीदें जोड़ ली जाती हैं और जब उनसे बार-बार कोताहियाँ और भूलें होती हैं और विकास की गति भी आशा के प्रतिकूल बहुत धीमी दिखाई देती है, तो स्थिति में सुधार की तरफ़ से हताश होकर लोग आम तौर पर न केवल अपनी कोशिशों में कमी कर देते हैं, बल्कि अपने रवैये और बरताव से खुद बच्चों को भी निराशा और हताशा का शिकार बना देते हैं और उनमें आत्मविश्वास शेष नहीं रह जाता।
3. पूरा समाज बिगाड़ का शिकार है। बड़ों के ग़लत नमूने और समान

उम्रवालों की बुरी संगति के महसूस न होनेवाले प्रभाव बच्चे लगातार ग्रहण करते रहते हैं। इसलिए अच्छे-भले माँ-बाप के बच्चों में भी जाने-अनजाने तरह-तरह की ख़राबियाँ जड़ पकड़ लेती हैं।

4. जिस बच्चे की भी जाँच-परख करें, यही मालूम होगा कि कुछ लोग अगर सँवारने की कोशिश करते हैं, तो बहुत-से उन्हें बिगाड़ने में लगे रहते हैं।
5. ज़िन्दगी की ज़रूरतें अब सीमित नहीं रहीं और इनकी सूची बहुत बड़ी हो चुकी है। अर्थव्यवस्था और आर्थिक ढाँचा भी दिन-प्रतिदिन पेचीदा होता जा रहा है। इसलिए आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दौड़-धूप से अवकाश ही नहीं मिलता। बच्चों की शिक्षा-दीक्षा की तरफ़ ध्यान देने का सौभाग्य कहाँ से मिले!
6. समुचित शिक्षा-दीक्षा के लिए जिस योग्यता और हुनर की ज़रूरत है, अक्सर लोग उससे वंचित होते हैं। इसलिए उनका प्रयास सफल होने के बजाय कभी-कभी उल्टा पड़ता है।
7. माँ-बाप के आपसी सम्बन्ध में बिगाड़, अलगाव, मौत, अनुपस्थिति या घर से दूरी आदि भी बच्चों की समुचित शिक्षा-दीक्षा में बहुत अधिक बाधक होती है।
8. दोषपूर्ण जीवन-व्यवस्था ने मानव-जीवन के मूल्यों को बदल डाला है। भौतिकता और उपभोक्तावाद मनुष्य के मन-मस्तिष्क पर इतना अधिक छा चुका है कि बच्चों की दुनिया सँवारने और उनका भविष्य उज्ज्वल बनाने के लिए अच्छे-भले लोग अपने जिगर के टुकड़ों के ईमान, आचरण और चरित्र को अपने हाथों शैतान की भेंट चढ़ा देने में कोई हिचक महसूस नहीं करते।
9. कितने ही लोग अपनी आर्थिक कठिनाइयों, बीमारियों या दूसरी वास्तविक विवशताओं और मजबूरियों के कारण अपने बच्चों का शिक्षण-प्रशिक्षण ख़ुद कर नहीं पाते और किसी की तरफ़ से उन्हें इस

सम्बन्ध में कोई मदद भी नहीं मिल पाती, क्योंकि औद्योगिक क्रान्ति और उपभोक्तावाद ने पारिवारिक व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया है। सामाजिक बन्धन भी ढीले पड़ चुके हैं। इसलिए माँ-बाप की विवशता, क़ोताही और लापवाही की दशा में परिवार के दूसरे लोग इस बोझ को सहन करने के लिए न तो ख़ुद तैयार होते हैं, न समाज उन्हें मजबूर कर पाता है और न ख़ुद समाज उन बच्चों की कोई समुचित व्यवस्था करता है।

10. बच्चों को व्यस्त रखने और उनकी छुट्टियों के समय को उपयोगी कामों में लगाने के लिए न तो मनोरंजक और रचनात्मक कार्यों का कोई समुचित प्रबन्ध किया जाता है और न ही उपयुक्त खेलों आदि का कोई समुचित प्रबंध ही हो पाता है। इसलिए बच्चों की योग्यताएँ ग़लत दिशा में चल पड़ती हैं। वे आवारागर्दी का शिकार हो जाते हैं और तरह-तरह की बुरी और अशोभनीय हरकतें करने लगते हैं।

11. समाज में बढ़ती हुई अश्लीलता, नग्नता, मुक्त नैतिक अनाचार, नज़र को लुभानेवाले सम्मोहक दृश्य, अश्लील साहित्य, नंगी तस्वीरें, घिनौने पोस्टर्स की भरमार, आरचण को बिगाड़नेवाली फ़िल्मों, कहानियों और उपन्यासों की बहुतायत इत्यादि सामान्यतः सुधार के प्रयासों पर पानी फेर देती हैं।

12. बच्चों के व्यक्तित्व पर घर, स्कूल/मदरसे, परिवेश, समाज और शासन-प्रशासन इत्यादि हर एक का कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता है। समुचित और स्तरीय शिक्षा-दीक्षा के लिए इन सबमें परस्पर सहयोग और सामंजस्य आवश्यक है। लेकिन यहाँ यह चीज़ दुर्लभ है। परस्पर सहयोग और सामंजस्य की बात तो अलग, इनमें से लगभग हर एक के प्रयासों की दिशाएँ भी अलग-अलग हैं। घर के लोग चिन्ता और प्रयास करते हैं, तो अच्छे स्कूल/मदरसे नहीं मिलते। स्कूल/मदरसा अपनी ज़िम्मेदारी महसूस करता है, तो दूसरों का सहयोग प्राप्त नहीं

कर पाता। इसलिए अधिकतर बच्चे तनाव और उलझनों का शिकार हो जाते हैं।

लापरवाही के दुष्परिणाम

शिक्षा-दीक्षा के प्रति लापरवाही न केवल खुद बच्चों और उनके परिवारों के लिए, बल्कि देश और समुदाय के लिए अत्यन्त घातक और हानिकारक साबित होती है; क्योंकि—

- बच्चे नाकारे और निकम्मे रह जाते हैं। उनकी नैसर्गिक शक्तियाँ और क्षमाएँ या तो कुंठित हो जातीं और ठिठुर कर रह जाती हैं या ग़लत दिशा अपना लेती हैं।
- तरह-तरह की बुराइयों और बदचलनी में फँसकर बच्चे दीन और दुनिया (लोक-परलोक) दोनों तबाह कर लेते हैं।
- आँखों की ठंडक और बुढ़ापे की लकड़ी बनना तो दूर, उलटे काँटा बनकर खटकते और माँ-बाप पर बोझ बनकर रहते हैं।
- बाप-दादा की गाढ़ी कमाई बहुत ही बेदर्दी से उड़ा देते हैं।
- परिवार की आँख और चराग़ (कुल दीपक) होने के बजाय उसका नाम डुबोते हैं।
- अपने बुरे चाल-चलन से इस्लाम और मुस्लिम-समुदाय को बदनाम करते हैं।
- अपराधकर्मी होकर सबके लिए सिर दर्द बनते हैं और देश और समाज को तरह-तरह से हानि पहुँचाते हैं।
- समुदाय अच्छे लोगों से, समाज सच्चे सेवकों से और देश आदर्श नागरिकों से वंचित रह जाते हैं।
- उनके लिए सरकार को जेलों, अदालतों, थानों और अस्पतालों इत्यादि पर काफ़ी रुपये ख़र्च करने पड़ते हैं।
- देश की अर्थव्यवस्था, सामाजिक और नैतिक आचरण के लिए वे घुन साबित होते हैं। मतलब यह कि जन्नत के वे फूल जो ख़ुशबू फैलाने

के लिए खिले थे और शुरुआत में हर एक की ख़ुशी और आनन्द का सामान थे, लापरवाही और कोताहियों के नतीजे में गन्दगी का ढेर बन जाते और अपने कुकर्मों के असहनीय दुर्गन्ध से सबकी नाक में दम कर देते हैं और इस तरह कोताही और लापरवाही का बदला प्रकृति हर एक से लेती है।

इसके विपरीत बच्चों की शिक्षा-दीक्षा पर अगर समुचित ध्यान दिया जाए तो—

उनकी योग्यताएँ विकसित होती हैं, चरित्र सँवरते हैं और दीन-दुनिया में उन्हें उन्नति और सफलता मिलती है।

उस उद्देश्य की पूर्ति में योगदान और सहयोग मिलता है, जिसके लिए अल्लाह ने उन्हें धरती पर भेजा है।

वे अपनी व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामूहिक ज़िम्मेदारियों को सम्भालने के योग्य हो जाते हैं।

वे अल्लाह के नेक और अच्छे बन्दे, समाज के सच्चे सेवक और देश के वफ़ादार तथा आदर्श नागरिक बनते हैं।

उनका अस्तित्व खुद उनके अपने, अपने देश और समुदाय के लिए भलाई और उन्नति का कारण होता है।

समाज और संस्कृति के विकास में उनकी प्रतिभाओं और योग्यताओं से सहयोग मिलता है।

देश की अर्थव्यवस्था और आमदनी में वृद्धि होती और सरकार के ख़र्चों में कमी आती है।

मतलब यह कि समुचित शिक्षा-शिक्षा पर ख़र्च की गई शक्ति, मेहनत और दौलत हर एक के लिए लाभदायक साबित होती है। मगर अफ़सोस यह है कि हमारी लापरवाहियों और राजनेताओं की अदूरदर्शिता के कारण पूरी दुनिया में एक ऐसी शिक्षण-प्रशिक्षण-प्रणाली प्रचलित हो गई है, जो अपने विभिन्न प्रकार के शैक्षिक कार्यक्रमों, विषयों, पाठ्यपुस्तकों, सहायक पुस्तकों,

पाठ्यसहगामी क्रिया-कलापों और सांस्कृतिक कार्यक्रमों इत्यादि के द्वारा या तो ईशपरायणता, उत्तरदायित्व की भावना और नैतिक मूल्यों की रक्षा करने की कला सिखाने के बजाय ईश-विमुखता, नास्तिकता, परलोक की पूछगछ से निर्भयता और उच्च मानव-मूल्यों का अनादर करना सिखाती है या बहुदेववाद और अंधविश्वास, पक्षपात और दृष्टि-संकीर्णता, राष्ट्रीय और जातीय पक्षपात, स्वार्थपरता और आत्मप्रर्शन और भोग-विलास में फँसाती है और जो आर्थिक प्रगति और आर्थिक सम्पन्नता को तो अन्तिम लक्ष्य ठहरती है, लेकिन चरित्र-निर्माण और आचरण के सुधार की ओर कोई ध्यान नहीं देती।

स्पष्टतः इस प्रकार की शिक्षा-व्यवस्था में जब तक मौलिक परिवर्तन और सुधार नहीं किए जाएँगे, इसके अन्तर्गत पलने-बढ़नेवाली नस्लों से सामान्य रूप से किसी भलाई की आशा बेकार है। हाँ, बुराई और संकट की आशंकाएँ हमेशा बनी रहेंगी। रहीं धार्मिक शिक्षण-संस्थाएँ, जो समुचित शिक्षा-दीक्षा की ध्वजावाहक और अज्ञानता के अन्धेरों में रौशनी का मीनार रही हैं और जिनसे सच्चे रास्ते की तरफ़ बुलावा और मार्गदर्शन के झरने फूटते थे और खुदा के बन्दों को लाभ पहुँचता था, वे भी अब अपनी संवेदीनहीनता, मुस्लिम-समुदाय की लापरवाही, परायों की दुश्मनी, असत्यवादी शक्तियों की प्रबलता, धार्मिक स्वाभिमान और गर्व के अभाव, त्याग और निस्वार्थ-भाव की कमी, शिक्षकों की शिक्षा-सम्बन्धी और व्यावहारिक कोताहियों और शिक्षण-प्रशिक्षण-कला से अनभिज्ञता, धार्मिक और सांसारिक ज्ञान के बीच व्यावहारिक रूप से भेदभाव और अपने एकांगी और घिसे-पिटे पुराने पाठ्यक्रम और शिक्षा-व्यवस्था के कारण ठिठुर और कुंठित हो रही हैं और उनकी उपयोगिता दिन-प्रतिदिन घटती जा रही है और उनका प्रभाव-क्षेत्र सिकुड़ता जा रहा है।

इसलिए इस परिस्थिति की माँग यह है कि सभी लोग और सारी शिक्षण-संस्थाएँ शिक्षण-प्रशिक्षण की स्थिति में सुधार की ओर ध्यान दें और व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से जो कुछ कर सकते हैं, उसमें बिलकुल कोई कंजूसी और विलम्ब न करें। असाधारण कठोर परिश्रम, साहस और दृढ़ता से

ो परिस्थितियों का सामना किया और उनका रुख़ मोड़ा जा सकता है। रिस्थिति निस्सन्देह अत्यन्त विकट और आत्मा को दहला देने और हिम्मत को ोड़ देनेवाली है और देश स्पष्ट रूप से किसी क्रान्तिकारी सुधार और परिवर्तन ऽ लिए तैयार नज़र नहीं आता। बहुसंख्यक समुदाय या तो भौतिकतावाद और पभोक्तावाद या पश्चिमी प्रभाव का शिकार है या रूढ़िवादी मानसिकता का। ह या तो आँखें बन्द करके पश्चिमी की सभ्यता के पीछे भाग रहा है या ाचीन सभ्यता-संस्कृति की ओर लौटने के लिए एँड़ी-चोटी का ज़ोर लगा रहा ै। वह ख़ुद भी इस बाढ़ की भेंट चढ़ने पर उतारू है और हमें भी उसमें बहा ा जाना चाहता है।

इधर मुस्लिम-समुदाय का हाल यह है कि इसमें संगठन और एकता का भाव है, वह छोटी-छोटी और अनावश्यक मतभेदों में उलझा हुआ है। उसके ाधन और संसाधन सीमित, साहस व संकल्प लुप्त और अत्यन्त पतित वस्था को पहुँच चुके हैं। ऐसी परिस्थिति में किसी सार्वभौमिक क्रान्ति का ाह्वान करना पागलपन और बेकार की बातें समझी जाएँगी। लेकिन जिस ाढ़ में हम घिर गए हैं, उसके साथ बहने में समुदाय का अस्तित्व नमक की रह विलीन हो जाएगा और देशवासियों का चरित्र बिलकुल ही तबाह हुआ ाता है। फिर इसके सिवा चारा क्या है कि देश और समुदाय आनेवाली स्लों को तबाही से बचाने के लिए बहादुरों की तरह उठ खड़े हों और बाढ़ ा रुख़ मोड़ने का जान-तोड़ प्रयास करें। इसी में हमारी हर तरह की भलाई ौर जीत है।

☆☆☆

अध्याय-2

शिक्षा का अर्थ

बच्चों की शिक्षा एक ऐसा विषय है, जिससे थोड़ा-बहुत हर एक को दिलचस्पी होती है। किसी बैठक या सभा-सम्मेलन में इस समस्या को छेड़कर देख लीजिए। मर्द-औरत, अमीर-ग़रीब, शहरी-देहाती, मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम अर्थात् प्रत्येक समुदाय और वर्ग के लोग आकृष्ट हो जाएँगे और अवसर मिला तो हर एक अपनी योग्यता के मुताबिक़ कुछ न कुछ टीका-टिप्पणी भी कर देगा।

यह सामान्य दिलचस्पी कुछ स्वाभाविक भी है; क्योंकि—

- ईश्वर की कृपा से सब बाल-बच्चेवाले होते हैं और सबको अपने बच्चों के भविष्य की चिन्ता भी होती है।
- हर एक अपनी सन्तान को अपने से बढ़-चढ़कर देखना चाहता है और इसके लिए शिक्षण-प्रशिक्षण का सहारा ढूंढता है।
- हर एक की कुछ इच्छाएँ और कामनाएँ ऐसी होती हैं, जो उसके अपने हाथों पूरी होती नज़र नहीं आतीं। वह अपने बाल-बच्चों के द्वारा उन्हें पूरा करना चाहता है। इसलिए इसके लिए वह समुचित उपायों और विधियों की जानकारी प्राप्त करने का इच्छुक होता है।
- अपने आदर्शों के मुताबिक़ अपनी सन्तान को परवान चढ़ता नहीं देखता, तो हर एक कुढ़ता है और असन्तोष प्रकट करता है।
- भविष्य की तैयारी के लिए प्रकृति ने बचपन की जो लम्बी अवधि प्रदान की है, हर एक इसे उपयोगी और सफल बनाना चाहता है।

लेकिन इस विषय पर लोगों की बातों का विश्लेषण कीजिए, जितने मुँह उतनी बातें होंगी। ऐसा महसूस होगा कि हर एक के मन में शिक्षा

का एक अलग अर्थ है और एक अलग धारणा। मुश्किल से ही कुछ लोंग ऐसे मिलेंगे जो किसी एक अर्थ, भाव या धारणा पर सहमत हों; यहाँ तक कि शिक्षाविदों के बीच भी इस सम्बन्ध में गम्भीर मतभेद पाए जाते हैं।

विचारों की इस भिन्नता और विरोधाभास के भी वास्तव में बहुत-से कारण हैं–

विचारधाराओं की भिन्नता

जीवन के सम्बन्ध में लोगों की विचारधाराएँ अलग-अलग हैं। कुछ लोग सांसारिक जीवन और उसके आनन्द और भोग-विलास ही को सब कुछ समझते हैं; तो कुछ लोग मृत्यु के बाद के जीवन पर विश्वास रखते हैं और परलोक की सफलता को अपने जीवन का परम लक्ष्य मानते हैं। किसी की दृष्टि में जीवन का उद्देश्य केवल धन-दौलत समेटना और बैंक बैलेंस बढ़ाना है; तो किसी के निकट सत्ता-शासन और अधिकार प्राप्त करना और दूसरों पर धौंस जमाना; कुछ लोग सांसारिक झमेलों से अलग-थलग संन्यासी-जीवन पर विश्वास रखते हैं; तो कुछ दुनिया के हंगामों से गुज़रते हुए खुदा की खुशी प्राप्त करना ज़रूरी समझते हैं। विचारधाराओं की यही भिन्नता शिक्षा-दीक्षा के सम्बन्ध में भी वैचारिक मतभेदों का कारण होता है।

लक्ष्यों और आदर्शों में अन्तर

विभिन्न लोगों के सामने अलग-अलग लक्ष्य और आदर्श होते हैं। कोई अपने बच्चे को डॉक्टर बनाना चाहता है, कोई इंजीनियर, कोई लीडर बनाना चाहता है, कोई प्लीडर, किसी के सामने खेती या व्यापार होता है, किसी के सामने पत्रकारिता या राजनीति होती है, कोई धार्मिक विद्वान बनाने का इच्छुक होता है, तो कोई सरकारी कर्मचारी; मतलब यह कि जितने लोग हैं उतने लक्ष्य, उतने ही आदर्श। लक्ष्यों और आदर्शों की इस विभिन्नता के परिणामस्वरूप वैचारिक मतभेद भी पैदा होते हैं।

वातावरण में अन्तर

हर जगह का प्राकृतिक और सामाजिक वातावरण भिन्न होता है। अपने परिवेश में फिट और समायोजित होने के लिए लोगों में कुछ विशेष गुण और योग्यताएँ अनिवार्य होती हैं, जो शिक्षण-प्रशिक्षण ही के द्वारा परवान चढ़ाई जा सकती हैं। परिवेश और उसकी अपेक्षाओं की यही भिन्नता शिक्षा के सम्बन्ध में वैचारिक मतभेद का कारण होता है।

परिस्थितियों और आवश्यकताओं में अन्तर

हर एक की अपनी विशिष्ट परिस्थितियाँ होती हैं और हर एक की अलग-अलग आवश्यकताएँ। शिक्षा में उनकी अनुकूलता का ध्यान नहीं रखा जाता, तो उनमें असन्तुष्टि और खिन्नता पैदा होती है।

व्यक्तित्व की पेचीदगी

मनुष्य का व्यक्तित्व बड़ा पेचीदा है। इसके विभिन्न पहलू हैं। उदाहरण के लिए, मानसिक, शारीरिक, व्यावहारिक और नैतिक इत्यादि। किसी की दृष्टि में एक पहलू महत्त्वपूर्ण होता है, तो किसी के निकट दूसरा। हर एक शिक्षण-प्रशिक्षण के द्वारा अपने मनपसन्द पहलू की उन्नति और विकास को महत्त्व देता है और इसमें कमी पाता है, तो असन्तुष्टि प्रकट करता है।

शिक्षा-सम्बन्धी योजनाओं में अन्तर

शिक्षाविदों ने गम्भीर चिन्तन-मनन, दीर्घ अनुभव और अनुसन्धानों के द्वारा शिक्षा के सम्बन्ध में विभिन्न स्कीमों और योजनाओं का निर्माण किया है। किसी को एक स्कीम पसन्द है, तो किसी को दूसरी।

शिक्षण-विधि में अन्तर

विभिन्न लोगों ने अपने-अपने अनुभव के आधार पर शिक्षण-

प्रशिक्षण की विभिन्न विधियों को उपयोगी और सफल पाया है। इसलिए आज बहुत-सी विधियाँ और तरीक़े प्रचलित हैं। हर एक अपनी मनपसन्द विधि और तरीक़े ही को सही और उचित समझता है।

परन्तु वास्तविकता यह है कि शिक्षा का प्रत्येक अर्थ और प्रत्येक संकल्पना तो सही नहीं हो सकती है; कोई एक ही उपयोगी और उचित होगी।

शिक्षा का अर्थ

शिक्षा का शाब्दिक अर्थ है किसी को कुछ बताना, पढ़ाना या सिखाना। कुछ लोग भ्रमवश इसको शिक्षण का समानार्थी समझते हैं अर्थात छात्रों को कुछ विषयों या किताबों की शिक्षा दे देना या उन्हें लिखना-पढ़ना और हिसाब इत्यादि सिखा देना। हालाँकि यह बहुत व्यापक और बहुआयामी शब्द है। इसके भावार्थ में पढ़ाने के साथ-साथ विभिन्न कलाओं में महारत पैदा कराना, शिष्टाचार और अनुशासन सिखाना और प्रशिक्षण (व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का सर्वांगीण विकास करना) भी शामिल है।[1]

शिक्षा का सीमित और व्यापक अर्थ

शिक्षा का शब्द आते ही ध्यान आम तौर पर उन संगठित कोशिशों की ओर चला जाता है, जो छात्रों के लिए शिक्षण-संस्थाएँ अंजाम देती हैं। बेशक विधिवत और औपचारिक (Formal) शिक्षा यही है और इसके प्रभाव भी बहुत दूरगामी होते हैं। परन्तु यह शिक्षा का बहुत ही सीमित अर्थ है; क्योंकि शिक्षण-संस्थाओं में तो बच्चे बहुत कम समय गुज़ारते हैं और बहुत ही सीमित जानकारियाँ और अनुभव प्राप्त करते हैं; जबकि उनके जानने, सीखने और अनुभव प्राप्त करने की प्रक्रिया जन्म से लेकर

[1] शरीर और आत्मा को उनकी ग्रहणशीलता के मुताबिक़ सम्पूर्णता प्रदान करना शिक्षा है।—प्लेटो

मृत्यु तक निरन्तर जारी रहती है। शिक्षण-संस्थाओं की विधिवत शिक्षा के अतिरिक्त न जाने कितनी बातें वे अपने घर, मुहल्ले, पड़ोस, प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश और अपने चारों तरफ़ फैली हुई दुनिया और उसमें रहने-बसनेवाले लोगों से सीखते हैं। वैसे तो यह शिक्षा अनौपचारिक और अनियमित (Informal) होती है, लेकिन प्रभावों और परिणामों की दृष्टि से विधिवत शिक्षा से कम नहीं होती।

इस तरह शिक्षा के व्यापक अर्थ में वे सारी जानकारियाँ और अनुभव शामिल होते हैं, जो गोद से लेकर क़ब्र तक हर व्यक्ति औपचारिक या अनौपचारिक रूप से खुद प्राप्त करता है या उसे प्राप्त कराए जाते हैं।[2]

☆☆☆

[2] शिक्षा हमें पूर्ण जीवन के लिए तैयार करती है।—हरबर्ट स्पेंसर

अध्याय-3

शिक्षण-प्रशिक्षण को प्रभावित करनेवाले कारक

शिक्षा के इस व्यापक अर्थ से यह बात ख़ूब अच्छी तरह स्पष्ट हो जाती है कि बच्चों की शिक्षा-दीक्षा पर विभिन्न कारक (Agencies) प्रभाव डालते हैं। उनमें ख़ास-ख़ास ये हैं—

(1) घर-परिवार, (2) स्कूल/मदरसा, (3) परिवेश, (4) समाज, (5) सरकारी तंत्र।

(1) घर-परिवार

शिक्षण-प्रशिक्षण का सबसे पहला और सबसे महत्त्वपूर्ण संस्था घर है। जन्म से लेकर चार-पाँच साल की उम्र तक बच्चे की सारी दिनचर्या घर की चारदीवारी तक सीमित रहती है। घर के लोगों और घरेलू माहौल का जो प्रभाव बच्चा ग्रहण करता है, वह बहुत ही दूरगामी और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। यहीं वह उठना-बैठना, चलना-फिरना, खाना-पीना, बातचीत करना अर्थात सब कुछ सीखता है। यहीं उसे वह सच्चा प्रेम-स्नेह, सहानुभूति-सहायता, आराम-चैन और लाड़-प्यार मिलता है, जो उसकी शिक्षा-दीक्षा और उन्नति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। माँ-बाप, बहन-भाई, दादा-दादी और दूसरे नाते-रिश्तेदार विभिन्न हैसियतों से उसके शिक्षक का काम अंजाम देते हैं। उनकी आदतों, आचार-व्यवहारों और क्रिया-कलापों का अनुकरण करके बच्चा अपने को विभिन्न गुणों और विशेषताओं से सुसज्जित करता है। बच्चों के सादा मन-मस्तिष्क पर घरेलू जीवन की जो गहरी छाप पड़ती जाती है, वह जीवन भर नहीं मिटती। स्कूल/मदरसे में दाख़िल होने के बाद भी घर का महत्त्व कम नहीं होता;

क्योंकि स्कूल/मदरसे में बच्चे सिर्फ़ कुछ घंटे रहते हैं। इसी छोटी-सी अवधि में उन्हें लिखाना-पढ़ाना, उनका शारीरिक, व्यावहारिक और नैतिक प्रशिक्षण करना, उनकी आदतों और चाल-चलन पर नज़र रखना– ये सब काम घर के सहयोग के बिना अकेले स्कूल/मदरसा किसी तरह भी अंजाम नहीं दे सकता। घर को बहरहाल निम्नलिखित काम अंजाम देने ही पड़ेंगे–

घर-परिवार के कर्तव्य

- लालन-पालन, शारीरिक प्रशिक्षण और तन्दुरुस्ती और सफ़ाई की देखभाल, खाने-पीने और पहनने-ओढ़ने की समुचित व्यवस्था करना, शरीर और कपड़ों की सफ़ाई, नियमित रूप से नहाने-धोने, कपड़े बदलने, नाखुन और बाल कटवाने इत्यादि का एहतिमाम करना; खेल-कूद या व्यायाम और तन्दुरुस्ती की सुरक्षा के नियमों की पाबन्दी करवाना इत्यादि।
- बच्चे की आदतों और चाल-चलन पर नज़र रखना, प्रेम और स्नेह से उनका शिक्षण-प्रशिक्षण करना और धीरे-धीरे अच्छी आदतों और नियमित क्रिया-कलापों का पाबन्द बनाना।
- शिक्षा-दीक्षा के सम्बन्ध में स्कूल/मदरसे की तरफ़ से दिए हुए निर्देशों का पालन कराना।
- घरेलू ज़िन्दगी को पाक-साफ़ बनाने और परिवार के सदस्यों के आपसी सम्बन्धों को ठीक बनाए रखने की कोशिश करना, ताकि बच्चा चेतन या अचेतन रूप से अनुकरण के लिए अच्छा नमूना पा सके।
- घर के काम-काज में हाथ बटाने के अवसर देना, छुट्टी के समय के लिए कोई दिलचस्प क्रिया-कलाप (हॉबी) का अवसर उपलब्ध करना और योग्यता के मुताबिक़ कोई घरेलू ज़िम्मेदारी सौंपना,

ताकि मेहनत और परिश्रम, ज़िम्मेदारी का एहसास, लगन और सहयोग इत्यादि का आदी बनाया जा सके।

- साथी-संगियों के साथ खेलने-कूदने और नाते-रिश्तेदारों से मिलने-जुलने के मौक़े देना, ताकि सामाजिक प्रशिक्षण हो सके। हाँ, साथी-संगियों की आदतों और चाल-चलन पर नज़र रखना और बुरी संगति से बचाना भी ज़रूरी है।
- बच्चों के आत्मसम्मान का ध्यान रखना और उचित सीमाओं में उनकी अभिरुचियों और भावनाओं का पूरा सम्मान करना।
- बच्चा अगर किसी ऐसे स्कूल/मदरसे में पढ़ने पर मजबूर है, जहाँ इस्लामी शिक्षा की व्यवस्था नहीं है, तो अपने तौर पर उसकी व्यवस्था करना।

ये हैं वे मौलिक कर्तव्य जो अच्छी तरह से घर ही पूरा कर सकता है और उसी को पूरा करना भी चाहिए, लेकिन अशिक्षा, ग़रीबी, साधन-संसाधन की कमी, माँ-बाप की व्यस्तता और सार्वजनिक बिगाड़ के कारण बहुत कम घर अपने इन ज़रूरी कामों को पूरी तरह अंजाम देते या दे पाते हैं। औद्योगिक क्रान्ति ने घरेलू व्यवस्था को और अधिक छिन्न-भिन्न कर दिया है। बाप कहीं रहता है, बच्चे कहीं। भला उनकी देखभाल कौन करे? नतीजा यह होता है कि स्कूल/मदरसे आम तौर पर घर के सहयोग से वंचित रहते हैं। सीमित साधनों के कारण स्कूल/मदरसे भी आम तौर पर आवासीय नहीं होते। इसी लिए शिक्षा-दीक्षा की पूरी ज़िम्मेदारी अकेले नहीं उठा सकते। इसलिए बच्चों की शिक्षा-दीक्षा का काम बहुत प्रभावित हो रहा है। घरेलू व्यवस्था को सुदृढ़ रखने और परिवार के सदस्यों को बच्चों से सम्बन्धित अपने दायित्वों को पूरा करने की ओर निरन्तर ध्यान दिलाते रहना चाहिए वरना आनेवाली नस्लों का ख़ुदा ही रक्षक है।

(2) स्कूल/मदरसा

बच्चों के शिक्षण-प्रशिक्षण पर प्रभाव डालनेवाला दूसरा सबसे प्रभावकारी कारक स्कूल/मदरसा है। बच्चों के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को पूरी तरह परवान चढ़ाने की ज़िम्मेदारी इसी के ज़िम्मे होती है। बच्चे जो कुछ स्कूल/मदरसे के बाहर सीखते हैं, उसमें न तो कोई व्यवस्था होती है और न क्रम। स्कूल/मदरसा एक संगठित संस्था होती है, जो योग्य शिक्षकों की मदद से एक विशेष व्यवस्था और क्रम के साथ बच्चों को शिक्षा देती और उनके चरित्र और व्यक्तित्व को सँवारती है। घर की तरह अपने स्कूल/मदरसे से भी बच्चों को भावनात्मक लगाव होता है। वे अपने शिक्षक को दुनिया का सबसे बड़ा आदमी समझते हैं। उसके ज्ञान पर ग़ैर-मामूली विश्वास करते हैं। उसके व्यक्तित्व और चरित्र को अपने लिए अनुकरणीय आदर्श समझते हैं। स्कूल का वातावरण उन्हें बहुत प्रभावित करता है। यहाँ बच्चे के चरित्र और व्यक्तित्व पर जो छाप और प्रभाव पड़ते हैं, वे ज़िन्दगी भर क़ायम रहते हैं। इन्हीं कारणों से इस कारक का महत्त्व सबसे ज़्यादा है।

स्कूल/मदरसे की ज़िम्मेदारियाँ

स्कूल/मदरसे को निम्नलिखित कर्तव्यों का निर्वाह करना पड़ता है—

- **बच्चों में ज्ञान-विज्ञान से सम्बन्धित विभिन्न कलाओं और विषयों में महारत पैदा करना—** बच्चे इधर-उधर से जो कुछ सीखते या जानकारियाँ प्राप्त करते हैं, वे सामान्यतः त्रुटिपूर्ण या अपर्याप्त होती हैं। उनमें कोई नियम और क्रम भी नहीं होते। स्कूल/मदरसे की ज़िम्मेदारी है कि वह एक विशेष क्रम और नियम के साथ उन्हें जानकारियाँ उपलब्ध कराए और महारत पैदा कराए।
- **सुधार करना और प्रशिक्षण देना—** ज्ञान-सम्बन्धी, व्यावहारिक, शारीरिक या नैतिक दृष्टि से बच्चों में जो ख़राबियाँ जड़ पकड़ने

लगती हैं, उनका सुधार करना, अच्छी आदतों और चाल-चलन का अभ्यस्त बनाना, उनकी आन्तरिक योग्यताओं को सही रुख़ पर डालना; साथ ही उन्हें इन व्यावहारिक और नैतिक गुणों से सुसज्जित करना जो व्यक्तिगत, सामूहिक और पारिवारिक ज़िम्मेदारियों को ख़ूब अच्छी तरह अंजाम देने में सहायक हों।

- बच्चों के अन्दर बुरे-भले के बीच अन्तर करने, सत्य से प्रेम और असत्य से घृणा, भलाइयों के फैलाने और बुराइयों के मिटाने की भावना जगाना, ताकि समाज के बुरे रुझानों का सामना कर सकें। ख़ुद उनका शिकार होने से सुरक्षित रहें और दूसरों को भी बचाने की कोशिश करें।
- बचपन और जवानी, किताबी दुनिया, व्यावहारिक दुनिया और स्कूल/मदरसे के बीच जो खाई है उसे भरना, ताकि बच्चे हक़ीक़त की दुनिया में सफलता के साथ ज़िन्दगी गुज़ार सकें।
- मानव-जाति के लाभदायक अनुभवों और पूर्वजों से मिले हुए ज्ञान, कला और संस्कृति से सम्बन्धित धरोहरों की सुरक्षा और उनका पर्याप्त विकास करके भावी पीढ़ियों को हस्तान्तरित करना। हमारे पुरखों ने विभिन्न ज्ञान और कलाओं का जो धरोहर छोड़ा है, स्कूल/मदरसे का उत्तरदायित्व है कि उनको नष्ट होने से बचाए और अपने शोध और प्रयोग से उसमें समुचित वृद्धि करके अगली नस्लों को हस्तान्तरित करे।
- बच्चों में यह भावना जगाना कि वे अपने ज्ञान पर ख़ुद भी अमल करें और उसे दूसरों तक पहुँचाएँ।
- समाज को ज्ञान और श्रेष्ठता की एक कसौटी उपलब्ध करना यानी स्कूल/मदरसे को दिए हुए प्रमाणपत्रों से समाज अन्दाज़ा लगा सके कि किसी प्रमाणपत्र का रखनेवाला किन योग्यताओं का मालिक है और वह किस तरह की ज़िम्मेदारियाँ उठा सकता है।

- छात्रों में बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक और नैतिक दृष्टिकोण से जो अन्तर होता है, उसे ध्यान में रखते हुए उनपर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना, ताकि हर बच्चा अपनी सामर्थ्य और योग्यता के मुताबिक़ आगे बढ़ सके।

(3) निकटतम परिवेश

यह तीसरा महत्त्वपूर्ण कारक है। बच्चों की शिक्षा-दीक्षा पर उनके परिवेश का भी बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। बच्चा जिस भौगोलिक परिवेश में रहता है, जिस तरह के दृश्यों से उसका सामना होता है, जिस वर्ग से सम्बन्ध रखता है, जिन बच्चों के साथ खेलता-कूदता और उठता-बैठता है, उन सबका मिला-जुला प्रभाव ग्रहण करता है। पास-पड़ोस के लोगों के रहन-सहन, आस्थाओं और क्रिया-कलापों, रीति-रिवाजों इत्यादि से प्रभावित होता है। परिवेश अगर अच्छा हो तो स्कूल/मदरसे और घर दोनों की कोशिशें फलदायक होती हैं वरना दोनों को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कभी-कभार भले घरों के बच्चे और अच्छे स्कूलों/मदरसों में शिक्षा पानेवाले छात्र भी हर तरह की कोशिशों के बावजूद बुरे माहौल का शिकार हो जाते हैं और उनका विकास मनचाहे तरीक़े पर नहीं हो पाता। इसलिए माहौल को भी शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए अनुकूल बनाने की पूरी कोशिश होनी चाहिए।

(4) समाज

मनुष्य आम तौर पर अपने माहौल और समाज ही की पैदावार होता है। बहुत कम लोग ऐसे क्रन्तिकारी स्वभाव के होते हैं या इबराहीम (अलैहि॰) जैसी पारखी नज़र रखते हैं, जो अपने परिवेश से ऊँचा उठकर कुछ सोच-समझ और कर सकें। समाज में जिन चीज़ों का चलन होता है, लोग भी जाने-अनजाने रूप में उन्हीं को अपना लेते हैं।

आज की सोसाइटी में विभिन्न प्रकार के अच्छे-बुरे कारक सक्रिय नज़र आते हैं और लोगों पर अपनी बुरी-भली छाप छोड़ते रहते हैं। मिसाल के तौर पर विभिन्न प्रकार की धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक पार्टियाँ, क्लब, सोसाइटियाँ, प्रेस, प्लेटफ़ॉर्म, सिनेमा, रेडियो, टेलीविज़न, मेले-ठेले, वाचनालय और पुस्तकालय, संग्रहालय और प्रदर्शनी -स्थल, मानव-सेवा और जनकल्याण के संगठन इत्यादि– आदमी सारी ज़िन्दगी इनसे कुछ न कुछ सीखते और इनसे प्रभाव ग्रहण करते रहते हैं। समाज के ये विभिन्न घटक अगर सही बुनियादों पर काम करते हैं, तो लोगों को ऊँचा उठाने और उनके चरित्र और आचरण को सँवारने में बहुत सहायक होते और अपने लिए निष्ठावान सेवक तैयार करते हैं वरना उनके कारण लोग बिगड़ते जाते हैं और समाज के साथ उन्हें भी ले डूबते हैं।

समाज की ज़िम्मेदारियाँ

समाज की ज़िम्मेदारी है कि वह–

- साभूहिक चेतना को जगाए रखे, तादि बुरे कारक उभरकर समाज को बिगाड़ न सकें।

  विभ्न्नि प्रकार की संस्थाओं, क्लबों और सोसाइटियों इत्यादि से अपने सम्बन्ध बनाए रखे, ताकि हर सलाहियत और रुझान के लोग अपनी अभिरुचि और सामर्थ्य के मुताबिक़ ख़ुद भी लाभ उठा सकें और समाज को भी लाभ पहुँचा सकें।
- लोगों और संगठनों की गतिविधियों पर नज़र रखे। भलाई में उनके साथ पूरा सहयोग करे और बुराइयों की रोकथाम के लिए सक्रिय रहे।
- समाज के पिछड़े, लाचार और दबे-कुचले लोगों को सहारा देने और उनकी सलाहियतों को उपयोगी बनाने का जतन करे।

(5) सरकारी तंत्र और उनके कर्तव्य

सरकार या सरकारी तंत्र का अधिकार और प्रभाव-क्षेत्र दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। सामूहिक कामों से आगे बढ़कर अब वह व्यक्तिगत जीवन में भी हस्तक्षेप करने लगा है। इसके साधन-संसाधन अत्यधिक और व्यापक हैं। नागरिकों के जीवन का कोई क्षेत्र इसके प्रभाव से अछूता नहीं है। इसलिए शिक्षण-प्रशिक्षण का भी यह सबसे बड़ा और सबसे प्रभावकारी कारक है। ऐसी स्थिति में इसकी ज़िम्मेदारियाँ बहुत बढ़ गई हैं।

कर्तव्य

सरकार या शासन-प्रशासन की निम्नलिखित ज़िम्मेदारियाँ हैं—

प्राथमिक शिक्षाओं से हर नागरिक को सुसज्जित करना।

प्रौढ़ लोगों की शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध करना।

धर्म, सम्प्रदाय, रंग और नस्ल के भेदभाव के बिना हर एक को उसकी योग्यता के मुताबिक़ शिक्षा प्राप्त करने के अवसर देना।

ज्ञान-विज्ञान, चिकित्सा और शल्य-चिकित्सा, उद्योग और कला-कौशल, इंजीनियरिंग और कृषि के विकास के लिए छोटी-बड़ी विभिन्न प्रकार की अनेक संस्थाएँ स्थापित करना।

अल्पसंख्यकों को अपनी पसन्द की संस्थाएँ चलाने की सुविधाएँ उपलब्ध कराना।

प्राइवेट संस्थाओं को यथासम्भव आज़ादी से काम करने का मौक़ा देना।

नागरिकों के शिक्षण-प्रशिक्षण पर असाधारण रूप से ध्यान देना और राष्ट्रीय बजट में उसके लिए ज़्यादा से ज़्यादा गुंजाइश निकालना।

निर्धन और असहाय छात्रों की शिक्षा के लिए छात्रवृत्तियों और विशेष

सुविधाओं की व्यवस्था करना।

- गूँगे, बहरे, अन्धे, मन्दबुद्धि और मानसिक या शारीरिक रूप से विकलांग बच्चों के लिए उनकी स्थिति के मुताबिक़ शिक्षण-प्रशिक्षण का प्रबन्ध करना।
- शिक्षण-प्रशिक्षण को आसान, दिलचस्प, प्रभावी और सर्वव्यापी बनाने के तौर-तरीक़ों पर प्रयोग और शोध-कार्य करने के साथ ही स्तरीय पाठ्यसामग्री पर आधारित पाठ्यपुस्तकें तैयार करने के लिए सुविधाएँ उपलब्ध कराना।
- बड़े पैमाने पर अच्छे चरित्र के योग्य शिक्षक तैयार करना।

ये हैं शिक्षण-प्रशिक्षण के विभिन्न कारक। इन कारकों ही की अच्छाई-बुराई, कर्तव्यनिष्ठा या लापरवाही पर शिक्षण-प्रशिक्षण के अच्छे-बुरे नतीजे निर्भर करते हैं। लेकिन जहाँ तक ख़ुद इन कारकों के बुरे या भले होने का सम्बन्ध है, तो उसकी निर्भरता उन मौलिक संकल्पनाओं और धारणाओं पर है, जो इन संस्थाओं को स्थापित करने या चलाने के प्रेरक होते हैं। इसी लिए अच्छे शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए इन संस्थाओं को अच्छा और कर्तव्यनिष्ठ बनाने के प्रयास और कठोर परिश्रम होने चाहिएँ और यह काम उसी समय हो सकता है, जब इनके पीछे काम करनेवाली संकल्पनाओं और धारणाओं में सुधार किया जाए।

☆☆☆

अध्याय-4

शिक्षा का उद्देश्य

शिक्षा के अर्थ की भाँति शिक्षा के उद्देश्य में भी विद्वानों के बीच गहरा मतभेद पाया जाता है। माँ-बाप अपने बच्चों को आम तौर पर इसी लिए शिक्षा दिलाते हैं कि वे पढ़-लिखकर कमाने-खाने के योग्य हो जाएँ। 'शिक्षा रोज़गार के लिए' ही उनका मूल उद्देश्य होता है। हालाँकि मुँह से इस बात को कम ही लोग स्वीकार करते हैं। बेशक कमाना-खाना मनुष्य की मौलिक आवश्यकता है। बहरहाल इस बात की पूरी चिन्ता और कोशिश होनी चाहिए कि बच्चा पढ़-लिखकर अपने पैरों पर खड़ा हो सके। लेकिन मानवता की अपेक्षा सिर्फ़ यही तो नहीं है। केवल खाने-कमाने को शिक्षा का मूल उद्देश्य ठहरा देने से बच्चा आर्थिक जानवर तो ज़रूर बन जाएगा, मनुष्य हरगिज़ नहीं बन सकेगा और मुसलमान के लिए तो जान से भी अधिक ईमान प्यारा होता है। ऐसी स्थिति में आजीविका और धन-दौलत ही को जीवन का उद्देश्य ठहराकर शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था को उसके चारों तरफ़ चक्कर लगवाना असल में बच्चे पर उपकार नहीं, खुल्लम-खुल्ला अत्याचार है।

इसी तरह अधिकतर शिक्षक भी शिक्षा का उद्देश्य मुँह से चाहे कुछ बताएँ, मगर व्यावहारिक रूप से 'शिक्षा : ज्ञान प्राप्त करने के लिए' ही के पक्षधर नज़र आते हैं। वे चाहते हैं कि छात्र अपना सारा ध्यान लिखने-पढ़ने, अपनी शैक्षिक योग्यता बढ़ाने और अच्छे नम्बरों से परीक्षा पास करने पर केन्द्रित रखें। व्यक्तित्व के दूसरे पहलू (शारीरिक, व्यावहारिक, नैतिक इत्यादि) उनकी नज़रों से आम तौर पर ओझल रहते हैं। हालाँकि सन्तुलित और सफल जीवन के लिए यह पहलू भी, इतना ही

नहीं, बल्कि कभी-कभी इससे भी अधिक ध्यान के मुहताज होते हैं। ज्ञान-सम्बन्धी योग्यता में वृद्धि बेशक बहुत ज़रूरी भी है और असाधारण रूप से ध्यान की भी अपेक्षा रखता है। लेकिन व्यक्तित्व के दूसरे पहलुओं को नज़रअन्दाज़ करने या विद्वता पर न्योछावर कर देने के नतीजे भी बहुत ख़तरनाक होते हैं। हमारा आए दिन का अवलोकन है कि अच्छे-ख़ासे पढ़े-लिखे और उच्च शैक्षिक योग्यता रखनेवाले लोग तन्दुरुस्ती, नैतिकता या आचरण की दृष्टि से विभिन्न त्रुटियों का शिकार होकर अपने और दूसरों के लिए उपयोगी होने के बजाय अत्यन्त निकम्मे और हानिकारक सिद्ध होते हैं।

शिक्षा के और भी बहुत-से उद्देश्य प्रस्तुत किए जाते हैं, जिनमें ख़ास-ख़ास ये हैं—

(1) समाज का निष्ठावान और निस्स्वार्थ सेवक बनाना।

(2) देश का अच्छा नागरिक बनाना।

(3) व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को समान रूप से सँवारना।

(4) व्यक्तित्व और आत्मविश्वास का पूर्ण विकास करना।

(5) ज़िन्दगी बिताने के लिए पूरी तरह तैयार करना यानी छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे—

- अपनी रक्षा स्वयं कर सकें।
- जीवन की सामान्य ज़रूरतों की पूर्ति कर सकें।
- बाल-बच्चों और परिवार का लालन-पालन और देखभाल कर सकें।
- सामाजिक सम्बन्ध को बनाए रख सकें।
- छुट्टी के समय को अच्छी तरह गुज़ार सकें।

(6) नैतिकता, आचरण और चरित्र को सँवारना।

(7) स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन-मस्तिष्क को परवान चढ़ाना इत्यादि।

शिक्षा के उपर्युक्त उद्देश्यों के महत्त्व और लाभों से इनकार नहीं

किया जा सकता। लेकिन इनमें से एक भी अकेले ही उद्देश्य नहीं बन सकता; क्योंकि हर एक अलग-अलग अधूरा, त्रुटिपूर्ण, एक पक्षीय या अस्पष्ट है।

शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य

अल्लाह का नेक बन्दा बनाना है—शिक्षा का बुनियादी मक़सद : यानी छात्रों की नैसर्गिक योग्यताओं को उजागर करना, उनकी प्राकृतिक प्रवृत्तियों को सही दिशा पर डालना और उन्हें मानसिक, शारीरिक, व्यावहारिक और नैतिक दृष्टि से क्रमशः इस योग्य बनाना कि वे अल्लाह के कृतज्ञ बन्दे बनकर रहें। सृष्टि की वस्तुओं का उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ उपयोग करें और साथ ही व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामूहिक हैसियत से उनपर जो ज़िम्मेदारियाँ उनके बनानेवाले मालिक की तरफ़ से लागू होती हैं, उन्हें वे समुचित रूप से पूरी कर सकें।

शिक्षा का यही सही, व्यापक और मूल उद्देश्य है; क्योंकि—

अल्लाह ने सबको पैदा किया है। वही सबको पालता-पोसता और सबकी ज़रूरतें पूरी करता है। वही सबका मालिक, पूज्य, प्रभु, शासक और बादशाह है। उसका राज्य असीम और अनन्त है, सम्पूर्ण सृष्टि पर उसकी सत्ता है। हमारी यह लम्बी-चौड़ी ज़मीन उसके असीम साम्राज्य का एक छोटा-सा हिस्सा है। अल्लाह ने इसको तरह-तरह के साधनों-संसाधनों से माला-माल किया है। इन चीज़ों को हमारे उपयोग में देकर हमें यहाँ बसाया है। सृष्टि की सारी चीज़ों का सही और सच्चा मालिक वही है। हमको जो कुछ मिला है, उसी की अमानत है। हम उसके बन्दे और ग़ुलाम हैं। उसने हमें ज़िन्दगी गुज़ारने का विस्तृत तरीक़ा बताया है। हमारा परम कर्तव्य है कि हम उसके कृपादानों और मेहरबानियों के प्रति कृतज्ञ हों। उसके बताए हुए रास्ते पर चलें और उसके साम्राज्य में उसकी मर्ज़ी पूरी करें। उसने हमपर तरह-तरह की ज़िम्मेदारियाँ डाली हैं। उन

ज़िम्मेदारियों को अंजाम देने के लिए उसने हमें एक सुडौल शरीर दिया है, जिसके अन्दर तरह-तरह की योग्यताएँ और क्षमताएँ समाहित कर दी हैं। हमारे चारों तरफ़ तरह-तरह के साधन-संसाधन उपलब्ध किए हैं। उसकी दी हुई कोई चीज़ बेकार नहीं है। हमारी भलाई और सफलता इसी में है कि हम अल्लाह की प्रदान की हुई शक्तियों, योग्यताओं और सामग्रियों को उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ ख़र्च करें। यानी उसके कृतज्ञ और अच्छे बन्दे बनकर रहें।

ज़ाहिर है, यह उद्देश्य उसी समय प्राप्त हो सकता है, जब शिक्षण-प्रशिक्षण में निम्नलिखित बातें हमारे सामने रहें—

(1) शारीरिक तन्दुरुस्ती : अल्लाह ने जो सुडौल शरीर प्रदान किया है उसकी तन्दुरुस्ती और पलने-बढ़ने के लिए ज़रूरी जानकारियाँ देना। स्वास्थ्य-सुरक्षा के नियमों की पाबन्दी कराना, शारीरिक परिश्रम, व्यायाम या खेल और सफ़ाई-सुथराई का आदी बनाना और सुरक्षा के उपाय बताना।

(2) नैसर्गिक योग्यताओं और क्षमताओं का विकास : अल्लाह ने मनुष्य के अन्दर जो प्राकृतिक शक्तियाँ और योग्यताएँ समाहित कर दी हैं, वे सब उसके लिए बहुत ही ज़रूरी और लाभदायक हैं। उन सबको विकसित करने की चिन्ता और कोशिश करना, उनके समुचित उपयोग के सन्दर्भ में सहायता और मार्गदर्शन करना, इनमें से किसी एक को भी न तो दबाना-कुचलना और न उनको नज़रअन्दाज़ करना।

(3) नैसर्गिक अभिरुचियों और प्रवृत्तियों को सही दिशा पर डालना और अच्छी तथा लाभदायक गतिविधियों के प्रति अभिरुचि और लगाव पैदा करना। इस्लामियात (इस्लामी शिक्षाओं), भाषा और साहित्य, सामाजिक ज्ञान और पाठ्यसहगामी क्रियाओं आदि के द्वारा यह काम किया जाए, ताकि बच्चे अपनी छुट्टी के समय अच्छे और उपयोगी

और लाभदायक कार्य-कलापों में लगाने के आदी बनें।

(4) सही ढंग से सोचने-समझने और बुरे-भले, सत्य-असत्य में अन्तर करने की कसौटी उपलब्ध करना, ताकि ग़लत विचारधाराओं और मिथ्या धारणाओं का शिकार न हों।[3]

(5) व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामूहिक ज़िम्मेदारियों का सही ज्ञान और उन्हें अंजाम देने का व्यावहारिक प्रशिक्षण देना।

(6) प्रकृति के कारख़ाने का ज्ञान देना और उसके छिपे और खुले हुए ख़ज़ाने का सही उपयोग बताना।

(7) लिखना-पढ़ना सिखाना और दूसरी जानकारियाँ प्रदान करना।

(8) चरित्रवान और सदाचारी बनाना।[4]

ये हैं वे ऊँचे, उपयोगी और कल्याणकारी उद्देश्य, जो बच्चों की शिक्षा-दीक्षा के सम्बन्ध में बड़ों की नज़रों के सामने रहने चाहिएँ; लेकिन इसका यह मतलब बिलकुल ही नहीं कि बच्चों को समय से पहले प्रौढ़ बनाने की कोशिश की जाए या उनके बचपन के गुणों, दिलचस्पियों और रुझानों को नज़रअन्दाज़ करके शिक्षा-दीक्षा का कोई प्रोग्राम बनाया जाए। भविष्य की चिन्ता में लोगों से आम तौर पर ऐसी चूक हो जाती है। इसलिए बच्चों पर इसकी गम्भीर प्रतिक्रिया होती है। उनके व्यक्तित्व में विद्रोह, दिखावा या मिथ्याचार के विषाणु पलने लगते हैं और उनकी बौद्धिक और शारीरिक योग्यताएँ कुण्ठित होने लगती हैं। इसलिए इन उच्च उद्देश्यों को हमेशा अपने सामने ज़रूर रखा जाए। लेकिन बच्चों से न तो बहुत ऊँची आशाएँ बाँधी जाएँ और न कोई चीज़ समय से पहले उनपर थोपी जाए; बल्कि शिक्षा-दीक्षा का प्रोग्राम बनाते समय उनके बचपन के गुणों और दिलचस्पियों का यथासम्भव ध्यान रखा जाए और

---

[3] शिक्षा का उद्देश्य भ्रान्ति (त्रुटि) को दूर करना और सत्य की खोज करना है।—सुकरात

[4] सद्‌गुणों द्वारा सुख की प्राप्ति ही शिक्षा का सच्चा उद्देश्य है।—अरस्तू

इन्हीं रास्तों से क्रमशः ये उद्देश्य प्राप्त किए जाएँ—

(1) शिक्षा का उद्देश्य निस्स्वार्थ भाव से किए गए सत्कर्म के द्वारा ख़ुशहाली प्राप्त करना है। (अरस्तू)

(2) शिक्षा का उद्देश्य आदर्श मानव का निर्माण है। (पेन)

(3) शिक्षा का लक्ष्य है पूर्ण मानव बनने का प्रशिक्षण। (कॉमेनिस)

(4) शिक्षा से तात्पर्य है विवेकपूर्ण या ऐच्छिक विकास। (डेविडसन)

(5) शिक्षा एक कला है, जिससे विशेषज्ञ नहीं, बल्कि मनुष्य बनाए जाते हैं। (माउंटेन)

(6) संगमरमर के टुकड़े के लिए जिस तरह संगतराशी है, वैसे ही मनुष्य की आत्मा के लिए शिक्षा है। (एडिसन)

(7) शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान से भर देना नहीं है, बल्कि योग्यता का प्रशिक्षण और निर्माण है। (ऑर्केट)

(8) शिक्षा का उद्देश्य विशुद्ध, निष्ठापूर्ण, त्रुटिरहित और साफ़-सुथरी ज़िन्दगी बसर करने के योग्य बनाना है। (फ्रूबेल)

(9) शिक्षा से तात्पर्य अनुभव का नए सिरे से निर्माण है, जिसमें व्यक्ति को अपनी शक्तियों पर ज़्यादा आधिपत्य पाने के योग्य बनाते हुए उसके अनुभव में व्यापकता पैदा की जाती है और उसे सामाजिक दृष्टि से ज़्यादा फ़ायदेमन्द बनाया जाता है। (डेवी)

(10) आम तौर पर मानवता का सर्वोत्तम उद्देश्य नैतिकता मानी जाती है और इसी तरह शिक्षा का भी। (हरबर्ट)

☆☆☆

अध्याय-5

विभिन्न शिक्षा-सिद्धान्त

जीवन के दूसरे सभी क्षेत्रों की तरह शिक्षा के सम्बन्ध में भी विभिन्न सिद्धान्त और विचारधाराएँ हैं, लेकिन हम यहाँ सिर्फ़ निम्नलिखित तीन महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों पर विचार करेंगे–

(1) साम्यवादी, (2) प्रजातांत्रिक, (3) इस्लामी।

दुनिया का नेतृत्व आज अमेरिका और रूस[5] के हाथ में है। विचारधाराओं के मैदान में भी यही दोनों आगे-आगे हैं। अमेरिका प्रजातंत्र का ध्वजावाहक है और रूस साम्यवाद का।

दुनिया के वे सभी देश जो अमेरिका से प्रभावित और उसके रोब-दाब में हैं, वे राष्ट्रवादी प्रजातंत्र पर विश्वास रखते हैं और अपने यहाँ की शिक्षा का ढाँचा भी इसी दृष्टिकोण के अन्तर्गत निर्मित करते हैं और जो लोग रूस का अनुसरण करनेवाले हैं, वे अधिनायकवादी साम्यवाद के को अपनाते हैं और उनकी शिक्षा-प्रणाली पर भी उसकी गहरी छाप होती है। इसी लिए शिक्षा की ग़ैर-इस्लामी विचारधाराओं में से सिर्फ़ इन्हीं दो को हमने बहस के लिए चुना है।

साम्यवादी शिक्षा-सिद्धान्त

साम्यवाद एक भौतिकवादी व्यवस्था है, जो अपनी मज़हब दुश्मनी, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए मशहूर है। वर्ग-संघर्ष छेड़कर वह अपना उल्लू सीधा करता है। व्यक्ति और

---

[5] सोवियत यूनियन के विघटन (1989 ई.) के बाद अब अमेरिका अकेले इस मैदान में रह गया है और आर्थिक-सांस्कृतिक वर्चस्व के सिद्धान्त का प्रबल पक्षधर है। —अनुवादक

उनकी व्यक्तिकता का उसके नज़दीक महत्त्व नहीं है। नागरिकों की जान और माल, उनका मान-सम्मान और देश के सारे साधनों और संसाधनों का स्वामी राज्य होता है। इसलिए साम्यवादी व्यवस्था ख़ुदा से पूरी तरह बग़ावत करने और लोगों के निजी व्यक्तित्व को कुचलने पर तुला रहता है। उसे प्रकृति के विरुद्ध निरन्तर युद्ध करना पड़ता है। उसे हर घड़ी प्रतिक्रान्ति का ख़तरा रहता है। इसी लिए अपने अस्तित्व और स्थायित्व के लिए उसे ज़ोर-ज़बरदस्ती, अन्याय-अत्याचार, निरंकुशता और तानाशाही का सहारा लेना पड़ता है।

शिक्षा का उद्देश्य

साम्यवाद के ध्वजावाहक दावा तो यह करते हैं कि शिक्षण-प्रशिक्षण के द्वारा लोगों को 'समाज का निष्ठावान सेवक बनाना' चाहते हैं, लेकिन असल में वे छात्रों की नैसर्गिक योग्यताओं और व्यक्तिगत गुणों को इस अन्दाज़ से मोड़ने की कोशिश करते हैं कि वे अपने आपको सामूहिक भौतिक हितों पर न्योछवर और अपने निजी व्यक्तित्व को सामूहिकता में गुम कर दें। वे छात्रों को भौतिकतावादी, धर्म-शत्रु और ख़ुदा का बाग़ी बनाते हैं। उनके अन्दर वर्गीय वैमनस्य पैदा करते हैं और उन्हें जानवरों से बदतर बनाकर रख देते हैं। इस तरह कुछ लोग या एक छोटी-सी पार्टी देश के सारे साधनों-संसाधनों और सबके शरीर और प्राण पर क़ब्ज़ा करके दो जून की रोटी के बदले हर एक को स्वाभिमानरहित और अपना उपकरण बना लेती है और कहा यह जाता है कि हमने मनुष्य की आर्थिक समस्याओं का समाधान कर दिया है। अगर यह दावा मान भी लिया जाए तो—

"खाने-पीने की चीज़ों की व्यवस्था, जिसकी कुंजियाँ दूसरों के हाथों में हों, अगर प्रचुर मात्रा में भी हो तो रुचिकर नहीं; क्योंकि इससे उड़ान में जो सुस्ती आती है, सिर्फ़ शरीर का मोटापा उसकी पूर्ति नहीं कर सकता।"

साम्यवादी शिक्षा-सिद्धान्त की विशेषताएँ

साम्यवादी शैक्षिक विचारधारा के आधार पर जो शिक्षा-प्रणाली बनाई गई है, उसमें निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं–

(1) शिक्षा सार्वजनिक और अनिवार्य होती है, ताकि देश के सभी लोग साम्यवाद से प्रभावित और इस व्यवस्था का पक्षधर और सेवक बन सकें।

(2) शिक्षा की पूरी व्यवस्था राज्य के नियंत्रण में होती है। सरकार द्वारा निर्मित ढाँचे के मुताबिक़ हर एक को शिक्षा दी जाती है। प्राइवेट संस्था बनाने की बिलकुल ही अनुमति नहीं है, ताकि छात्रों के कानों में सरकार या साम्यवाद के विरुद्ध कोई बात न पड़ने पाए।

(3) शिक्षा मुफ्त दी जाती है। शिक्षा चाहे सामान्य ढंग की हो या व्यावसायिक, उद्योग-धंधे से सम्बद्ध हो या कृषि-सम्बन्धी सारे ख़र्च राज्य खुद उठाता है। छात्रों को खाना, कपड़ा और शैक्षिक सामान भी सरकार की तरफ़ से मुफ्त उपलब्ध कराए जाते हैं।

(4) सभी बच्चों के लिए छोटी उम्र से ही शिक्षा की व्यवस्था करने की कोशिश की जाती है, ताकि बच्चों के मन-मस्तिष्क पर शुरू ही से साम्यवाद की गहरी छाप पड़ सके। इसके लिए माँ-बाप को विशेष प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है और नर्सरी स्कूलों की व्यापक पैमाने पर व्यवस्था की जाती है।

(5) धर्म और सम्प्रदाय, रंग और नस्ल, लिंग और वर्ग के भेदभाव के बिना सबको एक-सी शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती है। मानसिक और शारीरिक काम करनेवालों में भी अन्तर नहीं किया जा सकता। सबको एक ही डंडे से हाँका जाता है।

(6) धर्म, नैतिकता, आध्यात्मिकता या जीवन के शाश्वत मूल्यों को इस शिक्षा-व्यवस्था में कोई जगह नहीं दी जाती। इसके विपरीत भौतिकता, नास्तिकता, धर्म-शत्रुता और वर्गीय घृणा, वैमनस्य और भेदभाव कूट-कूट कर भरने की कोशिश की जाती है, ताकि समाज के वर्तमान ढाँचे को जड़ से उखाड़कर शुद्ध भौतिकता और नास्तिकता के आधार पर समाज का निर्माण किया जा सके।

(7) स्कूल/मदरसे के सारे विषयों, क्रिया-कलापों और गतिविधियों पर उपयोगितावादी दृष्टिकोण हावी रहता है। वही कुछ सिखाया- पढ़ाया और कराया जाता है, जिससे आर्थिक लाभ प्राप्त हो और राष्ट्र के सकल उत्पाद और राष्ट्र की सम्पत्ति में वृद्धि हो। इसी लिए कला-कौशल ही को मौलिक महत्त्व दिया जाता है। स्कूल/मदरसे स्थानीय उद्योग-धंधों ही से सम्बद्ध कर दिए जाते हैं और छात्रों को फ़ार्मों या कारख़ानों इत्यादि में व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त करनी होती है।

(8) देश की दूसरी संस्थाएँ शिक्षण-संस्थनों के साथ पूरा सहयोग करते हैं। चूँकि साम्यवादी व्यवस्था में सारे उद्योग-धंधे, कल-कारख़ाने, व्यापार और कृषि इत्यादि सरकार के ही हाथ में होती है, इसलिए कारख़ाने, फ़ार्म और दूसरी सरकारी संस्थाएँ स्कूल/मदरसे की हर सम्भव सहायता करते हैं।

(9) सरकार को अपनी योजना के मुताबिक़ जिस योग्यता और क्षमता और जिस कला-कौशल के जितने कार्यकर्त्ताओं की आवश्यकता होती है, सबको अपने नियंत्रण और देख-रेख में तैयार कराती है, ताकि देश की ज़रूरतों और लोगों की योग्यताओं में सन्तुलन रहे।

(10) पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक और शिक्षा-प्रणाली सब राज्य द्वारा निर्धारित किया हुआ होता है। छात्रों को अपने लिए विषय के चुनाव और

शिक्षकों को शिक्षा-प्रणाली के सन्दर्भ में बिलकुल ही कोई आज़ादी नहीं दी जाती। इसी लिए पूरी शिक्षा-व्यवस्था जड़ और बेलचक होती है और इसमें असाधारण एकरूपता पाई जाती है।

साम्यवादी शिक्षा-सिद्धान्त के गुण और दोष

गुण

इस व्यवस्था में हालाँकि कुछ गुण भी पाए जाते हैं, उदाहरण के लिए—

लोगों में सामूहिक हित के लिए व्यक्तिगत हित को न्योछावर करने की असाधारण भावना पैदा करने की कोशिश की जाती है।

छात्रों को शारीरिक परिश्रम का आदी बनाया जाता है और वे हाथ से काम करने को शर्म की बात नहीं समझते।

सैद्धान्तिक के बजाय व्यावहारिक शिक्षा पर ज़ोर देने की वजह से छात्र अपने ज्ञान को व्यवहार में लाने के तरीक़ों से ख़ूब अच्छी तरह अवगत होते हैं और सैद्धान्तिक के बजाय व्यावहारिक आदमी बनते हैं।

आर्थिक और सामाजिक समानता और धन-दौलत के समान वितरण पर शुरू से ही असाधारण ज़ोर देने के कारण छात्रों में ऊँच-नीच, धनी-निर्धन इत्यादि का अन्तर और भेदभाव नहीं होता।

मुफ्त, सामान्य और अनिवार्य शिक्षा की वजह से हर आदमी शिक्षित हो जाता है।

शिक्षा में एकरूपता के कारण लोगों में वैचारिक समानता की ज़्यादा सम्भावना रहती है और वैचारिक एवं व्यावहारिक मतभेदों की अधिक आशंका नहीं होती।

सब कुछ सरकार के नियंत्रण में होने के कारण घर, स्कूल/मदरसे,

समाज और सरकार की विभिन्न संस्थाओं में पूर्ण सहयोग और सामंजस्य होता है, जिससे बच्चों की शिक्षा में बहुत सुविधा हो जाती है।

- शिक्षा पर सरकार का पूर्ण नियंत्रण होने के कारण देश की ज़रूरतों को ध्यान में रखकर उसी के मुताबिक़ शिक्षा दी जाती है। इसलिए शिक्षित बेरोज़गारों की समस्या नहीं खड़ी होती।

लेकिन इन अच्छाइयों के साथ कुछ ऐसी बुनियादी ख़ामियाँ पाई जाती हैं, जो इस विचारधारा की सारी उपयोगिता पर पानी फेर देती हैं और इसे अस्वीकार्य ठहराती हैं। उदाहरण के लिए—

दोष

- ख़ुदा से बग़ावत, मज़हब दुश्मनी और नैतिक मूल्यों को कुचलने की शिक्षा लेकर पलने-बढ़नेवाले लोग मानव-जाति के लिए दानव ही हो सकते हैं। उनसे किसी भलाई की आशा नहीं की जा सकती। वे न केवल दूसरों के लिए अत्याचारी होते हैं, बल्कि अपने आप पर भी अत्याचार करते हैं और मौक़ा मिले तो राज्य को भी नहीं छोड़ते।
- लोगों के निजी व्यक्तित्व को कुचल कर रख दिया जाता है।
- ज़ोर-ज़बरदस्ती और बाहरी दबाव के कारण छात्रों को अपनी इच्छा, राय और अन्तरात्मा से निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है। वे मानसिक द्वन्द्व के शिकार हो जाते हैं। ज़ाहिर है कि ऐसे छात्र कभी ठोस चरित्र और आचरण के मालिक नहीं बन सकते।
- भौतिकतावादी और उपयोगितावादी विचारधारा प्रभावी होने के कारण स्वार्थपरता आम हो जाती है।
- हर चीज़ ऊपर से थोपने का नतीजा यह होता है कि शिक्षक और छात्र सब काम को बेगार समझने लगते हैं और आम तौर पर काम

चोरी की आदत पड़ जाती है और पूरी क़ौम डंडे के ज़ोर से चलं की आदी हो जाती है।

- लोगों के व्यक्तित्व के बहुत-से पहलू नज़रअन्दाज़ कर दिए जाते ं और सन्तुलित विकास न होने की वजह से अत्यन्त अधूरा व्यक्तित परवान चढ़ता है।
- उत्पादन और राष्ट्रीय सम्पत्ति की वृद्धि को असाधारण महत्त्व देक शिक्षण-प्रशिक्षण के द्वारा लोगों को आर्थिक जानवर की सतह प उतार लाया जाता है। खाने-कमाने के सिवा ज़िन्दगी में और किर्स चीज़ की कोई अहमियत बाक़ी नहीं रहने दी जाती।
- देश के कुछ ज़िम्मेदार लोगों (शासक वर्ग) के सिवा बाक़ी सारे लोगं को मानसिक जड़ता और निष्क्रियता का शिकार बना दिय जाता है।
- लोगों को दुनिया की सुख-शान्ति और परलोक की सफलता दोनों सं वंचित कर दिया जाता है।

प्रजातांत्रिक शिक्षा-प्रणाली

तानाशाही या राजतंत्र के विपरीत प्रजातंत्र में सम्प्रभुता के मालिव सारे देशवासी होते हैं। उन्हीं की मर्ज़ी से सरकारें बनतीं और क़ानू बनते हैं। सत्ता पर किसी व्यक्ति, परिवार या वर्ग का एकाधिकार नहं होता। जनता के चुने हुए प्रतिनिधि सरकार चलाते हैं। चुनाव आम तौ पर चार-पाँच साल में कराए जाते हैं। बहुमत से जो लोग भी चयनित हं जाएँ, निर्धारित अवधि तक वही सरकार के ज़िम्मेदार होते हैं। चुनावों क आधार आम तौर पर वयस्क मताधिकार होता है। हर वयस्क स्त्री-पुरु को वोट देने और उम्मीदवार बनने का अधिकार प्राप्त होता है। हर एव का वोट बराबर माना जाता है। बहुमत से सरकार बदली जा सकती है

इस तरह प्रजातंत्र निम्नलिखित चीज़ों पर विश्वास रखने का दावा करता है–

(1) लोगों की आज़ादी पर विश्वास

यानी देश के हर नागरिक को ज़िन्दा रहने, घूमने-फिरने, संगठन बनाने और सभाएँ करने की आज़ादी है। लेखन, भाषण, आस्था और पंथ, विचार, अन्तरात्मा इत्यादि की आज़ादी, शिक्षा और अपने विचारों के प्रचार-प्रसार का अधिकार प्राप्त होता है। शर्त यह है कि इससे देश और जाति या दूसरे नागरिकों को नुक़सान न पहुँचाया जाए या दूसरों के अधिकारों पर डाका न डाला जाए।

(2) समानता पर विश्वास

यानी सभी नागरिक बराबर हैं। जात-पात, रंग और नस्ल, आस्था और पंथ, लिंग या धन-दौलत के आधार पर नागरिकों के बीच अन्तर और भेदभाव न किया जाए। हर एक को आगे बढ़ने के एक समान अवसर प्राप्त हों। जो भी जिस जगह और पद के लिए उपयुक्त और अपेक्षित योग्यताएँ उपलब्ध कराए, वह उसपर आसीन हो सके।

(3) सामूहिकता और सह-अस्तित्व पर विश्वास

देश के सभी नागरिक मिल-जुलकर रहें। एक-दूसरे के व्यक्तित्व और निजता का ध्यान रखें और देश और जाति के हित के लिए परस्पर सहयोग करें।

(4) परिवर्तन में विश्वास

परिवर्तन स्वाभाविक है। यही ज़िन्दगी और तरक़्क़ी की निशानी है। ज़माना हर घड़ी बदलता रहता है। देश की हालतों और ज़रूरतों में भी परिवर्तन होता रहता है। नई परिस्थितियाँ नई समस्याएँ खड़ी करती हैं। इसलिए देश के अस्तित्व, स्थिरता और विकास के लिए इसकी व्यवस्था,

पॉलिसी और प्रोग्राम में भी ज़रूरत के मुताबिक़ बदलाव होना चाहिए, लेकिन यह बदलाव उसी समय लाभदायक और फलदायक हो सकता है, जब उसके लाने में नागरिकों की राय और मर्ज़ी को दख़ल हो। कोई चीज़ ऊपर से न थोपी जाए।

शिक्षा का उद्देश्य

चूँकि प्रजातांत्रिक व्यवस्था की सफलता या असफलता देश के नागरिकों की सलाहियत पर निर्भर करती है, इसलिए प्रजातंत्र के ध्वजावाहकों की दृष्टि में शिक्षा का उद्देश्य नागरिकों को 'देश का आदर्श नागरिक बनाना' है, लेकिन राष्ट्रवादी प्रजातंत्र में भी चूँकि—

- भौतिक विकास और आर्थिक सम्पन्नता ही को मूल रूप से महत्त्व दिया जाता है और इसके लिए नागरिकों में आपस में और दूसरे देशों से निरन्तर होड़ लगी रहती है।
- नागरिकों को निरन्तर देशभक्ति और जातीय पक्षपात का नशा पिलाया जाता रहता है।

इसलिए यहाँ भी नैतिक मूल्य की हैसियत व्यावहारिक रूप से अतिरिक्त विषय की हो जाती है और उनकी कोई स्थायी हैसियत बाक़ी नहीं रहती और जहाँ देश के हित और नैतिक सिद्धान्तों में परस्पर टकराव नज़र आता है, वहाँ एक अच्छे नागरिक से सिद्धान्तों को त्याग देने और नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों की बलि चढ़ा देने की आशा की जाती है, जबकि एक अच्छे आदमी से ऐसी आशा हरगिज़ नहीं की जा सकती। इसलिए शब्द 'आदर्श' से भ्रम न होना चाहिए। आदर्श नागरिक और अच्छे आदमी के गुण अक्सर मामलों में परस्पर विरोधी माने जाते हैं।

प्रजातांत्रिक शिक्षा-सिद्धान्त की विशेषताएँ

इस विचारधारा पर आधारित शिक्षा की जो प्रणाली बनाई जाती है,

उसमें निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं—

(1) प्राथमिक शिक्षा सबके लिए और अनिवार्य होती है। कोशिश की जाती है कि सभी नागरिक बुनियादी शिक्षा-दीक्षा से सुसज्जित हो जाएँ।

(2) सामान्य प्राथमिक शिक्षा मुफ़्त देने की कोशिश की जाती है, ताकि कोई नागरिक साधन की कमी के कारण बुनियादी शिक्षा से वंचित न रह जाए।

(3) धर्म, जाति, रंग और नस्ल या सम्प्रदाय और वर्ग इत्यादि के किसी अन्तर और भेदभाव के बिना, हर एक को अपनी सलाहियतों को बढ़ाने और सामने लाने के एक समान मौक़े प्राप्त होते हैं।

(4) छात्रों के वैयक्तिक गुणों और उनके बीच सलाहियतों के अन्तर को ध्यान में रखकर उनपर वैयक्तिक रूप से ध्यान दिया जाता है, ताकि हर आदमी अपनी सलाहियत के मुताबिक़ आगे बढ़ सके।

(5) व्यक्ति और समाज दोनों को महत्त्व दिया जाता है। किसी एक को दूसरे पर क़ुरबान नहीं किया जाता, बल्कि जहाँ व्यक्ति को ज़्यादा से ज़्यादा तरक़्क़ी के मौक़े दिए जाते हैं, वहीं उसकी सामूहिक ज़िम्मेदारियों को पूरा करने के लिए भी तैयार किया जाता है।

(6) शिक्षक और विद्यार्थी दोनों की आज़ादी का सम्मान किया जाता है। शिक्षक तानाशाह के बजाय दयालु मार्गदर्शक की हैसियत से काम करता है। ज़ोर-ज़बरदस्ती और बाहरी दबाव से काम नहीं लेता, बल्कि आज़ादी के माहौल में शिक्षा देता है। शिक्षक को भी शिक्षण-विधि और स्कूल-प्रबन्धन आदि के मामले में अधिक से अधिक आज़ादी दी जाती है।

(7) भौतिक और उपयोगितावादी दृष्टिकोण को असाधारण महत्त्व दिया जाता है, लेकिन ज़िन्दगी के ऊँचे और आदर्श मूल्यों को बिलकुल

नज़रअन्दाज़ नहीं कर दिया जाता। कम से कम जातीय और राष्ट्रीय स्तर पर इसको भी महत्त्व दिया जाता है।

(8) धर्म को आदमी का निजी मामला समझा जाता है और इसे पूजा-पाठ तक सीमित रखने की कोशिश की जाती है। सामूहिक मामलों में इसके हस्तक्षेप को सही नहीं समझा जाता। इसलिए धार्मिक शिक्षा को लोगों और निजी संस्थाओं के स्वविवेक पर छोड़ दिया जाता है। सरकार अपने शिक्षण-संस्थानों में इसकी व्यवस्था नहीं करती।

(9) देश के विभिन्न धार्मिक, भाषाई, सांस्कृतिक या वर्गगत समूहों के बीच अधिक से अधिक साझा हित और दिलचस्पियाँ पैदा कराने की कोशिश की जाती है और उनकी वैयक्तितता को धीरे-धीरे सीमित करते-करते सबको आख़िरकार एक राष्ट्र और एक संस्कृति (Culture) तक लाने की कोशिश की जाती है।

(10) प्राइवेट संस्थाओं की स्थापना को प्रोत्साहित किया जाता है। लोगों और समूहों का यह अधिकार स्वीकार किया जाता है कि वे अपने शिक्षण-संस्थान चला सकें और अपने बच्चों को अपनी मर्ज़ी की शिक्षा दे सकें।

(11) शिक्षा की व्यवस्था में केन्द्र कम से कम हस्तक्षेप करता है। स्थानीय निकाय और प्रान्तीय सरकारों को अधिक से अधिक अधिकार दिए जाते हैं, ताकि प्रजातंत्र की रंगा-रंगी (विविधता) बनी रहे। लोग ज़्यादा से ज़्यादा आज़ादी का माहौल महसूस करें और स्वतंत्रतापूर्वक अनुभव प्राप्त और नए प्रयोग कर सकें।

(12) सभी देशवासियों को एकजुट रखने और उनमें एकता पैदा करने के लिए राष्ट्रवाद और देशभक्ति की भावनाओं को ज़्यादा से ज़्यादा बढ़ावा दिया जाता है।

समालोचना

राष्ट्रवादी प्रजातांत्रिक शिक्षा-व्यवस्था में जहाँ बहुत-सी अच्छाइयाँ हैं, उदाहरण के लिए—

व्यक्ति की आज़ादी का सम्मान और व्यक्तित्व के विकास के लिए आज़ादी का माहौल।

सार्वजनिक, अनिवार्य और निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था।

सामानता और आगे बढ़ने के लिए एक समान मौक़े।

सलाहियत और मेहनत के लिहाज़ से तरक़्क़ी करने की पूरी गुंजाइश।

सम्भ्यता और संस्कृति, धर्म और नैतिकता का किसी हद तक ध्यान रखना इत्यादि। वहीं कुछ बुनियादी त्रुटियाँ भी हैं, उदाहरण के लिए—

शुरू से ही राष्ट्रवाद और देशभक्ति का नशा पिलाकर नागरिकों को पूर्वाग्रह, पक्षपात, संकीर्ण विचार और राष्ट्रीय स्वार्थपरता का शिकार बना दिया जाता है। देश की सीमा से बाहर बसनेवालों के लिए उनके दिलों में आम तौर पर गुंजाइश बाक़ी नहीं रहती; बल्कि उनके विरुद्ध शत्रुतापूर्ण भावनाएँ परवान चढ़ती हैं। ज़ाहिर है, ऐसे लोगों से मानवता के हित में किसी भलाई की आशा कम ही की जा सकती है।

धार्मिक शिक्षा की उपेक्षा करके या अभिभावकों और प्राइवेट संस्थाओं के स्वविवेक पर छोड़कर व्यावहारिक रूप से बहुत बड़ी जनसंख्या का रिश्ता धर्म और नैतिकता से काट दिया जाता है; क्योंकि लोग अपने तौर पर बहुत सीमित और अधूरी व्यवस्था कर पाते हैं।

- ज़िन्दगी के सभी क्षेत्रों, ख़ास कर सामूहिक मामलों में ख़ुदा की हिदायत से वंचित रखकर नागरिकों को दोनों जहान (लोक- परलोक) की सफलता और भलाई से वंचित कर दिया जाता है।
- अपने और परायों के लिए अलग-अलग पैमाने देकर नैतिक मूल्यों को कमतर हैसियत दे दी जाती है। इसलिए लोगों में सिद्धान्तप्रियता बाक़ी नहीं रहती और वे धीरे-धीरे अपनों के साथ भी धांधली करने लगते हैं।
- सच्चाई और इनसाफ़ और ज़िन्दगी के स्थायी सिद्धान्तों के बजाय बहुमत को फ़ैसले की बुनियाद ठहराने के कारण अल्पसंख्यकों के साथ आम तौर पर कम ही इनसाफ़ किया जाता है।

इसलिए राष्ट्रवादी प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण से शिक्षा देने के नतीजे में आम तौर पर 'सिद्धान्तहीन उपद्रवी' ही पैदा होते हैं।

इस्लामी शिक्षा-सिद्धान्त

- इस्स्लाम एक सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था है। अल्लाह के नज़दीक सारे मनुष्यों के लिए एकमात्र प्रामाणिक दीन-धर्म यही है। केवल इसी को अपनाकर आदमी लोक-परलोक की सफलता और कल्याण प्राप्त कर सकता है।

इस्लामी व्यवस्था का मूल आधार

(1) **एकेश्वरवाद (तौहीद) :** सम्पूर्ण सृष्टि का पैदा करनेवाला, रोज़ी देनेवाला, मालिक और शासक अल्लाह है। सारे मनुष्य उसके बन्दे और गुलाम हैं। नेतृत्व और सत्ताधिकार सिर्फ़ उसी के लिए ख़ास है। हर एक को उसका आज्ञाकारी बनकर रहना चाहिए और उसी के आगे सिर झुकाना चाहिए।

(2) **ईशदूतत्व (रिसालत) :** अल्लाह ने मनुष्यों की हिदायत के लिए

अपने पैग़म्बर भेजे–अल्लाह के रसूल अपने साथ अल्लाह के फ़रमान (आदेश और निर्देश) लाए। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के आख़िरी रसूल हैं। आप (सल्ल०) पर पैग़म्बरी का सिलसिला ख़त्म हो गया। आप (सल्ल०) ने अल्लाह का फ़रमान—क़ुरआन लाया और अल्लाह की मर्ज़ी पर चलकर दिखाया।

अल्लाह की किताब (क़ुरआन) और रसूल की सुन्नत के अनुकूल आचरण करने पर ही सारे मनुष्यों की मुक्ति और सफलता निर्भर है।

(3) **परलोक (आख़िरत) :** सारे मनुष्यों को मर-मिटकर एक रोज़ अल्लाह के सामने खड़ा होना और अपने सारे कामों का हिसाब देना है। कोई भी उसकी पकड़ से बच नहीं सकता। हर एक को अपने किए का बुरा या भला बदला पाना है।

(4) **ख़िलाफ़त :** हमारी यह ज़मीन अल्लाह के असीम और अनन्त साम्राज्य का एक छोटा-सा हिस्सा है। मनुष्य इस ज़मीन पर अल्लाह के नायब या ख़लीफ़ा (प्रतिनिधि) हैं। उनके लिए सही रवैया यही है कि अल्लाह की ज़मीन पर अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारें। ईशपरायणता, परहेज़गारी, इन्तिज़ाम करने की सलाहियत और बहुसंख्यक लोगों का विश्वास नेतृत्व और शासन के लिए ज़रूरी गुण हैं। ज़िम्मेदारों का कर्तव्य है कि वे सामूहिक व्यवस्था, इनसाफ़ और न्याय पर क़ायम करें। बुराइयाँ मिटाएँ, भलाइयों को बढ़ावा दें और जनसमूह को अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ चलाएँ।

(5) **मानव-एकता, समानता और भाईचारा :** सारे मनुष्य एक ही माँ-बाप की सन्तान हैं। इसलिए आपस में बराबर और भाई-भाई हैं। रंग और नस्ल का अन्तर और भेदभाव, जाति-पांति, छूतछात ये सब ग़लत और मनगढ़न्त बातें हैं। किसी अरबी को ग़ैर-अरबी पर, गोरे को काले पर, अमीर को ग़रीब पर, ब्राह्मण को अछूत (दलित) पर कोई श्रेष्ठता

नहीं। सबसे अच्छा वह है जो सबसे ज़्यादा परहेज़गार (ईशपरायण) और ख़ुदा से डरनेवाला हो।

(6) **स्वतंत्रता** : छोटे-बड़े, अमीर-ग़रीब, मर्द-औरत, मालिक-नौकर सब अल्लाह के बन्दे और उसके ग़ुलाम हैं। पूरी तरह आज़ाद कोई भी नहीं। हाँ, मनुष्यों के मुक़ाबले में हर एक आज़ाद है। हर आदमी को अल्लाह ने उसकी माँ के पेट से आज़ाद पैदा किया है। किसी मनुष्य को भी यह अधिकार नहीं पहुँचता कि वह दूसरों की आज़ादी छीन ले या अल्लाह के बन्दों को अपना बन्दा बनाए और उन्हें अपनी मर्ज़ी पर चलाए।

(7) **आस्था और विश्वास** : पंथ (मसलक), अन्तरात्मा और राय के मामले में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है। जिस आस्था, पंथ या राय पर जिसको भरोसा हो, वह उसे अपना सकता है। हालाँकि सभी आदमियों के लिए सही रवैया यही है कि वे इस्लाम को अपनाकर लोक-परलोक दोनों लोकों में सफलता और कल्याण प्राप्त करें।

(8) **मानव-अधिकार** : सारी सृष्टि अल्लाह का परिवार है। सबकी बुनियादी ज़रूरतें ज़रूर ही पूरी होनी चाहिएँ। हर भूखा खाने का, नंगा कपड़े का, रोगी दवा-इलाज का हक़दार है। उसका यह हक़ बहरहाल उसे मिलना चाहिए।

(9) **सुरक्षा का अधिकार** : हर आदमी की जान और माल, मान-सम्मान आदरणीय है। इसपर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता।

(10) **समान बरताव** : हर एक-दूसरे के लिए वही बरताव पसन्द करे, जो वह अपने लिए पसन्द करता है।

(11) **परस्पर सहयोग** : अच्छे और भले काम में एक-दूसरे का सहयोग किया जाए। बुरे काम में किसी का सहयोग न किया जाए।

(12) मार्गदर्शन : ज़िन्दगी बसर करने के सीधे-सच्चे रास्ते से जो परिचित हैं, वे उन्हें बताएँ, जो अनजान हैं।

इस्लामी शिक्षा का उद्देश्य

इन बुनियादी धारणाओं से अपने आप ही यह बात निकलती है कि इस्लामी दृष्टिकोण से **शिक्षा का उद्देश्य** आदमी को 'अल्लाह का नेक बन्दा बनाना' है। (विस्तृत जानकारी के लिए देखें— शिक्षा का मूल उद्देश्य, अध्याय-4)

इस्लामी शिक्षा-सिद्धान्त की विशेषताएँ

इस्लामी शिक्षा-प्रणाली में निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं—

(1) बुनियादी धार्मिक शिक्षा हर मुसलमान मर्द-औरत के लिए अनिवार्य होती है; क्योंकि—

طَلَبُ الْعِلْمِ فَرِيْضَةٌ عَلٰى كُلِّ مُسْلِمٍ وَّ مُسْلِمَةٍ

"(इस्लाम का ज़रूरी) ज्ञान प्राप्त करना हर मुसलमान मर्द-औरत का फ़र्ज़ है।" (हदीस : इब्ने-माजा)

इस फ़र्ज़ को पूरा करने के लिए हर आदमी को पूरी सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। छात्र खुद फ़िक्रमन्द होता है और शिक्षक, अभिभावक, मुस्लिम-समाज और इस्लामी व्यवस्था सब भलाई के इस काम में पूरा सहयोग करते हैं।

(2) पढ़ने-पढ़ाने और शिक्षा को आम करने की पूरी कोशिश की जाती है, ताकि कोई भी ज्ञान से कोरा न रह जाए—

تَعَلَّمُوا الْعِلْمَ وَ عَلِّمُوْهُ النَّاسَ

"ज्ञान सीखो और लोगों को सिखाओ।" (हदीस : बैहक़ी)

(3) उपयोगी और लाभदायक ज्ञान-विज्ञान का पढ़ना-पढ़ाना पुण्य के

कामों में गिना जाता है और पूरी निष्ठा और लगन से पढ़ा-पढ़ाया जाता है–

اَلْعَالِمُ وَالْمُتَعَلِّمُ شَرِيْكَانِ فِي الْأَجْرِ

"पढ़ाने और पढ़नेवाले दोनों ही इस पुण्य में शामिल हैं।"

(हदीस : इब्ने-माजा)

مَنْ دَلَّ عَلٰى خَيْرٍ فَلَهٗ مِثْلُ أَجْرِ فَاعِلِهٖ

"जो आदमी किसी भलाई की तरफ़ रास्ता दिखाए उसको भी उतना ही सवाब और पुण्य मिलेगा, जितना कि उस नेक काम करनेवाले को।" (हदीस : मुसलिम)

مَنْ سَلَكَ طَرِيْقًا يَلْتَمِسُ فِيْهِ عِلْمًا سَهَّلَ اللّٰهُ لَهٗ بِهٖ طَرِيْقًا إِلَى الْجَنَّةِ

"जो आदमी ऐसी राह अपनाए, जिसमें उसे ज्ञान प्राप्त हो तो उसकी बदौलत अल्लाह उसके लिए जन्नत की राह आसान कर देगा।" (हदीस : मुसलिम)

مُعَلِّمُ الْخَيْرِ يَسْتَغْفِرُ لَهٗ كُلُّ شَيْءٍ

नेकी और भलाई की शिक्षा देनेवाले के लिए सभी चीज़ें मोक्ष की दुआ करती हैं।" (हदीस : तिरमिज़ी)

مَنْ خَرَجَ فِيْ طَلَبِ الْعِلْمِ فَهُوَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ حَتّٰى يَرْجِعَ

"जो ज्ञान प्राप्त करने के लिए घर से निकले वह अल्लाह की राह (जिहाद) में है, जब तक वापस न आ जाए।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

إِنَّ الْمَلٰئِكَةَ لَتَضَعُ أَجْنِحَتَهَا رِضًا لِطَالِبِ الْعِلْمِ

"विद्यार्थी की ख़ुशी के लिए फ़रिश्ते उसके समक्ष अपने पंख बिछाते हैं।" (हदीस : अबू-दाऊद)

(4) अनुपयोगी और हानिकारक ज्ञान-विज्ञान की प्राप्ति के प्रयास से रोक दिया जाता है–

تَعَوَّذُوْا بِاللّٰهِ مِنْ عِلْمٍ لَا يَنْفَعُ

"उस ज्ञान से अल्लाह की पनाह माँगो, जो लाभ न दे।"
(हदीस : इब्ने-माजा)

(5) ज़रूरत के मुताबिक़ शिक्षा मुफ़्त दी जाती है। निर्धन और असहाय छात्रों की सारी ज़रूरतों की पूर्ति की व्यवस्था की जाती है। हर धनी इस काम में सहयोग करना भला काम, ज़कात और सदक़ों (दान) का सबसे अच्छा उपयोग समझता है–

(6) हर छात्र को ज्ञान अर्जित कर उसे व्यावहारिक रूप से अपनाने और दूसरों तक ज्ञान को पहुँचाने की प्रेरणा और प्रशिक्षण दिया जाता है–

اَلْعِلْمُ عِلْمَانِ: عِلْمٌ فِي الْقَلْبِ فَذَاكَ الْعِلْمُ النَّافِعُ وَعِلْمٌ عَلَى اللِّسَانِ فَذَاكَ حُجَّةُ اللّٰهِ عَلَى ابْنِ آدَمَ

"ज्ञान दो प्रकार का होता है– एक तो वह जो ज़बान से गुज़रकर दिल में घर कर लेता है। यही लाभदायक ज्ञान है। दूसरा वह जो ज़बान ही पर रहता है। वह अल्लाह की अदालत में आदम की संतान के विरुद्ध दलील और प्रमाण बनेगा।"

(हदीस : दारमी)

بَلِّغُوْا عَنِّيْ وَلَوْ آيَةً

"मेरी शिक्षा लोगों तक पहुँचाओ, चाहे एक ही आयत हो।"
(हदीस : बुख़ारी)

مَنْ سُئِلَ عَنْ عِلْمٍ عَلِمَهُ ثُمَّ كَتَمَهُ أُلْجِمَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ بِلِجَامٍ مِّنَ النَّارِ

"जिस आदमी से ज्ञान की कोई ऐसी बात पूछी जाए, जिसको वह जानता है और वह उसको छिपाए (यानी न बताए) तो क़ियामत के दिन उसके मुँह में आग की लगाम दी जाएगी।"
(हदीस : तिरमिज़ी, अबू-दाऊद आदि)

لَيُعَلِّمَنَّ قَوْمٌ جِيْرَانَهُمْ وَلَيَعِظَنَّهُمْ وَلَيَأْمُرَنَّهُمْ وَلَيَنْهَوُنَّهُمْ وَلَيَتَعَلَّمَنَّ قَوْمٌ مِّنْ جِيْرَانِهِمْ وَيَتَّعِظُوْنَ وَيَتَفَقَّهُوْنَ أَوْ لَأُعَاجِلَنَّهُمُ الْعُقُوْبَةَ فِى الدُّنْيَا

"लोग अपने पड़ोसियों को अनिवार्य रूप से शिक्षा दें। उन्हें उपदेश दें और नसीहत करें। अच्छी बातों की हिदायत दें, बुरी बातों से रोकें। इसी तरह लोगों को अपने पड़ोसियों से ज्ञान प्राप्त करना होगा; उपदेश और नसीहत को स्वीकार करना होगा और अपने अन्दर समझ पैदा करनी होगी वरना मैं उन लोगों को बहुत जल्द दुनिया में सज़ा दूँगा।" (हदीस : तबरानी)

(7) शिक्षक और छात्र दोनों के व्यक्तित्व का सम्मान और दोनों के आत्मसम्मान का ध्यान रखा जाता है। शिक्षक, दोस्त, अभिभावक और आध्यात्मिक बाप और छात्र कर्तव्यनिष्ठ और आज्ञाकारी बेटे की तरह होते हैं–

عَلِّمُوا وَلَا تُعَنِّفُوْا فَإِنَّ الْمُعَلِّمَ خَيْرٌ مِّنَ الْمُعَنِّفِ

"ज्ञान प्रदान करो और सख़्ती न करो। शिक्षक सख़्ती करनेवाले से बेहतर है।"
(हदीस : बैहिक़ी)

"जिससे ज्ञान प्राप्त करो, उसका आदर करो।" (हदीस)

इमाम शाफ़ई (रह॰) तो अपने शिक्षक के घर की तरफ़ पैर फैलाकर सोने से भी बचते थे, ताकि शिष्टचार के विरुद्ध न हो।

(8) पाक-साफ़ माहौल में शिक्षा दी जाती है। घर, मुहल्ला, परिवेश, देश और स्कूल/मदरसा हर एक माहौल को शुद्ध-स्वच्छ बनाए रखने और अपना सहयोग देने के लिए तैयार रहता है और बड़ों, ख़ास कर शिक्षकों का अच्छा आचरण, सहानुभूति, दयालुता और अच्छा नमूना छात्रों का समुचित प्रशिक्षण और आदर्श शान्ति व्यवस्था को क़ायम करने में सहयोगी होता है।

(9) व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामूहिक ज़िम्मेदारियों का सही ज्ञान उपलब्ध कराया जाता है और उनको अल्लाह और रसूल के आदेशों के मुताबिक़ पूरा करने का क्रमशः व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाता है।

(10) ग़ैर-मुसलिमों को अपनी आस्था, पंथ और मर्ज़ी के मुताबिक़ शिक्षण-संस्थाओं की स्थापना की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं और उनके पंथ या मर्ज़ी के विरुद्ध कोई बात उन्हें बलपूर्वक नहीं पढ़ाई जाती है—

لَآ اِكْرَاهَ فِي الدِّيْنِ

"दीन—धर्म के मामले में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-256)

(11) धार्मिक और नैतिक मूल्यों को स्थायी हैसियत और असाधारण महत्त्व दिया जाता है। उनकी माँगों को हर हाल में पूरा किया जाता है। किसी हाल में भी इन मूल्यों का अनादर नहीं होने दिया जाता—

بُعِثْتُ لِأُتَمِّمَ مَكَارِمَ الْأَخْلَاقِ

"मुझे इसलिए भेजा गया है, ताकि नैतिक अच्छाइयों को पूर्णता और परिणति तक पहुँचाऊँ।" (हदीस : मुवत्ता इमाम मालिक रह.)

قُلْ رَبُّنَا اللّٰهُ ثُمَّ اسْتَقِمْ

"कहो : हमने अपने रब पर ईमान लाया। और फिर उसपर जमे रहो।" (हदीस : मुसलिम)

إِنَّ رِجَالًا يَأْتُوْنَكُمْ مِنْ أَقْطَارِ الْأَرْضِ يَتَفَقَّهُوْنَ فِي الدِّيْنِ فَإِذَا أَتَوْكُمْ فَاسْتَوْصُوْا بِهِمْ

"धरती के चारों तरफ़ से लोग तुम्हारे पास दीन का इल्म (धर्म का ज्ञान) समझने आएँगे। तू उनको भलाई की हिदायत देना।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

(12) छात्रों की उम्र और ज़रूरतों, मिज़ाज, व्यक्तिगत विशेषताओं और मनोवैज्ञानिक रुझानों का ध्यान रखकर शिक्षा दी जाती है। शिक्षण-प्रशिक्षण में सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं। कठिनाइयों और परेशानियों में डालकर उन्हें विमुख और निराश नहीं होने दिया जाता और न शिक्षा को उनपर बोझ बनने दिया जाता है–

मशहूर कहावत है–

كَلِّمُوا النَّاسَ عَلٰى قَدْرِ عُقُوْلِهِمْ

"लोगों से उनकी बुद्धियों के मुताबिक़ बात करो।"

يَسِّرُوْا وَلَا تُعَسِّرُوْا وَبَشِّرُوْا وَلَا تُنَفِّرُوْا

"आसानियाँ उपलब्ध कराओ। कठिनाइयों में न डालो; ख़ुशख़बरी दो; निराश न करो।" (हदीस)

إِنِّيْ أَتَخَوَّلُكُمْ بِالْمَوْعِظَةِ كَمَا كَانَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ
يَتَخَوَّلُنَا بِهَا مَخَافَةَ السَّآمَةِ عَلَيْنَا

"मैं अन्तराल देकर उपदेश और नसीहत करता हूँ, जैसे कि नबी (सल्ल॰) अन्तराल देकर उपदेश और नसीहत करते और आप ऐसा इसलिए करते कि हम लोग कहीं उकता न जाएँ।"

(हदीस : बुख़ारी, मुसलिम)

इस्लाम में निराशा अधर्म है। सुधार और प्रशिक्षण की तरफ़ से न छात्र निराश होते और न उनके शिक्षक, अभिभावक या दूसरे ज़िम्मेदार, बल्कि हर एक निराशा से खुद बचता है और छात्रों को बचाता है—

يٰبَنِيَّ اذْهَبُوْا فَتَحَسَّسُوْا مِنْ يُّوْسُفَ وَاَخِيْهِ وَلَا تَايْــَٔسُوْا مِنْ رَّوْحِ اللّٰهِ اِنَّهٗ لَا
يَايْــَٔسُ مِنْ رَّوْحِ اللّٰهِ اِلَّا الْقَوْمُ الْكٰفِرُوْنَ ﴿۸۷﴾

"अल्लाह के अनुग्रह से निराश न हो। उसके अनुग्रह से तो बस विधर्मी (काफ़िर) ही निराश हुआ करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-12 यूसुफ़, आयत-87)

اِنَّ لِلْقُلُوْبِ شَهْوَةً وَاِقْبَالًا وَاِدْبَارًا فَأْتُوْهَا مِنْ قِبَلِ شَهْوَاتِهَا وَاِقْبَالِهَا
فَاِنَّ الْقَلْبَ اِذَا اُكْرِهَ عَمِيَ

"दिलों की कुछ इच्छाएँ और रुझान होते हैं और किसी समय वह बात सुनने के लिए तैयार रहते हैं और किसी समय इसके लिए तैयार नहीं रहते, तो लोगों के दिलों में इन रुझानों के अन्दर दाख़िल हो और उस समय अपनी बात कहो। जब वे सुनने के लिए तैयार हों; क्योंकि दिल का हाल यह है कि जब इसको किसी बात पर मजबूर किया जाता है, तो वह अंन्धा हो जाता है (और बात को क़बूल करने से इनकार कर देता है)।"

(हज़रत अली रज़ि॰, किताबुल-ख़िराज—अबू-यूसुफ़)

(13) छात्रों के व्यक्तित्व के सारे पहलुओं को समग्र रूप से परवान चढ़ाने की चिन्ता और कोशिश की जाती है। नैसर्गिक योग्यताओं को विकसित करने की कोशिश की जाती है और उनको लाभदायक बनाने के मौक़े उपलब्ध कराए जाते हैं; क्योंकि बच्चों को ख़ुदा की अमानत, उनके शरीर और शरीर की सारी शक्तियों और योग्यताओं को ख़ुदा का बहुत बड़ा दान और आदमी के लिए बहुत ही ज़रूरी और फ़ायदेमन्द समझा जाता है। इसी लिए उन्हें न तो कुचला जाता और न नज़रअन्दाज़ किया जाता, बल्कि सही रुख़ पर डालने का उपाय किया जाता है।

(14) छात्रों को सादा ज़िन्दगी, मेहनत-मुशक्क़त, अपना काम आप कर लेने और ख़ुदा के बन्दों की सेवा करने का आदी बनाया जाता है, ताकि वे अपने हाथ से काम करने में संकोच न करें। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ख़ुद सारे काम अपने हाथ से कर लेते और सन्मार्गी ख़लीफ़ाओं और इस्लाम के बुज़ुर्गों का भी यही तरीक़ा रहा है।

(15) ख़ुदा की प्रसन्नता प्राप्त करना और ख़ुदा के बन्दों को लाभ पहुँचाना, यही ज्ञान प्राप्त करने का उद्देश्य और लक्ष्य होता है, न कि आजकल की तरह डिग्रियों का रोब, दबदबा और पद, मान-सम्मान, शान-शौकत, धन-दौलत और शैक्षिक योग्यता पर गर्व और घमंड या दुनिया प्राप्त करने के लिए—

مَنْ تَعَلَّمَ عِلْمًا مِّمَّا يَبْتَغِىْ بِهٖ وَجْهَ اللّٰهِ لَا يَتَعَلَّمُهٗ إِلَّا لِيُصِيْبَ بِهٖ عَرَضًا

مِّنَ الدُّنْيَا لَمْ يَجِدْ عَرْفَ الْجَنَّةِ يَوْمَ الْقِيَامَةِ يَعْنِىْ رِيْحَهَا

"जिस आदमी ने वह ज्ञान प्राप्त किया, जिससे ख़ुदा की प्रसन्नता चाही जाती है, लेकिन इस उद्देश्य से सीखा कि वह उससे दुनिया की पूँजी प्राप्त करे, तो क़ियामत के दिन उसको जन्नत की ख़ुशबू नहीं मिलेगी।"

(हदीस : अबू-दाऊद, इब्ने-माजा, अहमद)

مَنْ طَلَبَ الْعِلْمَ لِيُجَارِيَ بِهِ الْعُلَمَاءَ أَوْ لِيُمَارِيَ بِهِ السُّفَهَاءَ أَوْ يَصْرِفَ بِهِ وُجُوهَ النَّاسِ إِلَيْهِ أَدْخَلَهُ اللّٰهُ النَّارَ

"जिस आदमी ने ज्ञान इस उद्देश्य से प्राप्त किया कि वह इससे विद्वानों से वाद-विवाद करे या अज्ञानियों से झगड़े या लोगों को अपनी तरफ़ आकृष्ट करे, तो अल्लाह उसको आग में डालेगा।"

(हदीस : तिरमिज़ी, इब्ने-माजा)

عُمَرُ بْنُ الْخَطَّابِ قَالَ لِكَعْبٍ مَنْ أَرْبَابُ الْعِلْمِ قَالَ الَّذِيْ يَعْمَلُوْنَ بِمَا يَعْلَمُوْنَ قَالَ فَمَا أَخْرَجَ الْعِلْمَ مِنْ قُلُوْبِ الْعُلَمَاءِ قَالَ الطَّمَعُ

"हज़रत उमर-बिन-ख़त्ताब (रज़ि॰) ने हज़रत कअब (रज़ि॰) से पूछा : तुम्हारे नज़दीक ज्ञानी कौन है? हज़रत कअब बोले : वे लोग जो अपने ज्ञान के अनुकूल कर्म करें। फिर हज़रत उमर (रज़ि॰) ने पूछा : विद्वानों के दिलों से कौन-सी चीज़ ज्ञान को निकाल लेती है? हज़रत कअब (रज़ि॰) ने उत्तर दिया : लालच।"

(हदीस : दारमी)

(16) छोटे-बड़े, पढ़े-लिखे और अनपढ़ सब ज्ञान के अभिलाषी बना दिए जाते हैं और लाइब्रेरियों, वाचनालयों और वाद-विवाद-सभाओं इत्यादि के द्वारा ऐसी सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं कि हर आदमी गोद से क़ब्र तक ज्ञान प्राप्त कर सके—

لَنْ يَّشْبَعَ الْمُؤْمِنُ مِنْ خَيْرٍ يَسْمَعُهُ حَتّٰى يَكُوْنَ مُنْتَهَاهُ الْجَنَّةَ

"ईमानवालों का पेट भली बातों (ज्ञान) से नहीं भरता। वह सुनता रहता है, यहाँ तक कि जन्नत में पहुँच जाता है।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

ये हैं इस्लामी शिक्षा-प्रणाली की मौलिक विशेषताएँ। इनसे ख़ूब

अच्छी तरह अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि इस्लामी शिक्षा-प्रणाली ही वह 'सर्वगुण-सम्पन्न और सर्वांगपूर्ण प्रणाली' है, जिसमें आदमी के व्यक्तित्व के हर पहलू और उसकी सारी नैसर्गिक योग्यताओं और सलाहियतों और उसकी सारी ज़रूरतों का ध्यान रखा गया है। यही वह शिक्षा-प्रणाली है जो हर हैसियत से पूर्ण, लाभदायक और अल्लाह की नज़र में प्रामाणिक है। शेष जितनी शिक्षा-प्रणाली प्रचलित हैं, वे सब आदमियों के गढ़े हुए, एक पक्षीय, त्रुटिपूर्ण और कुल मिलाकर मानव-जाति के लिए हानिकारक हैं। यही एकमात्र शिक्षा-प्रणाली है, जिसमें मानव-जाति की सफलता और कल्याण है। इसी को अपनाकर वर्तमान शिक्षा-समस्याओं का हल निकाला जा सकता है और आनेवाली नस्लों का भविष्य उज्ज्वल बनाया जा सकता है, वरना मानव-जाति का अंजाम बहुत ही दर्दनाक होगा। प्रचलित शिक्षा-प्रणालियाँ आनेवाली पीढ़ियों में जिस तेज़ी से बिगाड़ पैदा कर रही हैं, इसका हर एक को ज्ञान है। अल्लाह तआला इस्लामी व्यवस्था को अपनाने का सौभाग्य प्रदान करे और उस बुरे अंजाम से बचाए, जिसकी कल्पनामात्र से रोंगटे खड़े होते हैं।

☆☆☆

अध्याय-6

शिक्षण-प्रशिक्षण-कला

(क़ुरआन व हदीस की रौशनी में)

पवित्र क़ुरआन में कहा गया है–

كَمَآ اَرْسَلْنَا فِيْكُمْ رَسُوْلًا مِّنْكُمْ يَتْلُوْا عَلَيْكُمْ اٰيٰتِنَا وَيُزَكِّيْكُمْ وَيُعَلِّمُكُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَيُعَلِّمُكُمْ مَّا لَمْ تَكُوْنُوْا تَعْلَمُوْنَ ﴿١٥١﴾

"जिस तरह मैंने तुम्हारे बीच खुद तुममें से एक रसूल भेजा, जो तुम्हें मेरी आयतें सुनाता है; तुम्हारी ज़िन्दगियों को सँवारता है; तुम्हें किताब और तत्त्वदर्शिता की शिक्षा देता है और तुम्हें वे बातें सिखाता है, जो तुम नहीं जानते थे।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-151)

بُعِثْتُ مُعَلِّمًا

"मुझे शिक्षक बनाकर भेजा गया है।" (हदीस : मिशकात)

بُعِثْتُ لِأُتَمِّمَ مَكَارِمَ الْأَخْلَاقِ

"मुझे इसलिए भेजा गया है, ताकि नैतिक अच्छाइयों को पूर्णता के सर्वोच्च स्तर तक पहुँचाऊँ।" (हदीस : मुवत्ता इमाम मालिक)

إِنَّ الْعُلَمَاءَ وَرَثَةُ الْأَنْبِيَاءِ وَإِنَّ الْأَنْبِيَاءَ لَمْ يُوَرِّثُوا دِيْنَارًا وَلَا دِرْهَمًا إِنَّمَا وَرَّثُوا الْعِلْمَ

"ज्ञानीजन नबियों के उत्तराधिकारी हैं और नबियों की विरासत दीनार और दिरहम (रुपये-पैसे और धन-दौलत) नहीं हैं; बल्कि उनकी विरासत ज्ञान है, जिसका उत्तराधिकारी उन्होंने आलिम

(ज्ञानीजन) को बनाया है।" (हदीस : तिरमिज़ी, अबू-दाऊद)

उपर्युक्त आयत और हदीसों से मालूम होता है कि सही शिक्षा-दीक्षा नबियों के काम का एक महत्त्वपूर्ण अंग है और ज़िन्दगी के दूसरे मामलों की तरह इस मामले में भी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का नमूना ही हम सबके लिए प्रामाणिक और अनुकरण के योग्य है।

आइए, जायज़ा लेकर देखें कि इस बारे में हमें क्या मार्गदर्शन मिलता है, ताकि आप (सल्ल॰) की पैरवी करके हम शिक्षण-प्रशिक्षण के कार्य को लाभदायक और फलदायक बना सकें।

शिक्षक का व्यक्तित्व और गुण

छात्रों की शिक्षा-दीक्षा में शिक्षक का अपना व्यक्तित्व और उसके व्यक्तिगत गुणों का रोल सबसे अहम होता है। छात्र जाने-अनजाने रूप से उनसे निरन्तर प्रभावित होते रहते हैं और यह प्रभाव इतना गहरा होता है कि ज़िन्दगी भर स्पष्ट रूप से महसूस किया जा सकता है।

नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के व्यक्तित्व के निम्नलिखित पहलुओं को विशेष रूप से नज़र के सामने रखना चाहिएँ, ताकि हर शिक्षक उनकी रौशनी में अपने व्यक्तित्व को ढाल सके और अपना अनुरकरणीय नमूना छात्रों के सामने पेश कर सके—

- नबी (सल्ल॰) का व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक, प्यारा और प्रभावकारी था। जो देखता अनायास खिंचता, अपनी जान छिड़कता और आप (सल्ल॰) के इशारों पर अपना सब कुछ न्योछावर कर देने की कोशिश करता। शिक्षक को भी अपने अन्दर इन विशेषताओं और गुणों की झलक लानी चाहिए, ताकि छात्र उससे बिदकने और दूर भागने के बजाय क़रीब आएँ। ध्यान और दिलचस्पी से बात सुनें और शिक्षक का प्रभाव ग्रहण करें। इन गुणों के बजाय शिक्षक अपने अनिवार्य कर्तव्य ख़ूबी के साथ अंजाम दे ही नहीं सकता।

- ज़िन्दगी के हर छोटे-बड़े मामले में नबी (सल्ल०) का नमूना अनुकरण के योग्य था। पूरी ज़िन्दगी एक खुली हुई किताब थी। अन्दर-बाहर एक समान था। आप (सल्ल०) ने जिन बातों की शिक्षा दी, खुद उसपर अमल करते रहे। ज़बान से जो कुछ कहा, उसपर अमल करके दिखाया।

  छात्र भी शिक्षक की बातों से ज़्यादा उसके नमूने का अनुकरण करते हैं। इसलिए शिक्षक को भी अपने आचरण के सभी पहलुओं पर बराबर नज़र रखनी चाहिए, ताकि छात्रों को अनुकरण के लिए अच्छा नूमना मिले वरना अपनी लापरवाहियों का वबाल तो होगा ही, ग़लत नमूने का जो दुष्प्रभाव छात्रों पर पड़ेगा, उसका वबाल भी शिक्षक पर होगा।

- नबी (सल्ल०) का व्यक्तित्व ज्ञान और तत्त्वदर्शिता का आदर्श प्रमाण था। शिक्षक को भी ज्ञानी और तत्त्वदर्शी होना चाहिए; क्योंकि सही और पक्के ज्ञान के बिना छात्रों को अच्छी शिक्षा नहीं दी सकती और हिकमत (सूझ-बूझ) के बिना अच्छे ढंग से उनका प्रशिक्षण नहीं किया जा सकता। प्रशिक्षण का काम तो असाधारण तत्त्वदर्शिता और बुद्धिमानी चाहता है। शिक्षक को अपने ज्ञान में बढ़ोत्तरी और मज़बूती और अपने ज्ञान पर भरोसा और विश्वास पैदा करने का सतत् प्रयास करते रहना चाहिए। ज्ञान के मामले में छात्र अपने शिक्षकों ही को प्रमाण और आदर्श समझते हैं। अगर शिक्षक को खुद अपने ज्ञान पर भरोसा और विश्वास न हो तो छात्रों का विश्वास डगमगा जाएगा। अगर किसी मामले में सही जानकारी नहीं हो तो ग़लत-सलत बातें बताने के बजाय खुशी-खुशी जानकारी न होने की बात मान लेनी चाहिए और जानकारी प्राप्त करके बाद में बता देना चाहिए। इससे छात्रों का भरोसा बना रहेगा और शिक्षक ग़लत बोलने

के उस वबाल से भी बचा रहेगा, जिसकी तरफ़ निम्नलिखित हदीस में भी इशारा किया गया है–

"अगर किसी ने ज्ञान के बिना मसला बता दिया, तो उसका वबाल बतानेवाले पर होगा।" (हदीस)

नबी (सल्ल॰) ने खुद बहुत-से प्रश्नों के उत्तर में जानकारी न होने की बात कही और जब वह्य (प्रकाशना) उतरी तो उस समय बतलाया।

- माफ़ और नज़रअन्दाज़ कर देने, संयम और सहनशीलता में आप (सल्ल॰) अपनी मिसाल आप थे। शिक्षक को भी नादान बच्चों का सामना होता है, जिनसे हर समय ग़लतियाँ, कोताहियाँ और स्वभाव के विरुद्ध हरकतें होने की आशंका रहती है। इसलिए वही शिक्षक सफल हो सकता है, जिसमें ये गुण पाए जाते हों। चिड़चिड़े और क्रोधी लोग कभी अच्छे शिक्षक नहीं हो सकते।
- हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के अच्छे आचरण और मिलनसारी का यह हाल था कि अपने-पराए, दोस्त-दुश्मन, यहाँ तक कि उनसे भी, जिन्हें आप (सल्ल॰) नापसन्द करते थे, बहुत ही नरमी और खिले चेहरे और अच्छे व्यवहार से पेश आते थे। दूसरों की भावना का आपको बेहद ख़याल रहता था। दिल पर चाहे कुछ बीत रही हो, मुस्कराते हुए मिलते। मुस्कराहट, हँसी-मज़ाक़ और खुशमिज़ाजी से पेश आते। शिक्षक को भी बहुत ही अच्छे आचरणवाला, मिलनसार और हँसमुख होना चाहिए। उसे भी छात्र, उनके अभिभावकों, आम लोग, स्कूल/मदरसे के समर्थक-विरोधी हर तरह के लोगों से वास्ता पड़ता है और हर एक के सहयोग की ज़रूरत होती है। बिना इन गुणों के वह अपना फ़र्ज़ अंजाम नहीं दे सकता।
- पहनावे में सादगी, आदर-सत्कार, बेतकल्लुफ़ी के साथ आप (सल्ल॰) पाकी-सफ़ाई का बहुत ही ज़्यादा ख़याल रखते थे। शिक्षक को भी फ़ैशन और अनुकरण से बचना चाहिए। सादगी और सफ़ाई ही में

ज्ञान और इल्म की शान है।

- नबी (सल्ल॰) के व्यक्तित्व में असाधारण सन्तुलन, अनुशासन नियमबद्धता और लोगों के साथ व्यवहार में आख़िरी दरजे तक समानता और सन्तुलन था। जिसे भी वास्ता पड़ता वह आसानी से अन्दाज़ा लगा लेता कि आप (सल्ल॰) की पसन्द और नापसन्द क्या है। हमारी किन बातों की आप (सल्ल॰) पर क्या प्रतिक्रिया होगी? शिक्षक में भी ये गुण ज़रूरी हैं, ताकि छात्र उसकी भावना का पूरा सम्मान कर सकें; वरना इच्छा के बावजूद वे अजब कश-मकश का शिकार हो जाते हैं। उन्हें पता ही नहीं चलता कि शिक्षक किस बात से ख़ुश होगा और किससे नाराज़।
- नबी (सल्ल॰) की सीधी-सच्ची शिक्षा का उत्तर नादानों ने ईंट-पत्थर से दिया, लेकिन आख़िरी समय तक आप (सल्ल॰) उनके सुधार की तरफ़ से निराश नहीं हुए; बल्कि आशा से भरे ही रहे। आख़िरकार सफलता ने आप (सल्ल॰) के क़दम चूमे। शिक्षक को भी शिक्षण-प्रशिक्षण या सुधार की तरफ़ से न तो ख़ुद निराश होना चाहिए और न छात्रों या उनके अभिभावकों को मायूसी का शिकार होने देना चाहिए।
- हम बड़े-बूढ़े लोग अपने सुधार के बारे में अब भी आशा से भरे रहते हैं, तो बच्चों के सुधरने के लिए पूरी उम्र पड़ी है और नादानी में तो बहरहाल उनसे ग़लतियों और ख़ामियों की कहीं ज़्यादा आशंका होती ही है।
- त्याग, संयम, सहनशीलता में आप (सल्ल॰) अपनी मिसाल आप थे। शिक्षक को भी यूं तो हर दौर में आम तौर पर, लेकिन आज की परिस्थिति में ख़ासकर इस गुणों से परिपूर्ण होना चाहिए। शिक्षण-प्रशिक्षण जैसे भले काम में बरकत इन्हीं गुणों के द्वारा हो सकती है।

जिसे सिर्फ़ दुनिया प्यारी हो, उसे इस कूचे में क़दम नहीं रखना चाहिए।

- नबी (सल्ल॰) की ज़िम्मेदारी के एहसास, लगन और बेचैनी का आलम यह था कि अल्लाह तआला कहता है–

فَلَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَّفْسَكَ عَلَىٰ آثَارِهِمْ

"शायद आप अपने को उनके पीछे हलाक कर लेंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-18 कह्फ़, आयत-6)

शिक्षण-प्रशिक्षण बहुत ही पित्तामारी का काम है। शिक्षक भी अपने कर्तव्यों को इन गुणों के बिना अच्छी तरह पूरा नहीं कर सकता।

- परिस्थिति कैसी ही पेचीदा हो, मामलों को नबी (सल्ल॰) बड़ी दूरदर्शिता, सूझ-बूझ और आसानी से सुलझा देते। आप (सल्ल॰) के कुछ वाक्य आग पर पानी का काम करते और हर पक्ष सन्तुष्ट हो जाता। शिक्षक को भी आए दिन कक्षाओं में और बाहर भी तरह-तरह के मामलों से दो-चार होना पड़ता है। अगर निबटने की योग्यता न हो तो शिक्षक को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा।
- बच्चों से आप (सल्ल॰) का असाधारण प्यार और नैसर्गिक लगाव था। उनकी बचकाना हरकतों को आप (सल्ल॰) बहुत ज़्यादा नज़रअन्दाज़ करते थे। आप (सल्ल॰) ने कभी किसी बच्चे को नहीं पीटा और मारने के लिए कहा भी है, तो आख़िरी उपाय के रूप में। शिक्षक को भी अपने अन्दर इन गुणों को परवान चढ़ाना चाहिए। अगर बच्चों से प्यार और लगाव न हो, तो मनुष्य शिक्षक का पेशा न अपनाए।

शिक्षक की आवाज़

पाठ के प्रभावकारी और सफल होने की बहुत कुछ निर्भरता शिक्षक

की आवाज़ पर होती है। आवाज़ अगर ध्यान खींचनेवाली, अच्छी और मीठी हो तो छात्र आसानी से आकर्षित भी होते हैं और पढ़ाई में देर तक थकान या उकताहट महसूस नहीं करते। आवाज़ अगर कर्कश हो या शिक्षक बहुत ज़्यादा चीख़कर बोले, तो कानों को बुरा लगता है। छात्र जल्द उकता जाते और थकान महसूस करने लगते हैं। कड़वी आवाज़ से प्राथमिक कक्षाओं के छोटे बच्चों पर तो निरन्तर भय की भावना छायी रहती है और वे शिक्षक की बात पर बिलकुल ही ध्यान नहीं दे पाते और न उनकी समझ में पूरी बात आती है।

स्वयं शिक्षक की अपनी तन्दुरुस्ती के लिए चीख़ना-चिल्लाना बहुत हानिकारक है। गला भी ख़राब हो जाता है और फेफड़े भी बहुत जल्द प्रभावित हो जाते हैं।

इसी तरह बहुत ज़्यादा बोलना और बिना ज़रूरत के बोलते रहना ध्यान और दिलचस्पी को ख़त्म कर देता है। बात चाहे कितनी ही ज़ोरदार और प्रभावकारी क्यों न हो, बिना उतार-चढ़ाव के एक ही सुर में पेश की जाए तो वह प्रभावहीन हो जाती है।

आवाज़ के मामले में शिक्षकों के मार्गदर्शन के लिए पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के आदर्श नमूने से निम्नलिखित बातें पेश की जाती हैं। पाठ को लाभदायक और प्रभावकारी बनाने के लिए इनका पालन करना बहुत ज़रूरी है—

- नबी (सल्ल०) की आवाज़ न बहुत ऊँची होती, न बहुत धीमी; बल्कि बीच की होती थी, जो कानों को बहुत अच्छी लगती थी। हाँ, ज़रूरत के मुताबिक़ इतनी ऊँची आवाज़ से बोलते कि श्रोता सुन सके। शिक्षक को भी अपनी आवाज़ न इतनी ऊँची रखनी चाहिए कि कानों को बुरी लगे और न इतनी नीची कि सुनाई न दे और कक्षा का अनुशासन और उसकी शान्ति-व्यवस्था प्रभावित हो, बल्कि इतनी हो कि पूरी कक्षा आसानी से सुन सके। चीख़ना-चिल्लाना या कड़वी

आवाज़ से बोलना तो किसी तरह ठीक नहीं। गधे की आवाज़ की तो ख़ुद क़ुरआन ने भी निन्दा की है–

إِنَّ أَنكَرَ الْأَصْوَاتِ لَصَوْتُ الْحَمِيرِ ۝١٩

"बेशक गधे की आवाज़ सबसे बुरी है।"

(क़ुरआन, सूरा-31 लुक़मान, आयत-19)

- शुरू से आख़िर तक आप (सल्ल०) मुँह भरकर बोलते थे। (यह नहीं कि आधी बात अन्दर ही रह गई)। शिक्षक को भी इसका पूरा ध्यान रखना चाहिए।
- नबी (सल्ल०) जब बोलते थे, तो वाक्य के आख़िरी शब्दों के आख़िरी अक्षरों तक स्पष्ट सुनाई देते। शिक्षक को भी इसका ख़ूब अभ्यास करना चाहिए। शब्दों के उच्चारण और उनके उच्चारण स्थान स्पष्ट और शुद्ध हों, तो बात भी ख़ूब अच्छी तरह समझ में आएगी और छात्रों के उच्चारण और उच्चारण स्थान का सुधार हो जाएगा।
- नबी (सल्ल०) की आवाज़ में ज़रूरत के मुताबिक़ उतार-चढ़ाव होता था। इसलिए बात में असाधारण प्रभाव पैदा हो जाता था। शिक्षक को भी एक ही सुर में बोलने से बचना चाहिए और आवाज़ में ज़रूरत के मुताबिक़ उतार-चढ़ाव पैदा करने की कोशिश करनी चाहिए।
- दूसरी सारी चीज़ों की तरह आप (सल्ल०) की आवाज़ में भी बनावट और कृत्रिमता बिलकुल न थी। शिक्षक को भी अपनी आवाज़ में प्रवाह और स्वाभाविकता बनाए रखनी चाहिए। अन्दाज़ स्वाभाविक होना चाहिए। कुछ शिक्षक मुँह टेढ़ा करके बोलने और आवाज़ में बनावटीपन पैदा करने में अपनी शान समझते हैं। हालाँकि अपनी इन हरकतों से वह छात्रों की नज़रों में हास्यास्पद बन जाते हैं।
- नबी (सल्ल०) ज़रूरत भर बोलते थे। ज़्यादा बोलने और बेकार की

बातें करने से आप मना किया करते थे। शिक्षक को भी हर रोज़ घंटों और ज़िन्दगी भर बोलना ही पड़ता है। इसलिए बोलने में बहुत सतर्क रहना चाहिए। बेहतर यह है कि विभिन्न कामों के लिए वह संकेत निर्धारित कर ले, ताकि कम बोलना पड़े। बिना ज़रूरत के बोलने और फ़िज़ूल बातें करने से बचे। यथासम्भव छात्रों ही को बोलने और काम करने के मौक़े दे।

शिक्षक की भाषा

छात्रों की शिक्षा-दीक्षा में शिक्षक की भाषा को भी बहुत ज़्यादा दख़ल होता है; क्योंकि यही तो वह महत्त्वपूर्ण साधन है, जिसके द्वारा छात्रों तक शिक्षक अपनी बात पहुँचाता और अपने विचार और अपनी भावनाओं को सम्प्रेषित करता है।

ख़ुद छात्र चाहे-अनचाहे रूप से शिक्षक की भाषा का अनुकरण करने लगते हैं। इसलिए शिक्षक को भाषा के प्रयोग में बहुत सतर्क होना चाहिए। अगर शिक्षक की भाषा त्रुटिपूर्ण होगी तो छात्र भी त्रुटिपूर्ण भाषा इस्तेमाल करने लगेंगे और बात भी पूरी तरह समझ में न आएगी।

इस सन्दर्भ में आप (सल्ल०) के आदर्श नमूने से हमें निम्नलिखित मार्गदर्शन मिलता है—

- रसूल (सल्ल०) बहुत ही साफ़, सादा, आसान और मीठी भाषा बोलते। अलंकृत और सुसज्जित वाक्य बोलने और बनावटी भाषा इस्तेमाल करने से बचते। किसी मसले को ऐसी भाषा में बयान करते कि अनपढ़ और मामूली सलाहियत के लोग भी अच्छी तरह समझ लेते। शिक्षक को भी छोटे बच्चों से वास्ता पेश आता है, जिनका शब्द-भंडार बहुत सीमित होता है। अगर बोलने में इसका ध्यान न रखा जाए तो बच्चे समझ ही न सकेंगे।
- मधुरता, शुद्धता और भाषा की शालीनता एवं साहित्यिकता का भी

आप (सल्ल.) बहुत ज़्यादा ख़याल रखते थे। कम से कम शब्दों में अपनी बात कह देते। वाक्य छोटे और शब्द सारगर्भित और व्यापक होते। इसके बावजूद अर्थ पूरी तरह स्पष्ट हो जाता। शिक्षक को भी चाहिए कि बहुत ही छोटे-छोटे वाक्यों और कम से कम शब्दों में अपनी बात स्पष्ट करे। वाक्य सुगठित और विषय से सम्बद्ध हों और निरर्थक और भर्ती के शब्द से पाक हों।

- भाषा बहुत ही सही, साफ़-सुथरी और शुद्ध इस्तेमाल करते। जिस बात की विस्तार से चर्चा करना शिष्टाचार के विरुद्ध होता, उसे इशारों और संकेतों में बयान करते। शिक्षक को भी भाषा की शुद्धता, साफ़-सुथरेपन, शिष्टता का पूरा ध्यान रखना चाहिए, ताकि छात्रों की भाषा भी इन गुणों से भर जाए। ग़लत भाषा और अशिष्ट बात से शिक्षक को ख़ुद तो बचना ही चाहिए, छात्रों से भी भूल हो तो तत्काल सुधार कर देना चाहिए। बच्चों की ज़बान पर अक्सर अनजाने रूप में कुछ अशिष्ट बातें या बाज़ारी शब्द और वाक्य चढ़ जाते हैं, जिन्हें वे लिखने और बोलने में बेहिचक इस्तेमाल करने लगते हैं। बच्चों को ऐसा करने से रोकना चाहिए।

शिक्षण-विधि

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) के व्यक्तित्व और शिक्षाओं से इस सन्दर्भ में हमें निम्नलिखित मार्गदर्शन मिलता है—

- पाठ का उद्देश्य निर्धारित और शिक्षक तथा छात्र दोनों पर अच्छी तरह स्पष्ट हो। आप (सल्ल.) जो कुछ बताना या सिखाना चाहते थे उसका मूल उद्देश्य आपकी नज़र में तो बहरहाल निश्चित होता ही था, ख़ुद सीखनेवालों पर भी अच्छी तरह स्पष्ट होता था कि वे क्या कुछ और किस उद्देश्य से सीखने जा रहे हैं। शिक्षक को भी इसका ध्यान रखना चाहिए, ताकि पाठ के दौरान शिक्षक और छात्र दोनों

का पूरा समय और ध्यान इस उद्देश्य को प्राप्त करने की कोशिश में लगे और वे इधर-उधर भटकने से बच जाएँ।

- छात्रों को प्रेरित करके या उसकी जिज्ञासा जगाकर पाठ प्रस्तुत किया जाए। नबी (सल्ल॰) कोई प्रश्न करके या कोई अधूरी बात कहकर लोगों की जिज्ञासा को उभार देते और अपनी तरफ़ अच्छी तरह आकृष्ट कर लेते, तब कोई बात पेश करते। उदाहरण के लिए, आप (सल्ल॰) का प्रश्न 'सबसे बड़ा दानी कौन है?' और उत्सुकता जगाने के बाद फिर उत्तर दिया। इसी प्रकार मिम्बर पर चढ़ते हुए तीन बार कहा, "हलाक हुआ वह, हलाक हुआ वह....." इससे सुननेवालों में यह उत्सुकता जगी कि आख़िर वे कौन लोग हैं, जो हलाक (तबाह और बरबाद) हुए और सच्चाई यह है कि जब तक छात्र जिज्ञासु और मानसिक रूप से तैयार न हो, पाठ की ओर आकर्षित हो ही नहीं सकते। छात्रों का ध्यान, दिलचस्पी, लगन और तल्लीनता के बिना शिक्षक की कोशिशें फलदायक नहीं हो सकतीं।
- सब कुछ एक साथ बता देने के बजाय पाठ को समुचित हिस्सों में बांट लिया जाए। फिर छात्रों को तैयार करके एक हिस्सा पेश किया जाए और इस हिस्से के मन में अच्छी तरह बैठ जाने की तरफ़ से सन्तुष्टि प्राप्त करने के बाद अगला हिस्सा लिया जाए। हज़रत मआज़ (रज़ि॰) वाली हदीस से इस सम्बन्ध में पूरा मार्गदर्शन मिलता है। इस तरह पूरा पाठ आसानी से याद हो जाता है।
- छात्रों के लिए यथासम्भव आसानियाँ उपलब्ध कराएँ। उन्हें इतनी कठिनाइयों में न फँसाएँ कि वे घबराकर कंधा डाल दें।

يَسِّرَا وَلَا تُعَسِّرَا

"आसानियाँ उपलब्ध कराओ, कठिनाइयों में न डालो।" (हदीस)

क्रमशः आसन से मुश्किल की तरफ़ बढ़ें, ताकि बच्चे आसानी से

कठिनाइयों पर क़ाबू पाते जाएँ।

- शिक्षक पाठ के दौरान देखता रहे कि बच्चों का ध्यान भटकने या उनमें उकताहट पैदा होने न पाए। आप (सल्ल०) इसका बड़ा ध्यान रखते थे। अगर इसके लक्षण महसूस करते तो या तो थोड़ी देर के लिए विषय बदल देते या जितना बता चुकते उतने ही पर बस करते।
- सामग्री की प्रस्तुति के लिए निम्नलिखित तरीक़ों में से अवसर और सन्दर्भ की दृष्टि से कोई भी तरीक़ा अपनाया जा सकता है—

(i) वार्तालाप-विधि (Conversational Method)

(ii) प्रश्नोत्तर-विधि (Question-Answer Method)

(iii) सूचनात्मक-वर्णनात्मक विधि (Narrative-Descriptive Mehod)

(iv) व्याख्यान-विधि (Lecture Mehod)

(क) वार्तालाप-विधि (Conversational Method)

नबी (सल्ल०) बातों-बातों में बहुत-सी ज़रूरी जानकारियाँ दे दिया करते थे। यह तरीक़ा बहुत ही दिलचस्प, सादा, स्वाभाविक और फ़ायदेमन्द है। छात्र बहुत ही बेझिझक होकर अपना मतलब बयान कर देते हैं। शिक्षक को उनकी कठिनाइयाँ और उनके विचारों और भावनाओं का ठीक-ठीक अन्दाज़ा लगाने में आसानी होती है और उनके सुधार और प्रशिक्षण का स्वाभाविक अवसर हाथ आता है। लेकिन बातचीत लाभदायक और फलदायक उसी समय हो सकती है, जब इस सम्बन्ध में आप (सल्ल०) के नमूने की पूरी पैरवी की जाए यानी—

- बातचीत ज़्यादा से ज़्यादा स्वतंत्र वातावरण में हो, ताकि हर एक बेझिझक अपने दिल की बात कह सके। हाँ, शिष्टता को हर हाल में बरक़रार रखा जाए।
- पूरे ध्यान और विनम्रता के साथ बात सुनी जाए।

- बात काटी न जाए। एक समय में एक ही व्यक्ति बात करे। जब तक एक आदमी अपनी बात पूरी न कर ले, बीच में बोला न जाए।
- विषय से बिलकुल हटी हुई, यथार्थ के विरुद्ध या अनुचित बातचीत होने लगे, तो अच्छे अन्दाज़ से सुधार कर दिया जाए।
- बातचीत के दौरान में शिक्षण-प्रशिक्षण के जो स्वाभविक मौक़े हाथ आएँ। उनसे पूरा फ़ायदा उठाया जाए।
- बातचीत में शब्द तेज़ रफ्तारी से नहीं, बल्कि ठहर-ठहर कर इत्मीमान से अदा किए जाएँ और ज़रूरत हो, तो वे शब्द या वाक्य जिनपर ज़ोर देना हो दो-तीन बार दोहरा दिए जाएँ, ताकि बात ख़ूब मन में बैठ जाए और उन शब्दों या वाक्यों की अहमियत ख़ूब अच्छी तरह महसूस होने लगे।
- बातचीत में सुननेवाले की सलाहियत, दिलचस्पी और ज़रूरतों को यथासम्भव ध्यान में रखा जाए।

(ख) प्रश्नोत्तर-विधि (Question-Answer Method)

बहुत-सी बातें आप (सल्ल.) इस तरीक़े से भी याद कराते थे। जो कुछ बताना होता, उसे पहले प्रश्नों के रूप में रखते और फिर सही जबाव बताते। दूसरों को भी आज़ादी से पूछने का मौक़ा देते। हाँ, निरर्थक और ग़लत प्रश्नों से या तो अच्छे अन्दाज़ में मना कर देते या नज़रअन्दाज़ कर जाते। असम्बद्ध प्रश्न होता तो बात ख़त्म करने के बाद अलग से उत्तर देते। यह तरीक़ा बहुत फ़ायदेमन्द है।

इसमें सबसे बड़ी ख़ूबी यह है कि छात्र का मन प्रश्न का हल ढूंढ़ने में पूरा ज़ोर लगा देता है या कम से कम पूरे ध्यान और एकाग्रता से उसका उत्तर सुनने पर आमादा हो जाता है। इस सन्दर्भ में आपके आदर्श नमूने से निम्नलिखित मार्गदर्शन प्राप्त होता है—

- प्रश्न छोटे और व्यापक हों और स्पष्ट शब्दों में पूछे जाएँ, ताकि

जिनसे पूछा जा रहा है वे अच्छी तरह समझ जाएँ कि उनसे पूछा क्या जा रहा है और प्रश्न के शब्द भी ज़बान पर चढ़ जाएँ और याद हो जाएँ, ताकि उत्तर सोचने या सुनकर ख़ूब समझने में मदद मिले। जब तक प्रश्न अच्छी तरह याद न रहे, न तो पूरा उत्तर दिया जा सकता और न दूसरे का उत्तर अच्छी तरह समझ में आ सकता।

- प्रश्न पूछने का अन्दाज़ ऐसा हो कि हर एक कान खड़े कर ले। पूरी तरह आकृष्ट हो जाए और मन उत्तर सोचने या सुनने पर पूरी तरह तैयार हो जाए।
- प्रश्न पूछने के बाद सोचने का मौक़ा दिया जाए। फिर विनम्रता से उत्तर सुना जाए।
- ग़लत उत्तर का सुधार कर दिया जाए। अगर उत्तर बिलकुल न मिले या प्रश्न लौटा दिया जाए, तो खुद ही स्पष्ट रूप से उत्तर देकर सन्तुष्ट कर दिया जाए। जिज्ञासा को जगाकर उसकी सन्तुष्टि का सामान न करना हानिकारक और उलझन का कारण होता है।
- छात्रों को भी प्रश्न पूछने के मौक़े दिए जाएँ; क्योंकि जो ज़्यादा पूछता है, वह ज़्यादा सीखता है। लेकिन बेकार और बेमतलब प्रश्न करें तो झिड़कने के बजाय या तो नज़रअन्दाज़ कर दिया जाए या अच्छे अन्दाज़ से रोक दिया जाए।
- असम्बद्ध लेकिन लाभदायक और ज़रूरी प्रश्न हो, तो बात ख़त्म करने के बाद अलग से उसका उत्तर दे दिया जाए।

(ग) सूचनात्मक-वर्णनात्मक विधि (Narrative-Descriptive Mehod)

किसी चीज़ के बारे में कुछ बताना होता या कोई वाक़िआ सुनाना होता तो आप (सल्ल.) कभी-कभी बयान करने का सादा, वर्णनात्मक या विवरणात्मक तरीक़ा अपनाते थे। लेकिन आप (सल्ल.) का बयान

निम्नलिखित ख़ूबियों से भरा होता था—

- **संक्षिप्तता :** आप (सल्ल॰) बात को बहुत तूल नहीं देते थे, बल्कि संक्षिप्तता का ध्यान रखते, ताकि लोग उकताएँ नहीं।
- **दृश्यांकन :** शब्दों में ऐसा दृश्यांकन करते कि अनदेखी बातें ऐसी मालूम होतीं मानो सिर की आँखों से देख रहे हैं।
- **उपमा और उदाहरण के द्वारा स्पष्टीकरण :** बात को अच्छी तरह स्पष्ट करने के लिए बहुत ही उपयुक्त और प्रासंगिक उपमाओं और उदाहरणों से काम लेते थे, जिससे उसका हर पहलू आसानी से समझ में आ जाता था।
- **सन्दर्भ की अनुकूलता के मुताबिक़ बातचीत करने का ढंग, उतार-चढ़ाव और शब्दों-वाक्यों पर ज़ोर :** नबी (सल्ल॰) के इस बात का ध्यान रखने का नतीजा यह होता कि आप (सल्ल॰) जो कुछ भी पेश करते, उसकी अहमियत और गम्भीरता पूरी तरह समझ में आ जाती।
- **चेहरे-मोहरे, हाव-भाव, भावनाओं और प्रभावों के द्वारा माहौल बनाने की कोशिश :** जिस तरह का प्रभाव आप (सल्ल॰) डालना चाहते, उसका प्रभाव आप (सल्ल॰) सबसे पहले अपने ऊपर महसूस करते। इसलिए आप (सल्ल॰) की इस दशा का श्रोताओं पर भी गहरा असर पड़ता। ज़ाहिर है, बात जब दिल से निकलती है तो प्रभावित करके छोड़ती है।
- **ज़रूरत के मुताबिक़ व्यावहारिकता का नमूना या प्रतिदिन की ज़िन्दगी पर इसे व्यावहारिक रूप से लागू करना :** आप (सल्ल॰) कोई बात मौखिक या सैद्धान्तिक रूप से बता देने ही पर बस न करते, बल्कि ज़रूरत और मौक़ा होता तो करके दिखा देते या रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में इसे व्यावहारिक रूप से लागू करके और ज़िन्दगी से इसका सम्बन्ध भी अच्छी तरह समझा देते थे। शिक्षक को भी अपने विवरणात्मक पाठों में इन बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(घ) व्याख्यान-विधि (Lecture Method)

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के बातचीत करने का सामान्य ढंग भाषण (व्याख्यान-विधि) का-सा था। सामूहिक शिक्षण-प्रशिक्षण में आप (सल्ल.) आम तौर से इसी तरीक़े से काम लेते थे। आप (सल्ल.) जब खुतबे (धार्मिक अभिभाषण) के लिए खड़े होते, तो मजलिस या सभा पर सन्नाटा छा जाता। बहुत ही संक्षिप्त और सारगर्भित खुतबा देते। आप (सल्ल.) के ख़ुतबे बहुत ही ज़ोरदार, जोशीले और प्रभावकारी होते थे। अन्दाज़ भी अत्यन्त जोशीला और भावनाओं में हलचल पैदा कर देनेवाला होता था। मौक़े और सन्दर्भ के मुताबिक़ आवाज़ में उतार-चढ़ाव या विनम्रता और लोच होती। शरीर के हाव-भाव, चेहरे-मुखड़े और आँखों से आप (सल्ल.) के हार्दिक भाव का इज़हार हो जाता था। इसी लिए श्रोता बेहद प्रभावित होते थे।

नबी (सल्ल.) के प्यारे साथियों (रज़ि.) में त्याग, बलिदान, जोश और जज़्बे और अच्छे आचरण की असीम क्षमताओं के विकास में आप (सल्ल.) के ख़ुतबों को भी बहुत कुछ दख़ल था। व्याख्यान-विधि अपनाने में शिक्षक को भी इन विशेषताओं का ध्यान रखना चाहिए।

व्याख्या और स्पष्टीकरण

आप (सल्ल.) अपनी बात को स्पष्ट और अच्छी तरह मन-मस्तिष्क में बिठाने के लिए ज़रूरत के मुताबिक़ निम्नलिखित तरीक़े अपनाते—

अमली नमूना पेश करते, करके दिखाते या हाथों, उंगलियों आदि के इशारे से बताते थे।

- कभी-कभी बालू पर लकीरें खींचकर अपनी बातों को स्पष्ट करते।
- किसी जानी-पहचानी चीज़ से उपमा देकर बात दिलों में बिठाते।
- किसी समुचित कहानी, घटनाओं, चुटकुले या उदाहरण से मदद लेते।

उसकी विपरीत चीज़ से तुलना करके अन्तर को अच्छी तरह स्पष्ट कर देते।

ज़रूरत के मुताबिक़ एक बात को बार-बार बयान करके ख़ूब याद करा देते।

शिक्षक को भी इन तरीक़ों से ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठाना चाहिए।

छात्रों के साथ व्यवहार

छात्रों के साथ भलाई से पेश आने की पैग़म्बर (सल्ल॰) ने वसीयत फ़रमाई है। आप (सल्ल॰) का आदर्श और पवित्र आचरण यह था—

मुस्कराते हुए विनम्र भाव से मिलते। नरमी और सरसता से पेश आते।

उनके आत्मसम्मान का हमेशा ख़याल रखते। आप (सल्ल॰) ने कभी किसी का अपमान और तिरस्कार नहीं किया।

उनकी ख़ुशी के लिए हर्षित मुद्रा और शिष्टतापूर्ण हँसी-मज़ाक़ से भी काम लेते।

बीमार हों तो देखभाल के लिए जाते। मिज़ाज पूछते, तसल्ली देते और दुआ करते।

उनकी योग्यता, अभिरुचि और दिलचस्पी का ध्यान रखते। अपनी बातचीत, भाषण या उपदेश और नसीहत को कभी उनपर भार न होने देते। दिलचस्पी की कमी होती तो विषय बदल देते या सिलसिला ख़त्म कर देते।

हर एक की बात ग़ौर से सुनते। अच्छी बात पर प्रशंसा करते, अनुचति बातचीत पर सचेत कर देते।

कोई शिष्टाचार की सीमाओं का उल्लंघन करता तो पूरी नरमी से सहन कर लेते। नापसन्द बात की उपेक्षा कर देते और टाल जाते।

उनके प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर देते। बेकार और निरर्थक प्रश्नों से मना कर देते या नज़रअन्दाज़ कर जाते।

कोई त्रुटि या कमी देखते तो आम अन्दाज़ से टोकते या दूसरी बात पर ढालकर उसे समझा देते।

उनके दुख-दर्द में काम आते। ढाढ़स बँधा देते। मुहताजों की ख़ुद भी मदद करते और सहायता करने में सक्षम सहाबा (रज़ि॰) से भी मदद कराते।

उनके साथ सम्पर्क में असाधारण अपनापन, मुहब्बत और लगाव का सुबूत देते। उनके पास बैठ जाते। सीने से चिमटाकर दुआएँ देते। दोनों कंधों पर हाथ रखकर अत्यन्त स्नेह और आत्मीयता से नसीहत करते। कभी-कभी अपने खाने-पीने में साथ कर लेते।

कोई आदमी किसी तरह की कोई मामूली सेवा भी कर देता, तो शुक्रगुज़ार होते और दुआ देते।

सभा या मजलिस के एक-एक व्यक्ति पर ध्यान देते, ताकि किसी को बरतरी या भेदभाव का एहसास न हो। हर एक यही महसूस करता कि आप (सल्ल॰) को मुझसे ग़ैर-मामूली सहानुभूति है।

बच्चों के साथ आप (सल्ल॰) का बरताव तो और ज़्यादा प्यार और हमदर्दी भरा था। आप (सल्ल॰) बच्चों को देखकर बहुत ख़ुश होते। ख़ुद सलाम करते। उनके सिरों पर हाथ फेरते, गोद में उठा लेते, कन्धे पर बिठा लेते, प्यार करते, दुआएँ देते, उनकी दिलचस्पी की बातें करते, बच्चों को क़तार में खड़ा करके इनामी दौड़ कराते, बच्चे दौड़कर सीने और पेट पर गिर पड़ते। आप (सल्ल॰) ख़ुशी से सहन कर लेते, मन को ख़ुश करनेवाले हँसी-मज़ाक़ की बातें करते, खाने-पीने में शामिल करते, प्यार से शिष्टाचार और अदब सिखाते, रास्ते में मिलें तो अपनी सवारी पर बिठा लेते, ग़लती करें तो समझाकर माफ़ कर देते, बच्चों को मारने-पीटने से मना करते, उनके

मामले में बार-बार माफ़ी और अनदेखी से काम लेने की नसीहत करते, जंग की हालत में कुछ सहाबा (रज़ि॰) ने ग़ैर-मुसलिमों के कुछ बच्चों को क़त्ल कर दिया, आप (सल्ल॰) ने सुना तो बहुत दुखी हुए, चेहरे का रंग बदल गया, नाराज़गी से बोले, "वे (बच्चे) तुमसे अच्छे थे। ख़बरदार, बच्चों को हरगिज़ क़त्ल न करो।" एक बच्चे को चूमते हुए आप (सल्ल॰) ने कहा, "ये बच्चे तो जन्नत के फूल हैं।" बच्चे भी आप (सल्ल॰) से बहुत मुहब्बत रखते। गली-कूचों में आप (सल्ल॰) को देखकर उछलने-कूदने लगते, दौड़कर आते, आप (सल्ल॰) से मिलते, मिलकर बहुत ख़ुश होते और फूले न समाते।

आप (सल्ल॰) के शिक्षण-प्रशिक्षण की स्तरीय प्रणाली और छात्रों के साथ आप (सल्ल॰) के इसी बरताव का नतीजा था कि उनके अन्दर ज्ञान प्राप्त करने की असाधारण लगन पैदा हुई। आप (सल्ल॰) की हर बात उन्होंने दिल से सुनी, बहुत ही ज़्यादा निष्ठा और निस्स्वार्थ भाव से उन पर अमल किया। नबी (सल्ल॰) की बातों को गिरह में बाँध लिया, ज़िन्दगी भर याद रखा और आप (सल्ल॰) की शिक्षाओं को दूसरों तक पहुँचाने के लिए तन-मन-धन से लग गए। इस रास्ते में हर तरह का दुख झेला, हालात का बहादुरी से मुक़ाबला किया, हर हाल में हक़ पर जमे रहे और अल्लाह के पैग़ाम को फैलाने और आम करने के लिए ख़ून-पसीना एक कर दिया। अल्लाह उनसे राज़ी हो।

आज भी परिस्थितियाँ बदल सकती हैं। शर्त यह है कि शिक्षक अपने अन्दर इन विशेषताओं और गुणों की झलक पैदा कर लें।

☆☆☆

अध्याय-7

शिक्षा की आधुनिक प्रवृत्तियाँ

अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने कहा है—

الْكَلِمَةُ الْحِكْمَةُ ضَالَّةُ الْحَكِيمِ فَحَيْثُ وَجَدَهَا فَهُوَ أَحَقُّ بِهَا

"तत्त्वदर्शिता और बुद्धिमत्ता (हिकमत और दानाई) की बात एक विवेकशील और बुद्धिमान आदमी की खोई हुई पूँजी है। इसलिए जहाँ उसे वह पाए, उसका वही ज़्यादा हक़दार है (उसे ले लेना चाहिए)।" (हदीस : तिरमिज़ी, इब्ने-माजा)

दुनिया के विभिन्न देशों में आज जिन शैक्षिक विचारधाराओं का आम तौर पर प्रचलन है और जो शिक्षण-विधियाँ वहाँ प्रचलित हैं, वे अपनी कुछ बुनियादी ख़राबियों के कारण हालाँकि बहुत ही सुधार चाहती हैं, लेकिन सतत् प्रयोग और अवलोकन और बच्चों के मनोविज्ञान के अध्ययन की रौशनी में कुछ ऐसे रुझान उभरकर सामने आ रहे हैं, जो लाभदायक हैं और इस्लामी शिक्षाओं से टकराते भी नहीं हैं। इसलिए *'जो अच्छा हो उसे ले लो और जो बुरा हो उसे छोड़ दो'* के नियम पर उन्हें अपनाने की कोशिश करनी चाहिए। उदाहरण के लिए—

1. शिक्षा के उद्देश्य और अर्थ को लिखने-पढ़ने तक सीमित रखने या कुछ किताबों, विषयों और कला-कौशलों में छात्रों को महारत पैदा करा देने के बजाय उसमें और अधिक विस्तार दिया जाए यानी—

(क) शिक्षा के द्वारा छात्रों के व्यक्तित्व के सारे पहलुओं (मानसिक और शारीरिक, व्यावहारिक और नैतिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक)

का समान और सन्तुलित विकास और उसमें समुचित परिवर्तन।

(ख) व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों हैसियतों से छात्रों पर जो ज़िम्मेदारियाँ आती हैं, उन्हें पूरी तरह अंजाम देने और मिल-जुलकर काम करने की योग्यता।

(ग) आत्मविश्वास की भावना, परिस्थितियों से निबटने की सलाहियत और रोज़मर्रा के कामों को बेझिझक अंजाम देने की सामर्थ्य।

(घ) छुट्टी के समयों को लाभदायक क्रिया-कलापों में इस्तेमाल करने की आदत।

(ङ) छात्रों और शिक्षकों दोनों में शोध-भावना और अधिक जानकारियाँ प्राप्त करने की तड़प पैदा करना।

2. पाठ्यक्रम, विषयों या पाठ्यपुस्तकों के बजाय बच्चे को केन्द्रीय हैसियत और बुनियादी अहमियत दी जाए यानी—

(क) यह बात हमेशा नज़र के सामने रहे कि शिक्षा बच्चे के लिए है, न कि बच्चा शिक्षा के लिए, ताकि शिक्षा-सम्बन्धी सारी कोशिशें बच्चों को विभिन्न हैसियतों से फ़ायदा पहुँचाने के लिए हों, न कि बच्चों को शिक्षा पर क़ुरबान करने के लिए।

(ख) भविष्य की तैयारी की चिन्ता में बच्चों की मौजूदा दिलचस्पियों को बिलकुल नज़रअन्दाज़ न कर दिया जाए वरना इसकी प्रतिक्रिया गम्भीर होगी और वह उद्देश्य बिलकुल ही प्राप्त नहीं होगा, जिसके लिए बच्चों को वर्तमान की ख़ुशियों से वंचित किया जा रहा है, बल्कि व्यक्तित्व के कुछ पहलू मुरझा जाएँगे और सन्तुलित विकास हरगिज़ न हो सकेगा।

(ग) बच्चों की उम्र, बौद्धिक योग्यता, शारीरिक दशा, उसकी ज़रूरतों और घरेलू माहौल को ध्यान में रखकर शिक्षा दी जाए।

(घ) छात्रों के बीच व्यक्तिगत अन्तर और उनके ख़ास रुझान और उनकी

अभिरुचियाँ नज़र के सामने रहें। पूरी कक्षा के बजाय हर बच्चे को अलग इकाई माना जाए। उसकी निजी अभिरुचि का ध्यान रखा जाए और व्यक्तित्व का सम्मान किया जाए। साथ ही पूरी कक्षा को एक ही लाठी से न हाँका जाए।

(ङ) छात्रों की जन्मजात प्रतिभाओं और नैसर्गिक रुझानों को सही रुख़ पर डालने के मौक़े उपलब्ध कराए जाएँ।

3. बच्चों की शिक्षा-दीक्षा का पाठ्यक्रम बनाते समय निम्नलिखित बातें ध्यान में रहें–

(क) बच्चे की उम्र, उसकी नैसर्गिक योग्यताओं, अभिरुचियों, भावनाओं, इच्छाओं, रुझानों और शारीरिक और मानसिक क्षमताओं का ध्यान।

(ख) बच्चों के विकास के विभिन्न मरहले और हर मरहले की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं, उनकी दिलचस्पियों और ज़रूरतों का ध्यान।

(ग) सामाजिक और प्राकृतिक वातावरण और उसमें फिट होने के लिए ज़रूरी सलाहियतें और विशेषताएँ।

(घ) देश और समुदाय की ज़रूरतें, उनके इरादे और सांस्कृतिक धरोहर।

(ङ) बच्चे के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास और प्रशिक्षण के लिए विषय-सामग्री, कार्य-कलाप और गतिविधियाँ।

(च) बच्चे को भविष्य की ज़िन्दगी के लिए तैयार करने में सहयोगी कारक।

4. शिक्षा-सिद्धान्त ऐसा अपनाया जाए कि पढ़ाई-लिखाई बच्चों के लिए आसान, दिलचस्प और प्रभावकारी हो यानी–

(क) खेल ही खेल में बहुत-सी बातें सिखा दी जाएँ।

(ख) कहानियों, वार्तालापों और ड्रामों की मदद से शिक्षा दी जाए।

(ग) हर विषय से सम्बन्धित ज़रूरी तस्वीरें, चार्ट्स और दूसरी सहायक

और शैक्षिक सामग्रियाँ इस्तेमाल की जाएँ, ताकि पाठ दिलचस्प हो जाए; संकल्पना स्पष्ट बनें और एक से अधिक ज्ञानेन्द्रियों को इस्तेमाल करके अधिक स्थायी और मज़बूत जानकारियाँ प्राप्त करने का मौक़ा मिले।

(घ) लाभदायक और दिलचस्प क्रिया-कलापों और योजनाओं की व्यवस्था करके सृजनात्मक योग्यताएँ उभारी जाएँ और खुद अनुभव और प्रयोग करके सीखने के अधिक से अधिक अवसर दिए जाएँ।

(ङ) कक्षा का माहौल ऐसा बनाया जाए कि बच्चे अपनी कठिनाइयों और उलझनों को खुलकर बेझिझक पेश कर सकें।

(च) भावनाओं और विचारों की अभिव्यक्ति के विभिन्न साधनों को काम में लाने का ढंग सिखाया जाए यानी बच्चे मौखिक या लिखित रूप से लेख और निबन्ध-लेखन, भाषण-कला, आर्ट इत्यादि के द्वारा विचारों को व्यक्त कर सकें।

(छ) शिक्षक अपने को निरंकुश शासक के बजाय बच्चों के सलाहकार, सहयोगी और संरक्षक की हैसियत में पेश करें।

(ज) पाठ को आगे बढ़ाने में छात्रों का सहयोग प्राप्त किया जाए। कक्षा को सारी जानकारियाँ खुद दे देने के बजाय ऐसी स्थिति पैदा करने की कोशिश की जाए कि बच्चे जानकारियाँ प्राप्त करने की खुद कोशिश करें।

(झ) विषयों और पाठों को आपस में जोड़कर पढ़ाने की कोशिश की जाए। सामाजिक और प्राकृतिक माहौल और बच्चों की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से भी उनका सम्पर्क स्थापित किया जाए।

(ञ) शिक्षा बच्चों की मातृभाषा में दी जाए।

5. स्कूल/मदरसे के प्रबन्धन में आज़ादी, बराबरी, प्रजातंत्र और सहयोग की भावना सक्रिय हो यानी—

(क) स्कूल/मदरसे के प्रबन्धन में शिक्षकों के सुझावों को महत्त्व दिया जाए।

(ख) शिक्षक आपस में और छात्र आपस में बराबरी और भाईचारा का माहौल महसूस करें। किसी तरह का भेदभाव और अन्तर न रखा जाए।

(ग) बाहरी दबाव के बजाय खुद के अनुशासन पर ज़ोर दिया जाए।

(घ) टोलियों में मिल-जुलकर काम करने की आदत डलवाई जाए और विभिन्न प्रकार की ज़िम्मेदारियों को सम्भालने के लिए टोलियाँ बनाई जाएँ, जो अपने मॉनीटर के नेतृत्व में काम करना सीखें।

(ङ) अभिभावकों का सहयोग प्राप्त करने की कोशिश की जाए।

(च) शिक्षा यथासम्भव सबके लिए सुलभ और अनिवार्य हो।

☆☆☆

अध्याय-8

बच्चा और उसकी प्रकृति

बच्चों को बड़ों के समान हरगिज़ न समझना चाहिए। उनकी दुनिया ही अलग और निराली होती है। हमारा आये दिन का निरीक्षण है कि बड़ी से बड़ी घटनाओं और हादसों, जिनके प्रभाव ख़ुद उन बच्चों की ज़िन्दगी पर बहुत ही दूरगामी और गहरे पड़नेवाले होते हैं, उनके नज़दीक कोई महत्त्व नहीं रखते, बल्कि उलटे उनके मनोरंजन और आनन्द का सामान बन जाते हैं। घर में आग लग जाए, चोरी हो जाए या घर के किसी ज़िम्मेदार आमदमी की मौत हो जाए, हो सकता है कि बच्चे दूसरों की देखा-देखी सामयिक रूप से कुछ प्रभावित होकर दो-चार बूँदें आँसू भी टपका दें, लेकिन अस्ल दिलचस्पी उन्हें उस हंगामे से होती है, जो ऐसे मौक़ों पर नाते-रिश्तेदारों, साथी-संगियों, पड़ोसियों और उनके बच्चों के जमा हो जाने से घर में बरपा होता है। इन हादसों के मौक़ों पर बच्चों की हरकतों और गतिविधियों का निरीक्षण कीजिए, साफ़ महसूस होगा कि उनके दिल पर अस्ल में उन हादसों का कोई ख़ास असर नहीं है। मौक़ा मिले तो वे पूरे दिल से उछल-कूद और शोर-शराबे में हिस्सा लेंगे। अस्ल में वे अपनी फ़ितरत से मजबूर हैं।

बच्चा एक ज़िन्दा, सचेतन हस्ती है। उनके अन्दर तरह-तरह की शक्तियाँ और योग्ताएँ होती हैं। वह कुछ मौलिक इच्छाएँ और प्रवृत्तियाँ रखता है। उसकी अपनी पसन्द और नापसन्द और अपनी दिलचस्पियाँ और इरादे होते हैं। उसके सोचने-समझने, महसूस करने और प्रभावित होने, सीखने और आदी बनने, ध्यानमग्न और एकाग्रचित होने, याद करने और दोहराने के ख़ास ढंग होते हैं। वयस्क होने और बड़ों की दुनिया में

दाख़िल होने तक उसे विभिन्न मरहलों से गुज़रना पड़ता है। हर मरहले की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ होती हैं और उन विशेषताओं की कुछ बुनियादी माँगें। शिक्षण-प्रशिक्षण के सिलसिले की कोशिशें उस समय फलदायक हो सकती हैं, जब इन सब के बारे में जानकारियाँ प्राप्त करके उनका पूरा ध्यान रखा जाए।

बच्चों को तरह-तरह की शक्तियाँ और सामर्थ्य जन्मजात रूप से ही मिलती हैं और इन्हीं की बुनियाद पर ख़ुद या दूसरों की कोशिशों से अनेक योग्ताएँ और क्षमताएँ प्राप्त करते हैं। जन्म के साथ मिलनेवाली शक्तियों और सामर्थ्य को जन्मजात शक्तियाँ, प्राकृतिक योग्यताएँ या प्रकृति कहा जाता है। ये विशुद्ध रूप से अल्लाह तआला की देन होती हैं। इनके प्राप्त करने में किसी आदमी की या दूसरों की कोशिशों को बिलकुल दख़ल नहीं होता और न उनमें किसी तरह की कमी-बेशी की जा सकती है। आदमी की कोशिश से उनको सिर्फ़ परवान चढ़ाया और किसी ख़ास रुख़ पर डाला जा सकता है।

शिक्षण-प्रशिक्षण का उद्देश्य असल में प्राकृतिक शक्तियों को उजागर करना, उन्हें सँवारना, सुधारना और सही रुख़ पर डालना है और अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता वे ग़लत रुख़ पर पड़ गई हों, तो उनका सुधार करना है।

अल्लाह तआला की देन और मेहरबानियाँ अनगिनत हैं, लेकिन शिक्षा-दीक्षा की दृष्टि से बच्चों की निम्नलिखित प्राकृतिक शक्तियों और सामर्थ्यों के बारे में संक्षिप्त जानकारियाँ और उनको सही रुख़ पर डालने के तरीक़े जान लेना ज़रूरी हैं—

(1) सहज क्रियाएँ (Reflexee),

(2) मूल प्रवृत्तियाँ और संवेग (Instincts),

(3) क्षमताएँ और योग्यताएँ (Capacity)।

(1) सहज क्रियाएँ (Reflexee)

अल्लाह तआला ने हमारे शरीर में कमो-बेश 50 ऐसी शक्तियाँ रख दी हैं, जो शरीर के विभिन्न अंगों को आकस्मिक घटनाओं या अचानक पहुँच जानेवाले नुक़सानों से बचाने में बेहद मददगार साबित होती हैं। इनके कारण स्वतः बहुत-से ऐसे लाभदायक काम अंजाम पा जाते हैं, जिनमें हमारी चेतना और इरादे को बिलकुल ही कोई दख़ल नहीं होता। उदाहरण के लिए छींकना, खाँसना, बलग़म और थूक निकालना, पलक झपकाना, चीख़ना-चिल्लाना, हाँफना, काँपना, जम्हाई लेना, मुस्कराना, क़ै करना, नाक-भौं चढ़ाना, झुरझरी लेना और विभिन्न ग्रंथियों से तरल पदार्थ निकलना इत्यादि।

सहज क्रियाओं की विशेषताएँ

इन नैसर्गिक शक्तियों के कारण जो नैसर्गिक या सहज क्रियाएँ होती हैं, उनमें निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं—

तेज़ी से घटित होना;

हमेशा एक निर्धारित ढंग से होना;

अनचाहे रूप से हो जाना;

चेतना को दख़ल न होना;

घटित होने के लिए हर समय तैयार रहना;

स्थानीय होना यानी शरीर के एक ख़ास हिस्से तक सीमित होना;

अपरिवर्तनशील होना।

(2) मूल प्रवृत्तियाँ (Instincts)

ये वे प्राकृतिक या नैसर्गिक प्रवृत्तियाँ हैं, जिनकी बदौलत पहले से सीखे या ट्रेनिंग प्राप्त किए बिना हम तरह-तरह के काम कर लेते हैं। ये प्रवृत्तियाँ किसी सामयिक प्रेरणा के कारण शरीर में विशेष प्रतिक्रियाएँ

पैदा कर देती हैं और पूरा शरीर विशिष्ट और निर्धारित रूप से काम करने लगता है। उदाहरण के लिए, भूख लगने पर भोजन तलाश करना, ख़तरनाक चीज़ से डरकर भागना, दुश्मन से लड़ना, नई चीज़ सामने आए तो जानकारियाँ प्राप्त करने के लिए जिज्ञासु होना इत्यादि। किसी प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति किस तरीक़े से होगी, यह वातावरण पर निर्भर है। हर बच्चा बोलना चाहता है। लेकिन कौन-सी बोली या भाषा अपनाएगा, स्पष्ट है, यह उसके वातावरण पर निर्भर करता है। जो कुछ वह अपने आसपास बोलते सुनेगा, उसका वह भी अनुकरण करेगा--

- सहज क्रियाओं की तुलना में मूल प्रवृत्तियाँ अधिक पेचीदा होती हैं।
- इनमें चेतना को भी किसी हद तक दख़ल होता है।
- पूरा शरीर सक्रिय हो जाता है।
- विभिन्न तरीक़ों से प्रकट हो सकती हैं।
- प्रशिक्षण से किसी हद तक इनमें परिवर्तन और बदलाव हो सकता है।

(3) क्षमताएँ

वे प्राकृतिक क्षमताएँ, जिनके प्रकट होने में बुद्धि और प्रतिभा, चेतना और इरादे को असाधारण दख़ल होता है। उदाहरण के लिए, प्रबन्धन-सम्बन्धी क्षमताएँ, किसी ख़ास विषय या कला-कौशल की तरफ़ विशिष्ट रुझान, नेतृत्व और मार्गदर्शन की योग्यता इत्यादि। चूँकि इनका सम्बन्ध बुद्धिमत्ता और प्रतिभा से भी होता है और अनुभव और प्रशिक्षण से इनमें काफ़ी परिवर्तन और बदलाव की भी सम्भावना होती है, इसलिए अलग-अलग लोगों में इन योग्यताओं का प्रकार भिन्न-भिन्न होता है।

सहज क्रियाएँ और शिक्षा-दीक्षा

चूँकि सहज क्रियाएँ (Reflexee) सुनिश्चित तरीक़े से क्रियान्वित होती हैं और इनमें किसी तरह का परिवर्तन और बदलाव सम्भव ही नहीं

है और इनके क्रियान्वित होने में चेतना और इच्छा को भी कोई दख़ल नहीं होता, इसलिए इस पहलू से इस बारे में निश्चित क्रम का तो प्रश्न ही नहीं उठता। हाँ, सहज क्रियाओं के बारे में दो पहलुओं से ध्यान देने की ज़रूरत है—

(क) बहुत-सी सहज क्रियाएँ ऐसी हैं जो जब क्रियान्वित होने लगती हैं, तो आम तौर पर चेतना भी आ जाती हैं। उदाहरण के लिए, खाँसना, जम्हाई लेना, छींकना, थूक या बलग़म निकलना इत्यादि। इनके सन्दर्भ में बचपन ही से निम्नलिखित बातों का आदी बनाना चाहिए—

- खाँसी, जम्हाई या छींक आने लगे तो मुँह पर हाथ या रूमाल रख लिया करें।
- बलग़म या थूक निगलने से परहेज़ करें। यह गन्दी बात है।
- एक तरफ़ जाकर थूकें या नाक साफ़ करें।
- हर जगह गन्दगी न फैलाएँ।
- नमाज़ या सभा में हों तो यथासम्भव खाँसी और जम्हाई को दबाएँ यानी बार-बार बहुत ऊँची आवाज़ से न खाँसें और न जम्हाई लेने में बहुत ज़्यादा मुँह खोलें।
- छींकने के बाद 'अलहम्दुलिल्लाह', जम्हाई लेने के बाद 'लाहौला वला कुव्वत इल्लाबिल्लाह' कहा करें। दूसरों की छींक के उत्तर में 'यरहमुकल्लाह' कहें।

(ख) दूसरा ध्यान देने योग्य पहलू सहज क्रियाओं को संयुक्त कर लेना या हो जाना (Conditioning of Reflexes) है। कभी-कभी मूल प्रवृत्तियाँ या सहज क्रियाएँ मूल प्रेरक के बिना भी किसी कृत्रिम प्रेरक के कारण सक्रिय हो जाती हैं। इन्हें सशर्त या संयुक्त सहज क्रियाएँ कहते हैं।

ऐसा क्यों होता है?

जन्म के बाद ही हर व्यक्ति को प्रतिदिन विभिन्न अनुभवों और अवलोकनों से दो-चार होना पड़ता है। इनमें कुछ कड़वे होते हैं और कुछ मज़ेदार। कुछ लाभप्रद होते हैं और कुछ हानिकारक। स्पष्ट है कि अनुभव की अनुकूलता से मूल प्रवृत्तिवाली या सहज क्रियाएँ सक्रिय होती हैं। अब ज़िन लोगों, परिस्थितियों या चीज़ों से जैसे कुछ अनुभव सम्बद्ध हो जाएँगे, उनसे दो-चार होते ही वैसी ही क्रियाएँ होने लगेंगी। चाहे व्यवहार में इस तरह के अनुभव की नौबत न आए। उदाहरण के लिए, अन्धेरा अपने आपमें कोई डरने की चीज़ नहीं, लेकिन एक बच्चे को अन्धेरे में हानिकारक जानवर या कीड़े-मकोड़े से क्षति पहुँच जाती है या किसी चीज़ से टकराकर चोट लग जाती है, तो वह अन्धेरे से डरने लगता है। चाहे वहाँ क्षति पहुँचानेवाली कोई चीज़ न भी हो।

एक दूध पीते बच्चे को माँ की छाती से ज़्यादा रुचिकर चीज़ और क्या हो सकती है? जब दूध छुड़ाने के लिए कड़वा कुनैन का सत या कोई और कड़वी चीज़ लगा दी जाती है और मुँह मारते ही बच्चे को बार-बार कड़वाहट का कटु अनुभव होता है, तो फिर वह न सिर्फ़ मुँह मारना बन्द कर देता है; बल्कि छाती देखते ही मुँह बनाने लगता है। नन्हे बच्चे घर में पले हुए या आसपास पाए जानेवाले जानवरों और पक्षियों इत्यादि को बहुत पसन्द करते हैं। उनके साथ खेलना चाहते हैं। रो रहे हों, तो उन्हें देखकर बहल जाते हैं। लेकिन एक नन्हा बच्चा जिसकी उंगली तोते ने काट ली हो या भौं-भौं करके कुत्ते ने जिसे दौड़ाया हो या जिसकी नींद दो बिल्लियों की लड़ाई में भयंकर आवाज़ों से डरकर उचाट हो गई हो, वह उनके नाम से डरने लगता है और उनकी सूरत देखकर उसके रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

प्रतियोगिताओं में असफल रहनेवाले को मैदान में उतरते ही पसीना छूटने लगता है। फेल हो जानेवाला बच्चा परीक्षा के नाम से घबराता है।

इसके विपरीत जीत जानेवाले बच्चे प्रतियोगिताओं का और अच्छे नम्बर लानेवाले परीक्षाओं का स्वागत करते हैं।

एक नन्हे बच्चे के सामने सुन्दर खिलौना पेश किया जाता है, जब वह लेने के लिए हाथ बढ़ाता है तो पीछे से डरावनी आवाज़ें निकाली जाती हैं, जिनसे वह डर जाता है। यह क्रिया बार-बार की जाती है। इसका नतीजा यह होता है कि खिलौने जैसी रुचिकर चीज़ जब सामने लाई जाती है, तो वह डर का प्रदर्शन करने लगता है, चाहे डरावनी आवाज़ न भी निकाली जाए। लेकिन जब डरावनी आवाज़ें बिलकुल बन्द कर दी जाती हैं और वही खिलौना पेश करने के साथ हर बार मिठाई भी दी जाती है तो फिर खिलौने से जो डर होता था, वह धीरे-धीरे दूर हो जाता है।

एक बच्चे को बहुत ही प्यार और हमदर्दी से क़ुरआन पाक पढ़ाया जाता है। उसके हाथ में जो क़ुरआन मजीद दिया जाता है, वह अच्छे काग़ज़ पर बहुत ख़ूबसूरत छपा है, जिल्द बहुत सुन्दर और जुज़्दान बहुत सुन्दर रंगोंवाला है, जब भी वह क़ुरआन मजीद लेकर बैठता है, शाबाशी पाता और बहुत अच्छी नज़रों से देखा जाता है। निरन्तर इन अच्छे अनुभवों का नतीजा यह होता है कि क़ुरआन मजीद से उसका लगाव पैदा हो जाता है और वह उसे देखकर लपकता है। लेकिन अगर रवैया इसके विपरीत हो, तो सूरत से घबराने लगता है और अपने शौक़ से तिलावत भी गवारा नहीं करता।

एक बच्चा गणित के घंटे में अक्सर डांटा-फटकारा और मारा-पीटा जाता है, धीरे-धीरे उसे इस विषय ही से नफ़रत पैदा हो जाती है; क्योंकि इस विषय के साथ बहुत ही कटु अनुभव जुड़ जाते हैं। यही कुछ लोगों के सिलसिले में भी होता है। एक शिक्षक बच्चों के साथ बहुत ही प्यार और स्नेह से पेश आता है, मेहनत से पढ़ाने के साथ उनको खेलने और ख़ुश रहने के भी मौक़े उपलब्ध करता है, अनिवार्य स्थिति में कभी सख़्ती

करता है तो हमदर्द माँ-बाप की तरह मुहब्बत और हमदर्दी और अच्छे व्यवहार से बहुत जल्द ही उसकी पूर्ति कर देता है। वह बीमार पड़ता है तो सात-आठ बरस के बच्चे हिम्मत बंधाने और देख-भाल के लिए जाते हैं। तन्दुरुस्ती की दुआएँ करते हैं। छुट्टियों के बाद शिक्षक को घर से आने में देर होती है, तो बच्चे बेचैन हो जाते हैं और जल्द आने के लिए फ़ोन करते हैं। इसके विपरीत एक दूसरा शिक्षक अक्सर डाँट-फटकार और मार-पीट से काम लेता है; जायज़ हदों में भी बच्चों की दिलचस्पियों का ध्यान नहीं रखता, बच्चे उसकी सूरत से घबराने लगते हैं। उसको बद्दुआएँ देते हैं और जब बीमार पड़ता है तो बच्चों में मशहूर हो जाता है कि मर गया, यहाँ तक कि एक बच्चे के अभिभावक घरवालों को तसल्ली देने के लिए आ जाते हैं। यह अस्ल में उस घृणा की अभिव्यक्ति है, जो शिक्षक के बुरे व्यवहार की वजह से पैदा हो गई थी। खुद अन्दाज़ा लगाइए, ऐसे शिक्षक का बच्चे क्या असर क़बूल करेंगे, जिसकी सूरत देखते ही उनपर अजीब स्थिति छा जाती हो।

झूठ, चोरी, अच्छे आचरण और मिलनसारी, बदमिज़ाजी और चिड़चिड़ापन, सहनशीलता और संयम या छिछोरापन, किसी विषय से लगाव या घृणा, किसी आदमी से मुहब्बत या वैर और दुश्मनी, कुत्ते-बिल्ली या अन्धेरे से डर, जानवरों को सताना या उनपर दया करना, पढ़ने में मेहनत या भगोड़ापन इत्यादि अस्ल में संयुक्त सहज, नैसर्गिक और मूल क्रियाएँ हैं, जो सारी ज़िन्दगी क्रियान्वित होती रहती हैं।

ध्यान रखने योग्य बातें

सहज शक्तियों का परिवेश, उसके अनुभवों और अवलोकनों से इस तरह घुल-मिल जाना और सम्बद्ध हो जाना लोगों के आरचण और चरित्र पर अस्ल में बहुत दूरगामी प्रभाव डालता है। शुरुआती उम्र के कुछ कटु अनुभव दिल और दिमाग़ पर ऐसी गहरी छाप छोड़ देते हैं कि

ज़िन्दगी भर नहीं मिटते और जिन लोगों, परिस्थितियों या गतिविधियों इत्यादि से वे जुड़ जाते हैं, उनसे दो-चार होते ही अपने आप वही कैफ़ियत छा जाती है। उदाहरण के लिए, उत्तेजना, गुस्सा, डर, अरुचि, ख़ुशी, दुख, मुहब्बत, हमदर्दी इत्यादि की दशा चाहे ये सही, फ़ायदेमन्द और ज़रूरी हो या ग़लत, अनावश्यक और हानिकारक। इसलिए सहज प्रवृत्तियों के घुल-मिल जाने या जुड़ जाने के सन्दर्भ में निम्नलिखित बातें ध्यान में रखने योग्य हैं–

- माँ-बाप को चाहिए कि अच्छी आदतें और तौर-तरीक़े और व्यवहार और आचरण परवान चढ़ाने के सन्दर्भ में होनेवाली सारी कोशिशों के साथ छोटी उम्र ही से अच्छे अनुभव जोड़ दिया करें, ताकि बच्चे ऐसा करने में ख़ुशी महसूस करें और इन्हें बार-बार दोहराकर अच्छी आदतें और तौर-तरीक़े और अच्छे अचारण और चरित्र के मालिक बनें।
- अगर घर पर समुचित व्यवस्था न हो सके, तो बच्चों को जल्द ही किसी अच्छे स्कूल/मदरसे में दाख़िल करवा दें।
- बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा बहुत ही आनन्दमय माहौल में और बहुत प्यार से हो और ऐसी गतिविधियों और क्रिया-कलापों के द्वारा हो, जिनमें बच्चे स्वाभाविक रूप से दिलचस्पी लेते हों, ताकि पढ़ने-लिखने और विभिन्न विषयों और क्रिया-कलापों से बच्चों को प्यार और लगाव पैदा हो।
- पढ़ने के दौरान अगर कोई बात बच्चों की समझ में आसानी से न आए, तो उसपर उत्तेजित न हों और न सज़ा दें वरना उस विषय से घृणा पैदा हो जाने की आशंका है। संयम और धीरज के साथ समझाने की कोशिश करें।
- अगर असावधानी और लापरवाही से बच्चों में नापसन्दीदा असहज प्रवृत्ति पैदा हो जाए, उदाहरण के लिए, माँ-बाप के दुर्व्यवहार के कारण उनसे घृणा, कुत्ते, बिल्ली या अन्धेरे का डर, विभिन्न विषयों

और क्रिया-कलापों से विमुखता या उदासीनता इत्यादि, तो उनसे अच्छे अनुभव सम्बद्ध करके जल्द से जल्द सुधार की कोशिश की जाए। नफ़रत और बग़ावत को दूर करने के लिए शिक्षक और माँ-बाप बच्चों के साथ निरन्तर प्रेम और स्नेह का प्रदर्शन करें और अच्छे व्यवहार से पिछली कोताहियों की पूरी क्षतिपूर्ति कर दें। जिन विषयों और क्रिया-कलापों से अरुचि का प्रदर्शन करें, उनकी पढ़ाई को आसान और दिलचस्प बनाने के लिए मॉडल, चित्र और चार्ट इत्यादि का इस्तेमाल करें और अगर बच्चे किसी स्तर पर भी तरक़्क़ी कर रहे हों, तो हिम्मत बंधा कर और शाबाशी देकर और ज़्यादा कड़ी मेहनत करने के लिए प्रेरित करें। अन्धेरे में खेलने-खाने की चीज़ें रखकर लाने के लिए तैयार करें। मतलब यह कि बच्चों के कटु अनुभव को धोने के लिए उन चीज़ों से अच्छे अनुभव जोड़ने की पूरी कोशिश करें। उम्मीद है बचपन में, अल्लाह ने चाहा तो, जल्द सुधार हो जाएगा वरना यही मज़बूत होकर ज़िन्दगी भर व्यक्तित्व को कमज़ोर बनाए रखेंगी और अप्रिय हरकतें और अशोभनीय चरित्र का प्रदर्शन कराएँगी।

☆☆☆

अध्याय-9

मूल प्रवृत्तियाँ और संवेग

(Instincts and Emotion)

كُلُّ مَوْلُودٍ يُولَدُ عَلَى فِطْرَةِ الْإِسْلَامِ

"हर बच्चा इस्लाम की प्रकृति पर पैदा होता है।" (हदीस)

अल्लाह ने मनुष्य को धरती पर अपना प्रतिनिधि (ख़लीफ़ा) बनाया है। इस पद की अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए मनुष्य पर तीन तरह की ज़िम्मेदारियाँ आयद होती हैं—

(1) व्यक्तिगत (निजी) (2) पारिवारिक (3) सामूहिक (सामाजिक)।

इन ज़िम्मेदारियों की अनुकूलता से अल्लाह तआला ने हर आदमी को जन्म से ही तरह-तरह की शक्तियों और योग्यताओं से सुसज्जित करके भेजा है। ये मूल प्रवृत्तियाँ (instincts) इनसान की ज़िन्दगी में विशेष महत्त्व रखती हैं।

मूल प्रवृत्तियाँ वास्तव में वे प्राकृतिक या नैसर्गिक इच्छाएँ हैं, जो बचपन ही से हमारे सारे क्रिया-कलापों की प्रेरक होती हैं। हमारे क्रिया-कलापों, तौर-तरीक़ों के पीछे भी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से यही काम करती हैं और हमें अपने आपकी की सुरक्षा, परिवार के अस्तित्व और संस्कृति के विकास में मदद देती हैं। इस तरह मूल प्रवृत्तियों को निम्नलिखित तीन वर्गों में बांटा जा सकता है—

- **निजी व्यक्तित्व से सम्बन्धित :** अर्थात् वे प्रवृत्तियाँ जो जान की सुरक्षा और शरीर के सही क्रिया-कलापों में सहायक होती हैं। उदाहरण के लिए, भोजन की तलाश, चीज़ों को संग्रह करने, जानने की इच्छा, परिश्रमशीलता, पलायन इत्यादि।

- **परिवार-सम्बन्धी :** यानी परिवार के अस्तित्व को बनाए रखने और सुरक्षा में सहायक। उदाहरण के लिए, दाम्पत्य और पितृत्व।
- **समाज-सम्बन्धी :** यानी वे प्रवृत्तियाँ जो आदमी को सामूहिक जीवन गुज़ारने को प्रेरित करती हैं। उदाहरण के लिए, समूह में रहने की प्रवृत्ति, आत्मसम्मान, आत्मनिन्दा, प्रभाव ग्रहण करना, प्रभाव डालना, हमदर्दी, अनुसरण करना इत्यादि।

मूल प्रवृत्तियों की विशेषताएँ (Characteristics of Instincts)

मूल प्रवृत्तियों में निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ पाई जाती हैं–

बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में इनका ध्यान रखना ज़रूरी है। इन विशेषताओं को नज़रअन्दाज़ कर देने से बच्चों के सन्तुलित विकास पर बहुत हानिकारक प्रभाव पड़ते हैं।

(1) सर्वव्यापी हैं

यानी ये सभी आदमियों में पाई जाती हैं, किसी विशिष्ट व्यक्ति, क़ौम या क़बीले के साथ जुड़ी हुई नहीं हैं। हाँ, तीव्रता और मन्दता की दृष्टि से आदमियों के बीच अन्तर होता है। एक ही प्रवृत्ति एक आदमी में ज़्यादा तीव्र होती है, दूसरे में कम। इसी तरह उनके उभरने की स्थितियों और रास्तों में भी अन्तर होता है। एक आदमी अपने माहौल, प्रशिक्षण, अनुभव, बुद्धि और उपलब्ध आदर्श नमूने के प्रभाव के कारण अपनी एक प्रवृत्ति को जिस तरह क्रियान्वित करता है, दूसरा आदमी उन्हीं के प्रभाव में बिलकुल दूसरा रास्ता अपनाता है। इसलिए विभिन्न लोगों के चरित्रों और आदतों में इतना स्पष्ट अन्तर पाया जाता है।

(2) नैसर्गिक (Natural) हैं और जन्म के साथ ही मिल जाती हैं

लेकिन सारी प्रवृत्तियाँ एक बारगी प्रकट नहीं हो जातीं, बल्कि

शक्ति और ज़रूरत की दृष्टि से धीरे-धीरे अपने-अपने समय पर वे प्रकट होती हैं। पहले बच्चे की वे प्रवृत्तियाँ काम करना शुरू करती हैं, जिनका सम्बन्ध उनके व्यक्तित्व से होता है। उनमें भी भोजन की तलाश सर्वोपरि है। बच्चा पैदा होते ही भोजन की तलाश करता है। फिर क्रमशः पकड़ने, रेंगने, बैठने और खड़े होने की प्रवृत्तियाँ सामने आती हैं और वे धीरे-धीरे जिज्ञासा, पलायन, परिश्रमशीलता, रचनात्मकता और भंडारण इत्यादि का प्रदर्शन करता है।

व्यक्तिगत के बाद वर्ग, समूह और समाज-सम्बन्धी प्रवृत्तियाँ उभरना शुरू होती हैं। जवानी की शुरुआत में यौन-सम्बन्धी लक्षण प्रकट होते हैं और सबसे अन्त में मातृत्व-पितृत्व की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। इसी तरह एक प्रवृत्ति उम्र के किसी हिस्से में ज़ोरों पर होती है और किसी हिस्से में उसका ज़ोर बहुत घट जाता है। उदाहरण के लिए, बचपन में जिज्ञासा अपने चरम पर होती है और जवानी में यौन-प्रवृत्ति। शिक्षण-प्रशिक्षण में इसका ध्यान रखना चाहिए। जब जिस प्रवृत्ति के प्रकट होने और ज़ोर पकड़ने का समय हो, उसी मौक़े पर उचित मार्गदर्शन किया जाए। समय से पहले उसको छेड़ना या समय आने पर उचित मार्गदर्शन न करना दोनों हानिकारक हैं।

(3) प्रेरक के बिना प्रकट नहीं होतीं

यानी प्रवृत्तियाँ अपने आप बिना ज़रूरत के नहीं उभर जातीं, बल्कि उनको उभरने या प्रकट होने के लिए कोई न कोई प्रेरक ज़रूरी है। कोई प्रतिद्वन्द्वी होगा, उसी समय द्वन्द्व और संघर्ष की नौबत आएगी। आश्चर्य चकित करनेवाली चीज़ होगी, तब तो उसके बारे में कोई जिज्ञासु होगा। यह अलग बात है कि कभी-कभी असल चीज़ के बजाय उसकी कल्पना ही प्रेरक का काम दे देती है।

(4) इस्तेमाल के अभाव में कमज़ोर हो जाती है

अर्थात् किसी प्रवृत्ति के प्रकट होने और ज़ोर पकड़ने का जो समय है, अगर उसी समय उससे काम न लिया जाए तो समय बीत जाने पर वह बहुत कमज़ोर या कभी-कभी वे बिलकुल मिट जाती हैं और जिस उद्देश्य से ईश्वर ने वह चीज़ प्रदान की थी, ख़ुद वह उद्देश्य प्रभावित होता है। भेड़ियाई बच्चों का उदाहरण हमारे सामने है। बोलने, उठने-बैठने और चलने-फिरने इत्यादि के सम्बन्ध में उन बच्चों को समय पर अनुकरण का मौक़ा नहीं मिल सका। नतीजा यह हुआ कि ज़िन्दगी भर सिखाने के बावजूद ये चीज़ें उन्हें नहीं आ सकीं, जबकि आदमी का हर बच्चा माँ-बाप की तरफ़ से बिना किसी ख़ास कोशिश के केवल अनुकरण करके यही चीज़ें अपने आप सीख लेता है। इसी लिए इन प्रवृत्तियों को नज़रअन्दाज़ करने या कुचलने के बजाय उनके समुचित उपयोग की तरफ़ मार्गदर्शन होना चाहिए।

(5) तृप्ति अथवा पूर्ति की स्थिति में ख़ुशी वरना बेचैनी होती है

यानी प्रवृत्तियों की माँगें अगर पूरी हो जाती हैं, तो आदमी को ख़ुशी, संतुष्टि और शान्ति महसूस होती है। लेकिन अगर उनकी पूर्ति में रुकावट पैदा हो या वे किसी कारण से पूरे न हो सकें, तो वह आदमी परेशान, असन्तुष्ट और खिन्न रहता है। इसलिए जायज़ हदों में उनकी पूर्ति का पूरा सामान होना चाहिए वरना बच्चों के व्यक्तित्व पर बड़े बुरे असर पड़ सकते हैं।

(6) प्रवृत्तियाँ लचकदार होती हैं, शिक्षण-प्रशिक्षण से उनमें बदलाव आ सकता है

जानवरों की तुलना में मनुष्यों की प्रवृत्तियों में ज़्यादा लचक होती है। अनुभव, प्रशिक्षण, अनुकरण और चिन्तन-मनन की वजह से उनके प्रकट होने की स्थितियों में काफ़ी परिवर्तन और बदलाव हो जाता है।

उदाहरण के लिए, रोज़ी-रोटी प्राप्त करने के कितने ही तरीक़े हमारे समाज में प्रचलित हैं, जबकि सबके पीछे एक ही प्रवृत्ति भोजन की तलाश सक्रिय है। इसी लिए अपनी इसी विशेषता की वजह से मनुष्य जानवरों की तुलना में शिक्षण-प्रशिक्षण से फ़ायदा उठाने का कहीं ज़्यादा पात्र होता है। शहद की मक्खी अपना छत्ता बहुत ही सुन्दर और सन्तुलित बनाती है, लेकिन हर हाल में वह सिर्फ़ एक ही रूप-रंग का बना सकती है। इसके विपरीत मनुष्य अपनी रचनात्मक प्रवृत्ति को तरह-तरह से उपयोग में लाता है। झोंपड़ियों से लेकर आसमान से बातें करनेवाली शानदार इमारतें, भारी-भरकम मशीनें, लम्बे-चौड़े कारख़ाने इस बात को दर्शाते हैं। मानव-जाति को एक शानदार सभ्यता और संस्कृति का मालिक बनाने में वास्तव में प्रवृत्तियों के शिक्षण-प्रशिक्षण को भी बहुत कुछ दख़ल है।

मूल प्रवृत्तियाँ और संवेग (Insticts and Sensation)

संवेदना (भावनाएँ) वास्तव में हमारे वे भले या बुरे तीव्र मनोभाव हैं, जो हमारे मन-मस्तिष्क में हलचल पैदा कर देने के लिए काफ़ी होते हैं। इसके प्रभाव के नतीजे में हमसे जो क्रिया-कलाप प्रकट होते हैं, उनमें बुद्धि और विवेक को बहुत कम दख़ल होता है। उदाहरण के लिए गुस्सा, डर, आश्चर्य, घृणा, शोक, घमंड, गर्व इत्यादि।

प्रवृत्तियों और संवेग का चोली-दामन का साथ है। लगभग हर प्रवृत्ति के साथ कोई न कोई संवेदना ज़रूर जुड़ी होती है। एक आदमी जब किसी परिस्थिति से दो-चार होता है और कोई कारक उसकी किसी प्रवृत्ति को छेड़ता है, तो उसके साथ की भावना भी उभर आती है। उदाहरण के लिए—

(1) जिज्ञास की प्रवृत्ति के साथ हैरत और आश्चर्य की भावना।

(2) लड़ाकेपन की प्रवृत्ति के साथ गुस्सा, उत्तेजना और हैरत

की भावना।

(3) पलायन की प्रवृत्ति के साथ भय की भावना।

(4) संग्रह करने की प्रवृत्ति के साथ धन-सम्पत्ति की भावना।

(5) रचनात्मक प्रवृत्ति के साथ निर्माण की भावना।

(6) यौन-प्रवृत्ति के साथ काम-भावना।

(7) प्रजनन-सम्बन्धी प्रवृत्ति के साथ प्रेम-मुहब्बत की भावना।

(8) ठहाके लगाने की प्रवृत्ति के साथ आनन्द और मनोरंजन की भावना।

(9) भोजन की तलाश की प्रवृत्ति के साथ भूख-प्यास की भावना।

(10) आत्म-गौरव और प्रदर्शन की प्रवृत्ति के साथ घमंड, गर्व या आत्मप्रदर्शन की भावना।

(11) अपने आपको हेय या हीन समझने की प्रवृत्ति के साथ समर्पण और हवालगी और सुपुर्दगी या बन्दगी और अल्लाह की ख़ुशी पाने की भावना।

(12) गिरोही प्रवृत्ति के साथ एकाकीपन का एहसास या अकेलेपन और निस्सहाय होने की भावना।

(13) विमुखता, उदासीनता और अलगाव के साथ घृणा और हीनता की भावना।

(14) दुहाई देने के साथ दुख-शोक, कष्ट और उत्पीड़न की भावना।

नैसर्गिक प्रवृत्तियाँ और संवेदना प्रायः एक-दूसरे से इतने अधिक सम्बद्ध होते हैं कि एक बुरी लत, दूसरा उसका कारक या दोनों एक ही बुरी लत के कारक महसूस होते हैं।

इसी तरह बहुत-सी नैगर्सिक प्रवृत्तियों और संवेगों में कोई भेद नहीं किया जाता, बल्कि आम बोलचाल में दोनों के लिए एक ही शब्द इस्तेमाल होता है। उदाहरण के लिए, ग़ुस्सा, ईर्ष्या, दुख-शोक, मुहब्बत,

नफ़रत, भय इत्यादि को हम संवेदना या भावना भी कहते हैं और नैसर्गिक प्रवृत्तियाँ भी।

संवेग की विशेषताएँ

संवेग में यह विशेषता होती है कि—

(1) मानसिक सन्तुलन को बिगाड़ देती है और आदमी को इस योग्य नहीं रखती कि वह अच्छी तरह सोच-विचार या उचित फ़ैसले कर सके। इसी लिए संवेग के तहत आम तौर पर ऐसी हरकतें हो जाया करती हैं, जिनपर बाद में बहुत पछतावा होता है।

(2) शारीरिक विकार और विभ्रम का कारण बनते हैं। हमारे अंग-प्रत्यंग आम हालत में जिस अन्दाज़ से काम करते हैं, संवेग की धारा प्रवाहित होते ही उनमें तरह-तरह के बदलाव होने लगते हैं। दिल धड़कना, पसीना छूटना, तरह-तरह के द्रव निकलने लगना, रोंगटे खड़े हो जाना, शरीर में कँपकपी, चेहरे पर लाली या पीलापन, नथुने फूल जाना, मुँह में झाग आ जाना; मतलब यह कि पूरे शरीर में विशेष प्रकार की दशाएँ छा जाती हैं। पाचन-प्रक्रिया, रक्त-संचार, अवशिष्ट पदार्थों का निष्कासन हर एक प्रभावित होता है। इसी वजह से तो बहुत ज़्यादा भावुक लोगों की तन्दुरुस्ती ठीक नहीं रहती और दुख-शोक या ग़ुस्से की हालत में खाने से मना किया जाता है। इसके विपरीत सन्तुष्टि और शान्ति या दोस्तों के साथ खाइए, तो ज़्यादा खाया भी जाता और ख़ूब हज़म भी होता है।

(3) संवेग का स्वरूप बड़ी हद तक व्यक्तिगत, निजी और आन्तरिक अनुभवों का होता है—एक ही घटना विभिन्न लोगों पर विभिन्न प्रकार की संवेदना की स्थिति पैदा करती है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति की मौत उसकी पत्नी, बच्चे और विरोधियों के अन्दर विभिन्न तरह के भावनाएँ पैदा करती है, जिसके स्वरूप और प्रभाव की मात्रा

दोनों में अन्तर होता है। खुद एक आदमी पर विभिन्न हालतों और पृष्ठिभूमि में एक ही चीज़ या एक ही तरह की घटनाओं से जो स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं, उनमें भारी अन्तर पाया जाता है। इसी तरह एक व्यक्ति पर जो कुछ बीत रहा होता है, उसका सही एहसास उसी व्यक्ति को होता है; दूसरे उसका ठीक अन्दाज़ा नहीं लगा सकते। किसी के संवेग या भावनाओं का बाहर से अन्दाज़ा लगानेवाले इसी लिए अक्सर बड़े भ्रम का शिकार होते हैं।

(4) संवेग या भावनाएँ संक्रामक रोग की भाँति होती हैं यानी एक आदमी पर जो संवेग छा जाते हैं, देखनेवाले पर भी वही छाने लगते हैं। एक को दुखी और रोता देखकर सबके मुँह लटक जाते हैं, जबकि हँसमुख और खुश मिज़ाज लोगों की संगति में सबके चेहरों पर खुशी की लहर दौड़ जाती है।

(5) मामूली बात पर भड़क सकते हैं और भड़कने की कोई हद नहीं होती। लेन-देन पर एक पैसे पर झगड़े, मामूली बातों पर चाकू चलने और क़त्ल कर देने की नौबत आ जाना, मज़ाक़-मज़ाक़ में ज़िन्दगी भर के लिए सम्बन्ध टूट जाना इत्यादि दिन-प्रतिदिन की बातें हैं।

(6) देर तक क़ायम रहने की स्थिति में स्थायी रूप अपनाकर मूड में बदल जाते हैं। दो आदमी जब एक-दूसरे से नाराज़ होते हैं तो मामूली बातों पर लड़ जाया करते हैं; बल्कि कभी-कभी नाराज़गी किसी से होती है और ग़ुस्सा किसी और पर उतारने लगते हैं। खुश और प्रसन्न हों या मुहब्बत और आदर की भावना सक्रिय हो तो नापसन्दीदा बातों को भी पी जाते हैं।

(7) संवेगों या भावनाओं में रुख़ बदल लेने की भी सलाहियत होती है। जो बच्चे एक-दूसरे को छेड़ते या एक-दूसरे की शिकायत करते रहते हैं, आपस में गहरे दोस्त भी हो जाते हैं। उनका छेड़ना और शिकायत करना भी वास्तव में दिली लगाव और मुहब्बत की निशानी

होती है। ख़ास तौर से बचपन में बहन-भाइयों की आपस में छेड़-छाड़ तो आम तौर पर ग़ैर-मामूली लगाव ही का नतीजा होती है।

(8) सर्वव्यापी होते हैं। बच्चे, जवान, बूढ़े सबकी भावनाएँ भड़क सकती हैं। हाँ, छोटे बच्चों और नवजवानों में ये बहुत तीव्र होते हैं। बच्चे जल्द उत्तेजित हो जाते हैं और उनकी भावनाएँ इतनी तीव्र होती हैं कि मामूली बात पर भी चींख़ने-चिल्लाने और ज़मीन पर लोटने लगते हैं। लेकिन यह दशा बहुत क्षणिक होती है। वे जल्द ही बहल भी जाते हैं– आँसुओं से भीगे हुए चेहरे पर मुस्कराहट खेलते हुए शायद सब ने देखा होगा। जवानी में भावनाओं की तीव्रता नतीजों से बेपरवाह करके आत्महत्या तक कर लेने पर भी उतारू कर देती है।

(9) भावनाओं को भड़काने में मिज़ाज को भी बहुत दख़ल होता है। बलग़मी मिज़ाज (कफ़प्रधान-प्रकृति) के लोगों के मुक़ाबले में दमवी मिज़ाज (पित्तप्रधान-प्रकृति) के लोग जल्द उत्तेजित और नाराज़ हो जाते हैं। सौदावी मिज़ाज (वातप्रधान-प्रकृति) के लोग उदास-प्रकृतिवाले और संवेदनशील होते हैं और सब कुछ अपने ही ऊपर ओढ़ लेते हैं, तो उग्र या कटु स्वभाव के लोग अपनी भावनाओं को बिलकुल दबा नहीं पाते और निराशा और बुज़दिली का जल्द शिकार हो जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि इन भावनाओं के प्रभाव में आने पर शरीर के अन्दर जो रासायनिक बदलाव होते हैं, उनका कुछ अंश पहले ही से सक्रिय रहता है और मामूली प्रेरणा 'सोने में सुहागा', या 'करेला कड़वा, उसपर नीम चढ़ा' वाली कहावत को चरितार्थ करा देती है।

(10) बच्चा एक ही संवेग या भावना से बार-बार प्रभावित हो, तो वह उसकी आदत बन जाती है। एक आदमी को बार-बार चिढ़ाया जाए, तो वह चिड़चिड़ा हो जाता है। निराशा और असफलता का लगातार शिकार होने पर निराशावाद और लगातार कामयाबियों की स्थिति में

आशावाद छाती है। लगातार अपमान और अनादर के कारण हीनत की भावना और लगातार नाज़-नखरे उठाने के नतीजे ं श्रेष्ठता-मनोग्रंथी पलती-बढ़ती है। विभिन्न कामों में हमारे रवैये अनुभूतियाँ और प्रवृत्तियाँ इसी के नतीजे में जन्म लेती हैं।

मूल प्रवृत्तियों और संवेगों का महत्त्व

हमारे जीवन में नैसर्गिक प्रवृत्तियों और संवेगों का बड़ा महत्त्व है यही हमारे आचरण की बुनियाद, चरित्र का स्रोत, कर्मों का प्रेरक औ आदतों तथा तौर-तरीक़ों का भंडार है। जीवन के संघर्ष में विभिन्न प्रका के अभियान को जीतने के लिए उपकरण और सामान और गोला-बारू का भंडार है। जीवन-संग्राम में यही मर्दों की तलवारें हैं। ठीक-ठीव इस्तेमाल हों, तो बहादुर विजेता बना दें वरना अत्याचारी, अन्यायी औ लुटेरा और हत्यारा बना दें। सही रुख़ पर पड़ जाएँ, तो अल्लाह का नेव बन्दा, ज़मीन पर उसी का ख़लीफ़ा (प्रतिनिधि) और सही अर्थों में सा प्राणियों में सर्वोत्तम प्राणी बनाने में सहायक और मददगार हों और दोन जहान की सफलता दिलाएँ; ग़लत रुख़ अपना लें तो जानवर से भ बदतर बनाकर रख दें और लोक-परलोक की रुसवाई और घाटे क कारण बनें। सन्तुलन पर रहें तो अच्छे व्यवहार कहलाएँ और व्यक्तित्व को चार-चाँद लगा दें। सन्तुलन से हटें तो नैतिकता के कलंक कहलाएँ और सबकी नज़रों से गिरा दें। गुणों के निम्नलिखित जोड़ियों में से ह एक में कोई एक ही प्रवृत्ति काम कर रही है। मगर देख लीजिए अभिव्यक्ति के विभिन्न रूप उसे कहाँ से कहाँ पहुँचा देते हैं–

(1) प्रेम– काम-वासना;

(2) आज़ादी– अव्यवस्था और अराजकता;

(3) सावधानी और सतर्कता– भय और डरपोकपन;

(4) मानवता और उदारता– सिद्धान्तहीनता और चापलूसी;

(5) **शक्ति और सक्रियता**— अत्याचार और हिंसा;

(6) **चिन्तन और विचारशीलता**— उदासी और निराशा;

(7) **कम ख़र्च करना**— कंजूसी और कृपणता;

(8) **आत्मविश्वास**— स्वेच्छाचारी होना;

(9) **आदर-सत्कार**— चापलूसी और ख़ुशामद;

(10) **साहस और हिम्मत**— बहादुरी और अदूरदर्शिता;

(11) **शिक्षा ग्रहण करना**— तीव्र प्रभावकारी होना;

(12) **सबल विश्वास**— भ्रमग्रस्तता या दुर्बल आस्था।

मतलब यह कि प्रवृत्तियों और संवेगों (जज़बात) को प्रकट करने के विभिन्न तरीक़े हो सकते हैं। इनमें कुछ पसन्दीदा होते हैं, कुछ नापसन्दीदा। शिक्षा-दीक्षा का काम यह है कि इनपर नियंत्रण करने का ढंग सिखाए, इनको सही रुख़ पर डालने और अगर ग़लत रुख़ पर पड़ गए हों, तो सुधारने की कोशिश करे।

ध्यान देने योग्य बातें

संवेगों के सन्दर्भ में निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं—

- शिक्षक और माता-पिता को चाहिए कि बच्चों के साथ बहुत ही प्यार-मुहब्बत और स्नेह का रवैया रखें। कभी अगर झिड़कने या सज़ा देने की नौबत भी आए, तो जल्दी अच्छे व्यवहार से उसकी क्षतिपूर्ति कर दें।
- बहन-भाइयों, साथी-संगियों और सहपाठियों को भी एक-दूसरे के साथ अच्छा व्यवहार, हमदर्दी और मुहब्बत का बरताव करने पर बराबर उभारते रहें और कभी-कभी मन-मुटाव हो जाए तो जल्द ही सुलह और सफ़ाई करा दिया करें। इस तरह बच्चों में माँ-बाप, शिक्षक, घर, स्कूल/मदरसा, बहन-भाइयों, साथी-संगियों इत्यादि से

भावनात्मक लगाव पैदा होगा। यही लगाव सम्बन्ध को चिरस्थायी बनाने और हर हाल में अच्छा बनाए रखने में सहायक होगा।

- दुर्व्यवहार या आपस का मन-मुटाव, बच्चों में नफ़रत, ईर्ष्या, द्वेष और दुश्मनी की भावनाओं का पोषण करती और उन्हें विद्रोह और अलगाव पर उकसाती है। इनके नतीजे कभी-कभी बहुत ही ख़तरनाक होते हैं। धार्मिक घरानों और दीनी मदरसों के बच्चों का बड़े होकर ख़ुदा को न माननेवालों और ख़ुदा के बाग़ियों की पंक्ति में शामिल हो जाना, भले परिवारों की बहू-बेटियों का आत्महत्या या वेश्यावृत्ति तक पर उतर आना, बड़े आदमियों के बच्चों का अपराधकर्म की ओर अग्रसर हो जाना इत्यादि, आम तौर पर बुरे व्यवहार के ही फल होते हैं। इसलिए आपसी सम्बन्धों के सुधारने पर असाधारण ध्यान दें।
- सुरुचि और सद्भावों के प्रशिक्षण के लिए घर, कक्षाओं और स्कूल/मदरसे के माहौल को यथासम्भव साफ़-सुथरा, आकर्षक और मनमोहक बनाएँ। सामान के क्रम में सुव्यवस्था, बातचीत, व्यवहार और बरताव में शिष्टता का ध्यान रखें। शिष्टाचारों का पूरा पालन करें। अच्छी नीति को यथासम्भव अपनाएँ। हस्तकला, आर्ट-क्राफ्ट और बाग़बानी की शिक्षा की व्यवस्था करें।
- पाक-साफ़ जज़्बों और ऊँचे विचारों को परवान चढ़ाने के लिए आदर्श हस्तियों के जीवन-वृत्तान्तों, साहित्य की कालजयी रचनाओं और सुधार करनेवाली कहानियों इत्यादि से मदद लें।
- घर के कामों और स्कूल/मदरसे के विषयों और क्रिया-कलापों के साथ अच्छे अनुभव को जोड़ें। बच्चों की कोशिशों को सराहें। अच्छे नतीजों पर दिल खोलकर शाबाशी दें। नम्बर देने में उदारता से काम लें। ये सब बातें चुस्ती और एकाग्रता का साधन हैं। ऐसा करने से बच्चों का उत्साह बढ़ता है। वे ज़्यादा मेहनत और लगन से काम

करते हैं। निराशा, उदासीनता और खिन्नता का शिकार नहीं होते।

- क़ुरआन मजीद और मसजिदों से भावनात्मक लगाव पैदा कराएँ। क़ुरआन मजीद की शिक्षा अच्छे और सुहाने माहौल में दें। क़ुरआन पढ़ने के लिए जो प्रति उपलब्ध की जाए, उसका काग़ज़, कम्पोज़िंग, छपाई यथासम्भव बहुत अच्छा हो। जिल्द सुन्दर और जुज़्दान आकर्षक हो। बहुत ही अदब और एहतिराम से उठाया और रखा जाए। पढ़ाते समय सख़्ती करने से बचें। मुहब्बत और हमदर्दी, हिम्मत बढ़ाने और उचित मार्गदर्शन का पूरा-पूरा ध्यान रखें। क़ुरआन मजीद की शिक्षा को बोझ हरगिज़ न बनने दें वरना भावनात्मक लगाव पैदा करने के बजाय नफ़रत का कारण बनेंगे।
- मसजिदें साफ़-सुथरी और आकर्षक हों। माहौल शान्तिपूर्ण और संजीदा हो। बड़े लोग मसजिद के शिष्टाचारों और नियमों का पूरा ध्यान रखें। छोटे बच्चों को तो ख़ैर मसजिदों में ले जाना नहीं चाहिए। हाँ, पाँच-छह साल के हो जाएँ, तो सफ़ाई और सतरपोशी का एहतिमाम करके उन्हें किसी-किसी समय अपने साथ मसजिद में ले जाया करें। नमाज़ियों को चाहिए कि मसजिद जाने पर बच्चों को सम्मान की दृष्टि से देखें। नाक-भौं सिकोड़ने या झिड़कने से बचें। शिष्टाचार का उल्लंघन हो जाए, तो प्यार से समझा दें। बड़े ख़ुद अगर मसजिद के शिष्टाचारों का पूरा ध्यान रखेंगे, तो धीरे-धीरे बच्चे अपने आप अभ्यस्त हो जाएँगे। कभी-कभी बड़े-बूढ़े लोग बच्चों को मसजिदों में बहुत ही बेदर्दी से डाँट देते हैं, जिसके नतीजे में बच्चे मसजिद जाने से कतराने लगते हैं। याद रहे, इस तरह की हरकतें बच्चों पर बहुत बुरा प्रभाव डालती हैं।
- बच्चे ज्यों-ज्यों बड़े होते जाएँ, उन्हें अल्लाह, प्यारे रसूल (सल्ल॰) और दूसरे नबियों (अलैहि॰) के उपकारों, प्यारे सहाबा (रज़ि॰), मुसलिम उम्मत के नेक बन्दों, इस्लाम के बुज़ुर्गों, मुसलिम मिल्लत के

महापुरुषों और कल्याकारी और समाज-सेवा करनेवाली संस्थाओं की सेवाओं का एहसास दिलाकर उनसे भावनात्मक लगाव पैदा कराएँ। यह लगाव उन्हें सत्य से प्रेम और असत्य से घृणा करने पर तैयार करेगा। पथभ्रष्टों और दुष्कर्मियों से रिश्ता जोड़ने में बाधक होगा और इस्लाम और मुसलिम मिल्लत की ख़िदमत पर बराबर उभारता रहेगा।

- संवेगों या भावनाओं के ठीक हलचल की हालत में बच्चों को न छेड़ें, बल्कि जायज़ हदों में सन्तुष्टि प्राप्त करने का मौक़ा दें। हाँ, नापसन्दीदा रुख़ अपनाने से रोकने के लिए बहुत ही बुद्धि-विवेक और अच्छी युक्ति से काम लें।
- घर, स्कूल/मदरसे या नाते-रिश्तेदारों के यहाँ आयोजित होनेवाले कार्यक्रमों या उत्सवों में बच्चों को हिस्सा लेने और उन्हें अपनी भावनाओं के प्रकट करने के मौक़े दें। ख़ासकर मेहमानों के आने पर ख़ुशी और उनके आव-भगत के सन्दर्भ में। इससे बच्चों की भावनाएँ संतुष्ट होंगी; सद्भावनाएँ उभरेंगी और भावनात्मक लगाव पैदा होगा।
- बच्चों के संवेग अगर, ख़ुदा न चाहे, ग़लत रुख़ अपना लें, तो उचित कारणों का पता लगाकर निवारण की कोशिश करें, ताकि भविष्य में इसका मौक़ा ही पेश न आए। अगर बुरी संगति के कारण ऐसा हुआ हो, तो मुनासिब उपाय अपनाएँ। अगर बुरी संगति से दूर रखने के लिए सज़ा देना ही अनिवार्य हो, तो बहुत सोच-समझ कर सज़ा दें और फिर ग़ुबार धो डालें।

☆☆☆

अध्याय-10

बाल-विकास के विभिन्न चरण

बच्चे क्रमशः युवावस्था तक पहुँचते हैं। बड़ों की दुनिया में दाख़िल होने के लिए उन्हें विभिन्न अवस्थाओं से गुज़रना पड़ता है। पलने-बढ़ने की ये अवस्थाएँ अपनी अलग-अलग ख़ूबियाँ रखती हैं। बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में अगर इन ख़ूबियों का ध्यान रखा जाता है, तब तो कोशिशें नतीजा देनेवाली और फ़लदायक होती हैं वरना कठिन मेहनतों के बावजूद सफलता में सन्देह रहता है, बल्कि कभी-कभी इन कोशिशों के नतीजे उलटे निकलते हैं।

विभिन्न अवस्थाएँ

मानसिक और शारीरिक रूप से युवावस्था तक पहुँचने के लिए बच्चों को निम्नलिखित अवस्थाओं से गुज़रने पड़ते हैं—

(1) शैशवावस्था (जन्म से पाँच साल की अवस्था),

(2) बचपन (छह से नौ साल की उम्र तक),

(3) लड़कपन (नौ-दस साल से बारह-तेरह साल की उम्र तक),

(4) किशोरावस्था (तेरह-चौदह साल से सतरह-अठारह साल की उम्र तक)।

जलवायु, पर्यावरण और सामाजिक परिस्थितियों का बच्चों के विकास की अवस्थाओं पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इसलिए हर बच्चे की विशेष स्थितियों की वजह से इन अवस्थाओं की अवधि में कुछ अन्तर हो

जाता है और सारे बच्चों में पूरी तरह समानता नहीं पाई जाती।

इसी तरह एक बच्चा क्रमशः एक अवस्था से दूसरी अवस्था में दाख़िल होता है। इसी लिए ऊपर हर अवस्था की जो अवधि लिखी गई है, उसे एक सामान्य अनुमान ही समझना चाहिए। बहरहाल, हर बच्चे को इन अवस्थाओं से गुज़रना पड़ता है।

शैशवकाल (जन्म से पाँच साल तक)

यह अवस्था विभिन्न दृष्टियों से बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। पाँच साल की उम्र तक बच्चे जो कुछ अपनी माँओं की गोद या घरेलू माहौल में सीख लेते हैं, उनकी छाप सारी ज़िन्दगी रहती है। इसलिए इस अवस्था को बुनियाद की हैसियत प्राप्त है। खाना-पीना, उठना-बैठना, चलना-फिरना, मिलना-जुलना, बोलना-चालना, पहनना-ओढ़ना बच्चे इसी अवधि में सीखते हैं। मुहब्बत, नफ़रत, डरना और निडर होना, आज़ादी, पाबन्दी, हमदर्दी और सहयोग, त्याग और बलिदान, सर्दी-गर्मी, सख़्ती-नरमी, दुख-सुख इत्यादि का एहसास इसी अवधि में उभरता है।

शारीरिक दृष्टि से भी यह अवस्था अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। पहले-दूसरे साल में कुछ ऐसी शारीरिक कमियाँ पैदा हो सकती हैं, जिनकी क्षतिपूर्ति ज़िन्दगी भर सम्भव नहीं है। विशेषकर देखने, सुनने और बोलने इत्यादि की शक्तियों में विभिन्न दोष, जो न केवल शरीर पर असर डालते हैं, बल्कि बौद्धिक विकास पर भी बहुत बुरा प्रभाव डालते हैं।

इस अवस्था में बढ़ने की रफ़्तार भी बहुत तेज़ होती है, विशेषकर दूध पीने के दौर में। साढ़े चार साल की उम्र तक तो बच्चे का क़द इतना हो जाता है कि जवान होने पर वह ज़्यादा से ज़्यादा जितना लम्बा होगा, ठीक उसकी आधी लम्बाई को पहुँच जाता है।

विशेषताएँ

इस अवस्था की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(1) बौद्धिक और शारीरिक हैसियत से बच्चा बहुत ही कमज़ोर और हर काम में बड़ों का मुहताज़ होता है। विशेषकर भूख और ख़तरे के मौक़े पर बड़ों की मदद का बहुत ज़्यादा मुहताज होता है। शुरू के दो-ढाई साल तो दूध पीने में ही गुज़रते हैं और माँ की गोद ही सबसे बड़ा सहारा होती है। बाद में भी बच्चा माँ और घरेलू माहौल ही से ज़्यादा परिचित होता है और हक़ीक़त यह है कि बच्चा के पालन-पोषण के लिए जिस मुहब्बत और प्यार, हमदर्दी और लगाव, त्याग और लगन की ज़रूरत है, वह माँ और परिवार के दूसरे लोगों के अलावा बच्चे को और कहीं प्राप्त हो भी नहीं सकती। जो बच्चे इस अवस्था में किसी वजह से घर में मुहब्बत, हमदर्दी और लाड़-प्यार से वंचित रह जाते हैं, वे कोमल मानवीय भावनाओं से भी बिलकुल वंचित ही रह जाते हैं। इसी लिए बच्चे की शिक्षा-दीक्षा के लिए घरेलू माहौल ही को बेहतर बनाना चाहिए और जब तक बहुत मज़बूरी न हो, यह ज़िम्मेदारी नर्सरी स्कूलों पर नहीं डालनी चाहिए। छोटे बच्चों के शिक्षकों और शिक्षिकाओं को इसकी पूरी कोशिश करनी चाहिए, ताकि वे हमदर्दी और मुहब्बत में माँ-बाप के समुचित बदल साबित हों और स्कूल/मदरसे का माहौल और कक्षा का वातावरण ऐसा बनाना चाहिए कि घर के मुक़ाबले में अजनबीपन न महसूस हो। कुछ लोग बच्चों को विधिवत रूप से लिखना-पढ़ना शुरू कराने में बड़ी जल्दी करते हैं। यह तन्दुरुस्ती और बौद्धिक विकास दोनों के लिए हानिकारक है। पाँच-छह साल की उम्र से पहले ऐसा हरगिज़ न किया जाए।

(2) बच्चे बिना किसी शर्त और साझीदारी के मुहब्बत के भूखे होते हैं। चाहते हैं कि उनसे मुहब्बत की जाए, न कि उनकी ख़ूबियों से। और अकेले उनसे ही मुहब्बत की जाए। इसी लिए बहन-भाइयों या घर के दूसरे बच्चों से आपस में ईर्ष्या की भावना उभरने की आशंका

होती है। बच्चों के व्यक्तित्व से मुहब्बत की जाए, ताकि उनका विश्वास बना रहे और सभी बच्चों से एक समान मुहब्बत की जाए। किसी बच्चे को यह महसूस न होने पाए कि उसे नज़रअन्दाज़ किया जा रहा है। ख़ासकर नए बच्चे के आने पर, ताकि उनमें ईर्ष्या की भावना पैदा न हो पाए।

(3) बच्चा स्वाभाव से आज़ाद और हंगामापसन्द होता है। भावनाओं में बड़ी तेज़ी होती है, लेकिन तेज़ी के साथ ज़िद्दीपन भी होता है। फिर भी बहुत जल्द बहल भी जाता है। मामूली बात पर ज़ोर से चिल्लाने और ज़मीन पर लोटने लगना और बहलानेवाला हो तो रोते-रोते हँस देना और भीगे गालों पर मुस्कराहट खिल जाना हम सबका आए दिन का मुशाहिदा (अवलोकन) और तजरिबा है। कठोर नियंत्रण बच्चों के पलने-बढ़ने और विकास के लिए भी बहुत नुक़सानदेह है और नैतिक दृष्टि से पाखंड और मिथ्याचार के कीटाणु पैदा कर सकता है। इसलिए हंगामे और व्यवस्थाहीनता को मुमकिन हद तक सहन किया जाए। भावनाओं में तेज़ी हो तो मुहब्बत से बहलाने की कोशिश की जाए। डाँटना-फटकारना या मारना-पीटना सही नहीं है। हिकमत और युक्ति से काम लिया जाए, तो आसानी से बहल सकते हैं।

(4) बच्चा सहज प्रवृत्तियों और भावनाओं के अधीन होता है और उनकी माँगों की तुरन्त पूर्ति चाहता है। अगर पूर्ति में रुकावट हो, तो बहुत परेशान होता और ज़िद करता है। वर्तमान में मस्त रहता है, भविष्य की बिलकुल ही कोई चिन्ता नहीं होती। जैविक दृष्टिकोण से उसके लिए यही सही भी है। इसलिए इन विशेषताओं का ध्यान रखा जाए। नैसर्गिक प्रवृत्तियों और भावनाओं पर क़ाबू पाने के लिए धीरे-धीरे अभ्यास कराया जाए; अनुभवों के साथ विचारों और इरादे की शक्ति में क्रमशः वृद्धि होती जाएगी और जब तक यह नहीं हो

जाता, क़ाबू पाना सम्भव नहीं है। इसलिए इस सम्बन्ध में जल्दी न की जाए।

(5) बच्चा बहुत ज़्यादा चुलबुला और खेल का रसिया होता है। खाना, खेलना, सोना और रोना यही उसके अहम काम होते हैं। जब देखो, कुछ न कुछ बनाता-बिगाड़ता रहता है। खिलौनों से अलग खेलना पसन्द करता है। मिल-जुलकर सिर्फ़ ऐसे खेल खेलता है, जिनमें मुक़ाबले की नौबत न आए। प्रतिस्पर्धावाले खेलों से घबराता है कि हार का मुँह न देखना पड़े। खेल के तरीक़े बताकर और तरह-तरह के सुन्दर खिलौने देकर खेलने के मौक़े दिए जाएँ और जो कुछ सिखाना हो, तो जितना सम्भव हो, खेल-खेल में सिखाया जाए।

(6) अपने आप से ही मुहब्बत करता है। यह देखने में तो बहुत स्वार्थ से भरा मालूम होता है, लेकिन यह जैविक माँग है और बच्चों के पलने-बढ़ने और विकास के लिए बहुत ज़रूरी है। इसपर निन्दा न की जाए और न उससे बहुत अधिक त्याग और ऊँचे चरित्र की आशा रखी जाए। बड़ों को चाहिए कि वे अपने में से भी उसे और कुछ हिस्सा दें और वह बहुत-सी चीज़ों में से अगर थोड़ा-सा भी दूसरों को दे दे तो शाबाशी दें और दिल खोलकर उसकी सराहना करें। इसी तरह वह क्रमशः त्याग और क़ुरबानी सीखेगा।

(7) तरह-तरह के प्रश्न और बहुत ज़्यादा बातें करने का शौक़ीन होता है। इसपर बच्चों का झिड़कना नहीं चाहिए। प्रश्न करना स्वस्थ दिमाग़ की निशानी है। बातों-बातों में वे बहुत कुछ सीखते और अपनी जानकारियों में वृद्धि करते हैं। उनके प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर दिए जाएँ और बातचीत करने और कुछ पूछने पर उभारा जाए।

(8) तरह-तरह की हरकतों, आवाज़ और लय की अचेतन रूप से अनुकरण करता है और खेलों में उनकी नक़ल उतारता है। दूसरों

को जैसा करते देखता है, बेसोचे-समझे वैसा ही करने लगता है। बुरी-भली जो आवाज़ें कान में पड़ती हैं, वही उसकी ज़बानों पर चढ़ जाती हैं। इसलिए बड़ों को चाहिए कि बच्चों के सामने अच्छा नमूना पेश करें और माहौल को साफ़-सुथरा रखें। नक़ल या अनुकरण के खेलों के द्वारा खाने-पीने, मिलने-जुलने इत्यादि के तौर-तरीक़े सिखाएँ। भाषा की शुद्धता और उच्चारण स्थान के सुधार के सन्दर्भ में अनुकरण के इस रुझान से लाभ उठाया जाए। लेकिन यह सब काम मौखिक या व्यावहारिक हो। लिखने-पढ़ने या क़िरअत के नियम-क़ायदे (नियमानुसार सस्वर क़ुरआन-पाठ) सिखाने का बोझ हरगिज़ न डाला जाए। चिड़ियों और जानवरों की बोलियों की नक़ल उतारने का भी मौक़ दिया जाए। बच्चों को बड़ी ख़ुशी होती है। हाँ, किसी के ऐब की नक़ल उतारने से रोका जाए।

(9) अनजानेपन और अनुभवहीनता के कारण चूँकि बच्चा सम्भव और असम्भव में अन्तर कर नहीं सकता, इसलिए सोचने की शक्ति अपने चरम पर होती है। भूत-प्रेत, जिन्न-परी, देवी-देवता, जानवर-पक्षियों इत्यादि की अजीबो-ग़रीब कहानियों को वह बिलकुल सच समझता है और तुरन्त विश्वास कर लेता है। इसलिए ऐसे क़िस्से, जिनसे अन्धविश्वास का शिकार होने की आशंका हो, इस उम्र में बच्चों को हरगिज़ न सुनाए जाएँ। नबियों की कहानियों में से ख़ास तौर पर चमत्कारों को बताने और जानवरों की कहानियों के द्वारा नैतिक और मानसिक प्रशिक्षण करने और भाषा सिखाने में इस शक्ति से मदद ली जाए।

(10) बच्चा गहरा रंग, तेज़ आवाज़, ग़ैर-मामूली हरकत और मीठी चीज़ों का बहुत ज़्यादा शौक़ीन होता है और उनकी तरफ़ बेझिझक खिंचता है। अपनी हैसियत के मुताबिक़ रंगीन, चलने और बजनेवाले मिट्टी, लकड़ी और प्लास्टिक इत्यादि के खिलौने दिए जाएँ। इस्तेमाल की

चीज़ों में भी रंग की शोख़ी इत्यादि का ध्यान रखा जाए। चीज़ों का क़ीमती या बहुत उम्दा होना ज़रूरी नहीं। सिर्फ़ भड़कीला रंग अपेक्षित होता है। अगर इस मरहले में बच्चे की इन इच्छाओं का ध्यान न रखा जाए या पूरा करने में रुकावट डाली जाए तो ज़ेहनी गुत्थियाँ पड़ती हैं, जो बड़े होने पर आचरण और चरित्र के लिए ख़तरनाक साबित होते हैं। साथ ही रंगों इत्यादि के मामले में बचपन का शौक़ बाद में भी बना रहता है; क्योंकि इस अवस्था में उसकी तृप्ति का सामान नहीं हो पाता कि इच्छाओं में वृद्धि हो। इसी लिए शरीर में वृद्धि के बावजूद बुद्धि का विकास रुक जाता है और जब तक बचकाना इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो जाती, आगे नहीं बढ़ता।

(11) आसपास की सामान्य चीज़ों को ग़ौर से देखने, छूने, बरतने और उनके बारे में जानकारियाँ प्राप्त करने का शौक़ और उत्सुकता होती है। बच्चों को अनुभव, अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण के काफ़ी मौक़े मिलने चाहिएँ। आसपास के माहौल के फल-तरकारियाँ, पेड़-पौधे, जानवर-चिड़ियाँ, कीड़े-मकोड़े इत्यादि के देखने और उनके बारे में जानकारियाँ प्राप्त करने के लिए कभी-कभी साथ टहलाने ले जाना चाहिए और देखने लायक़ पहलुओं की तरफ़ ध्यान दिलाना चाहिए। हाँ, ज्ञानेन्द्रियों (हवासे-ख़मसा) के स्वस्थ होने के बारे में इत्मीनान कर लेना चाहिए, ताकि चीज़ों की समझ सही हो।

(12) रचनात्मक प्रवृत्ति सक्रिय होती है और वे कुछ न कुछ बनाते-बिगाड़ते रहते हैं। मगर बनाने-बिगाड़ने में बहुत कम अन्तर करते हैं। उनके नज़दीक चीज़ का रूप आदि बदल देना निर्माण है, चाहे बने या बिगड़े। मिट्टी, रद्दी काग़ज़, ख़ाली डब्बे, लकड़ी के टुकड़े, आसान और सस्ते शैक्षिक खिलौने इत्यादि देकर उन्हें बनाने, जोड़ने और क्रमबद्ध करने इत्यादि में महारत प्राप्त करने के मौक़े दिए जाएँ। इस तरह वे हाथ, आँख और दिमाग़ के बीच सम्पर्क स्थापित

करने और तीनों से एक ही समय काम लेने का अभ्यास करते हैं।

(13) 'अद्‌भुत और दुर्लभ चीज़ों' को जमा करके जेब में भरने का शौक़ होता है। मगर अद्‌भुत और दुर्लभ चीज़ों के मामले में शौक़ और अभिरुचि बहुत घटिया और निचले दरजे की होती है। चार-पाँच साल के बच्चे की जेब का कभी जायज़ा लीजिए। उसमें काग़ज़ के टुकड़े, ठीकरे, इमली या फलों के बीज, शीशे और चीनी के बर्तनों के टूटे हुए सुन्दर और गहरे रंग के टुकड़े मिलेंगे। चीज़ों को जमा करने की प्रवृत्ति और उसपर स्वामित्व की अभिरुचि स्वाभाविक है। इसे कुचलना नहीं चाहिए। बच्चे को थोड़ी-सी सुरक्षित जगह मिलनी चाहिए, जहाँ वह अपने पसन्द की चीज़ें सजा कर रख सके। इस तरह वह धीरे-धीरे सुरुचि का भी प्रमाण देगा और चीज़ों को क्रम से रखना और सजाना भी सीखेगा। जेब में तो इसलिए भरता है कि रखने की उचित और सुरक्षित जगह नहीं पाता।

(14) अनजान लोगों से मिलने में झिझकता है। बहुत मुश्किल से बेतकल्लुफ़ होता है और दोस्त बनाने में भी धीमी रफ़्तार का प्रमाण देता है। अगर उसके निजी मामलों पर बातचीत की जाए, उसके खिलौनों, चीज़ों इत्यादि की प्रशंसा की जाए, उसको खाने, खेलने की चीज़ें दी जाएँ या उसके खेल में शामिल हुआ जाए, तो धीरे-धीरे बेतल्लुफ़ होता है। फिर ख़ूब बातें करता है और अपना दुख-दर्द, उलझनें और परेशानियाँ बयान करता है।

(15) जो कुछ सुनता या सीखता है उसे बार-बार दोहराने की कोशिश करता है। इसलिए कहानियाँ सुनाने, कोई घटना बताने या कुछ सिखाने के बाद दोहराने के पर्याप्त मौक़े दिए जाएँ। इस तरह अभ्यास का मौक़ा मिलता है। ऐसी कहानियों में बड़ा मज़ा लेता है, जिनमें वाक्यों का दोहराव होता है या एक मधुर और सुन्दर वाक्य थोड़े-थोड़े अन्तराल के बाद बार-बार दोहराया जाता है।

(16) शब्द-भंडार की कमी और अभिव्यक्ति पर महारत न होने की वजह से अपनी इच्छाओं और ज़रूरतों या तकलीफ़ों को बता नहीं सकता। इसलिए उसके इशारों को समझने और उसकी ज़रूरतों, बीमारी या तकलीफ़ों का खुद अन्दाज़ा लगाने की कोशिश कीजिए और उसके शरीर की ख़राबियों, बीमारियों और मानसिक उलझनों का जायज़ा लेते और उनके निवारण की कोशिश करते रहिए।

(17) अपने कुछ कामों में वह हस्तक्षेप पसन्द नहीं करता, बल्कि खुद अंजाम देना चाहता है। उदाहरण के लिए, कपड़े या जूते पहनने की कोशिश, खुद मुँह-हाथ धोने, खाने या पाख़ाना-पेशाब के बाद खुद गन्दगी धोने का शौक़ इत्यादि, यह बहुत फ़ायदेमन्द रुझान है। ऐसा करने का हर सम्भव मौक़ा दीजिए और हस्तक्षेप करने के बजाय ज़रूरत के मुताबिक़ सही तरीक़े से अंजाम देने का ढंग बता दीजिए, ताकि वह धीरे-धीरे अपने पैरों पर खड़ा हो सके और हर काम में बड़ों का मुहताज न रहे। अंगों पर क़ाबू और पकड़ मज़बूत न होने के कारण कोई चीज़ पकड़ता या उठाता है तो हाथ से छूट जाती या गिरकर टूट जाती है। इसमें उसकी मर्ज़ी या इरादे को दख़ल नहीं होता। इसलिए निन्दा करना और डाँटना-फटकारना नहीं चाहिए वरना आत्मविश्वास ख़त्म हो जाएगा। इस तरह की घटना पर बच्चा खुद लज्जित होता है और अगर बहुत छोटा है तो खुद उस चीज़ को दोषी ठहराता है, जो मुँह तक पहुँचने या हाथ में रहने के बजाय गिर जाती है। ऐसे मौक़े पर ढाढ़स बंधाना चाहिए, ताकि आत्मविश्वास पैदा हो।

(18) नुमायाँ और लोकप्रिय होने, सबका प्यारा बनने और सबका ध्यान अपनी तरफ़ खींचने का बहुत शौक़ीन होता है। अगर उचित तरीक़े से लोकप्रिय होने का मौक़ा न मिले, तो कुछ बुरी हरकतें करके भी लोगों का ध्यान अपनी तरफ़ आकर्षित करने की कोशिश करेगा;

उदाहरण के लिए, चीख़-चिल्ला और शोर मचाकर या बिस्तर पर खड़े-खड़े या बेजगह पेशाब या पाख़ाना करके, छोटे भाई-बहनों को सताकर। इसलिए उसे उचित तरीक़े से मशहूर होने के मौक़े दीजिए। दूसरों के सामने उसकी अच्छाइयों की प्रशंसा कीजिए और उसे कुछ याद हो तो सुनवाइए।

(19) अन्धेरे से डरता और डरावनी आवाज़ से चौंक पड़ता है। गिर पड़ने का भी डर होता है। बच्चों को डराना नहीं चाहिए और न ख़ुद उनके सामने डर-भय का प्रदर्शन करना चाहिए; क्योंकि जिन चीज़ों से आप डरेंगे, बच्चे भी आपकी देखा-देखी उनसे डरने लगेंगे।

बचपन (छह से नौ साल तक)

बच्चे की यह अवस्था भी शारीरिक और मानसिक विकास की होती है। यद्यपि रफ़्तार उतनी तेज़ नहीं होती, जितनी दूध पीने के दौर में होती है। अब बच्चे की दुनिया घर की चारदीवारी तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह घर से बाहर निकलता और नए-नए दोस्त बनाने लगता है।

मानसिक और शारीरिक रूप से किसी हद तक अपनी मदद करने पर सक्षम हो जाता है और हर मामले में बड़ों के सहारे का मुहताज नहीं रहता। शौच कर्म के बाद पानी ले सकता है; इज़ारबन्द बाँध सकता है; बातें समझ सकता और अपनी ज़रूरतें बता सकता है; साथी-संगी मिलें और दिलचस्प क्रिया-कलाप हों, तो घंटों माँ-बाप से दूर रह सकता है। इसलिए स्कूल/मदरसे में दाख़िल करके विधिवत रूप से पढ़ाई-लिखाई शुरू करा देनी चाहिए।

इस अवस्था की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नलिखित हैं, जिनका शिक्षा-दीक्षा में ध्यान रखना ज़रूरी है—

(1) चुलबुलेपन में वृद्धि, भाग-दौड़, उछल-कूद में दिन-प्रतिदिन दिलचस्पी,

मुहल्ले, पड़ोस और स्कूल/मदरसे में साथी बनाने और उनके साथ मिलकर खेलने का शौक़ बढ़ने लगता है। घर और घर के लोगों से दिलचस्पी कुछ कम होने लगती है। साथियों की नज़र में मक़ाम हासिल करने की ललक पैदा हो जाती है। ये सब रुझान फ़ायदेमन्द हैं। इनके विकास के मौक़े दिए जाएँ और इन कामों पर रोक-टोक करने और बहुत ज़्यादा पाबन्दियाँ लगाने से बचा जाए। साथियों के साथ खेलने-कूदने और शोर-गुल करने में बच्चों को जो सच्ची ख़ुशी हासिल होती है, उससे वंचित करने देने से बच्चों के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलू प्रभावित होते हैं। हाँ, साथियों पर नज़र रखनी चाहिए। उन्हें कभी-कभी घर पर बुलाकर उनके आवभगत का भी मौक़ा देना चाहिए। इससे बच्चे का मान-मर्यादा बढ़ता और साथियों पर भी अच्छा असर पड़ता है।

(2) जानने की इच्छा और अपने आसपास के माहौल के बारे में जानकारियाँ प्राप्त करने के शौक़ में काफ़ी वृद्धि हो जाती है। चूँकि बच्चे की दुनिया अब बड़ी होने लगती है, इसलिए उसके अनुभव और अवलोकन का मैदान भी विस्तृत हो जाता है। वह जानकारियाँ प्राप्त करने के लिए तरह-तरह के प्रश्न करता और बहुत ज़्यादा बोलता है। बच्चों को कभी-कभी पिकनिक या शैक्षिक पर्यटन पर ले जाकर आसपास के माहौल की चीज़ों का ग़ौर से अवलोकन कराना और प्रयोगों और अनुभवों का मौक़ा देना चाहिए। उनके प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर देकर उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिए और ज़्यादा से ज़्यादा प्रश्न पूछने पर उभारना चाहिए। कभी-कभी अपनी तरफ़ से भी कुछ समस्याएँ देकर उन्हें हल करने को कहना चाहिए।

(3) खेल में क्रमशः व्यवस्था पैदा होने लगती है और नियमों की पाबन्दी की ज़रूरत का एहसास भी बढ़ने लगता है। इसी लिए मिल-जुलकर खेलने की अहमियत की दृष्टि से अपनी इच्छाओं के ख़िलाफ़

तरह-तरह की पाबन्दियाँ सहने को तैयार हो जाता है। उदाहरण के लिए, बारी का ध्यान, दाँव देना, जो पार्ट मिल जाए वही अदा करना इत्यादि। इस रुझान से सामाजिक जीवन में नियमों की पाबन्दी और सामाजिक शिष्टाचार का ध्यान रखवाने और अच्छी आदतें डलवाने में मदद लेनी चाहिए।

(4) घर और स्कूल/मदरसे के प्रति वफ़ादारी की भावना उभरती है दोनों को अपना समझता और उनका अंग होने की हैसियत से अपनी ज़िम्मेदारी का एहसास रखता है। अपने स्कूल/मदरसे या घर की बुराई और शिकायत सुन नहीं सकता। अपने माँ-बाप और वर्ग-शिक्षक का दिल से आदर करता है और उनका अपमान सहन नहीं करता। दोनों जगह बच्चों को अपनापन महसूस करने के भरपूर मौक़े दिए जाएँ और कुछ हल्के-फुल्की ज़िम्मेदारियाँ भी सौंपी जाएँ इस तरह ज़िम्मेदारी का एहसास भी उभरेगा और सहयोग और लगन का प्रशिक्षण भी होगा। उत्सवों, कार्यक्रमों और मेहमानों के आने आदि पर बच्चे के सुपुर्द कोई न कोई काम ज़रूर करना चाहिए।

(5) स्मरण-शक्ति में नियमबद्धता पैदा होने लगती है। बहुत कुछ बेसमझे-बूझे भी रट सकता है। लेकिन अब सरल अर्थ समझा दिया जाए, तो याद करने में बड़ी आसानी हो जाती है। इसलिए जो कुछ याद कराना हो, उसका उद्देश्य और अर्थ भी समझा दिया जाए क़ुरआन मजीद की सूरतें, ज़िक्र और दुआएँ, कविताएँ, नज़्में, पहाड़े इत्यादि ज़्यादा से ज़्यादा याद कराए जाएँ। इस समय का याद किया हुआ ज़िन्दगी भर नहीं भूलता।

(6) अपने शरीर, कपड़े और इस्तेमाल की दूसरी चीज़ों की तरफ़ से लापरवाह होता है। सामान रखने के लिए बक्से, आलमारी आदि कोई जगह निर्धारित कर दी जाए, जिसपर बच्चे का पूरा अधिकार हो और धीरे-धीरे उसे अपना सामान क्रम, सुरक्षित और विधिवत

रूप से रखने का आदी बनाया जाए। इस्तेमाल के बाद चीज़ें बच्चे आम तौर पर इधर-उधर डाल देते हैं और फिर जब दोबारा इस्तेमाल की ज़रूरत होती है, तो परेशान होते हैं। बड़ों को चाहिए कि इधर-उधर पड़ी हुई चीज़ें उनकी निर्धारित जगह पर रख दें, ताकि ठीक समय पर उन्हें मिल सके। ख़ास तौर पर लिखने-पढ़ने की चीज़ें वरना बहुत हर्ज होता है। इस उम्र के बच्चों से यह आशा रखना कि वे अपनी सारी चीज़ों की ख़ुद देख-भाल और सुरक्षा कर सकेंगे, समय से पहले की बात है। ज़रूरत पर वे रोएँगे या अब्बा-अम्मा से पूछेंगे।

(7) अनुकरण में अब किसी हद तक समझदारी को दख़ल होने लगता है। फिर भी ज़्यादातर अनुकरण बेसमझे-बूझे होता है। उठने-बैठने, चलने-फिरने, मिलने-जुलने इत्यादि के तरीक़े और विभिन्न अवसरों के नियम-क़ायदे अनुकरण के खेलों के द्वारा सिखाए जाएँ। सुलेख, उच्चारण, मॉडल इत्यादि की नक़ल उतरवाई जाए। घर और स्कूल/मदरसे का माहौल पाक-साफ़ बनाने की पूरी कोशिश की जाए और अच्छा नमूना पेश किया जाए, ताकि अचेतन रूप से अनुकरण के लिए बच्चों को अच्छे नमूने मिल सकें।

(8) कल्पना व्यावहारिक रूप लेने लगती है। इसी लिए धीरे-धीरे सम्भव और असम्भव में कुछ अन्तर महसूस होने लगता है। अजीबो-ग़रीब क़िस्से-कहानियों में मज़ा और आनन्द तो लेता है, लेकिन अब वह महसूस करने लगता है कि ये ग़लत हैं। कल्पना को व्यावहारिक रूप देने के लिए गुंधी हुई मिट्टी, स्लेट या काली तख़्ती, रंगीन चॉक, रंग-ब्रुश, मामूली काग़ज़ इत्यादि उपलब्ध करना चाहिए।

(9) रचनात्मक कार्यों के द्वारा महारत हासिल करने की इच्छा उभरती है और वह अक्सर कुछ न कुछ बनाता-बिगाड़ता रहता है। निर्माण-सम्बन्धी क्रिया-कलाप, जैसे आर्ट-क्राफ़्ट, मिट्टी का काम, बाग़बानी

इत्यादि का मौक़ा देकर महारत हासिल कराई जाए। सामान के उचित इस्तेमाल के बारे में मार्गदर्शन और मदद की जाए, ताकि रचनात्मक योग्याताएँ उभरें और महारत पैदा हो। विशिष्ट रुझानों का जायज़ा भी लेते रहना चाहिए। हालाँकि इस उम्र में जिन चीज़ों की तरफ़ रुझान रहता है, ज़रूरी नहीं कि वह बाद के मरहलों में भी बना रहे।

(10) प्रतिस्पर्धा और साथियों में लोकप्रिय होने की भावना उभरती है। अब धीरे-धीरे प्रतियोगी खेलों में दिलचस्पी लेने लगता है। मगर असफलता से अब भी घबराता है। इसलिए आसानी से हार नहीं मानता और कभी-कभी बेईमानी कर बैठता है। खेल और काम में प्रतिस्पर्धा के मौक़े दिए जाएँ, लेकिन असफलता का गंभीर एहसास और प्रतिद्वन्द्वी से नफ़रत न पैदा होने पाए और खेल-कूद में ईमानदारी को हार-जीत पर प्राथमिकता देने की भावना पैदा की जाए। हार-जीत को बच्चे जीवन के हिस्से के रूप में गिनने लगेंगे। न हार जाने पर निराश हों और न जीत जाने पर प्रतिद्वन्द्वी को चिढ़ाएँ और अपमानित करें।

(11) संग्रह की प्रवृत्ति भी ज़ोरों पर होती है। स्कूल/मदरसे के संग्रहालय के लिए बच्चों से फूल-पत्तियाँ, चिड़ियों के पंख, घोंघे, सीप, विभिन्न देशों के टिकट जमा कराए जाएँ और उन्हें एक क्रम और व्यवस्थित रूप से रखवाया जाए।

(12) ध्यान जल्द-जल्द भटकता रहता है। इसी लिए वह किसी एक चीज़ पर ज़्यादा देर तक जम नहीं सकता। इसलिए किसी एक चीज़ या समस्या पर ज़्यादा देर तक एकाग्र रखने की कोशिश बेकार होगी। इसका बेहतर रूप यह होगा कि उस चीज़ के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान दिलाया जाए। उदाहरण के लिए, किसी फूल की तरफ़ ध्यान केन्द्रित करवाना है, तो उसके रूप, रंग, ख़ुशबू, हिस्से इत्यादि पर

अलग-अलग बातचीत हो, तो समग्र रूप से फूल ही पर देर तक एकाग्रचित्त रह सकते हैं वरना एक सरसरी नज़र डालने के बाद ध्यान हट जाएगा।

(13) किसी कोताही या ग़लती पर आलोचना करना, किसी ऐब पर चिढ़ाना, अकारण छेड़ना, किसी हरकत की नक़ल उतारना और मज़े लेना—ये सब बातें भी इसी अवस्था में शुरू हो जाती हैं। इसमें बड़े-छोटे या साथी-संगी और सहपाठी की क़ैद नहीं रहती। ग़लत बात या ग़लत बरताव पर अगर आलोचना करें, तो ख़ुशी-ख़ुशी सुन लेता है। हाँ, चिढ़ाने या छेड़ने से जो तकलीफ़ होती है, इसका एहसास दिलाकर इससे दूर रखने की कोशिश करनी चाहिए। मगर इसपर सख़्ती के बजाय समझाना-बुझाना ज़्यादा फ़ायदेमन्द होता है। चिढ़ने पर और चिढ़ाता है।

(14) सीधे-सीधे नैतिक शिक्षा, उपदेश, नसीहत और उपदेशपरक बातों में न तो दिलचस्पी लेता और न प्रभाव ग्रहण करता है। समाज के शिष्टाचारों का ध्यान, नैतिक नियमों और नमाज़ की पाबन्दी कराने का सबसे प्रभावकारी तरीक़ा बड़ों का अच्छा नमूना है, जिसका अचेतन रूप से बच्चा अनुकरण करता है और ऐतिहासिक घटनाओं, नैतिक कहानियों, जानवरों की कहानियों की मदद से पसन्दीदा विचार पैदा कराए जाएँ। बच्चे कहानी के हीरो की जगह अपने को रखकर कहानी सुनते हैं। इसलिए वैसा ही बनना चाहते हैं। नैतिक शिक्षा का यह सबसे प्रभावकारी तरीक़ा है। लेकिन कहानी के अन्त में ख़्वाह-मख़्वाह नतीजा निकालकर बच्चों पर थोपना सारा मज़ा किरकिरा कर देता है और कभी-कभी विरोधी भावना पैदा करता है। इसलिए कहानी सुना देने पर बस करें। नतीजा निकाल कर नसीहत न करें। ग़ैर महसूस तौर पर वे ख़ुद प्रभावित होंगे।

(15) स्कूल/मदरसे पहुँचने और नए-नए साथियों से मिलने के बाद बच्चे

को एक कटु अनुभव अपनी चीज़ों के चुराए जाने का होता है। घर पर अपनी चीज़ें वह इधर-उधर डाल देता था, फिर भी सुरक्षित रहती थीं। वहाँ ऐसा करे, तो चीज़ें बरबाद हो जाती हैं। इसी लिए अपने सामान के बारे में दूसरों पर से उसका विश्वास उठ जाता है और हर एक को वह शक और सन्देह की नज़र से देखने लगता है। कक्षा में माहौल ऐसा बनाना चाहिए कि बच्चे बिना पूछे एक-दूसरे की चीज़ें न लें और बच्चों के विश्वास को ठेस न लगे वरना यही चीज़ आगे चलकर सारी दुनिया से बदगुमान बना देती है।

(16) अन्धेरे से डर तो किसी हद तक कम होने लगता है, लेकिन अब भी बहुत-सी काल्पनिक बातों से डरते हैं। सोते समय डरावने क़िस्से-कहानियाँ हरगिज़ न सुनाई जाएँ। बच्चों का डर छुड़ाने की पूरी कोशिश की जाए वरना अगर डर बना रहा तो बुज़दिली पैदा होगी।

लड़कपन (नौ-दस साल से बारह-तेरह साल तक)

बच्चे का यह दौर मज़बूती, स्थिरता और कारकर्दगी (कर्मशीलता) का दौर कहलाता है; क्योंकि वृद्धि की रफ़्तार पिछले मरहले की तुलना में बहुत धीमी हो जाती है और अब मानसिक और शारीरिक हैसियत से जितना कुछ बढ़ चुका होता है, उसमें परिपक्वता पैदा होती है।

वृद्धि के समय में बच्चा जल्द-जल्द थकता और अक्सर बीमार हो जाता था। लेकिन अब वह काफ़ी मेहनत कर सकता है। इसलिए मानसिक और शारीरिक दोनों तरह के काम ख़ूब अच्छी तरह लिये जा सकते हैं। मेहनत से पढ़ने-लिखने के लिए असल में यह अवस्था बहुत ही उपयुक्त है।

इस अवस्था की मुख्य विशेषताएँ ये हैं—

(1) शोर-गुल, तेज़ी और तर्रारी, चुलबुलापन और फुर्तीलापन और

चालाकी में स्पष्ट वृद्धि हो जाती है। इसलिए तरह-तरह के लाभदायक क्रिया-कलाप और दिलचस्प कामों में लगाए रखना चाहिए वरना ये सारी शक्तियाँ शरारत की तरफ़ लग जाती हैं। उन्हें बहरहाल हर समय कुछ न कुछ काम मिलना चाहिए। काम नहीं होगा, तो निश्चित रूप से शैतानी करेंगे।

(2) स्मरण-शक्ति अपने चरम पर होती है। दस-ग्यारह साल की उम्र में लड़कियों का और बारह-तेरह साल की उम्र में लड़कों का दिमाग़ अपने पूरे आकार और जन्म के समय से चार गुना हो जाता है। याद्दाश्त बहुत बढ़ जाती है। मगर समझकर याद करने का रुझान प्रभावी होता है, इसलिए जो कुछ याद कराना हो, उसकी उपयोगिता और उसका भावार्थ ज़रूर मन में बिठा दिए जाएँ– कुरआन मजीद, ज़िक्र, दुआएँ, चुटकुले, सूक्तियाँ, कहावतें, कविताएँ, शेअर इत्यादि ज़्यादा से ज़्यादा याद कराए जाएँ।

(3) उच्चारण, वर्णन-शैली आदि में दूसरों की नक़ल उतारने का शौक़ होता है। इसलिए शब्दों का उच्चारण, उतार-चढ़ाव के साथ गद्य-पद्य पढ़ने या भाषण देने का अभ्यास करवाया जाए। दूसरी भाषा, उदाहरण के लिए अरबी, हिन्दी, अंग्रेज़ी, कुरआन पढ़ने का ढंग इत्यादि इस मरहले के शुरू में ही ज़रूर शुरू करा दें। हाँ, व्याकरण और किताबों का बोझ ज़्यादा न डालें; बल्कि ज़्यादातर काम मौखिक या व्यावहारिक हो।

(4) जिज्ञासा की अधिकता और आसपास की चीज़ें और सामाजिक और प्राकृतिक परिवेश का गहरा अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण करके जानकारियों को विस्तार देने की नैसर्गिक प्रेरणा होती है। इसके उन्हें मौक़े मिलने चाहिएँ। सामान्य विज्ञान, भूगोल और समाज-विज्ञान के सिलसिले में शैक्षिक पर्यटन पर ले जाना और विभिन्न चीज़ों का अनुभव, अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण कराना चाहिए। अवलोकन

और प्रत्यक्षीकरण के नतीजे को लेख के रूप में लिखवाया जाए या उन चीज़ों की आकृतियाँ और मॉडल बनवाए जाएँ। शिक्षा देते समय अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए आसपास की चीज़ों और सामाजिक और प्राकृतिक पर्यावरण का ज़्यादा से ज़्यादा उदाहरण दिए जाएँ। कभी-कभी जानने की इच्छा ग़लत रूप धारण करने लगती है और वह झूठी और बुरी बातों या लोगों की निजी ज़िन्दगियों के टोह में पड़ जाते हैं। ऐसी बातों से बचाया जाए।

(5) विभिन्न मानसिक शक्तियों, जैसे विचार, तर्क और कल्पना में किसी हद तक नियमबद्धता शुरू हो जाती है। अनुभवों के कारण सम्भव और असम्भव में बच्चा अन्तर करने लगता है। भूत-प्रेत, जिन्न और परी और देवी-देवताओं के क़िस्से-कहानियों को भ्रामक और असत्य मनवाकर अन्धविश्वास से बचाया और डर छुड़ाया जा सकता है। अक़ीदों और आस्थाओं के सुधार में मदद ली जा सकती है और इस तरह के क़िस्से-कहानियों के सुनने या उनके पढ़ने में दिलचस्पी लेने से बचाकर लाभदायक अध्ययन में लगाना आसान होता है। इससे लाभ उठाना चाहिए।

(6) असल चीज़ों या उनके मॉडलों के बजाय उनकी तस्वीरों और ख़ाकों की मदद से बात समझ लेने और सही विचार बना लेने की योग्यता पैदा हो जाती है। भूगोल, इतिहास और सामान्य ज्ञान इत्यादि में चित्रों, मानचित्रों और ख़ाकों इत्यादि से फ़ायदा उठाना चाहिए। बच्चों के अख़बारों और पत्र-पत्रिकाओं से अब वह ख़ूब अच्छी तरह फ़ायदा उठा सकता है। इसका मौक़ा मिलना चाहिए, ताकि जानकारी में वृद्धि हो।

(7) ख़ुद भी अभियानों को जीतने, नई-नई चीज़ों का आविष्कार करने या खोज निकालने का इच्छुक होता है और अभियानों से सम्बन्धित क़िस्से-कहानियों और रीति-रिवाजों में भी दिलचस्पी लेने लगता है।

हाँ, ऐसी कहानियाँ ज़्यादा पसन्द आती हैं, जिनमें हीरो को ग़ैर-मामूली मुसीबतों और कठिनाइयों से दो-चार होना पड़े, लेकिन आख़िर में वह सफलता प्राप्त कर ले। पर्यटकों के सफ़रनामों यात्रा-वृत्तान्तों, खोजकर्ताओं और आविष्कारकों की कोशिशों से परिचित कराने का बेहतरीन दौर है। इनमें वह मज़ा भी उठा लेगा और इस तरह के कारनामे अंजाम देने का उसके दिल में शौक़ भी पैदा होगा, लेकिन जिन कहानियों में हीरो को असफलता का सामना करना पड़े, वे बच्चों को शोक और निराशा से ग्रस्त करती हैं। इसलिए यथासम्भव इनसे बचें और अगर सुनाना या पढ़ाना ही पड़े तो असफलता में भी सफलता का पहलू उभारा जाए।

(8) अनुकरण से ज़्यादा खोज और आविष्कार का शौक़ीन होता है। इसलिए खेल और काम में ज़िम्मेदारियाँ या पार्ट ख़ुद सौंपने या अंजाम देने का तरीक़ा ख़ुद बता देने के बजाय बच्चों को चुनाव की हर मुमकिन आज़ादी दी जाए और खोज और आविष्कार के मौक़े दिए जाएँ। कभी-कभी बच्चों को ऐसी बातें सूझ जाती हैं, जिनका हमको ख़याल और अनुमान भी नहीं होता। दूसरे वे धीरे-धीरे अपने पैरों पर खड़े होने के योग्य बनते हैं और अपनी पसन्द शामिल होने के कारण मेहनत और लगन से काम करते हैं।

(9) ख़ुद अपने-आपके अन्दर और अपने घर के बजाय बाहरी दुनिया से दिलचस्पी होती है। अगर उसकी दिलचस्पियों का ध्यान न रखा जाए, तो स्कूल से भागने और घर से ग़ायब रहने की आदत पड़ती है। स्कूल/मदरसे में इसकी कोशिश होनी चाहिए कि कभी-कभी पिकनिक और पर्यटन का मौक़ा मिले और भूगोल, विज्ञान और समाज-विज्ञान की शिक्षा यथासम्भव उपयुक्त और सम्बद्ध स्थान पर ले जाकर दी जाए। घर के लोगों को भी चाहिए कि साथी-संगियों से मिलने, टहलने या बाज़ार जाते समय बच्चे को साथ ले लिया करें,

ताकि समुचित ढंग से उसकी इस इच्छा की पूर्ति हो जाए और वह भगोड़ेपन या आवारागर्दी का शिकार न हो।

(10) गहरे सोच-विचार और समस्याओं से निबटने का शौक़ उभरता है। इसलिए बच्चों के सामने समस्याएँ रखकर उनके हल पर उभारना चाहिए और सब कुछ खुद बता देने के बजाय सोच-विचार और अनुभव, प्रयोग, अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण के द्वारा जानकारियाँ प्राप्त करने का बच्चों को मौक़ा देना चाहिए।

(11) घर और स्कूल का माहौल अगर अच्छा हो, लोग बुराइयों से बचते और भलाइयों को अपनाते हों, एक-दूसरे से मुहब्बत और हमदर्दी से पेश आते हों, तो बच्चे में भी बुराई-भलाई की समझ और मुहब्बत और हमदर्दी की भावना पैदा हो जाती है। वह भी भलाइयों को अपनाने और बुराइयों से बचने लगता है। अपने एहसान करनेवालों और साथियों से मुहब्बत और कमज़ोरों-बेबसों के साथ हमदर्दी से पेश आने लगता है। जिन बातों को वे महत्त्व देते हैं, उनको वह भी महत्त्व देने लगता है। उदाहरण के लिए, नमाज़, रोज़ा, दान-पुण्य इत्यादि। लेकिन माहौल अगर इन विशेषताओं से ख़ाली हो, तो बच्चे से इस मरहले में इन विशेषताओं की आशा बेकार है। इसलिए घर और स्कूल और बड़ों का नमूना बहरहाल अच्छा और अनुकूल होना चाहिए।

(12) विचारों, कल्पनाओं और दिलचस्पियों में स्थिरता के बजाय बदलाव की प्रवृत्ति होती है। आज विचार और कल्पनाएँ कुछ हैं, कल कुछ। आज किसी चीज़, विषय या काम में दिलचस्पी है, तो कल किसी दूसरे में। इसलिए विभिन्न क्रिया-कलापों और गतिविधियों के मौक़े उपलब्ध करके समुचित और सही के चयन में मार्गदर्शन और सहयोग करना चाहिए। अच्छी आदतें और तौर-तरीक़े डलवाने के बाद सन्तुष्ट न हो जाना चाहिए, बल्कि इसका पूरा-पूरा ध्यान रखना

चाहिए कि उल्लंघन के मौक़े न मिलें वरना किए-धरे पर पानी फिर सकता है।

(13) सात-आठ साल तक बच्चे आम तौर पर उन्हीं चीज़ों में दिलचस्पी लेते हैं, जिनकी तरफ़ उनका रुझान स्वाभाविक तौर पर होता है, लेकिन अब वह उन चीज़ों में भी दिलचस्पी लेने लगते हैं, जिनसे साथी-संगियों में लोकप्रिय हो सकें; बड़ों की ख़ुशी और शाबाशी प्राप्त कर सकें और उनकी अप्रसन्नता से बच सकें। फ़र्ज़ों की पाबन्दी, शिष्टाचारों का सम्मान और अच्छी आदतें और तौर-तरीक़े डलवाने में इस रुझान से फ़ायदा उठाया जाए। बुलन्द आवाज़ से कविताएँ पढ़ने, अभियानों से जुड़े क़िस्से-कहानियाँ पढ़ने, कक्षा में सफल होने के लिए मेहनत करने, अपनी लिखावट ठीक करने के लिए लगातार अभ्यास करने, स्टेज पर सफलता के साथ अपना पार्ट अदा करने के लिए भाषण इत्यादि मेहनत से तैयार करने के लिए वह तैयार रहता है। हिकमत और युक्ति के साथ उससे मेहनत लेनी चाहिए। कुछ लोग बच्चों पर बार-बार ग़ुस्सा होते और डरा-धमका कर काम लेना चाहते हैं। इसका बहुत ज़्यादा इस्तेमाल बच्चों को बेग़ैरत (असंवेदनशील) और आपकी ख़ुशी-नाख़ुशी की तरफ़ से लापरवाह बना देगा। इसलिए डराने-धमकाने का हथियार कम से कम इस्तेमाल किया जाए।

(14) गिरोह-सम्बन्धी प्रवृत्ति बड़ी तीव्रता के साथ सक्रिय होती है। टोलियाँ बनाकर गली-कूचों, खेतों, मैदानों में फिरने का शौक़ पैदा होता है। बच्चा टोली के नियम-क़ायदों का बेहद आदर और उनकी सख़्ती से पाबन्दी करता है। अपनी टोली में लोकप्रिय होने की पूरी कोशिश करता है। संगति अच्छी हो, तो बच्चे इस तरह मिल-जुल कर रहने, नियम-क़ायदों की पाबन्दी करने, टोली के लीडर की आज्ञा का पालन करने, एक-दूसरे की भावनाओं का आदर करने

और सहयोग और हमदर्दी का बरताव करने का तरीक़ा सीख लेते हैं वरना टोलियाँ बनाकर हंगामा करने और दूसरी टोलियों से टक्कर लेने की कोशिश करने लगते हैं और अपनी टोली या उसके लीडर को ख़ुश रखने के लिए अनुचित हरकतें करने लगते हैं और घर या स्कूल/मदरसे की तरफ़ से लगाई गई पाबन्दियों का उल्लंघन करने के दोषी ठहरते हैं। बच्चों की टोली बनाने की प्रवृत्ति और अपनी टोली में मशहूर होने की इच्छा की पूर्ति के लिए खेलने-कूदने और कक्षा और स्कूल/मदरसे की विभिन्न ज़िम्मेदारियों को अंजाम देने के लिए छात्रों को विभिन्न टोलियों में बांट दिया जाए। हर टोली का अलग-अलग लीडर हो। उदाहरण के लिए मॉनीटर, खेल का कप्तान, इज्तिमाओं (सभाओं), पिकनिक, वाचनालय इत्यादि के इंचार्ज या विभिन्न प्रबन्धकीय और प्रतियोगी टोलियों के सदस्यों की हैसियत से ज़िम्मेदारियाँ सम्भालने के मौक़े दिए जाएँ। प्रतिस्पर्धा की भावना को ग़लत रुख़ पर पड़ने और टोली-सम्बन्धी प्रवृत्ति को पक्षपात और पार्टीबन्दी का रूप लेने से बचाया जाए। टोलियों के सदस्य या लीडर की हैसियत से काम और खेल के काफ़ी मौक़े मिलें, तो प्रशिक्षण भी होगा और इस प्रवृत्ति की तृप्ति भी और वे बुरी संगति से सुरक्षित भी रहेंगे। किसी को टोली का नेता मानने या किसी को दोस्त या साथी इत्यादि बनाने में इस मरहले के बच्चों को ऊँच-नीच, धनी-निर्धन इत्यादि का बिलकुल ख़याल नहीं होता, सिर्फ़ योग्यता नज़र के सामने रहती है। समानता की इस भावना को परवान चढ़ाना चाहिए।

(15) सादगी, लापरवाही और निडरता प्रबल होती है। इन बातों पर ज़्यादा रोक-टोक के बजाय समझा-बुझाकर सफ़ाई-सुथराई, सामान की सुरक्षा इत्यादि की क्रमशः आदत डलवाई जाए। ये विशेषताएँ भी बहरहाल अगर सीमा में हों तो ज़रूरी हैं।

(16) आवारागर्दी, पढ़ाई से भागने, डींग मारने, घर से ग़ायब रहने, बीड़ी-सिगरेट पीने, चीज़ें चुराने, झूठ बोलने, गाली बकने, धोखा देने और उत्सुकता में आकर कुछ नापसन्दीदा हरकतें करने की बहुत आशंकाएँ होती हैं। इन सब बुराइयों के पैदा होने में बहुत कुछ दख़ल बुरी संगति या बच्चे के साथ दुर्व्यवहार को होता है। हर सम्भव तरीक़े से बुरी संगति से बचाने और उनके साथ हमदर्दी और मुहब्बत का बरताव करने की कोशिश होनी चाहिए। हाँ, बुरी संगति से बचाने का मतलब यह नहीं है कि साथी-संगियों ही से वंचित कर दिया जाए या जायज़ हदों में उनकी दिलचस्पियों की व्यवस्था न की जाए। यह रवैया भी ख़तरनाक साबित होता है और उनके व्यक्तित्व का सर्वांगीण प्रशिक्षण और विकास नहीं हो पाता। इस दौर की मानसिक उलझन व्यक्तित्व पर दूरगामी प्रभाव डालती हैं। इसलिए बड़ी सावधानी से प्रशिक्षण होना चाहिए। उचित इच्छाओं को कुचल देना मानसिक उलझनों का कारण होता है।

किशोरावस्था (13-14 साल से 17-18 साल की उम्र तक)

यह ज़िन्दगी की वसन्त ऋतु है। इस अवस्था में मासूम कली चटक कर स्फुटित फूल बनती है। क़द तेज़ी से बढ़ता है और शीघ्रता के साथ मानसिक और शारीरिक बदलाव होते हैं। देखते-देखते एक दुबला-पतला लड़का हृष्ट-पुष्ट पुरुष और एक छरहरे बदन की लड़की भद्र महिला नज़र आने लगती है। लापरवाही और निश्चिन्तता विदा हो जाती है और इनकी जगह रख-रखाव और बनाव-सिंगार ले लेते हैं। शक्ल-सूरत, चाल-ढाल और बातचीत हर चीज़ में बड़ापन और स्पष्ट अन्तर महसूस होने लगता है। रंग-रूप में निखार आ जाता है। चेहरे पर हर समय मुस्कराहट खेलने लगती है। अंग-अंग में तनाव और असाधारण आकर्षण पैदा हो जाता है।

वस्त्र-सौन्दर्य का यह आलम हो जाता है कि मामूली लिबास भी रेशम और मलमल के कपड़े से ज़्यादा फबने लगता है। स्वभाव में नशा और मस्ती, आँखों में ख़ुमार आ जाता है। सादा पानी में भी रंगीन शराब का आनन्द आने लगता है। नई ज़िन्दगी, नई उमंगें, नए दोस्त और नए वादे-इरादे शुरू हो जाते हैं। मतलब यह है कि हर तरफ़ वसन्त और हँसी-ख़ुशी का दौर-दौरा हो जाता है। यह है नौजवानी की एक हल्की -सी झलक।

इस दौर की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(1) उम्र का सबसे नाज़ुक दौर, यौन-भावना में तीव्रता और यौन-प्रवृत्ति सक्रिय होती है। अनुभवहीनता और अदूरदर्शिता के कारण शारीरिक और नैतिक दृष्टि से बहुत ख़तरनाक नतीजों से दो-चार होने की आशंका होती है। इसलिए ग़ैर-मामूली ध्यान देने और उनकी आदतों और तौर-तरीक़ों पर कड़ी नज़र रखने की ज़रूरत है। हाँ, अपने बरताव और रवैये से ऐसा महसूस न होने दिया जाए कि शक और सन्देह और खोजी निगाहों से देखा जा रहा है। इसके अलावा उनकी तन्दुरुस्ती की चिन्ता की जाए। यौन-प्रवृत्ति प्रकृति की बहुत ही महत्त्पूर्ण और ज़बरदस्त देन है। इसे कुचलने की कोशिश असल में प्रकृति से जंग और व्यक्तित्व के लिए अत्यन्त हानिकारक है। मर्दानगी के इस जौहर की सुरक्षा करने, भावनाओं पर क़ाबू पाने और इस प्रवृत्ति के सही दिशा अपनाने में मददगार होना चाहिए। दिलचस्प रचनात्मक क्रिया-कलापों और गतिविधियों, प्रतियोगी खेल और ललित कलाओं की वैध विधाओं और रूपों में व्यावहारिक रूप से भाग लेने के मौक़े उपलब्ध किए जाएँ, तो इस प्रवृत्ति की पूर्ति भी होती और कला-कौशल-सम्बन्धी महारत भी हासिल होती है।

(2) लज्जा और शर्मीलेपन की अधिकता होती है और समाज का असाधारण ध्यान रहता है। नौजवानों के ये वे प्राकृतिक हथियार हैं,

जिनसे वे अदूरदर्शिता और अनुभवहीनता के इस मरहले में अपनी चाल-चलन की सुरक्षा करते हैं। चरित्र को बेदाग़ और तन्दुरुस्ती को सुरक्षित रखने के लिए ये अत्यन्त लाभदायक और ज़रूरी हैं। इसलिए इन भावनाओं और एहसासों को हरगिज़ कुंठित और विकृत न होने दिया जाए; क्योंकि अनुभव गवाह है कि इस उम्र में अगर शर्म और लज्जा उठ जाए या समाज का संकोच और सम्मान न रह जाए, तो नवजवान जो कुछ न कर गुज़रें, कम है।

(3) अवकाश के समय या अकेले में आम तौर पर गन्दे यौन-विचार उभरते हैं और शैतान तरह-तरह के वसवसे और भ्रमों में ग्रस्त करता है— 'ख़ाली घर शैतान का अड्डा'।

इसलिए छुट्टी के समयों के लिए दिलचस्प, लाभदायक क्रिया-कलापों और गतिविधियों की ज़्यादा से ज़्यादा व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि वह हर समय व्यस्त रहे। मानसिक और शारीरिक, हल्के-भारी दोनों तरह की गतिविधियों में लगे रहने के बराबर मौक़े मिलते रहने चाहिए।

(4) आत्मगौरव, स्वच्छन्दता, अपने कामों को ख़ुद अंजाम देने, अपने मामलों पर ख़ुद सोच-विचार और फ़ैसला करने का शौक़ और माँ-बाप और बड़ों के हस्तक्षेप से आज़ाद होने का विचार उभरता है। समुचित सीमाओं में उन्हें आज़ादी मिलनी चाहिए, ताकि वे अपने पैरों पर खड़े हो सकें। हमेशा अपना मुहताज न रखा जाए, जैसा कि लाड़-प्यार में अक्सर माँ-बाप करते हैं। उनसे सम्बन्धित मामलों में उनसे सलाह कर लेनी चाहिए और रोक-टोक से यथासम्भव बचना चाहिए वरना बाग़ी बनने की आशंका रहती है। नर्मी और सहानुभूति से रास्ते पर लाने की कोशिश की जाए।

(5) ख़याली पुलाव पकाने, हवाई क़िले बनाने और शैख़चिल्ली जैसी योजनाएँ बनाने में बहुत मज़ा आता है। इसलिए दुनिया की सच्चाई

से अक्सर बचकर जासूसी उपन्यासों या खुदाई फ़ौजदार जै किस्से-कहानियों में पनाह ढूंढ़ने लगते हैं। समाधान-योग्य समस्याअ और कठिनाइयों का सामना करने के मौक़े दिए जाएँ। विभिन्न कामों को अंजाम देने के लिए उन्हीं से योजना बनवाकर व्यावहारि रूप देने के लिए प्रेरित किया जाए, ताकि सम्भव और असम्भव अन्तर करना भी सीखें और धीरे-धीरे हक़ीक़तपसन्दी (यथार्थप्रियत पैदा हो। असफलता से बचाने और निरन्तर कड़ी मेहनत करवे सफलता तक पहुँचने में मदद और मार्गदर्शन किया जाए, ताकि दुनिया की कठोर सच्चाइयों से आँखें चार करने लगें।

(6) अभियानप्रियता और टोलियों में सैर-सपाटे (पर्यटन) का शौक़ पैद होता है। शैक्षिक सैर-सपाटों के मौक़े दिए जाएँ। यात्रा के प्रबन्ध खुद करें। इसी तरह टोलियों में बाँट कर विभिन्न कार्यक्रमों में उन काम लिए जाएँ। जनसेवा-सम्बन्धी अलग-अलग कामों के लिए उनकी टोलियाँ बना दी जाएँ और ख़ूब काम लिया जाए। प्रतियो खेलों में भाग लेने से अभियानप्रियता की भावना की तृप्ति होती और जनसेवा से सहानुभूति और देखभाल की भावनाएँ उभरती हैं।

(7) पुराने दोस्तों और साथियों को भूल जाते और नए प्यारे दोस्त बना हैं। यह दोस्ती बहुत ही गहरी और टिकाऊ होती है। दिल के रा भी इन दोस्तों से बयान कर देते हैं। इन संगति में ज़्यादा से ज़्याद समय बिताने की कोशिश करते और उनकी संगति का असाधार प्रभाव ग्रहण करते हैं। स्पष्ट है दोस्त अगर अच्छे हुए तो बहुत ह फ़ायदेमन्द वरना बहुत नुक़सानदेह हो सकते हैं। लेकिन दोस्ती क सम्बन्ध दिल से होता है। चयन में बच्चे के अपने इरादे ही क दख़ल हो सकता है। बड़ों की पसन्द से दोस्त नहीं चुना करते। ऐस स्थिति में चयन की किसी न किसी हद तक आज़ादी मिलन चाहिए। हाँ, कोशिश इसकी हो कि माहौल अच्छा मिले, ताकि दोस

भी अच्छे मिल सकें। उनके दोस्तों की आदतों और तौर-तरीक़ों और दिलचस्पियों पर नज़र रखी जाए। उनको कभी-कभी घर पर आमंत्रित करने का मौक़ा दिया जाए। उनकी इज़्ज़त की जाए और मुहब्बत और हमदर्दी और अच्छे बरताव से उनको अच्छे क्रिया-कलापों और गतिविधियों में दिलचस्पी लेने के मौक़े दिए जाएँ। ऐसी स्थिति में उनका भी सुधार होगा और बच्चों की बुरी संगति से सुरक्षित रहेगा। ज़्यादा रोक-टोक नुक़सानदेह होती है।

(8) आदर्श चरित्र और विश्वप्रसिद्ध महापुरुषों से लगाव और उनके गुणों और ख़ूबियों को अपनाने का शौक़ उभरता है। अब तक वे अपने माँ-बाप और शिक्षकों इत्यादि ही को आदर्श और बहुत ऊँचा समझता रहा है, लेकिन अब उसे कुछ पहलुओं से उनमें कमियाँ नज़र आने लगती हैं और वह दुनिया भर में मशहूर लोगों के व्यक्तित्व और चरित्र को अपने लिए आदर्श बनाना चाहता है। स्पष्ट है ऐसी महान और पूर्ण हस्ती जिसका हर पहलू आदर्श और जिसका सर्वोत्तम नमूना हर एक के लिए क़ियामत तक अनुकरणीय हो, सिर्फ़ हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ही का व्यक्तित्व है। इसलिए आप (सल्ल॰) से मुहब्बत और आप (सल्ल॰) के आदर्श नमूने की पैरवी की पूरी कोशिश होनी चाहिए। इस तरफ़ से लापरवाही बरती गई तो आशंका है कि वह अत्याचारी और अन्यायी नेता या किसी फ़िल्मी स्टार इत्यादि को अपना हीरो बना लेगा।

(9) एक ऐसे आदर्श की ज़रूरत भी बहुत ही तीव्रता से महसूस होने लगती है, जिसके लिए वह अपनी ज़िन्दगी समर्पित कर सके। आदमी की ज़िन्दगी का एकमात्र सही लक्ष्य तो यही है कि वह अपने पैदा करनेवाले की ख़ुशी प्राप्त करने के लिए अपना सब कुछ निछावर कर दे। ख़ुद भी ज़िन्दगी के सारे क्षेत्रों में उसकी मर्ज़ी पर चले और सारे मनुष्यों को उसकी मर्ज़ी पर चलाने की जी-तोड़

कोशिश करे। लेकिन मनुष्यों ने अपने लिए तरह-तरह के आद और लक्ष्य गढ़ लिए हैं और ईशपरायणता की जगह भौतिकवा स्वार्थपरता, राष्ट्रवाद, जातिवाद इत्यादि विभिन्न 'भक्तियों' अ 'वादों' के प्रभावों ने हर तरफ़ ऐसा वातावरण बना रखा है f आदर्श के चुनाव में भटकने की अत्यन्त गम्भीर आशंकाएँ ल रहती हैं। इसलिए उसे बहुत ही हिकमत, युक्ति, उपाय, मुहब्ब और हमदर्दी के साथ सही आदर्श और लक्ष्य को अपनाने को तैय करना चाहिए और उनकी शक्तियों, योग्यताओं और नैसर्गि प्रवृत्तियों और रुझानों का ध्यान रखकर उस आदर्श की प्राप्ति व जी-तोड़ कोशिश में समुचित मार्गदर्शन करना चाहिए। इस आद और लक्ष्य की जिस दृष्टि से वह ज़्यादा बेहतर ख़िदमत अंजाम सकता है, उस दिशा की स्पष्ट निशानदेही होनी चाहिए।

(10) मज़हबी जोश और उसके लिए त्याग और क़ुरबानी की भाव और नैतिक मूल्यों का आदर-सम्मान होता है। मगर अक़ीदों अ आस्थाओं के बारे में अक्सर सन्देह और भ्रम पैदा होते हैं अ उनके रहस्यों और वास्तविक ज्ञान को जानने की इच्छा होती है।

मज़हबी जोश को सन्तुलन के साथ परवान चढ़ाना चाहिए अ जोश के साथ होश की भी चिन्ता होनी चाहिए। सन्देहों और भ्र पर ग़ुस्से का बिलकुल प्रदर्शन न किया जाए; बल्कि हमदर्दी के सा सन्तोषजनक उत्तर दिए जाएँ। दलीलों से सन्तुष्ट करने की कोशि की जाए और शरीअत के बारे में गहरे भेद और उपयुक्तता प्रमाण बताए जाएँ। इस उम्र में चूँकि शरीर की माँगें कुछ और हो हैं, आत्मा की कुछ और, सामाजिक और नैतिक मूल्यों की कुछ अ अपेक्षा होती है और स्वेच्छा एवं वासनाओं की कुछ और; दोनों व माँगों में टकराव पैदा होने की वजह से वे मानसिक उलझनों व शिकार हो जाता है और शरीअत के हुक्मों के औचित्य पर श

और सन्देह करने लगता है। अगर दोनों की माँगों में अनुकूलाता समझा दी जाए, तो आसानी से सन्तुष्ट हो सकता है। इस्लाम चूँकि प्राकृतिक धर्म है, इसलिए शरीर की नैसर्गिक माँगों को नज़रअन्दाज़ नहीं करता कि ईसाइयत या दूसरे धर्मों की तरह इसकी शिक्षाएँ नवजवानों को स्वभाव के प्रतिकूल महसूस हों।

11) पढ़ाई के प्रति असाधारण अभिरुचि होती है और घंटों लगातार पढ़ता रहता है। मशहूर और विलक्षण व्यक्तित्वों को धारण करनेवाले और प्यारे रसूल (सल्ल॰) के प्यारे साथियों (रज़ि॰), सुधारकों, इस्लाम के इमामों (रह॰), इस्लाम के नेक बुज़ुर्गों (रह॰), क्रान्तिकारियों की जीवनियों और कारनामों से परिचित करानेवाली किताबें और अच्छे और पाक-साफ़ उपन्यासों के अध्ययन के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित किया जाए और अच्छी किताबें मुहैया कराई जाएँ।

12) निस्वार्थ प्रेम की तीव्र भावना पैदा होती है। इस भावना को जनसेवा और हक़ और इनसाफ़ से मुहब्बत इत्यादि की तरफ़ मोड़ने की कोशिश की जाए और इसके मौक़े उपलब्ध कराए जाएँ।

13) अन्धानुकरण से घृणा और हर बात बिना विचारे मान लेने विमुख होने लगता है। इसलिए हुक्म देने में सावधानी बरती जाए। तानाशाह और डिक्टेटर बनकर हुक्म देने के बजाय सलाहकार बन कर मार्गदर्शन किया जाए। स्वीकारात्मक प्रवृत्ति और आमादगी देखकर हुक्म दिया जाए, ताकि उल्लंघन की आशंका न रहे।

14) रोक-टोक और आलोचना से बहुत ग़ुस्सा और बग़ावत की आशंका होती है। इसलिए किसी भी कोताही पर खुल्लम-खुल्ला टोकने और आलोचना करने के बजाय अकेले में नर्मी और हमदर्दी से समझाना चाहिए।

15) मुहब्बत के मामले में ऐसा महसूस होता है कि बचपन फिर लौट आया है। इस मरहले की शुरुआत में तो उसे अपने आप ही से

मुहब्बत होती है। बनाव-सिंगार की तरफ़ बहुत ध्यान रहता है। फि अपने समकक्षी साथी-संगियों से मुहब्बत और लगाव और अन्त विपरीत लिंगवालों में आकर्षण, जी-जान से मुहब्बत और पूरी तर समर्पण और सुपुर्दगी की भावना उभरती है। यह स्वाभाविक है। इ भावनाओं को कुचलने के बजाय सन्तुलन पर लाने और सही रु पर लगाने की ज़रूरत है। वयस्क होने के बाद शादी में जल करनी चाहिए।

(16) आचरण और चरित्र में ज्वार-भाटा और असाधारण उतार-चढ़ा महसूस होता है। घड़ी में कुछ, घड़ी में कुछ; कभी बहुत ज़्या मेहनत और शक्ति का सुबूत, तो कभी अत्यन्त आलसीपन औ सुस्ती का प्रदर्शन, कभी बहुत ज़्यादा आशा से भरपूर, कभी हद ज़्यादा निराशा, न बड़ों में गुंजाइश, न छोटों में समाई, अक्स मानसिक उलझनों का शिकार, डाँट-फटकार के बजाय हमदर्दी औ सहानुभूति का हक़दार होता है।

(17) उम्र का सुनहरा दौर, नई उमंगें, नए हौसले, भविष्य में अपने स्था का निर्धारण और तरक़्क़ी करने का हौसला उभरता है। इन ख़ूबि से फ़ायदा उठाना चाहिए। इनके द्वारा उच्च गुण पैदा करने औ तरक़्क़ी के ऊँचे दरजे पर पहुँचाने में मदद और मार्गदर्शन कर चाहिए वरना ग़लत रुख़ पर पड़ जाने से बेहद नुक़सान पहुँ सकता है।

ये हैं विभिन्न अवस्थाएँ और हर अवस्था की विशेषताएँ। शिक्षण प्रशिक्षण में इन विशेषताओं का पूरा ध्यान रखना चाहिए। बच्चा जि अवस्था से गुज़र रहा हो, उस अवस्था की विशेषताओं का ख़ूब ग़ौर निरीक्षण किया जाए और उनके लिए जो विषय, क्रिया-कलाप गतिविधियाँ उपलब्ध कराई जाएँ, उनमें इन विशेषताओं का पूरा ध्य रखा जाए।

अगर इन विशेषताओं को नज़रअन्दाज़ किया गया या स्वाभाविक माँगों को कुचला गया, तो बच्चे के व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास नहीं हो सकेगा और इसका नतीजा बहरहाल भुगतना पड़ेगा। मुहब्बत और अपनापन, हमदर्दी और सहानुभूति को आधार और नीति बनाकर ही बच्चों की शिक्षा-दीक्षा हो सकती है। माहौल को पाक-साफ़ रखना और अपना अच्छा नमूना और आदर्श सामने लाना ही सबसे उपयोगी और लाभदायक हथियार है।

☆☆☆

अध्याय-11

कुछ महत्त्वपूर्ण मूल प्रवृत्तियाँ

मूल प्रवृत्तियाँ और सहज क्रियाएँ यूँ तो बहुत-सी हैं, लेकिन शिक्षण-प्रशिक्षण की दृष्टि से निम्नलिखित कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इसलिए इनके बारे में कुछ विस्तार से चर्चा की जाती है—

जिज्ञासा

जिज्ञासा यानी जानने और टोह लगाने की प्रबल इच्छा : यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण मूल प्रवृत्ति और सारे ज्ञान का मूल स्रोत है। इसी के कारण आदमी अपने प्राकृतिक और सामाजिक वातावरण से ख़ूब अच्छी तरह परिचित होता और खुली आँखों और खुले कानों के साथ ज़िन्दगी बसर करने के लायक़ बनता है। दूध पीने की अवस्था ही से यह मूल प्रवृत्ति अपना काम शुरू कर देती है। जो चीज़ भी सामने आती है, बच्चा पूरी तरह ख़ुद ही प्रश्नचिह्न बनकर उसे देखता है और नज़रें गड़ाए निरन्तर देखता रहता है, यहाँ तक कि वह चीज़ नज़रों से ओझल हो जाए। जब ज़रा बोलने पर महारत प्राप्त होती है, तो हर नई चीज़ के बारे में प्रश्नों की बौछार शुरू कर देता है। यह क्या है? वह क्या है? यह कौन है? वह कैसा है? ऐसा क्यों है? इत्यादि।

इस तरह वह अपने आसपास की विभिन्न चीज़ों के बारे में जानकारियाँ प्राप्त कर लेता है। इस प्रवृत्ति के साथ आश्चर्य और जिज्ञासा की भावना मिलकर उसकी दिलचस्पी में और अधिक वृद्धि कर देती और उसे तलाश, खोज, शोध और जाँच-पड़ताल पर आमादा करती रहती है। इसी प्रवृत्ति के सहारे मनुष्य ब्रह्माण्ड (कायनात, Universe) के

छिपे रहस्यों से परिचित हुआ और उसके ज्ञान में दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है। लेकिन यही प्रवृत्ति जब ग़लत रुख़ अपना लेती है तो बच्चा बेकार, हानिकारक और निरर्थक बातों या लोगों की निजी ज़िन्दगियों की टोह में पड़कर अपना समय और शक्ति बरबाद करने लगता है औंर कुछ बुरी आदतों और नापसन्दीदा क्रिया-कलापों को करने का दोषी केवल इसलिए होता है कि वह उनके नतीजों और रहस्यों से अवगत होना चाहता है।

इस प्रवृत्ति के सन्दर्भ में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए—

- नई जानकारियाँ उपलब्ध कराने के लिए इस प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया जाए, तो बच्चे ख़ुद पूरे जी-जान से आकृष्ट होकर पूरी दिलचस्पी और लगन से पढ़ाई में भाग लेने लगेंगे। इसलिए ज्ञानपरक पाठों के शिक्षण में इस प्रवृत्ति से ज़्यादा से ज़्यादा काम लिया जाए। हाँ, इस बात का ध्यान रहे कि नई जानकारी को पिछली जानकारियों से जोड़कर, आसान और सुबोध बनाकर पेश किया जाए; क्योंकि चीज़ अगर बिलकुल ही अपरिचित या समझने योग्य न हो तो ध्यान न देंगे या उससे डर महसूस करेंगे।
- बच्चों के प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर दिया जाए और बहुत ज़्यादा प्रश्न करने पर उन्हें झिड़का न जाए। कुछ लोग उकताकर बच्चों को झिड़क दिया करते हैं। इसके नतीजे में यह प्रवृत्ति धीरे-धीरे कमज़ोर या मुर्दा हो जाती है। इसे सारी ज़िन्दगी ज़िन्दा रखने की कोशिश करनी चाहिए और उम्र, समझ और दिलचस्पी को ध्यान में रखकर उनकी पूर्ति के उचित मौक़े उपलब्ध करने चाहिएँ।
- बच्चों को बेकार, अनुपयोगी या स्वास्थ्य और नैतिकता को नुक़सान पहुँचानेवाली बातों की टोह में पड़ने से बचाया जाए। प्रश्न करके और प्रश्न करने के मौक़े देकर बच्चों को सामान्य विज्ञान, इतिहास,

भूगोल, साहित्य इत्यादि के बारे में जानकारियाँ प्राप्त करने या शोध या खोज-बीन की चाट और आदत लगाने की कोशिश की जाए।

- जिज्ञासा के तीन सोपान होते हैं—

(क) **शारीरिक जिज्ञासा :** बच्चा शरीर के अंगों और पास-पड़ोस की चीज़ों को ग़ौर से देखता-भालता, छूता, टटोलता, मुँह में डालता और हाथ में लेकर उनकी शक्ल-सूरत, रंग, आकार, वज़न, आवाज़, स्वाद, सख़्ती, नरमी, सर्दी, गर्मी और दूसरी विशेषताओं के बारे में अपने तौर पर जानकारियाँ प्राप्त करने की कोशिश करता है।

इसी लिए जिस बच्चे का माहौल ख़ुशहाल और विभिन्न तरह की चीज़ों से जितना ज़्यादा भरा-पूरा होता है और उसे अवलोकनों और प्रत्यक्षीकरण, प्रयोगों और अनुभवों का जितना ज़्यादा मौक़ा मिलता है, उसकी जानकारियाँ भी उतनी ही ज़्यादा होती है। इसलिए इसकी व्यवस्था होनी चाहिए।

(ख) **सामाजिक जिज्ञासा :** जिन चीज़ों या घटनाओं और दृश्यों को बच्चा अपने अवलोकन और अनुभव से ख़ूब अच्छी तरह समझ नहीं पाता, उनके बारे में माँ-बाप, शिक्षकों और साथी-संगियों इत्यादि से पूछता है। बच्चे के प्रश्न स्वस्थ दिमाग़ की पहचान होते हैं। इसलिए हमदर्दी से सन्तोषजनक उत्तर मिलना चाहिए।

(ग) **बौद्धिक जिज्ञासा :** जवानी में दाख़िल होने पर इसका प्रदर्शन होता है। कुछ महत्त्वपूर्ण समस्याएँ, मामले और घटनाएँ, जिनके समझने या हल करने में दूसरों से मदद नहीं मिल सकती, बच्चा उनके बारे में ख़ुद गहरे सोच-विचार से काम लेता है और अपनी क्षमता के मुताबिक़ स्पष्टीकरण या हल सुझाता है, जो अल्प ज्ञान या अनुभवहीनता के कारण अक्सर बहुत ही बचकाना होते हैं। बच्चों की इन कोशिशों का मज़ाक़ नहीं उड़ाना चाहिए, बल्कि सही ढंग से सोच-विचार करने में मदद और मार्गदर्शन करना चाहिए।

- घर और स्कूल/मदरसे में जिज्ञासा और उत्सुकता की तुष्टि की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए और इस प्रवृत्ति और अभिरुचि को सही रुख़ पर डालने की कोशिश करनी चाहिए वरना या तो यह प्रवृत्ति कमज़ोर पड़ जाएगी या अपने प्रदर्शन और अपनी तुष्टि के लिए ग़लत रुख़ अपनाएगी, जिसके नतीजे में बच्चे घर और स्कूल/मदरसे से ग़ायब रहने लगेंगे और बुरी आदतें और अरुचिकर क्रिया-कलापों और गतिविधियों का शिकार होंगे।

संग्रह की प्रवृत्ति

'कुछ संग्रह या जमा करना' भी एक बुनियादी इच्छा और बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है। इसके साथ निजी सम्पत्ति की भी भावना सक्रिय रहती है। इसी के कारण आदमी अपने आड़े वक़्त के लिए कुछ जमा करता और मुहताजी और किसी के आगे हाथ फैलाने से अपने को सुरक्षित रखता है। जन-कल्याण की संस्थाओं की स्थापना और सामूहिक हित के कामों के लिए फ़ंड और दुर्लभ चीज़ें इत्यादि जमा करता है। संग्रहालय और पुस्तकालय क़ायम करता है।

हदीसों, पुरातत्त्विक वस्तुओं और सूक्तियों का संग्रह और संकलन, शब्दकोशों और सन्दर्भ पुस्तकों का सम्पादन और निर्माण इत्यादि बहुत कुछ इसी प्रवृत्ति की ऋणी है। लेकिन यही प्रवृत्ति ग़लत रुख़ अपनाकर लोगों को लोभ-लालच, छल-कपट, घोटाला, सोसाबाज़ी, चोरी, लूट-मार, अवैध भंडारण और जमाख़ोरी और पूँजीवाद की उन विभिन्न बुराइयों और लानतों में गिरफ़्तार करती है, जिसके नतीजे में साम्राज्यवाद जैसे बड़े अभिशापों के लिए ज़मीन तैयार होती है। इस प्रवृत्ति का प्रदर्शन छोटी उम्र ही से शुरू हो जाता है।

एक बच्चे की जेब, बस्ते या बक्से का जायज़ा लेकर देखिए, फलों के बीज, काग़ज़ के टुकड़े, ख़ाली डब्बे और न जाने क्या-क्या चीज़ें

मिलेंगी। ये सब इसी प्रवृत्ति का करिश्मा है। इस पर सचेत करने या जमा की हुई उन दुर्लभ चीज़ों को उठाकर फेंक देने के बजाय सही प्रशिक्षण के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाए—

- छोटे बच्चों को प्रेरित किया जाए कि वे स्कूल/मदरसे के संग्रहालय और कक्षा की सजावट के लिए तरह-तरह के बीज, फूल-पत्ते, चिड़ियों के पंख, शीशे और पत्थर के टुकड़े, सीप, घोंघे, ख़ाली डब्बे, टिकट, नक़्शे, तस्वीरें, सिक्के इत्यादि जमा करें और इतिहास, भूगोल, सामान्य ज्ञान और आर्ट-क्राफ़्ट की शिक्षा में इनसे मदद ली जाए। उनके इकट्ठा किए हुए सामान को क्रम से और सुन्दर ढंग से सजाने का काम किया जाए।
- बड़े बच्चों को हदीसें, सूक्तियाँ, लोकोक्तियाँ, दिलचस्प अशआर (कविताएँ), अच्छी किताबें इत्यादि इकट्ठा करने पर उभारा जाए।
- जेब ख़र्च और ईदी इत्यादि में से कुछ बचाकर जमा करने की आदत डलवाई जाए और जब कुछ इकट्ठा हो जाया करे, तो किसी उपयोगी और अच्छी किताब या सामान के ख़रीदने या किसी की मदद करने पर ख़र्च कराया जाए।
- ग़रीब और मुहताज छात्रों की मदद करने के लिए फ़ंड या पुरानी किताबों के उपलब्ध कराने के अभियान में हिस्सा लेने के मौक़े दिए जाएँ।
- अपना शब्दकोश और चुने हुए अशआर का संकलन तैयार करने और छोटा-सी लाइब्रेरी क़ायम करने पर बच्चों को प्रेरित किया जाए। इस तरह यह प्रवृत्ति मुर्दा भी नहीं होगी और अभिव्यक्ति के लिए सही दिशा अपनाएगी।

रचनात्मक (Creative) प्रवृत्ति

दुनिया में जितने निर्माण-कार्य हुए या हो रहे हैं, वे ज़्यादातर इसी

प्रवृत्ति के ऋणी हैं। झोंपड़ियों और लकड़ी-पत्थर के औज़ारों से लेकर आलीशान इमारतों, भारी मशीनों, रेल, जहाज़ के कारख़ानों तक सब इसी के करिश्मे हैं। लेकिन यही प्रवृत्ति ग़लत रुख़ अपना लेती है, तो बड़ी तबाही भी मचाती है।

आद और समूद जातियों बनाई हुई चीज़ें और मंगोलों-तातारियों की विनाश-लीला सब कुछ इसी का नतीजा थी। इस प्रवृत्ति का प्रदर्शन भी बचपन ही से शुरू हो जाता है। बच्चों के सामने जो चीज़ भी आए, वे हाथ लगाने की कोशिश करते हैं, नतीजा चाहे कुछ ही क्यों न हो। जब देखो, कुछ न कुछ बनाते-बिगाड़ते रहते हैं। यह उनके लिए है भी निहायत ज़रूरी। इस तरह वे आसानी से बहुत कुछ सीख लेते हैं। चूँकि बनाव और बिगाड़ दोनों इस प्रवृत्ति के दो रुख़ हैं। हर बनाव के साथ कुछ न कुछ बिगाड़ भी होता ही है और बच्चे इन दोनों में कोई ख़ास अन्तर भी नहीं कर पाते। चीज़ों के रूप को बदल देने ही को निर्माण समझते हैं और बनाव के मुक़ाबले में बिगाड़ आसान होता है। इसलिए बच्चे अपने काम का आरम्भ बिगाड़ ही से करते हैं। दूसरों के खिलौने या घरौंदे तोड़ देना, घर के सामान की तोड़-फोड़ बचपन के मामूली क्रिया-कलाप हैं। अगर उसे अपनी क्षमता के मुताबिक़ कुछ बनाने का मौक़ा मिले, चाहे वे मिट्टी के खिलौने ही क्यों न हों, तो वह मेहनत का मूल्य और क़द्र सीखता है और चीज़ों को बिगाड़ने के बजाय उनकी सुरक्षा करने लगता है। शुरू ही से बच्चे की इस प्रवृत्ति को सही रुख़ पर डालने की कोशिश करनी चाहिए वरना बनाव के बजाय बिगाड़ में ज़्यादा मज़ा आने लगेगा।

इस सन्दर्भ में निम्नलिखित बातें ध्यान में रहें—

- स्कूल/मदरसे में आर्ट-क्राफ़्ट, मिट्टी के काम, बाग़बानी इत्यादि का काम कराया जाए। इससे बच्चों की इस प्रवृत्ति की तुष्टि भी होगी। वे मेहनत और परिश्रम के आदी होंगे और उनकी रचनात्मक

योग्यताएँ उभरेंगी।

- बच्चे अपने हाथों से कुछ बनाकर बहुत खुश होते हैं। चाहे वह दूसरों की नज़रों में बहुत ही तुच्छ, भद्दी और अधूरी ही क्यों न हो। अपनी बनाई हुई चीज़ें उन्हें बहुत प्रिय होती हैं। वे उनको बहुत ध्यान से सुरक्षित रखते हैं और चाहते हैं कि हर देखनेवाला उनकी बनाई हुई चीज़ की प्रशंसा करे। इसलिए बच्चों को इसके मौक़े मिलने चाहिएँ और उनकी बनाई हुई चीज़ों का मज़ाक़ उड़ाने के बजाय उनका मनोबल बढ़ाना चाहिए। आलोचना अगर करनी ही पड़े तो उत्साहवर्द्धक और रचनात्मक होनी चाहिए, ताकि उत्साह भंग न हो और वे उसे और बेहतर बना सकें।
- कुछ लोग धूल, मिट्टी, कीचड़, पानी में खेलने और घर-घरौंदे इत्यादि बनाने से बच्चों को रोकते हैं, ताकि शरीर और वस्त्र गन्दा न होने पाए। इस तरह वे बच्चों को इन सच्ची और वास्तविक खुशियों से भी वंचित करते हैं, जो वे उन रचनात्मक खेलों के द्वारा प्राप्त करते हैं और उन फ़ायदों से भी उन्हें वंचित कर देते हैं, जो वे अपनी मेहनत से प्राप्त कर सकते हैं। होना यह चाहिए कि इन क्रिया-कलापों के लिए भी मौक़े दिए जाएँ और निवृत्ति के बाद शरीर और कपड़ों की सफ़ाई की भी व्यवस्था की जाए। केवल सफ़ाई की ख़ातिर इन सरगरमियों से वंचित न किया जाए।

  बिस्तर पर पेशाब करने और अपने पेशाब-पाख़ाने से खेलने की आदत भी इस तरह छुड़ाई जा सकती है, जो कभी इस कारण भी पड़ जाती हैं कि कीचड़, मिट्टी से बच्चे खेलने नहीं पाते।
- आजकल तरह-तरह के शैक्षिक खिलौने मिलते हैं, जिनमें लकड़ी या प्लास्टिक आदि के छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं और जिनको क्रम से सजाने या जोड़ने से विभिन्न प्रकार के मॉडल बन जाते हैं। इन चीज़ों को मुहैया कराने की व्यवस्था की जाए और इनके इस्तेमाल के

मौक़े दिए जाएँ।

नौजवानी में लड़के-लड़कियों दोनों के लिए जायज़ हदों में उपयोगी, दिलचस्प और रंगीन रचनात्मक गतिविधियों का प्रबन्ध किया जाए। इससे वे ख़ाली समयो में भी व्यस्त रहेंगे। उनकी इच्छाओं और भावनाओं की तुष्टि भी होगी और कलात्मक महारत भी प्राप्त कर लेंगे।

आत्म-प्रदर्शन

यानी दिखावा और दूसरों की नज़रों में बड़ा बनने और अपने को ऊँचा साबित करने की इच्छा : यह भी एक मौलिक एवं महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है। धर्म और सम्प्रदाय या देश और जाति के उत्थान के लिए महान काम अंजाम दिलाने में जहाँ इस प्रवृत्ति का बहुत ज़्यादा हाथ रहा है, वहीं बदतरीन शरारतें और गुंडागर्दियाँ और छैलापन और टेडीइज़्म (स्वेच्छाचारिता) भी इस प्रवृत्ति के ग़लत रुख़ अपनाने के नतीजे में सामने आते रहते हैं। इस प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति भी बचपन ही से शुरू हो जाती है। अपनी शारीरिक और मानसिक विशेषताओं का एहसास होने के बाद ही से बच्चा दूसरों की नज़रों में बड़ा और विशिष्ट दीखने की कोशिश करता है।

वह दूसरों की प्रशंसा और शाबाशी प्राप्त करने के लिए अपनी शक्ति भर पूरी मेहनत और कोशिश करता है और अगर साथी-संगियों या बड़ों की नज़रों में अपनी विशेषताओं के कारण प्रशंसा के योग्य नहीं पाता तो या तो निराशा और हीन भावना का शिकार होता है या फिर शरारतों और ग़लत कामों के द्वारा नुमायाँ होना (विशिष्ट बनना) चाहता है। उदाहरण के लिए, दूसरों को सताना, शोर मचाना, बीमारी का बहाना करना इत्यादि। इस प्रवृत्ति के समुचित विकास के लिए निम्नलिखित बातें नज़र के सामने रहें—

- बच्चों के अच्छे कामों पर शाबाशी दी जाए और दिल खोलकर

सराहा जाए।

- घर और स्कूल/मदरसे में बच्चों की उम्र, सलाहियत और रुझान के मुताबिक़ कुछ ऐसी ज़िम्मेदारियाँ सुपुर्द की जाएँ, जिनमें उन्हें नुमायाँ होने या उभरने का पूरा मौक़ा मिले। मिसाल के तौर पर, कक्षा के मॉनीटर, खेल के कप्तान, छात्र-संघ के अध्यक्ष-सचिव, इज्तिमाओं (सभाओं) के व्यवस्थापक इत्यादि की हैसियत से काम करने का मौक़ा दिया जाए।
- स्कूल/मदरसे में तरह-तरह के कार्यक्रमों और गतिविधियों का आयोजन किया जाए और उनमें उम्दा काम करनेवाले बच्चों को शील्ड, पोज़ीशन और इनाम देने या उनके नामों की सूची प्रमुख जगहों पर चिपकाया जाए।
- हर आदमी अपने ही वर्ग और अपनी ही जमाअत या संगठन के लोगों में मशहूर और लोकप्रिय होने की कोशिश करता है। इसलिए वह साथी-संगियों की संगति से बहुत ज़्यादा प्रभावित होता है और उन्हीं के विचारों, भावनाओं और राय को ध्यान में रखकर प्रमुखता प्राप्त करना चाहता है। इसलिए कोशिश की जाए कि बच्चों को अच्छी संगति मिले, जो बच्चे अपनी विशेषताओं और गुणों के आधार पर बड़ों की नज़रों में उभरे हुए होते हैं, अक्सर वे अपने साथी-संगियों की ईर्ष्या और दुर्भावना का शिकार हो जाते हैं और तरह-तरह से परेशान किए जाते हैं। कोशिश की जाए कि सभी बच्चों को उनकी योग्यता और अभिरुचि के मुताबिक़ उभरने का मौक़ा मिले, ताकि वे नुमायाँ होने के लिए ग़लत रवैया न अपनाएँ और न अच्छे बच्चों को सताने पर उतारू हों।
- नौजवानी में दाख़िल होनेवाले बच्चों को धीरे-धीरे नबियों (अलैहि॰) और इस्लाम के पाक बुज़ुर्गों और इस्लाम के महापुरुषों की जीवनियों और कारनामों के द्वारा यह बात मन में बिठाई जाए कि वे ख़ुदा और

रसूल (सल्ल॰) की नज़रों में अच्छा बनने के लिए बड़े काम अंजाम दें। इसी में इस दुनिया और आख़िरत (परलोक) की कामयाबी है। दिखावा या प्रदर्शन या पाखंड उनके अच्छे कामों को भी बरबाद कर देगा और वे दूसरों की ईर्ष्या और दुर्भावना के भी शिकार होंगे और शाबाशी न मिलने पर निराश हो जाएँगे।

विनम्रता की प्रवृत्ति

यह आत्म-प्रदर्शन की प्रवृत्ति के ठीक विपरीत है यानी बड़ों के सामने अपने को छोटा और तुच्छ समझना। इस प्रवृत्ति के साथ समर्पण और सुपुर्दगी, प्रसन्नता प्राप्त करने और आज्ञापालन की प्रवृत्ति काम करती है। यह भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और मूल प्रवृत्ति है। इसी के सहारे एक आदमी अपने अहंकार, आत्म-प्रदर्शन, स्वेच्छाचारिता, स्वच्छन्दता और उजड्डपन से मुक्त होकर बड़ों के सामने शिष्टाचार और अनुशासन से रहता है। सामूहिक और पारिवारिक जीवन में ज़िम्मेदारों का आज्ञापालन करता है। बड़ों के सम्मान का ध्यान रखता और ख़ुदा की ख़ुशी, रसूल (सल्ल॰) की पैरवी और सिद्धान्तप्रियता और सत्यनिष्ठता के लिए अपने आपको तैयार करता है। लेकिन यही प्रवृत्ति जब ग़लत रुख़ अपना लेती है, तो ख़ुशामद और चापलूसी, कपटाचार और हर अत्याचारी और अन्यायी और बलशाली के आगे सिर झुका देने पर आमादा करके व्यक्तित्व को बुरी तरह आहत करती है, यहाँ तक कि आदमी को जानवरों से भी बुरे स्थान पर पहुँचा देती है। इसलिए घर-स्कूल/मदरसे में अनुशासन-व्यवस्था बनाए रखने के लिए शिक्षकों और माँ-बाप को चाहिए कि वे बच्चों की इस प्रवृत्ति को उभारकर उन्हें विभिन्न मौक़ों के शिष्टाचार और नियमों का ध्यान रखने और बड़ों को आदर करने की आदत सिखाएँ। लेकिन इसपर सावधानीपूर्वक नज़र रखें कि बच्चों का व्यक्तित्व और निजत्व आहत न होने पाए और धीरे-धीरे उन्हें इस मुक़ाम

पर लाएँ कि शिष्टाचार और आदर का ध्यान रखने के बावजूद ख़ुदा और रसूल (सल्ल॰) के आदेशों का उल्लंघन होता हो, वहाँ किसी के भी आज्ञापालन को सही न समझें, बल्कि सारे आज्ञापालनों को अल्लाह और रसूल (सल्ल॰) के आदेशों के अधीन कर दें। बच्चों की इस प्रवृत्ति से लाभ उठाने के लिए –

(1) बड़ों को बहुत ज़्यादा बेतकल्लुफ़ी से बचना चाहिए।

(2) हर हाल में उसूलों का पाबन्द होना चाहिए और छोटों के सामने अपने को लिये-दिये रखना चाहिए।

(3) बच्चों को धीरे-धीरे यह महसूस कराना चाहिए कि आप जो कुछ कराना चाहते हैं, वही ख़ुदा और रसूल (सल्ल॰) के आदेशों की माँग है और इसी में हम सब की सफलता और भलाई है।

(4) ज़ोर-ज़बरदस्ती और अपने ज़ोरदार व्यक्तित्व के दबाव को आज्ञापालन कराने के लिए बहुत ज़्यादा इस्तेमाल करना बच्चों के व्यक्तित्व पर बुरा असर डालता है। इससे यथासम्भव बचना चाहिए।

लड़ने-झगड़ने की प्रवृत्ति

यह भी एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है। सही रुख़ अपनाती है तो आदमी को बहादुर, वीर, प्रतापी, शहीद और अपने ईमान के लिए जान न्योछावर करने वाले के स्थान पर पहुँचा देती है। ग़लत रुख़ अपनाती है तो अत्याचारी और अन्यायी, डाकू और लुटेरा बनाकर छोड़ती है। बहादुरी, वीरता, साहसीपन, सत्य का समर्थन, असत्य का उन्मूलन, भलाई और कल्याण की स्थापना और बुराई का नाश, पीड़ितों की सुरक्षा, अत्याचारी का विनाश, जीवन-संघर्ष में जूझना, आत्मसम्मान की रक्षा जैसे उच्च गुण जहाँ इसी के कारण पलते-बढ़ते हैं, वहीं तुनकमिज़ाजी, दूसरों का दिल दुखाना, चिड़चिड़ापन, अत्याचार और बिगाड़, ज़ोर- ज़बरदस्ती और हिंसा, हत्या और ख़ून-ख़राबा, धांधली और भ्रष्टचार, दुश्मनी और

वैमनस्य, घृणा और ईर्ष्या जैसी निन्दनीय हरकतें भी इसी के कारण पैदा होती हैं। चूँकि आम तौर पर इस प्रवृत्ति का प्रदर्शन अप्रिय ढंगों से होता है, इसलिए लोग बच्चों की इस प्रवृत्ति को सही रुख़ पर डालने के बजाय उसे कुचलने की कोशिश करते हैं, जिसके नतीजे में बच्चे के अन्दर बुज़दिली, कायरता, निर्लज्जता, साहसहीनता, निराशा और कमज़ोरी पलती-बढ़ती है। इसलिए बहुत ही सावधानी से इसे परवान चढ़ाना चाहिए।

इस प्रवृत्ति के साथ ग़ुस्सा और उन्माद की भावना पनपती होती है। एक आदमी की तीव्र नैसर्गिक इच्छाओं की पूर्ति या महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति की माँगों की तृप्ति में जब रुकावट पैदा होती है या उसकी जान, माल या आत्मसम्मान पर हमला होता है, तो वह उत्तेजित हो जाता है और इस रुकावट को दूर करने और हमले की प्रतिरक्षा करने की पूरी कोशिश करता है। उसके शरीर का एक-एक अंग क्षति से बचाने के लिए केन्द्रित हो जाता है और जब तक वह विरोधी पक्ष को पछाड़ नहीं देता, ग़ुस्सा ख़त्म नहीं होता।

इस प्रवृत्ति के प्रशिक्षण के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें ध्यान में रहनी चाहिएँ—

- घर और स्कूल/मदरसे का वातावरण ऐसा बनाया जाए कि आपस में हमदर्दी, मुहब्बत, सद्भाव, मेल-जोल, सहयोग और एकता की भावनाएँ पलें-बढ़ें। भड़काना, ताने देना और मज़ाक़ उड़ाना, दुर्भावना, बदमज़गी, डाँट-फटकार, मार-पीट, नाम बिगाड़ने, नक़ल उतारने, एक -दूसरे को चिढ़ाने और सताने के बुरे नतीजे से अवगत कराते हुए उनकी रोक-थाम की जाए।
- बचकानी हरकतों पर ज़्यादा से ज़्यादा माफ़ी और अनदेखी से काम लिया जाए और बच्चों को अपने दोष को स्वीकार करने और ग़लतियों पर जल्द से जल्द माफ़ी माँग लेने पर उकसाया जाता रहे।

अक्सर तनाव और लड़ाई-झगड़े की नौबत इसी लिए आती है कि लोग क़सूर करने पर भी माफ़ी माँगने के इच्छुक नहीं होते और व्यर्थ ही बात का बतंगड़ बनाते हैं। अगर बचपन से इसकी आदत हो तो झगड़े की नौबत क्रम ही आए।

- जब किसी पर उत्तेजना, गुस्सा या नाराज़ी का मूड छाया हुआ तो समझने-समझाने या डाँट-फटकार कारगर होने के बजाय आम तौर पर उग्र प्रतिक्रिया व्यक्त की जाती है जो कि ख़तरनाक परिणामों का कारण बनती है। जब तक गुस्सा शान्त न हो, इससे बचा जाए। हाँ, अगर उत्तेजित करने वाले को तुरन्त हथियार डालने और माफ़ी माँगने पर राज़ी कर लिया जाए या प्रतिरोधी शक्ति या हानिकारक चीज़ को सामने से हटा दिया जाए, तो गुस्सा जल्द शान्त हो जाता है। गुस्सा शान्त होने के बाद नसीहत और समझाना-बुझाना प्रभावकारी होता है।
- कुश्ती, बिनव्वट, प्रतिस्पर्धा और प्रतियोगिता के खेलों का आयोजन किया जाए तो इस प्रवृत्ति की तृप्ति के उचित मौक़े हाथ आ जाते हैं। इससे बच्चे मार-पीट, लड़ाई-झगड़ा से भी सुरक्षित रहते हैं और यह प्रवृत्ति मुर्दा भी नहीं होने पाती।
- अगर दो बच्चे आपस में लड़ पड़ें तो सावधानी से दोषी का पता लगाया जाए और जिसकी ग़लती हो उसे माफ़ी माँगने पर आमादा किया जाए।
- झगड़ालू, नटखट और लड़ाका बच्चों को कमज़ोरों का सन्धि-मित्र बना दिया जाए और इस तरह उनकी शक्ति सच्चाई का समर्थन और कमज़ोरों की रक्षा करने पर ख़र्च होने लगेगी।
- धान्धली, अनुशासनहीनता, अत्याचार और उपद्रव, हक़ मारना, आत्मसम्मान पर हमले और वर्जित कामों पर ख़ुद भी नापसन्दीदगी का इज़हार किया जाए और उनके दूर करने में सक्रियता दिखाई जाए

और अगर बच्चे उनपर नाराज़गी का प्रदर्शन करें तो निन्दा न की जाए, बल्कि बहादुरी से उनका मुक़ाबला करने और दृढ़तापूर्वक उनका उन्मूलन करने के उपाय बताए जाएँ।

- अपनी कोताहियों और कमज़ोरियों से लड़ने और इनपर क़ाबू पाने और विभिन्न विषयों से सम्बन्धित कठिन समस्याओं से जूझने के मौक़े दिए जाएँ और ज़िन्दगी की कठिनाइयों और विपत्तियों का बहादुरी से मुक़ाबला करने की नसीहत की जाती रहे।
- ग़ुस्से की हालत में पानी पी लेने, खड़े हों तो बैठ जाने, बैठे हों तो लेट जाने, उत्तेजक जगह से हट जाने या किसी मेहनत-परिश्रम के काम पर लग जाने से ग़ुस्सा जल्द ठंडा हो जाता है। इन उपायों पर अमल किया जाए और कराया जाए।

ये हैं कुछ प्रवृत्तियाँ और संवेग (जज़्बात)। इनके अलावा कुछ महत्त्वपूर्ण नैसर्गिक इच्छाएँ और मूल प्रवृत्तियाँ हैं, जो शिक्षा-दीक्षा की दृष्टि से बहुत महत्त्व रखते हैं और जो बच्चे की आदतों, तौर-तरीक़ों, चरित्र और आचरण पर बहुत दूरगामी प्रभाव डालते हैं। उदाहरण के लिए अनुकरण, हमदर्दी, खेल इत्यादि।

अनुकरण (Imitation)

यह बहुत ही प्रभावकारी और स्वाभाविक इच्छा है। छोटे-बड़े सब अनुकरण (Imitation) करते हैं। चार-पाँच साल की उम्र तक यह इच्छा अपने चरम पर होती है। बच्चों को ज़्यादातर समय दूसरों की नक़ल (Imitation) करने में गुज़रता है। वे अपने आसपास जो कुछ देखते हैं, उसकी जाने-बुझे या अनजाने नक़ल करते हैं।

उठना-बैठना, चलना-फिरना, खाना-पीना, खेलना-कूदना, बोलना, बातचीत करना, व्यवहार-बरताव, शिष्टाचार, तौर-तरीक़ा, विभिन्न कलाओं में महारत, प्रवृत्तियों और संवेगों की अभिव्यक्ति के तरीक़े, यहाँ तक कि

अभिरुचि और रुझान, धार्मिक आस्थाएँ और नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्यों तक इसी के प्रभाव से सीखते हैं। बचपन की शुरुआत में बुद्धि और अनुभव और बुरे-भले में अन्तर करने का विवेक न होने के कारण बच्चे नुक़सानदेह-फ़ायदेमन्द और ग़लत-सही में अन्तर नहीं कर सकते। इसी लिए वे अचेतन रूप से तरह-तरह की ऐसी बातें सीख लेते हैं, जो उनकी आदतों और तौर-तरीक़ों को घिनौना और चरित्र और आचरण को दाग़दार बनाकर रख देती हैं। इसी लिए माहौल को पाक-साफ़ और निर्मल बनाने, बच्चों को बुरी संगति से बचाने, अच्छे लोगों की संगति में परवान चढ़ाने और उनके सामने अनुकरण के लायक़ नमूना पेश करने पर बड़ा ज़ोर दिया जाता है।

माँ-बाप और शिक्षकों को चाहिए कि वे बच्चों के सामने अच्छा नमूना और आदर्श पेश करें, ताकि बच्चे पसन्दीदा आदतों और तौर-तरीक़ों के मालिक बनें वरना अपनी कोताहियों और कमज़ोरियों को बच्चों में हस्तान्तरित करने के दोषी होंगे और इस तरह उनकी ख़राबियों का वबाल भी अपने सिर लेंगे।

अनुकरण और दूसरों की नक़ल करने को आम तौर पर हेय दृष्टि से देखा जाता है। हालाँकि हर आदमी इसके लिए मजबूर है और तरह-तरह की विशेषताएँ उसके अन्दर इसी की वजह से विकसित होती हैं। इस्लाम की विरासत हमें इसी के सहारे प्राप्त होती है। आदर्श नमूना और आदर्श चरित्र का अनुकरण करके ही एक आदमी ऊँचा स्थान प्राप्त कर सकता है। खोज या आविष्कार भी उसी समय सम्भव है, जब अनुकरण के द्वारा पिछले आविष्कारों और जानकारियों पर महारत प्राप्त कर लिया जाए। हाँ, अन्धानुकरण सही नहीं है। धीरे-धीरे बुद्धि को काम में लाकर लाभदायक, बुद्धिसंगत और औचित्यपूर्ण के चयन पर उभारना चाहिए।

अनुकरण के प्रशिक्षण के सन्दर्भ में निम्नलिखित बातें नज़रों के सामने रहें–

- घर और स्कूल/मदरसे का माहौल साफ़-सुथरा बनाने और दोनों जगह शिष्ट और अच्छे तौर-तरीक़ों को रिवाज देने की पूरी कोशिश की जाए, ताकि बच्चों को अनुकरण के लिए अच्छे नमूने और उत्तम आदर्श मिलें।
- छोटे बच्चों को शुरू ही से खेल-खेल में, मुहब्बत और प्यार से क्रमशः अच्छी आदतें, शिष्टचार और तौर-तरीक़े सिखाए जाएँ। उठने-बैठने, खाने-पीने, मिलने-जुलने, बातचीत करने, साफ़-सुथरे रहने, समय की पाबन्दी करने इत्यादि के बारे में शुरू ही से नज़र रखी जाए और ज़रूरत हो तो अमली नमूना देकर अमल कराया जाए।
- शिक्षक ऊँची और मीठी आवाज़, शुद्ध उच्चारण, सुलेख और आर्ट-क्राफ़्ट के अच्छे नमूने पेश करके बच्चों को उनके अनुकरण पर उभारता रहे। तोतले, हकले, अटक-अटक कर पढ़नेवाले बच्चों से कक्षा के सामने न पढ़वाया जाए, बल्कि उनपर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जाए।
- नक़ल या अनुकरण (Imitation) में प्रगति और तरक़्क़ी पर नज़र रखी जाए, ताकि अच्छे नतीजे ख़त्म न हों और उचित सीमा में हेर-फेर का मौक़ा दिया जाए। उदाहरण के लिए, आर्ट के किसी नमूने की नक़ल में रंग, साइज़ और क्रम में परिवर्तन का मौक़ा दिया जाए।
- अचेतन रूप में किया जानेवाला अनुकरण बहुत प्रभावकारी होता है। ख़ास तौर पर साथियों और शिक्षकों का– इसलिए बच्चों को बुरी संगति से बचाने और अच्छी संगति अपनाने के मौक़े दिए जाएँ। उन्हें ऐसे स्कूल/मदरसे या शिक्षकों के हवाले किया जाए, जो विभिन्न

दृष्टि से अच्छे हों, वरना बच्चे हाथ से जाते रहेंगे। सिगरेट पीना, सिनेमा देखना, बदचलनी इत्यादि जैसी निन्दनीय आदतें बुरी संगति के नतीजे में पैदा हो जाती हैं।

दोहराने की प्रवृत्ति

यह भी एक मूल प्रवृत्ति है। किसी काम को दोहराने और दोबारा करने में बच्चों को बड़ा मज़ा आता है। वे जो कुछ देखते या सुनते हैं, उसे अपनी ज़बान या अमल से बार-बार दोहराते हैं। कोई शब्द या वाक्य, कोई मिसरा (चरण) या गीत ज़बान पर चढ़ जाए। फिर क्या है, मतलब समझ में आए या न आए, उसे बार-बार अदा करेंगे। बुरी-भली जिस तरह की हरकतें भी नज़रों के सामने घटित हो गई हों, अपने खेलों में उनकी बार-बार नक़ल उतारेंगे। एक ही खेल बार-बार खेलेंगे, मगर क्या! मजाल जो उकता जाएँ।

प्रतिदिन और महीनों, बल्कि बरसों तक खेलते रहेंगे। कुछ बनाएँगे-मिटाएँगे; फिर बनाएँगे और मिटाएँगे—और यह सिलसिला निरन्तर चलता रहेगा। दादी अम्मा से एक ही कहानी कई बार सुनेंगे और कोई कहानी अगर उलटी-सीधी याद हो गई, तो सबको सुनाते फिरेंगे। किसी कहानी में अगर एक भी सुन्दर और आकर्षक वाक्य की थोड़े-थोड़े अन्तराल से पुरावृत्ति हो, तो फिर देखिए वह वाक्य आते ही बाछें खिल जाएँगी और अगर वह वाक्य हर बार कुछ बढ़ता और फैलता भी जा रहा हो तो फिर तो कुछ न पूछिए, दोहराव में अजूबेपन की चाशनी, मज़ा और ख़ुशी को दुगुना कर देती है।

दोहराव और पुनावृत्ति में बच्चों की ग़ैर-मामूली दिलचस्पी उन्हें नई बातें सीखने और उनपर महारत प्राप्त करने में बहुत ज़्यादा मददगार साबित होती है। जो बात वे बार-बार दोहराते हैं, वह ख़ूब अच्छी तरह मन में बैठ जाती और अच्छी तरह याद हो जाती है। जिस काम को वे

कई बार करते हैं, उसमें उन्हें अभ्यास और महारत प्राप्त हो जाती है। दोहराव और पुनरावृत्ति ही से बहुत-सी बातें आदतों और आचरणों में दाख़िल होकर दूसरी प्रकृति बन जाती हैं और फिर उनके करने में कोई कठिनाई नहीं होती।

बच्चे जो सीखते हैं दोहराने और पुरावृत्ति से ही सीखते हैं। विभिन्न विषयों में अभ्यास और महारत इसकी बदौलत प्राप्त होती है और चूँकि इसमें बच्चों को मज़ा भी आता है और वे बड़ों की तरह जल्द उकताते भी नहीं, इसी लिए स्कूल/मदरसे में दोहराने और पुरावृत्ति पर बहुत ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है। गणित में गिनतियाँ, पहाड़े और सूत्र मौखिक याद कराए जाते हैं और जो नियम भी बताया जाता है, उसका ख़ूब अभ्यास कराया जाता है, ताकि प्रश्न ठीक-ठीक और तेज़ रफ़्तारी से हल किए जा सकें। भाषाओं में जो कुछ पढ़ाया जाता है। उसकी बार-बार पुनरावृत्ति कराई जाती है, ताकि पढ़ने में रवानी आए।

शब्दों का उच्चारण, हिज्जे और वर्तनी और कविताओं को रवानी के साथ पढ़ना और ज़बानी याद करना बार-बार के अभ्यास ही से आता है। सुलेख, आर्ट-क्राफ़्ट और हस्तकला में शुद्धता और सफ़ाई, विभिन्न कला-कौशलों में महारत, भूगोल में स्थानों के नाम याद करना और मानचित्र बनाने का अभ्यास, इतिहास में महापुरुषों के नाम और घटनाओं की सनें (वर्ष) याद करना, क़िरअत और शुद्ध उच्चारण, क़ुरआन-पाठ (नाज़रा) में रवानी, ज़िक्र, दुआओं और सूरतों का याद करना—ये सब तभी सम्भव हैं, जब ख़ूब दोहराने और अभ्यास का मौक़ा मिले।

इस सन्दर्भ में निम्नलिखित बातें नज़रों के सामने रहें—

- छोटे बच्चे बेसमझे-बूझे भी बार-बार दोहराते हैं और उन्हें इसमें भी मज़ा आता है। लेकिन ज्यों-ज्यों उम्र बढ़ती जाती है, दोहराने और पुनरावृत्ति में मज़ा कम होता जाता है। बड़े बच्चे सिर्फ़ उन्हीं चीज़ों को दोहराने और याद करने में मज़ा लेते हैं, जिनका उद्देश्य, अर्थ

और उपयोगिता उनकी समझ में आ जाए। इसलिए याद कराने से पहले उद्देश्य और अर्थ ख़ूब अच्छी तरह समझा दिया जाए।

- दस-ग्यारह साल की उम्र तक तो अभ्यास करने और दोहराने और ज़बानी याद करने पर ज़्यादा ज़ोर दिया जाए, लेकिन ऊँची कक्षाओं में क्रमशः रटने का काम कम और सोच-विचार का काम ज़्यादा होना चाहिए।
- दोहराने और पुनरावृत्ति में अगर कुछ अजूबेपन और नयेपन की चाशनी मिला दी जाया करे, तो मज़ा दुगुना हो जाए। बहुत ज़्यादा एकरूपता से उकताहट और विषय से भागने की आशंका रहती है।
- नादानी में बच्चे बहुत-सी अप्रिय हरकतों और अश्लील बातों इत्यादि को दोहराने लगते हैं। इस तरह कुछ बुरी आदतों का शिकार हो जाते हैं। निवारण का समय पर ही उपाय होना चाहिए और माहौल को बुरी बातों से साफ़-सुथरा रखने की कोशिश करनी चाहिए।

खेल

बच्चे खेल के रसिया होते हैं। जी-जान से लग-लिपट कर खेलते हैं। खेल से ज़्यादा शायद दुनिया की कोई चीज़ उन्हें प्यारी नहीं। खेल में उनकी लगन देखिए। तन-बदन का भी होश नहीं रहता। तन-मन से पूरी तरह मगन नज़र आते हैं। भूख लगी हो, लगी रहे। कपड़े ख़राब हो रहे हों, होते रहें; थककर चूर हो गए हों, कोई परवाह नहीं; सर्दी हो, गरमी हो, कीचड़ हो, पानी हो, हुआ करे; उनका खेल जारी रहेगा। खेल के लिए समय या जगह की क़ैद नहीं। जब भी और जहाँ भी मौक़ा मिले, खेलने के लिए तैयार हैं। कक्षा से छूटते और बिस्तर से उठते ही खेल में लग जाएँगे। माँ-बाप की नाराज़गी, शिक्षकों की सख़्ती, साथियों की बेरुख़ी कोई चीज़ भी उन्हें खेल से दूर नहीं रख सकती। वे हर दुख झेलेंगे और बहरहाल खेलेंगे।

बच्चे शान्त और निठल्ले बैठ नहीं सकते। शान्त और निठल्ला बैठना बीमारी या बुड्ढूपन की निशानी है। भाग-दौड़, उछल-कूद, तोड़-फोड़, शोर-शराबा—ये सब तो बचपन के अनिवार्य काम हैं, तन्दुरुस्ती, ताक़त और बुद्धिमानी तो जीवन के लक्षण हैं। जो बच्चे इन गुणों से वंचित रहते हैं; वे बच्चे नहीं, बूढ़े हैं। ये सारी हरकतें तो उनके जन्मजात अधिकार हैं। इन अधिकारों से उन्हें वंचित नहीं किया जा सकता।

सच्ची ख़ुशी बच्चों को खेल ही में प्राप्त होती है। खेल का सामान और खेलने के लिए कुछ साथी मिल जाएँ, फिर क्या है? ऐसा महसूस होगा कि उनकी मुरादें पूरी हो गईं। जन्नत के ये फूल खिल उठेंगे, चेहरे पर मुस्कराहट और निखार खेलने लगेगी। उनको तो ख़ैर मज़ा आता ही है, हँसते-खेलते बच्चों को देखकर कौन मनुष्य बाग़-बाग़ नहीं हो जाता। खेल में बच्चों की ग़ैर-मामूली लगन और तन्मयता और खेल से उनका गहरा और दिली प्यार असल में इस बात का सुबूत है कि खेल एक प्रबल इच्छा और नैसर्गिक प्रवृत्ति है, जिसकी बहरहाल जायज़ हदों में पूर्ति और तृप्ति होनी चाहिए।

जो लोग बच्चों को खेल से वंचित रखते हैं, वे असल में प्रकृति से जंग और बच्चों पर अत्याचार करते हैं। प्रकृति ने यह ज़बरस्त प्रवृत्ति अकारण ही नहीं रखी है। बच्चों के मानसिक और शारीरिक, सामाजिक और नैतिक विकास के लिए खेल बहुत ज़रूरी है।

बच्चे क्यों खेलते हैं?

इस सम्बन्ध में बहुत-से विचार हैं। उदाहरण के लिए—

(1) खेल के द्वारा बच्चे अपनी अतिरिक्त ऊर्जा ख़र्च करते हैं। बच्चों में अपने क़द की दृष्टि से बहुत ज़्यादा ऊर्जा होती है। इस ऊर्जा को किसी गम्भीर काम में लगाने की उन्हें ज़रूरत नहीं पड़ती; क्योंकि जहाँ तक ज़िन्दगी की ज़रूरतों को पूरी करने का सम्बन्ध है, यह काम उनके अभिभावक अंजाम देते हैं। बच्चे तो हर हाल में मस्त

रहते हैं। कल की उन्हें चिन्ता नहीं होती। इसलिए वे अपनी अतिरिक्त ऊर्जा खेलों में ख़र्च करते हैं। अगर वे ऐसा न करें, तो जिस तरह भाप की अतिरिक्त मात्रा इंजन को नुक़सान पहुँचा सकती है, उसी तरह अतिरिक्त ऊर्जा बच्चों के शरीर को प्रभावित कर सकती है।

(2) खेलों के द्वारा बच्चे अपने को भविष्य की ज़िम्मेदारियों के लिए तैयार करते हैं। बच्चियाँ गुड़ियाँ खेलकर घर के काम-काज की जानकारी प्राप्त करती हैं और बच्चे नक़ल के खेलों के द्वारा विभिन्न तरह के कर्तव्यों को पूरा करने का तरीक़ा सीखते हैं।

(3) बच्चे खेल-खेल में तरक्क़ी के उन मरहलों को दोहराते हैं, जिनसे गुज़रते हुए मानव-जाति मौजूदा स्थान पर पहुँची है। बच्चों का दौड़ना-भागना, उछलना-कूदना, पीछा करना, पेड़ पर चढ़ना, ग़ार (गढ़े) में उतरना, शिकार करना, मछलियाँ फँसाना, घरौंदे बनाना इत्यादि, ये सारी हरकतें शुरुआती दौर के लोगों की याद ताज़ा करती हैं। इस तरह वे विभिन्न अनुभव और तरह-तरह की महारतें प्राप्त करते हैं।

(4) बच्चों की अपनी उलझनें और परेशानियाँ होती हैं। उनकी विभिन्न नैसर्गिक माँगों और मौलिक इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो पाती। उनकी भावनाएँ भी अक्सर आहत होती रहती हैं। इन दुखों और परेशानियों से छुटकारा पाने के लिए बच्चे खेलते और खेल-कूद कर अपनी तबीअत का बोझ हलका करते हैं।

(5) हर बच्चे में प्रतिस्पर्धा और होड़, प्रतियोगिता और बराबरी करने की भावनाएँ होती हैं। चूँकि खेल उनकी अभिव्यक्ति के बहुत मौक़े उपलब्ध करते हैं, इसलिए खेलों के द्वारा बच्चे अपनी उन भावनों की तृप्ति का उपाय करते हैं।

(6) बच्चों के खेल, उनके रचनात्मक क्रिया-कलापों का प्रदर्शन है। बच्चे अपने स्वभाव से मजबूर हैं। चैन से बैठ नहीं सकते। हर समय कुछ न कुछ करते रहना चाहते हैं। खेल उनकी इस इच्छा की पूर्ति का बेहतरीन माध्यम है।

(7) पलने-बढ़ने के विभिन्न मरहलों पर शरीर और मन तरह-तरह की हरकतों की माँग करते हैं। तरह-तरह के खेल उन माँगों को पूरा करते हैं। इसलिए बच्चे तरह-तरह के खेल खेलते हैं।

ये हैं बच्चे के खेल की विभिन्न व्याख्याएँ, जो विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने-अपने अवलोकन, प्रत्यक्षीकरण या अध्ययन से पेश की हैं। उनके विचारों से पूरी तरह सहमत होना ज़रूरी नहीं, लेकिन इस बात से बहरहाल मतभेद सम्भव नहीं कि बच्चों के समुचित विकास के लिए खेल अत्यन्त आवश्यक और उपयोगी हैं।

खेलों के प्रकार

बच्चे विभिन्न प्रकार के खेल खेलते हैं। एक बच्चा कब किस तरह के खेल-खिलौने में दिलचपस्पी लेगा, यह उसकी उम्र, लिंग, स्वभाव, वातावरण, मौसम और साधन-संसाधनों इत्यादि पर निर्भर है। छोटे बच्चे अकेले खेलना पसन्द करते हैं, तो उनसे बड़े टोलियाँ बनाकर।

बच्चों को नक़ल के खेलों में मज़ा आता है, तो नौजवानों को मुक़ाबले के खेलों में। लड़के गेंद-बल्ला खेलते हैं, तो लड़कियाँ गुड़ियों से जी बहलाती हैं। कमज़ोर घरेलू खेलों में दिलचस्पी लेते हैं, तो ताक़तवर मैदानी खेलों में। प्रतिभाशाली बच्चे ज़्यादा खेलते हैं। मिल-जुलकर खेलते या सोच-विचारवाले खेल पसन्द करते हैं, तो मन्दबुद्धि बच्चे खेलों से दूर रहते हैं। झगड़ा करते या कम उम्र के बच्चों के साथ खेलते हैं। शहरी बच्चों के खेल में विविधता होती है, तो देहाती बच्चों के खेल में सादगी और समानता होती है। गरमी-बरसात में घरेलू खेल खेले जाते हैं, तो

बारिश थमने पर कीचड़, पानी और तैराकी के। जाड़े में पिकनिक में मज़ा आता है, तो वसन्त ऋतु में दौड़-भाग और आँख-मिचौली में।

नीचे अलग-अलग उम्र के बच्चों के तरह-तरह के खेलों के बारे में संक्षिप्त जानकारियाँ दी जा रही हैं--

1. अपने शरीर से खेलना

बच्चों के प्रारम्भिक खेल उनके अपने शरीर से सम्बन्धित होते हैं। पैदाइश के कुछ दिन बाद ही से वे हाथ-पैर मारना और चीख़ना-चिल्लाना शुरू कर देते हैं। इन हरकतों से उनकी माँसपेशियों और स्नायुओं का विकास होता है। इसके बाद रेंगने, बैठने, खड़े होने और चलने की कोशिश करते हैं। इन कोशिशों के नतीजे में धीरे-धीरे वे अपने शरीर और उसके विभिन्न अंगों पर नियंत्रण प्राप्त करते हैं। नन्हे बच्चों को हाथ-पाँव मारने और अपने शरीर को सम्भालने का पूरा मौक़ा मिलना चाहिए। जो लोग नादानी या लाड़-प्यार के कारण बच्चों को गोद का आदी बना देते हैं, वे बहुत बड़ी ग़लती करते हैं। इससे बच्चों का विकास रुक जाता है और अंग कमज़ोर हो जाते हैं।

2. चीज़ों से खेलना

अपने शरीर पर किसी हद तक क़ाबू पा लेने के बाद बच्चे अपने आसपास की चीज़ों से खेलना और बेतुकी आवाज़ें निकालना शुरू कर देते हैं। जो भी हाथ लग जाए, उसे छूने, पकड़ने, अपनी तरफ़ खींचने, उठाने, मुँह में डालने, फेंकने, तोड़ने-फोड़ने और उसमें से आवाज़ें निकालने, सुराख़ों में उंगलियाँ डालने और नाख़ुन से खोदने-कुरेदने की कोशिश करते हैं। इस तरह वे विभिन्न चीज़ों की बनावट, रंग, स्वाद (मज़े), आकार, वज़न इत्यादि के बारे में अचेतन रूप से बहुत-सी जानकारियाँ प्राप्त करते हैं। इस मरहले में बच्चों को सुन्दर चटकीले रंग, बजने और हरकत करनेवाली लकड़ी, रबड़, प्लास्टिक के ऐसे खिलौने

और ख़ाली डब्बे इत्यादि मिलने चाहिएँ, जिनका रंग पक्का हो, ताकि मुँह में डालने या पानी में भिगोने से रंग न छूटे और जो आसानी से टूट न जाएँ और न जल्द मैले और ख़राब हों और ऐसी चीज़ें बच्चों की पहुँच से बाहर होनी चाहिएँ, जिनको हाथ लगाना या मुँह में डालना बच्चों के लिए हानिकारक हो या जिनके टूटने-फूटने और ख़राब हो जाने की आशंका हो। उदाहरण के लिए, शीशे, चीनी मिट्टी के बरतन, घड़ी, ऐनक, क़लम इत्यादि। इसी उम्र में कुछ बच्चों को कोयला, मिट्टी, राख इत्यादि खाने या पाख़ाना-पेशाब से खेलने की घिनौनी आदत पड़ जाती है। इसलिए काफ़ी देख-भाल होनी चाहिए।

हाँ, तोड़-फोड़ के इन खेलों से घबराना नहीं चाहिए और न बहुत ज़्यादा रोक-टोक और डाँट-फटकार करनी चाहिए; क्योंकि निर्माण की तरफ़ बच्चों का यही पहला क़दम है। इसी से वे धीरे-धीरे जोड़ने और बनाने की तरफ़ आकृष्ट होते हैं और घर-घरौंदे और मिट्टी के खिलौने इत्यादि बनाने की कोशिश करने लगते हैं। स्कूल/मदरसे में मिट्टी, काग़ज़ और दफ़्ती का काम करवाकर और शैक्षिक खेलों, उदाहरण के लिए लकड़ी और प्लास्टिक के ब्लॉक मैक्नोविस्ट इत्यादि की व्यवस्था करके खेल में बच्चों की रचनात्मक योग्यताओं को उभारा और सही रुख़ पर डाला जा सकता है।

3. मिल-जुलकर खेलना

चार-पाँच साल की उम्र तक के बच्चे आम तौर पर या तो अकेले खेलते हैं या दूसरे बच्चों के पास बैठकर अपने-अपने खिलौनों से अलग खेलना पसन्द करते हैं। बच्चे-बच्चियों के खेलों में भी कोई ख़ास फ़र्क़ नहीं होता। इसके बाद धीरे-धीरे मिल-जुलकर टोलियों में खेलने लगते हैं। लड़के लड़कों के साथ और लड़कियाँ लड़कियों के साथ। अब कई बच्चे जमा होकर एक साथ शोर-गुल मचाएँगे; निरर्थक आवाज़ें निकालेंगे,

बेकार बातें बोलेंगे; सुर में सुर मिलाकर अर्थहीन वाक्य दोहराएँगे। आवाज़ की नक़ल उतारेंगे; विभिन्न स्वांग भरेंगे; शादी-विवाह रचाएँगे; खेल-खेल में विभिन्न प्रकार के उत्सव मनाएँगे। दौड़ना-भागना, उछलना-कूदना, एक-दूसरे का पीछा करना, छिपना, ढूँढ़ना, जानवरों के पीछे भागना, उन्हें तरह-तरह से सताना और उनपर सवारी गाँठना, टोलियाँ बनाकर इधर-उधर फिरना, पेड़ों पर चढ़ना, गड्ढों और ग़ारों में उतरना इत्यादि क्रमशः उनके पसन्दीदा खेल होते हैं।

शुरू-शुरू में टोलियाँ छोटी होती हैं, ताकि हर एक को खेलने और अपने करतब दिखाने का पूरा मौक़ा मिल सके। मुक़ाबले और प्रतिस्पर्धा के खेलों से भी शुरू में बच्चे घबराते हैं; क्योंकि वे हारना नहीं चाहते। अगर मुक़ाबला पड़ ही जाए और संयोग से वे हार जाएँ, तो या तो वे रोने और झगड़ने लगेंगे या धान्धली, बेईमानी और झूठ से काम लेंगे। इस अवस्था में बच्चों को ख़ास तौर पर सम्भालने की ज़रूरत होती है। धीरे-धीरे उनमें खिलाड़ियों की स्प्रिट पैदा कराई जाए और हार-जीत की परवाह किए बिना ईमानदारी से खेलने की प्रेरणा दी जाए।

शुरुआत में ऐसे खेल खिलवाए जाएँ, जिनमें मिल-जुलकर खेलना हो और मुक़ाबले और प्रतिस्पर्धा की नौबत कम आए। उदाहरण के लिए, नक़ल के खेल जिसमें हर बच्चे का पार्ट अलग-अलग होता है। कोई डॉक्टर बनता है, कोई रोगी, कोई कम्पाउंडर बनता है, कोई सेवा-सुश्रूषा करनेवाला, कुछ बच्चे मेहमान बनते हैं, कुछ मेज़बान इत्यादि।

धीरे-धीरे बच्चे प्रतियोगी खेलों में दिलचस्पी लेने लगते हैं और पिट-पिटाकर नियम-क़ानून के पाबन्द और टोली के लीडर के आज्ञाकारी और फ़रमाँबरदार बन जाते हैं। शुरू में उन्हें कुर्सी- दौड़, चमचा-दौड़, जलेबी-दौड़, नारंगी-दौड़, चीता-चीतल, रूमाल झपट, छिपना-ढूँढ़ना, आँख पर पट्टी बाँधकर खेले जानेवाले विभिन्न खेल खिलवाए जाएँ। आठ-नौ साल से बारह-तेरह साल की उम्र तक विभिन्न प्रकार के दौड़, ऊँची-लम्बी

कूद, गेन्द-बल्ला, कबड्डी, रस्साकशी इत्यादि में भाग लेने के मौक़े उपलब्ध कराए जाएँ। कभी-कभी शैक्षिक पर्यटन या पिकनिक के लिए बाहर ले जाएँ।

कमज़ोर और मजबूर बच्चे के साथ मुहब्बत और हमदर्दी का बरताव और देख-भाल और लालन-पालन की भावना भी स्वाभाविक है। इस भावना को उभारने के लिए कोई पक्षी या जानवर जैसे मुर्ग़ियाँ, कबूतर, बकरी, ख़रगोश इत्यादि पालने, फूल-पौधे उगाने, छोटे भाई-बहनों या कमज़ोर साथी-संगियों की देख-भाल का काम उनके सुपुर्द किया जाए, तो बच्चे खेल-खेल में जानवरों को सताने, कमज़ोरों को दबाने और आपस में लड़ने-झगड़ने से बचने लगेंगे।

नौजवानी में दाख़िल होने के बाद बच्चों के खेल ज़्यादा व्यवस्थित होने लगते हैं। प्रतिस्पर्धा और मुक़ाबले की स्प्रिट भी बढ़ जाती है। शोर-शराबा कम और हरकत ज़्यादा होने लगती है। स्थायी टीमें और क्लब बनने लगते हैं और दूसरी टीमों और क्लबों को चैलेंज देने और उनसे टक्कर लेने की फ़िक्र होती है। उड़ान भी ऊँची हो जाती है और टोलियाँ बनाकर पर्यटन और मनोरंजन के लिए घर से बहुत दूर निकल जाने का शौक़ उभरता है।

मानसिक कुश्ती, पहेलियाँ बुझाने, हाथ की सफ़ाई और महारथी खेलों में दिलचस्पी होने लगती है। अब लड़कों को फ़ुटबॉल, वॉलीबॉल, रिंग बॉल, बैडमिंटन, पिंग-पांग, क्रिकेट, हॉकी, रस्साकशी, कबड्डी, विनव्वट, तैराकी, साइकिल-सवारी, पी. टी. के व्यायाम, जिस्मनॉस्टिक और मैचों, मुक़ाबलों इत्यादि में भाग लेने का मौक़ा मिलना चाहिए और लड़कियों को हंड-कुल्हिया, होम-पिकनिक, इंडोर गेम्स और हल्के व्यायामों का धीरे-धीरे परिश्रम और कला-कौशल के कामों में खेल की स्प्रिट पैदा करके लड़के-लड़कियों को इनका आदी बनाना चाहिए, ताकि तन्दुरुस्ती

भी ठीक रहे और उनका समय लाभदायक और उपयोगी कामों में ख़र्च हो।

खेल, काम और बेगार

इन तीनों के स्वरूप और इनमें अन्तर समझने के लिए निम्नलिखित उदाहरणों पर विचार करना लाभदायक होगा—

(1) एक बच्ची अपनी गुड़ियों के लिए कपड़े तैयार कर रही है। वह सीने-पिरोने में मगन है या उसने अपनी गुड़िया का ब्याह रचा रखा है और बारातियों के लिए हंड-कुल्हिया पका रही है।

(2) वही बच्ची स्कूल/मदरसे गई है। स्कूल/मदरसे में सीने-पिरोने या खाने-पकाने में महारत प्राप्त करने के लिए घंटे रखे गए हैं। सिलाई के घंटे में वह सीने-पिरोने में या खाने-पकाने के घंटे में वह खाने पकाने में लगी हुई है।

(3) वही बच्ची अपनी गुड़ियों से खेल रही थी। उसकी सहेली भी पास ही बैठी उसकी गुड़िया का साज़ो-सामान देख रही थी। इतने में माँ ने उसे उठाकर खाना पकाने या छोटे भाई का पाजामा सीने पर लगा दिया। अब वह खाना पकाने या सीने-पिरोने में व्यस्त हो गई है।

उपर्युक्त तीनों रूपों में व्यस्तताएँ एक ही तरह की हैं या सीना-पिरोना या खाना पकाना। लेकिन तीनों रूपों में व्यस्तता के समय इस बच्ची के दिलो-दिमाग़ की दशा एक समान नहीं होती, बल्कि अलग-अलग होती है।

मानसिक और हार्दिक स्थितियों में विभिन्नता के ही कारण वही काम पहली स्थिति में बच्ची के लिए खेल है, तो दूसरी स्थिति में काम और तीसरी सूरत में बेगार।

इससे ख़ूब अच्छी तरह अन्दाज़ा हो गया होगा कि खेल, काम या

बेगार की निर्भरता व्यस्तता के स्वरूप पर नहीं है, बल्कि दिलो-दिमाग़ की उस दशा पर है, जो किसी काम में व्यस्त रहने के समय हुआ करती है—

खेल : वह व्यस्तता है जिसमें अनैच्छिक ध्यान, स्वाभाविक रुचि और आज़ादी और ख़ुशी महसूस होती है।

काम : वह क्रिया-कलाप है, जिसमें ध्यान और दिलचस्पी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में होती है। सीधे तौर पर इस क्रिया-कलाप में स्वभाविक आकर्षण नहीं होता, आज़ादी भी सीमित हो जाती है। एक ख़ास अन्दाज़ ही से इसे अंजाम देना होता है और इसे पूरा करने में ख़ुशी और आनन्द का होना भी ज़रूरी नहीं।

बेगार : इसके विपरीत बेगार वह क्रिया-कलाप है, जो किसी आदमी की दिलचस्पी को नज़रअन्दाज़ और उसकी आज़ादी को छीनकर उसपर बाहर से थोप दिया जाता है और अपनी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ उसे चाहे-अनचाहे अंजाम देना पड़ता है।

खेल एक ऐसा क्रिया-कलाप है, जो ख़ुद एक उद्देश्य होता है, लेकिन काम स्वयं एक उद्देश्य नहीं होता, बल्कि किसी ऐसे सोचे-समझे उद्देश्य को प्राप्त करने का साधन होता है, जिसपर हर समय करनेवाले की नज़र जमी रहती है। बेगार में आदमी को किसी और के उद्देश्य की पूर्ति का साधन बनना पड़ता है या उद्देश्य उसकी नज़रों से ओझल होता है और दूसरों का काम समझकर मजबूरन अंजाम देना पड़ता है।

क्रिया-कलापों की यही विशेषताएँ कभी-कभी खेलों को भी काम, बल्कि बेगार बना देती हैं या काम को खेल में बदल देती हैं। उदाहरण के लिए, एक बच्चा स्कूल/मदरसे में होनेवाले तीसरे पहर के खेलों में अपने शौक़ से शामिल होता है। ऐसी दशा में खेल उसके लिए सचमुच खेल है। दूसरा इसलिए शामिल होता है कि खेलने से तन्दुरुस्ती ठीक रहती है या साथियों से मुलाक़ात हो जाती है। स्पष्ट है, यह खेल उसके लिए काम है। एक तीसरा बच्चा है, जिसकी दिलचस्पियाँ किसी और तरफ़ हैं,

लेकिन वह नियम के कारण पाबन्द है और सज़ा के डर से उन खेलों में भाग लेता है, तो यह खेल उसके लिए बेगार है। इसी तरह खेल के पर्यवेक्षक की सख़्ती, उसकी तरफ़ से लागू की गई असाधारण पाबन्दियाँ भी खेल को आम तौर पर काम या बेगार बना देती हैं।

इसके विपरीत कामों में अगर खेल की स्प्रिट पैदा कर दी जाए यानी बच्चों की दिलचस्पी, आज़ादी और ख़ुशी का यथासम्भव ध्यान रखा जाए, बाहरी दबाव और हदबन्दियाँ कम से क़म हों, तो वे काम को भी खेल ही समझेंगे; पूरे ध्यान, लगन और एकाग्रता से हिस्सा लेंगे और ज़ोर-ज़बरदस्ती से उनके व्यक्तित्व और कारकर्दगी (Performance) पर जो प्रभाव पड़ते हैं, उनसे भी वे सुरक्षित हो जाएँगे।

खेल-खेल में शिक्षा

छोटे बच्चे खेल के बहुत रसिया होते हैं। वे काम से घबराते हैं और बेगार तो उनके स्वतंत्रताप्रिय स्वभाव पर बहुत ही नागवार गुज़रती है। खेल में वे जी-जान से लगते और पूरी दिलचस्पी और लगन से हिस्सा लेते हैं। बाक़ी हर काम से वे जी चुराते हैं। खेल बच्चों का सबसे ज़्यादा रुचिकर क्रिया-कलाप ही नहीं, बल्कि ज़िन्दगी की पहचान है। तन्दुरुस्ती और मनोरंजन का साधन, विकास में सहयोगी, शिक्षा-दीक्षा का सबसे ज़्यादा प्रभावकारी साधन भी है। इसके विपरीत चाहे औपचारिक शिक्षा आम तौर पर उनके लिए बेगार और उनकी नाज़ुक तबीअत पर भारी बोझ होती है। लिखने-पढ़ने जैसे नीरस काम से उनका मन ऊब जाता है। इसी लिए बहुत ही मारे जी से और इच्छा के विरुद्ध वे इसमें शामिल होते हैं। इसी लिए छोटे बच्चों को खेल-खेल में शिक्षा देने और स्कूल/मदरसे के विभिन्न कामों में खेल की स्प्रिट पैदा करने पर बहुत बल दिया जाता है। लेकिन इसका यह हरगिज़ मतलब नहीं कि बच्चों को ज़िन्दगी भर के लिए खेल-तमाशे का आदी बना दिया जाए; बल्कि छोटे

बच्चों को खेल के ज़्यादा मौक़े दिए जाएँ। यथासम्भव खेलों को भी शिक्षा-दीक्षा का साधन बनाया जाए और कामों में खेल ही की स्प्रिट पैदा करके धीरे-धीरे कड़ी मेहनत, ध्यान और लगन से काम करने का आदी बनाया जाए। अभीष्ट तो शिक्षा-दीक्षा है, खेल तो इसे प्राप्त करने का सिर्फ़ साधन है।

खेल से लाभ

खेलों से बच्चों को सच्ची ख़ुशी प्राप्त होती है। उनका ग़म ग़लत होता है, उनकी उलझनें और परेशानियाँ दूर होती हैं। उनके चेहरे खिले रहते हैं, उनकी भावनाओं की तृप्ति होती है और कुल मिलाकर उनके व्यक्तित्व के हर पहलू को परवान चढ़ाने में बड़ी मदद मिलती है। खेलों से बच्चों को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं—

(1) **शारीरिक लाभ :** खेलों में शरीर को काफ़ी हरकत देनी पड़ती है और शारीरिक परिश्रम और मेहनत की ज़रूरत पड़ती है। इसलिए सांस के आने-जाने, रक्त-संसार, पाचन-व्यवस्था, अवशिष्ट पदार्थों के शरीर से बाहर निकलने में नियमितता बनी रहती है। स्यानुओं और माँसपेशियों पर नियंत्रण प्राप्त होता है। अंग-प्रत्यंग अपनी-अपनी जगह ठीक काम करते हैं। मेहनत के लिए शरीर में ऊर्जा और बीमारियों का सामना करने के लिए प्रतिरोधक क्षमता पैदा होती है। कुल मिलाकर तन्दुरुस्ती ठीक रहती है और पलने-बढ़ने और विकास में बड़ी मदद मिलती है।

(2) **मानसिक लाभ :** खेलों में बच्चों को विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों और तरह-तरह के साथियों का सामना होता है। उन सबसे निबटने के लिए उन्हें सोचने-समझने और समय पर ही फ़ैसला और क़दम उठाने की ज़रूरत होती है। माहौल और विभिन्न चीज़ों के बारे में तरह-तरह की जानकारियाँ प्राप्त होती हैं। चीज़ों को बनाने-

बिगाड़ने और तोड़ने-जोड़ने और नक़ल के खेल खेलने से कल्पना-शक्ति (Imagination) का विकास होता और आविष्कार और खोज-बीन की सलाहियत उभरती है। अपनी सलाहियतों का ठीक-ठीक अन्दाज़ा लगाने का मौक़ा मिलता है। ध्यान और लगन का प्रशिक्षण होता है। अनुभवों और अवलोकनों (मुशाहिदों) में वृद्धि होती है। वास्तविक दुनिया में बच्चों की अक्सर स्वाभाविक माँगों और नैसर्गिक इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो पाती, जिससे वे उलझनों और मानसिक उथल-पुथल में ग्रस्त हो जाते हैं। खेलों के द्वारा वे कल्पना की दुनिया में उनकी पूर्ति कर लेते हैं और इस तरह उलझनों से उन्हें मुक्ति मिलती और मानसिक शान्ति प्राप्त होती है।

(3) **सामाजिक लाभ :** सामूहिक खेलों के द्वारा बच्चे अपने साथियों के साथ सहयोग और सहानुभूति, नियम-क़ायदों की पाबन्दी, मुक़बला और प्रतिस्पर्धा में सन्तुलन, आज्ञापालन और नेतृत्व, हक़ मारे जाने और धान्धलियों का सामना और अपनी बारी का इन्तिज़ार करने का प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। साथियों का सम्मान करना, क़ानूनहीनता की हद तक बढ़ी हुई आज़ादी को दूसरों के लिए सीमित करना और अपनी इच्छाओं और व्यक्तिगत दिलचस्पियों को सामूहिक हित पर न्योछावर करना भी वे संगठित खेलों के द्वारा सीखते हैं।

(4) **नैतिक लाभ :** खेलों के द्वारा बच्चों में विभिन्न प्रकार के नैतिक गुणों का भी विकास होता है। उदहारण के लिए, दृढ़ता और बहादुरी, इन्द्रियों पर नियंत्रण, आत्मविश्वास, वफ़ादारी और आज्ञापालन इत्यादि।

तात्पर्य यह कि खेलों के द्वारा बच्चों के सर्वांगीण और समुचित विकास में बड़ी मदद मिलती है। इनकी वजह से पूर्ण व्यक्तित्व का

विकास होता है। लेकिन वाज़ेह रहे, अगर इन विशेषताओं के बजाय खेलों ही को लक्ष्य बना लिया जाएगा, तो उनका प्रदर्शन सिर्फ़ खेल के मैदानों ही में होगा — ज़रूरी नहीं कि दैनिक जीवन के दूसरे क्षेत्रों में भी इन गुणों और विशेषताओं का प्रदर्शन हो। इसलिए ज़रूरी है कि खेल को सिर्फ़ साधन समझा जाए और विभिन्न कामों में खेल की स्प्रिट पैदा करके धीरे-धीरे इन गुणों को विकसित करने की चिन्ता और कोशिश की जाए।

ये हैं बच्चों की कुछ महत्त्वपूर्ण मूल प्रवृत्तियाँ और सहज क्रियाएँ। बच्चों के बहुमुखी विकास, सन्तुलित व्यक्तित्व और चरित्र के निर्माण के लिए इनको सही रुख़ पर डालने की पूरी कोशिश होनी चाहिए। इनको कुचलने, दबाने या ग़लत रुख़ पर डालने से बच्चों का व्यक्तित्व कुंठित हो जाता है और उनके अन्दर तरह-तरह की ख़राबियाँ जड़ पकड़ती हैं। बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में इनका पूरा ध्यान रखना चाहिए।

☆☆☆

अध्याय-12

बच्चों का व्यक्तित्व-निर्माण

'तरबियत' का शाब्दिक अर्थ है—पालना-पोसना; लेकिन पारिभाषिक शब्दों में चरित्र और व्यक्तित्व को सँवारना 'तरबियत' (प्रशिक्षण, शिक्षा-दीक्षा या व्यक्तित्व-निर्माण) कहलाता है। शिक्षा-दीक्षा का लक्ष्य असल में बच्चों को क्रमशः उन विशेषताओं और गुणोंवाला बनाने में मदद देना है, जो लोक-परलोक— दोनों जहान — में उनकी भलाई और सफलता के लिए ज़रूरी हैं। स्पष्ट है यह काम अत्यन्त व्यापक, परिश्रम-साध्य और संयम की माँग करता है। इसके लिए क्रमशः —

(1) बच्चों की विचार-शैली, जीवन-दृष्टि, परख और चुनाव का स्तर ऐसा बनाना होगा, जो उनके अस्तित्व के उद्देश्य से मेल खाता और समानता रखता हो। विभिन्न मामलों में सोचने का ढंग, जीवन के बारे में उनका विचार और बुराई-भलाई को परखने का मानदण्ड वही बनाना होगा, जो अल्लाह के नेक और अच्छे बन्दों का होना चाहिए।

(2) उनकी कल्पनाएँ ऊँची, विचार स्पष्ट, संकल्पनाएँ सुगठित, तर्क सुदृढ़, आस्थाएँ शुद्ध, यक़ीन पक्का और इरादे मज़बूत बनाने होंगे; क्योंकि ये ही सुदृढ़ व्यक्तित्व और चरित्र के मूल आधार हैं।

(3) उनकी मूल प्रवृत्तियों, इच्छाओं और रुझानों में अनुशासन और नियमबद्धता पैदा करना होगा।

(4) उनकी कोताहियों और कमज़ोरियों का उचित ढंग से सुधार करना होगा और उनपर क़ाबू पाने के लिए उनके अन्दर आत्मविश्वास और पश्चात्ताप की भावना का विकास करना होगा।

(5) बहुत ही संयम और दृढ़ता से अच्छी आदतें डलवानी और बुरी आदतें छुड़वानी होंगी।

(6) मुहब्बत और हमदर्दी से विभिन्न अवसरों के शिष्टाचार और तौर-तरीक़े सिखाने होंगे।

(7) उनकी योग्यता के मुताबिक़ क्रिया-कलापों, गतिविधियों और उनकी नैगर्सिग योग्यताओं को उजागर करने के मौक़े उपलब्ध करने होंगे, ताकि समुचित व्यावहारिक प्रशिक्षण हो।

मूल प्रवृत्तियों और संवेगों (जज़्बों) के शिक्षण-प्रशिक्षण के बारे में कुछ बातों की चर्चा पीछे गुज़र चुकी हैं। नीचे नैसर्गिक इच्छाओं और उनके प्रशिक्षण के बारे में कुछ औरे ज़्यादा जानकारियाँ पेश की जा रही हैं—

मूल इच्छाएँ, उनका परिष्कार और प्रशिक्षण

हर व्यक्ति की यह स्वाभाविक इच्छा होती है कि—

वह आराम और सुख-चैन से रहे और उसे अच्छा खाने और अच्छा पहनने को मिले।

उसका जान-माल और मान-सम्मान सुरक्षित रहे।

सब उसको प्यार करें। उसे अच्छी नज़रों से देखें और उसके कामों को सराहें।

वह विपरीत लिंग को अपनी तरफ़ आकर्षित करे। शादी-ब्याह रचाए और बाल-बच्चोंवाला हो (नौजवानी के बाद प्रौढ़ावस्था के क़रीब)।

बाल-बच्चों, कमज़ोरों और असहायों की देख-भाल करे (यह इच्छा अपेक्षाकृत कम होती है)।

दूसरों पर उसे श्रेष्ठता और प्रधानता प्राप्त हो। छोटे और कमज़ोर उसका हुक्म मानें और उसका आदर-सम्मान करें।

प्रभावी और प्रतिष्ठित लोगों का मान-सम्मान और विभिन्न मामलों में

उनका अनुकरण करे।

- सजातीय व्यक्तियों की दोस्ती, संगति और हमदर्दी उसे प्राप्त हो।
- कुछ चीज़ों का वह मालिक हो, जो बिना किसी दूसरे की साझीदारी के उसके नियंत्रण और अधिकार में रहें।
- अपने को किसी के हवाले कर दे। उसकी प्रसन्नता और ख़ुशी चाहे और मुसीबत में उसका सहारा ले।

चूँकि आदमियों में ये इच्छाएँ उनकी नैसर्गिक इच्छाओं या नैसर्गिक प्रवृत्तियों के तहत उभरती हैं और होती बड़ी ज़ोरदार हैं और उनकी पूर्त्ति पर एक विशेष प्रकार का आनन्द और मनोदशा की अनुभूति होती है। इसलिए हर आदमी उनके बारे में ग़ैर-मामूली सरगर्मी दिखाता है। उनकी पूर्त्ति के लिए काफ़ी दौड़-धूप और जी-तोड़ कोशिशें करता है। अगर उसकी ये मौलिक इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं, तो वह प्रसन्न और प्रफुल्लित रहता है। उसे मानसिक शान्ति और हार्दिक सन्तोष प्राप्त होता है और सन्तुलित व्यक्तित्व का विकास होता है। लेकिन अगर इनकी पूर्ति में रुकावट पैदा होती है, तो वह चिन्तित, शोकमग्न, उदास और खोया-खोया सा रहता है और हर समय की कुढ़न से उसका स्वास्थ्य और व्यक्तित्व प्रभावित हो जाता है।

इन इच्छाओं की पूर्ति के विभिन्न तरीक़े होते हैं—कुछ पसन्दीदा, रुचिकर और जायज़; कुछ नापसन्दीदा, अरुचिकर और नाजायज़। हर आदमी स्वभावतः इच्छाओं की पूर्ति के पसन्दीदा तरीक़े को प्राथमिकता देता है और नापसन्दीदा से हर एक की आत्मा नफ़रत करती है। लेकिन जब जायज़ तरीक़े से पूर्ति असम्भव नज़र आती है, तो वह नाजायज़ या नापसन्दीदा तरीक़ों को अपनाने की सोचने लगता है। ऐसी स्थिति में वह अजीब मानसिक उलझन और दुविधा का शिकार हो जाता है। इच्छा एक तरफ़ घसीटती है और आत्मा दूसरी दिशा में ले जाना चाहती है। इस तरह की खींचातानी से हर आदमी को प्रतिदिन अनेक बार जूझना पड़ता

है। कश-मकश के इन मौक़ों पर प्रशिक्षण, अनुभव, बुद्धि, इच्छा-शक्ति, आस्थाएँ और उद्देश्य आड़े आते हैं। ये चीज़ें जिस दरजे में आदमी को प्राप्त होती हैं, उसी हद तक वह मुक़ाबला और प्रतिरोध करता है। अगर पछाड़ लेता है, तो दामन बचा ले जाता है और प्रशंसा का पात्र होता है। अगर मात खा जाता है, तो दामन भी दाग़दार होता है और बुराई के जंजाल में फँसकर मुँह काला कर लेता है।

छोटे बच्चों की यह इच्छा अधिक तीव्र होती है। वे उनके माँगों की तत्काल पूर्ति चाहते हैं। चूँकि वे नासमझ होते हैं, बुरे-भले का विवेक उन्हें नहीं होता। साथ ही, अनुभव, बुद्धि और संकल्प-शक्ति (Will-power) की भी कमी होती है। इसलिए उनके मात खा जाने और ग़लत रुख़ अपना लेने की हर समय सम्भावनाएँ रहती हैं। एक बच्चा अपनी किसी इच्छा की पूर्ति का जायज़ रास्ता नहीं पाता, तो नापसन्दीदा तरीक़ा अपना लेता है। इस तरह उसे जो मज़ा और ख़ुशी मिलती है, वह ऐसा ही करने पर उसे बार-बार उकसाती है। कई बार करने से इस बुरी हरकत का आदी हो जाता है। आदतें पक्की होकर दूसरा स्वभाव बन जाती हैं और फिर बड़ी मुश्किल से छूटती हैं; बल्कि आम तौर पर ज़िन्दगी भर चिमटी रहती हैं।

इच्छाओं का परिष्कार और प्रशिक्षण

- ये इच्छाएँ नैसर्गिक हैं। हर एक में पाई जाती हैं। पूर्ति के लिए बड़ा ज़ोर लगाती हैं। जायज़ तरीक़े से पूरी न हों, तो नाजायज़ तरीक़े अपना लेने की आशंका बराबर बनी रहती है। पूर्ति नहीं होने की स्थिति में मानसिक उलझन का कारण होती हैं और व्यक्तित्व पर बहुत ही बुरा असर डालती हैं। इसलिए पूर्ण व्यक्तित्व के विकास के लिए और नाजायज़ या नापसन्दीदा व्यवहार और आचरण से बचाने के लिए जायज़ हदों में यथासम्भव इनकी पूर्ति की व्यवस्था

करनी चाहिए।

- अगर किसी वजह से पूर्ति सम्भव या पसन्द की न हो, उदाहरण के लिए बच्चे का किसी ऐसी चीज़ की ज़िद करना जो बहुत क़ीमती हो या उपलब्ध ही न हो सकती हो या उस उम्र में उपलब्ध करना उचित ही न हो, तो बहुत ही हमदर्दी और प्यार से वास्तविक विवशता बता दी जाए और अगर किसी दरजे में कोई विकल्प उपलब्ध हो सके, तो दिला दी जाए। उम्मीद है, बच्चा सन्तुष्ट हो जाएगा। सख़्ती न की जाए वरना नज़र बचाकर नाजायज़ और नापसन्दीदा तरीक़ा अपनाने की आशंका है और वह आपसे नफ़रत भी करने लगेगा।
- यह बात बच्चों को शुरू ही से समझाई जाए कि दुनिया में किसी की भी सारी इच्छाएँ पूरी हो नहीं सकतीं और न हर इच्छा की पूर्ति की हर समय सम्भावना होती है। जन्नत ही में ऐसा हो सकेगा। दुनिया में तो इच्छाओं के रास्ते में तरह-तरह की हदबन्दियाँ हैं। इन सब का लिहाज़ खुद हमारे अपने हित में बहुत ज़रूरी है। अगर इच्छाओं पर नियंत्रण न हो, तो आदमी को बड़ी तकलीफ़ होती है और वह गिरकर जानवर के दरजे तक पहुँच जाता है, बल्कि उनसे भी बदतर हो जाता है। इसलिए इच्छाओं के नियंत्रण का बड़ा महत्त्व है। फ़र्ज़ और नफ़्ल इबादतें ख़ास तौर पर नमाज़-रोज़े इसका बेहतरीन साधन हैं, जो बच्चे इस उम्र को पहुँच जाएँ कि पाबन्दी कर सकते हों, उनको आमादा किया जाए कि हर रोज़ वे अपनी किसी एक ऐसी जायज़ इच्छा को भी जिसकी पूर्ति आसान हो थोड़ी देर के लिए रोक दिया करें। उदाहरण के लिए, प्यास लगी है, पढ़ाई छोड़कर पानी पीने नहीं जाएँगे, बल्कि घंटा बजने पर पिएँगे। मध्यावकाश (वक़्फ़े) में जेब ख़र्च के लिए मिले पैसे से मिठाई लेने को जी चाहता है, इसके बजाय सन्तरा लेंगे आदि। बच्चों की उम्र और क्षमता के मुताबिक़ शुरू ही से इच्छाओं पर क्रमशः नियंत्रण पाने का अभ्यास कराया

जाए। इस तरह वे धीरे-धीरे नियंत्रण करना सीख जाएँगे और व्यक्तित्व पर बुरे प्रभाव भी नहीं पड़ेंगे। मुक़ाबले और प्रतिस्पर्धा की स्प्रिट पैदा करके भी यह काम कुछ स्थितियों में खेल के तौर पर भी कराए जा सकते हैं।

- बच्चों की नैसर्गिक इच्छाओं की पूर्ति में यकायक बहुत ज़्यादा रुकावट न डाली जाए, बल्कि धीरे-धीरे उनपर क़ाबू पाने का प्रशिक्षण दिया जाए। उदाहरण के लिए, आप बाज़ार जाते हैं। बच्चा साथ होता है। फल,. मिठाई आँख के सामने होती है। वह कुछ लेना चाहता है। आप अपनी हैसियत के मुताबिक़ उसके लिए कुछ ख़रीद देते हैं। उसका जी चाहता है कि चीज़ हाथ में आते ही मुँह में पहुँच जाए। सड़कों पर खड़े-खड़े खाना आपको पसन्द नहीं। आप बच्चे को समझा दीजिए कि ऐसा करना ठीक नहीं। थोड़ी देर धीरज और संयम से काम ले और कहीं इत्मीनान से बैठकर खाए। शुरू में ज़्यादा देर तक आज़माइश में न डालिए; क्योंकि उसका दिल बराबर उस चीज़ में लगा रहेगा और वह ज़्यादा देर तक सब्र न कर सकेगा। इसलिए जल्द ही उसे किसी इत्मीनान की जगह पहुँचा दीजिए, ताकि वह अपनी इच्छा की पूर्ति कर ले और बड़ा हो तो इतनी देर सब्र कराइए कि घर पहुँचकर इत्मीनान से खाए। फिर धीरे-धीरे बहन-भाइयों को शामिल करने और मिल-बाँटकर खाने पर तैयार कीजिए और ख़रीदते समय बता दीजिए कि उसमें सबका हिस्सा है। फिर प्रतिदिन के बजाय बीच में एक-दिन छोड़कर चीज़ें दिलवाइए और उम्र के साथ ये अन्तराल बढ़ाते जाइए। इस तरह धीरे-धीरे बच्चे इच्छाओं पर क़ाबू करना सीख लेंगे।
- मन या इन्द्रियों के बहरहाल अपने हक़ होते हैं। जायज़ हदों में इनकी अदायगी ज़रूरी है। मन या इन्द्रियों पर नियंत्रण करने का हरगिज़ यह मतलब नहीं है कि संन्यास ग्रहण कर लिया जाए, बल्कि

मन को इच्छाओं का ग़ुलाम बनाने और इच्छाओं को ख़ुदा का दरजा देने की मनाही है। कोशिश यह करना है कि इच्छाएँ हमेशा मन के नियंत्रण में रहें, ताकि उनकी पूर्ति जायज़ और उचित तरीक़े से हुआ करे। इच्छाओं को बिलकुल कुचल देने का भी प्रकृति गम्भीर प्रतिशोध लेती है।

- भूख मिटाने, जान बचाने, श्रेष्ठता जताने या बड़ा बनने और वासनात्मक इच्छाएँ और धन-दौलत की इच्छाएँ बड़ी प्रबल होती हैं। इनको पूरा करने के लिए आदमी न जाने क्या-क्या कर गुज़रता है। इनपर नियंत्रण न हो, तो राह से भटकने की अधिक आशंकाएँ और सम्भावनाएँ रहती हैं। विभिन्न नैतिक दोष इन्हीं के बारे में बहकने से जड़ पकड़ते हैं। झूठ, चोरी, परोक्ष-निन्दा, लोभ, ईर्ष्या, स्वार्थपरता, छल-कपट, घूसख़ोरी, घोटाला, सूद, सट्टा, चोरबाज़ारी और जमाख़ोरी, ख़ुशामद, स्वाभिमान का पतन, दूसरों के सामने झुकना, फ़ुज़ूलख़र्ची और अत्याचार-अन्याय, भोग-विलास के विभिन्न रूप इत्यादि के पीछे यही इच्छाएँ काम करती हैं। इसके विपरीत यही इच्छाएँ फ़ायदेमन्द कामों और बड़े कारनामों के लिए आदमी से जी-तोड़ कोशिशें कराती हैं।

  दुनिया में जितने यादगार कारनामे किए जाते हैं, उनके पीछे भी आम तौर पर यही इच्छाएँ सक्रिय रहती हैं। इसलिए इनके प्रशिक्षण पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए और इन्हें कुचलने के बजाय इनपर क़ाबू पाने और इनको सही रुख़ पर लगाने की कोशिश करनी चाहिए। उदाहरण के लिए—

(1) अपनी हैसियत भर खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, खेलने-कूदने में बच्चों की इच्छाओं का ध्यान रखा जाए और मजबूरियों की स्थिति में हमदर्दी से समझा दिया जाए। उनकी सामर्थ्य से अधिक उन्हें आज़माइश में न डाला जाए और न जायज़ इच्छाओं पर बहुत ज़्यादा

पाबन्दियाँ लगाई जाएँ।

(2) मौत का डर बच्चों में बड़ों के अनुकरण से पैदा होता है। इस सिलसिले में ख़ुद भी ईमान मज़बूत रखा जाए और बच्चों को भी ख़ूब अच्छी तरह दिल व दिमाग़ में बिठा दिया जाए कि मौत और ज़िन्दगी और रोज़ी-रोज़गार की व्यवस्था अल्लाह ने पूरी तरह अपने हाथ में रखी है। उसे समझाने के लिए कहानियों और घटनाओं से मदद ली जाए और अपनी कथनी और करनी से प्रमाण दिया जाए।

(3) शर्म, लज्जा और पछतावा की नैसर्गिक भावनाओं को मरने न दिया जाए, बल्कि उन्हें ज़्यादा से ज़्यादा जगाए रखा जाए। ये ज़बरदस्त हथियार हैं, जो परिस्थितियों का बहादुरी से मुक़ाबला करने और आज़माइशों में पूरा उतरने में सहायक और मददगार साबित होते हैं। ज़्यादा डाँट-फटकार, मार-पीट और दूसरों के सामने शिकायत या निन्दा करने से ये भावनाएँ मर जाती हैं।

(4) घर के एक हिस्से में थोड़ी-सी जगह और एक सन्दूक़ या अलमारी इत्यादि बच्चे के लिए ख़ास कर दिया जाए, जहाँ वह अपनी चीज़ें एक क्रम और सुन्दर ढंग से रख सके। समय-समय पर जो पैसे मिलें, उन्हें थोड़ा-थोडा ख़र्च करने, उसमें से कुछ बचाकर उपयोगी चीज़ ख़रीदने या किसी को कुछ उपहार इत्यादि देने पर ख़र्च करने की प्रेरणा दी जाए। कभी-कभी बच्चों के हाथों से ज़रूरतमन्दों की मदद और जनसेवा के कुछ काम कराए जाएँ।

(5) कुछ और बड़े हों, तो छोटे बहन-भाइयों या घरेलू जानवरों की देखभाल का कुछ काम उनके सुपुर्द किया जाए। नौजवानी में इनके अलावा हलके-फुलके उपयोगी और दिलचस्प कामों में व्यस्त रखने की व्यवस्था की जाए।

बुरी संगति, सिनेमा देखने और अश्लील साहित्य को पढ़ने से रोका जाए। संगति के लिए अच्छे दोस्त और पढ़ने के लिए सुधारपरक

और सामाजिक उपन्यास, नबी (सल्ल॰) की जीवनी, नबियों (अलैहि॰) और नेक लोगों के जीवन-चरित, नेक बुज़ुर्गों और महापुरुषों की जीवनियों और कारमानों पर आधारित किताबें विकल्प के रूप में उपलब्ध कराई जाएँ। सुन्दर चीज़ें बनाने, आर्ट-क्राफ़्ट, सीने-पिरोने या दूसरी हस्तकलाओं में महारत पैदा करने का प्रयास किया जाए।

☆☆☆

अध्याय-13

माँ-बाप और प्रशिक्षण

"अपने आपको और अपने घरवालों को (जहन्नम की) आग से बचाओ।" (क़ुरआन, सूरा-66 तहरीम, आयत-6)

"याद रखो! तुम सब ज़िम्मेदार हो और सबसे उसकी रैयत (अधीनस्थ) के बारे में पूछगछ होगी।" (हदीस : बुख़ारी)

बच्चों के बनाव-बिगाड़ पर सबसे ज़्यादा प्रभावी माँ-बाप ही होते हैं; क्योंकि बच्चों की शख़्सियत में वही रंग व रोग़न भरते हैं। शक्ल और सूरत की तरह उनके अख़लाक़ और आदतें, ख़यालों और अक़ीदों, जज़्बों और रुझानों तक पर माँ-बाप ही की छाप पड़ती है।

बच्चे जो कुछ माँ-बाप, ख़ास कर माँ की गोद में सीख लेते हैं, सारी ज़िन्दगी उसकी गहरी छाप बरक़रार रहती है। इसी लिए प्रशिक्षण की असल ज़िम्मेदारी उन्हीं पर डाली गई है और इस बारे में सीधे-सीधे सबसे ज़्यादा उन्हीं से पूछगछ भी होगी।

ज़िम्मेदारियाँ

माँ-बाप को चाहिए कि—

- पैदा होने के बाद बच्चे को साफ़-सुथरा करके कानों में अज़ान दें और अच्छा-सा नाम रखें।
- सातवें दिन अक़ीक़ा करें (शर्त यह है कि इसकी सामर्थ्य हो)।
- प्यार-मुहब्बत और उदारता से उसे पालें-पोसें।
- हलाल और पाक-साफ़ रोज़ी से लालन-पालन करें।
- खेलने और ख़ुश रहने का काफ़ी मौक़ा दें।

प्यार-मुहब्बत से आदाब और सलीक़ा सिखाएँ।

पाँच-छह साल का हो तो उसे रहमदिल और अच्छे चरित्र और मधुर स्वाभाववाले शिक्षक के हवाले करें।

खाने, खेलने, नहाने, धोने, काम और आराम करने का ऐसा प्रोग्राम बनाएँ, जो तन्दुरुस्ती और पलने-बढ़ने में मददगार हो। धीरे-धीरे इस प्रोग्राम का आदी और पाबन्द बनाएँ।

सात साल का हो तो नमाज़ पर उभारें।

दसवें साल उसका बिस्तर अलग कर दें।

बारहवें साल से उसकी हरकतों और चाल-चलन पर पूरी नज़र रखें, ग़लतियों और कोताहियों के सही कारणों का पता लगाकर दूर करने की फ़िक्र करें।

आम तौर पर अपना रवैया नरम और प्रेमभरा रखें। मुमकिन हद तक माफ़ी और दरगुज़र से काम लें।

बहुत ज़रूरी हो तो सज़ा से भी परहेज़ न करें, लेकिन जल्द ही अच्छे रवैये से उसकी कमी पूरी कर दें।

बड़ा हो तो बहादुरी, पराक्रम और प्रतियोगिता में भाग लेने और उसमें कामयाब होने के हुनर सिखाएँ।

लड़के को किसी जायज़, इज़्ज़तवाले पेशे और लड़की को घर के काम-काज की ट्रेनिंग दें।

बालिग़ (वयस्क) होने पर शादी में जल्दी करें।

प्रशिक्षण

बच्चों की प्रशिक्षण के बारे में माँ-बाप को निम्नलिखित हिदायतों पर अमल करना चाहिए—

घरेलू माहौल को पाक-साफ़ बनाइए। मुमकिन हद तक उसे तनाव,

असन्तोष और कश-मकश से पाक रखिए।

मुमकिन हद तक बच्चों को लाड़-प्यार कीजिए और उनकी जायज़ ख़्वाहिशों को न ठुकराइए। उन्हें गुड्डा या गुड़िया बनाकर न रखिए और न लाड़-प्यार से उन्हें ख़राब होने दीजिए।

आत्मविश्वास पैदा करने के लिए खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने और अपनी चीज़ों को ठीक ढंग से रखने और उसकी हिफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी हर मुमकिन हद तक बच्चों को ख़ुद उठाने दीजिए।

बच्चों को प्यार भरे शब्दों से ज़रूर पुकारिए, लेकिन अल्लाह के वास्ते नाम न बिगाड़िए और न किसी को बिगाड़ने दीजिए।

हमेशा अच्छे शब्दों से पुकारिए और सलाम में भी पहल की कोशिश कीजिए।

आपस में तू-तू, मैं-मैं न कीजिए और न उनके सामने एक-दूसरे की शिकायत कीजिए।

नादान समझकर उनके सामने शौहर-बीवी के ख़ास ताल्लुक़ात का मुज़ाहरा हरगिज़ न होने दीजिए। पहले तो यह बेशर्मी की बात है। दूसरे इससे आपका दबदबा, इज्ज़त और एहतिराम ख़त्म हो जाएगा और बच्चों के अन्दर समय से पहले यौन-इच्छाएँ पैदा हो सकती हैं।

अपने रवैये से बच्चों को महसूस करा दीजिए कि आप दोनों ख़ुद एक-दूसरे का और सभी बच्चों का बहुत ज़्यादा लिहाज़ और ख़याल रखते, ख़ुलूस और मुहब्बत से पेश आते और आराम और सुख-चैन की फ़िक्र करते हैं।

बच्चों में आपसी दुश्मनी न पैदा होने दीजिए। सबको एक नज़र से देखिए। हर एक के साथ एक समान प्यार भरा बरताव कीजिए। खाने, कपड़े और ज़रूरतों की दूसरी चीज़ें मुहैया कराने में किसी के साथ ख़ास रवैया न अपनाइए। एक की कामयाबी को दूसरे की

शर्मिन्दगी के लिए हरगिज़ न इस्तेमाल कीजिए।

बच्चों को आपस में मेल-मुहब्बत से रहने, मिल-जुलकर खेलने, मिल-बाँटकर खाने और एक-दूसरे का ख़याल रखने की हिदायत भी कीजिए और इन चीज़ों के लिए बराबर मौक़े मुहैया करते रहिए। कभी आपस में कटुता पैदा हो जाए, तो जल्द सुलह-सफ़ाई करा दीजिए।

घर की चीज़ों को अच्छे तरीक़े से इस्तेमाल करने, चीज़ें इजाज़त से उठाने और इस्तेमाल के बाद उनको निर्धारित जगहों पर रख देने, इजाज़त लेकर कहीं आने-जाने और विभिन्न काम निर्धारित समय पर अंजाम देने इत्यादि के बारे में कुछ आसान और संक्षिप्त नियम-क़ायदे बनाकर बच्चों को ख़ूब अच्छी तरह समझा दिया कीजिए और उनकी ख़ुद भी पाबन्दी कीजिए।

आप दोनों एक-दूसरे के अदब, एहतिराम, फ़रमाँबरदारी और ख़िदमत के लिए बच्चों को बराबर ध्यान दिलाते रहिए। बाप के लिए माँ और माँ के लिए बाप बराबर उभारता रहे।

खेल-कूद और बचकाना हरकतों पर बहुत ज़्यादा रोक-टोक न कीजिए और न डाँट-डपट और मार-पीट से ज़्यादा काम लीजिए।

बच्चों से न तो कभी झूठी बात कहिए और न झूठा वादा कीजिए।

कोताहियों पर हर मुमकिन सब्र और धीरज और माफ़ी और अनदेखी से काम लीजिए।

सुधार की तरफ़ से न तो निराश हों और न बच्चों को निराश होने दें।

ग़लतियों पर सज़ा देना बहुत ही ज़रूरी हो, तो अकेले में दीजिए और अकेले में समझाइए।

साथी-संगियों से मिलने के मौक़े दीजिए। हाँ, उनकी आदतों और

तौर-तरीक़ों की तरफ़ से इत्मीनान कर लीजिए।

उनके साथियों की इज़्ज़त कीजिए। कभी-कभी उन्हें घर पर लाने के लिए कहिए और उनको खिलाइए-पिलाइए।

साथियों के सामने कभी सज़ा न दीजिए और न अपमानित कीजिए।

मिलने-जुलनेवाले या मेहमान आएँ, तो अपने बच्चों की ख़ामियों का रोना न रोएँ, बल्कि ख़ूबियों का परिचय कराएँ।

उनकी उम्र और सलाहियत के मुताबिक़ उनपर कोई न कोई हल्की-फुल्की घरेलू ज़िम्मेदारी ज़रूर डालिए और अच्छी तरह अंजाम देने पर शाबाशी दीजिए। अच्छे कामों पर दिल खोलकर सराहिए।

धीरे-धीरे सादा ज़िन्दगी और मेहनत-मशक़्क़त का आदी बनाइए। लेकिन कोई काम सज़ा के तौर पर या बेगार समझकर न लीजिए, बल्कि ख़ुशी-ख़ुशी और खेल-खेल में अंजाम दिलवाइए।

कोई हुक्म देते समय उनकी मानसिक दशा का अन्दाज़ा लगा लीजिए, ताकि नाफ़रमानी या हुक्म न मानने का अन्देशा न रहे। बार-बार हुक्म न दीजिए। सुनिश्चित और स्पष्ट शब्दों में हुक्म दीजिए। आपके शब्दों से दुविधा प्रकट न हो।

कोई कमज़ोरी या भूल हो जाए या कभी सज़ा मिली हो, तो उसे बार-बार याद न दिलाइए और न दूसरे भाई-बहनों को ताना देने का मौक़ा दीजिए।

बच्चों को खुलकर अपने ख़याल का इज़हार करने का मौक़ा दीजिए। उनके प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर देने की कोशिश कीजिए।

उनके मामलों में उनसे सलाह कर लिया कीजिए और कभी-कभी रहनुमाई करके उन्हें ख़ुद फ़ैसला करने दीजिए।

मिलने-जुलनेवालों या नाते-रिश्तेदारों के यहाँ बच्चों को साथ ले जाया कीजिए।

- मेहमानों की ख़ातिरदारी में बच्चों से मदद लीजिए।
- समारोहों और त्योहारों इत्यादि में बच्चों को उनकी क्षमता के मुताबिक़ व्यावहारिक रूप से हिस्सा लेने का मौक़ा दीजिए।
- सामूहिक कामों, ख़ासकर जनसेवा और भलाई के कामों में ख़ुद भी आगे-आगे रहिए और बच्चों को भी हिस्सा लेने पर उभारिए। इन कामों में ख़ुद आपकी दिलचस्पियाँ उनके लिए प्रेरक साबित होंगी।
- निगरानी रखकर रुपये ख़र्च करने और अपने और घर के लिए सौदा ख़रीदने के मौक़े दीजिए।
- उन्हें ऐतिहासिक, नैतिक कहानियाँ, बहादुरी के कारनामे और नसीहत भरे वाक़िए बराबर सुनाते रहिए।
- उठने, बैठने, चलने-फिरने, खाने-पीने, मिलने-जुलने, बातचीत करने, दूसरों को कोई चीज़ पेश करने या उनसे कुछ क़बूल करने इत्यादि के बारे में अच्छे तौर-तरीक़े सिखाइए।
- भूल-चूक या नुक़सान हो जाने पर माफ़ी माँग लेने और एहसान पर शुक्रिया अदा करने का आदी बनाइए।
- शुरू से ही विभिन्न मौक़ों के ज़िक्र और बोलों की अदायगी पर उकसाइए और ख़ुद भी उसकी पाबन्दी कीजिए। उदाहरण के लिए 'बिस्मिल्लाह' पढ़कर खाना शुरू करना, खा-पी चुकने, छींक आने या मिज़ाज पूछने पर 'अल-हम्दुलिल्लाह' कहना, किसी से कुछ मिलने या फ़ायदा पहुँचने पर 'जज़ाकल्लाह' कहना, मसजिद में दाख़िल होने और निकलते समय दुआएँ पढ़ना इत्यादि।
- नबियों (अलैहि॰), सहाबा किराम (रजि॰) और बुज़ुर्गाने-दीन (रह॰) का इज़्ज़त के साथ नाम लेने का तरीक़ा सिखाइए।

यह सब उसी समय होगा, जब आप दोनों ख़ुद भी नमूने का किरदार रखते हों। बच्चे ज़बानी नसीहतों से कहीं ज़्यादा बड़ों के अमल से

अनजाने तौर पर भी असर लेते हैं और यही असर ज़्यादा अटल और देर तक रहनेवाले होते हैं।

आख़िरी लेकिन सबसे अहम बात यह है कि अपनी और अपने बाल-बच्चों की भलाई और तरक़्क़ी और दुनिया और आख़िरत (लोक-परलोक) दोनों में कामयाबी के लिए अल्लाह के सामने गिड़गिड़ाकर बराबर दुआ करते रहिए।

☆☆☆

अध्याय-14

शिक्षक और शिक्षण-प्रशिक्षण के सिद्धान्त

माँ-बाप अगर ख़ुद शिक्षा-दीक्षा न दे सकते हों, तो बच्चों की शिक्षा-दीक्षा किसी योग्य शिक्षक या प्रशिक्षक के सुपुर्द होनी चाहिए। शिक्षक की हैसियत से एक आदमी उसी समय अपना काम बहुत ख़ूबी के साथ अंजाम दे सकता है, जब वह माँ-बाप का मुनासिब बदल साबित हो; क्योंकि बच्चे उसी आदमी के सुधार की कोशिशों का असर क़बूल करते हैं–

(क) जिसे वे अपना हमदर्द और भलाई चाहनेवाला समझते हों, जिसके एहसानों, क़ुरबानी और अच्छे बरताव का उन्हें निजी अनुभव हो।

(ख) जिसको बच्चों से फ़ितरी लगाव हो।

(ग) जो ख़ुशमिज़ाज हो और जायज़ हदों में बच्चों की दिलचस्पियों और फ़ितरी तक़ाज़ों का पूरा ख़याल रखता हो।

(घ) जिसकी देख-रेख में बच्चे अपने को हर तरह से सुरक्षित और जिसके साथ रहने में अपने को ख़ुश पाते हों।

(ङ) जो बच्चों की ख़ूबियों और अच्छे कामों को खुलकर सराहता और कोताहियों पर पकड़ और आलोचना में बहुत ज़्यादा सतर्कता बरतता हो।

(च) जो उन्हें अपने विश्वास में ले सके और उनसे जो वादे करे उन्हें पूरा करे।

(छ) जो उनकी नन्ही-मुन्नी उलझनों और परेशानियों को पूरे ध्यान से सुनकर और हमदर्दी से उनपर ग़ौर करके उन्हें दूर करने में बच्चों

की मदद कर सके।

(ज) जो संयमी और सहनशील हो और धीरज और माफ़ी और अनदेखी से काम ले।

(झ) जो बच्चों के स्वाभिमान और आत्मसम्मान का पूरा ध्यान रखे।

(ञ) जो खुद ज़िम्मेदारी को पहचाननेवाला, उसूल का पाबन्द और जज़्बात पर क़ाबू रखनेवाला हो।

(ट) जिसकी कथनी और करनी में पूरी समानता हो।

एक प्रशिक्षक, गुरु या अच्छे शिक्षक में जब तक उपर्युक्त गुण न होंगे, वह शिक्षा-दीक्षा का काम अच्छी तरह अंजाम न दे सकेगा।

प्रशिक्षक का व्यवहार

इसके अलावा शिक्षण-प्रशिक्षण का काम अच्छी तरह अंजाम देने के लिए प्रशिक्षक को अपने रवैये में भी सुधार करना होगा–

- बच्चे के लिए अपने अन्दर मुहब्बत, हमदर्दी और ख़ैरख़्वाही की भावनाएँ पैदा करनी होंगी।
- उसकी कोताहियों की चुभन महसूस करके दूर करने की फ़िक्र को अपना कर्तव्य समझना होगा।
- दिल में उसके सुधार की सही भावना पैदा करना और खुलूस से भरी कोशिशों के साथ अल्लाह से अपनी और बच्चे की हिदायत के लिए दुआ करते रहना होगा।
- सुधार की तरफ़ से निराशा से खुद भी बचना होगा और बच्चे को भी बचाना होगा। बच्चा बहरहाल बच्चा है। उससे बहुत ज़्यादा या बहुत ऊँची उम्मीदें बाँध लेने से भी निराशा होती है; क्योंकि बचकाना हरकतें बच्चों से बहरहाल होंगी ही। उम्मीदें ऊँची होंगी, तो ऐसी हरकतों से निराशा होगी। इसलिए इससे बचना होगा।

- यथासम्भव अच्छे गुमान से काम लेना होगा; क्योंकि बच्चे को जैसा समझा जाता है, वैसा ही वह बनता है। मगर इसका मतलब सतर्कता और निगरानी की तरफ़ से लापरवाही हरगिज़ नहीं है, बल्कि दुर्भावना, टोह लगाने, ऐब खोजने से बचना है।
- बच्चे के आत्मसम्मान, गर्व और स्वाभिमान की सुरक्षा के लिए हँसी उड़ाने, मज़ाक़ करने, ताने मारने, भला-बुरा कहने इत्यादि से बचना होगा।
- अदालत के हाकिम के बजाय अच्छे अख़लाक़ का रवैया अपनाना होगा यानी पिछली ग़लतियों पर सज़ा देकर संतुष्ट हो जाने की बजाय असल कारण और प्रेरक का पता लगाकर उन्हें दूर करने की फ़िक्र और कोशिशें करनी होंगी, ताकि भविष्य में उनकी कोताहियाँ दोहराई न जा सकें। जो हो गया, सो हो गया। आइन्दा के लिए सच्चे दिल से तौबा करा ली जाए।

जब तक शिक्षक खुद अपने सुधार की तरफ़ ध्यान न देगा और अपने रवैये में समुचित बदलाव नहीं लाएगा, बच्चों के सुधार और शिक्षा-दीक्षा के बारे में उसकी कोशिशें हरगिज़ फ़ायदेमन्द न होंगी।

शिक्षण-प्रशिक्षण की विधि

(1) शिक्षा-दीक्षा प्राप्त कर रहे बच्चों की व्यावहारिक, नैतिक, मानसिक और शारीरिक दशा का जायज़ा लेकर मुख्य गुण-दोषों की एक सूची बनाई जाए।

(2) बच्चों की उम्र, घरेलू हालात, घर के सदस्य, परिवार और बच्चे के साथ उनके बरताव, आसपास के माहौल का विस्तृत विवरण, साथी-संगियों की आदतें और तौर-तरीक़े और दिलचस्पियों के बारे में ज़रूरी जानकारियाँ उपलब्ध कराई जाएँ।

(3) उपर्युक्त जानकारियों के बाद बच्चे की उम्र और मानसिक एवं

शारीरिक दशा को ध्यान में रखकर कुछ बुनियादी ख़ूबियों और ख़ामियों को निर्धारित किया जाए और एक क्रम से ख़ूबियों को उजागर और ख़ामियों को दूर करने की काशिश की जाए।

(4) ख़ामियों के कुछ बुनियादी कारण और प्रेरक, कुछ वास्तविक मजबूरियाँ होती हैं। गम्भीरतापूर्वक उसका पता लगाकर उन्हें दूर करने की कोशिश की जाए, ताकि सुधार स्थायी और बुनियादी हो।

(5) अकेले में बच्चे की ख़ूबियों को सराहते हुए एहतियात से कोताहियों की निशानदेही की जाए और उनपर क़ाबू पाने के लिए बच्चे के आत्मविश्वास और इरादे की ताक़त को उभारते हुए उचित उपाय बताए जाएँ।

(6) कोताहियों की निशानदेही सांकेतिक शब्दों में हो, तो ज़्यादा बेहतर है। प्रतिभाशाली और संवेदनशील बच्चे इस तरह ज़्यादा प्रभावित होते हैं और आसानी से उद्‌देश्य प्राप्त हो जाता है।

(7) दूसरों के सामने बच्चे की निन्दा, शिकायत या अनुचित आलोचना हरगिज़ न की जाए और न कोताहियों का ढिंढोरा पीटा जाए। इससे सुधार के बजाय ढिठाई और ग़लतियों पर अड़ जाने की आदत पैदा होती है।

(8) दूसरों के सामने बच्चों के सिर्फ़ गुणों और अच्छाइयों की चर्चा की जाए और अच्छे कामों पर शाबाशी दी जाए। इससे आत्मविश्वास बढ़ता और कमज़ोरियों पर क़ाबू पाने की शक्ति पैदा होती है।

(9) रचनात्मक प्रवृत्ति के निर्माण और उसे बढ़ावा देने तथा उसके विकास के लिए और नापसन्दीदा हरकतों से सुरक्षित रखने के लिए बच्चों की उम्र और दिलचस्पियों के अनुरूप खेल, हॉबीज़, पाठ्य सहगामी गतिविधियों, क्लब और समितियाँ बनाने इत्यादि के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े उपलब्ध कराए जाएँ। बाल-सुलभ चंचलता के लिए गुंजाइश दी जाए और नादानी की वजह से होनेवाली नापसन्दीदा

हरकतों पर सख़्त पकड़ करने के बजाय समझा-बुझाकर माफ़ कर दिया जाए। एक बार जो ग़लती हो गई हो, उसे बार-बार याद न दिलाया जाय।

(10) बारह साल से कम उम्र के छात्र आम तौर से नीरस उपदेशों और नसीहतों और नैतिक लेक्चरों से कम ही प्रभावित होते हैं, बल्कि कभी-कभी तो प्रतिक्रिया उल्टी और कड़ी होती है। इसका ध्यान रखा जाए।

(11) लेक्चर पिलाने के बजाय पसन्दीदा आदतें डलवाइए और व्यावहारिक रूप से अच्छे तौर-तरीक़े और आदतें सिखाने की कोशिश की जाए। अनुकरण के लिए अच्छा आदर्श नमूना (Ideal Model) पेश किया जाए।

(12) नैतिक शिक्षा, कहानियों, चुटकुलों, नबियों (अलैहि॰), उम्मत के नेक बुज़ुर्गों और महापुरुषों के वाक़ियों को दिलकश अन्दाज़ में पेश किया जाए।

(13) शानदार भविष्य में यक़ीन पैदा कराया जाए और कोशिश की जाए कि निराशा पास न फटकने पाए।

(14) बच्चों से बरताव में हमदर्द शिक्षक और कड़े हाकिम के फ़र्क़ को हमेशा ध्यान में रखा जाए और उनकी हरकतों और कामों को उन्हीं के मेयार (मापदण्ड) से नापा जाए।

☆☆☆

अध्याय-15

आदतें और व्यवहार

(Habits and Behaviour)

हम अपने चरित्र (Character) का अवलोकन करें, तो वह तरह-तरह की आदतों का एक पुलिन्दा नज़र आएगा। उनमें कुछ तो पसन्दीदा होंगी, कुछ नापसन्दीदा। हमारी आदतें और हमारे व्यवहार ही असल में हमारे चरित्र और आचरण का दर्पण होते हैं और इन्हीं की बुनियाद पर हमारे भले या बुरे होने का हुक्म लगाया जाता है।

आदतें क्या हैं?

सहज क्रियाओं और मूल प्रवृत्तियों की माँगों को पूरा करने के लिए हम बचपन ही से हर समय कुछ न कुछ करते रहते हैं। जब कोई काम हम किसी ख़ास तरीक़े से कर लेते हैं और उससे हमारी कोई बुनियादी ख़्वाहिश भी पूरी हो जाती है, तो उसी तरह के हालात पैदा होने की दशा में हम वही काम पहले के मुक़ाबले में ज़्यादा आसानी से कर गुज़रते हैं। इस तरह बार-बार करने से हम इस काम के अभ्यस्त हो जाते हैं। इसके करने के लिए हमारे अन्दर मज़बूत और अटल रुझान पैदा हो जाता है।

किसी काम को किसी ख़ास ढंग से बार-बार करने के इसी रुझान को आदत कहते हैं। आदतें अपने आपमें में तो फ़ितरी नहीं होतीं, लेकिन हर आदत की बुनियाद कोई न कोई मूल प्रवृत्ति, बुनियादी ख़्वाहिश या सहज प्रवृत्ति ही होती है। इसी लिए मज़बूत होने के बाद आदतें बड़ी मुश्किल से छूटती हैं।

मूल प्रवृत्ति या सहज क्रियाएँ होती तो जन्मजात ही हैं और सारे

मनुष्यों में पैदाइशी तौर पर एक समान पाई जाती हैं। लेकिन चूँकि उनकी अभिव्यक्ति के तरीक़े, अनुसरण, अनुभव, प्रशिक्षण और बुद्धि-विवेक के कारण अलग-अलग हो जाते हैं और यही तरीक़े धीरे-धीरे मज़बूत होकर आदतें और तौर-तरीक़े बन जाते हैं। इसलिए अलग-अलग आदमियों की आदतें और तौर-तरीक़े और चरित्र और चाल-चलन में बहुत गहरी भिन्नताएँ पाई जाती हैं। आदतों के बारे में स्पष्ट रहे कि—

- ये नैसर्गिक, प्राकृतिक या पैदाइशी नहीं होतीं, बल्कि कृत्रिम, बनावटी या खुद की बनाई हुई होती हैं, माहौल के असर से पड़ती हैं। दूसरों के द्वारा डलवाई जाती हैं या अपनी इच्छा से डाल ली जाती हैं।
- आदतें डलवाने या छुड़वाने का सबसे अच्छा समय बचपन ही का होता है, ख़ास तौर से बारह-तेरह साल की उम्र तक। बाद के मरहलों में बड़ी कठिनाइयाँ पेश आती हैं और बहुत मज़बूत इच्छा-शक्ति की ज़रूरत होती है।
- किसी काम की आदत पड़ जाए, तो वह काम बड़ी आसानी से होने लगता है। दिमाग़ पर न तो बोझ डालना पड़ता है, न इरादा करने की ज़रूरत पेश आती और न मन पर ज़ोर डालना पड़ता है।
- कोई काम बार-बार कर लेने से आदत नहीं पड़ती, बल्कि हर आदत के लिए निम्नलिखित चीज़ें ज़रूरी हैं—

(1) **प्रेरणा :** यानी किसी काम को अंजाम देने के लिए आमादगी; क्योंकि इसके बिना वह काम पहली बार भी अंजाम न पा सकेगा, इसका आदी होना तो दूर की बात है।

(2) **अच्छा प्रभाव :** इस काम के अंजाम पाने पर खुशी मिलना, ताकि इसे दोहराने की ख़्वाहिश हो।

(3) **दोहराना :** इस काम को बार-बार करना, क्योंकि दोहराये बिना अभ्यास और महारत नहीं होगी।

उपर्युक्त में से किसी एक की भी कमी होगी, तो आदत हरगिज़ न पड़ेगी; क्योंकि अगर किए गए काम के लिए प्रेरणा ही न हो या उसके करने से कोई अच्छा नतीजा ही न सामने आए या उसके करने से तकलीफ़ पहुँच जाए या उसे बार-बार करने का मौक़ा ही न मिल सके, तो हरगिज़ उसकी आदत न बन सकेगी। इसी लिए कभी-कभी आमादगी के बिना बरसों एक काम किसी से कराया जाता है, फिर भी उसकी आदत नहीं बनती और बाहरी दबाव से आज़ाद होते ही, उसके ख़िलाफ़ हरकतें ज़ाहिर होने लगती हैं।

आदतों से लाभ

आदतें अगर अच्छी हों, तो उनसे तरह-तरह के लाभ पहुँचते हैं–

- मानसिक उलझनों से आदमी सुरक्षित रहता है। अच्छे काम करने के लिए मन से बराबर लड़ना नहीं पड़ता। हर रोज़ हर आदमी को तरह-तरह के मौक़े ऐसे पेश आते हैं, जब मन की माँग कुछ होती है और ईमान और अख़लाक़ और शराफ़त और इनसानियत की कुछ और। इस कश-मकश से निकलना बड़ा मुश्किल होता है। अक्सर लोग मात खा जाते हैं। अगर अच्छे कामों की आदत होती है, तो ऐसी कश-मकश की नौबत कम ही आती है और अगर कभी आए, भी तो आसानी से क़ाबू पाया जा सकता है।
- परिस्थितियाँ प्रतिकूल भी हों, तो भी एक आदमी जो किसी अच्छे काम का आदी हो, उसे कर ही लेता है। मिसाल के तौर पर सफ़र की परेशानियों, बीमारी या मौसम की शिद्दत के बावजूद समय पर नमाज़ की अदायगी, तंगदस्ती की हालत में भी दूसरों की मदद और ख़िदमत, अपने को ख़तरे में डाल कर दूसरों के काम आना इत्यादि।
- आदतोंवाले काम निहायत आसानी, महारत और तेज़ी से अंजाम पाते हैं। इसलिए दूसरे फ़ायदेमन्द कामों के लिए समय की भी बचत होती

है। काम अच्छा होता है और ज़्यादा शक्ति और ध्यान भी लगाना नहीं पड़ता।

- आदतों की वजह से काम करने की ताक़त में ग़ैर-मामूली वृद्धि हो जाती है; क्योंकि आदतवाले कामों में थकान कम महसूस होती है और जिद्दोजुह्द कम करनी पड़ती है। आदत के बिना कोई काम अंजाम दिया जाए, तो बहुत ज़्यादा मेहनत करनी पड़ती है और आदमी बहुत जल्द थक भी जाता है।

  उदाहरण के लिए, पढ़ने के लिए देर तक बैठना हो या मेहनत-मशक्क़त का कोई काम करना हो, अगर आदत हो तो घंटों थकान महसूस नहीं होगी, वरना थोड़ी देर में उकताहट की कैफ़ियत सवार हो जाएगी।

- आदतवाले कामों को अंजाम देते समय ज़ेहन को किसी और काम पर भी लगाया जा सकता है; क्योंकि इसपर ध्यान केन्द्रित रखने की ज़रूरत बाक़ी नहीं रहती और काम मशीन की तरह तेज़ी से अंजाम पाता रहता है।

  मिसाल के तौर पर स्वेटर बुनते या मशीन पर कोई काम करते वक़्त हाथ भी चलता रहता है और ज़ेहन कोई अच्छी बात सोचने, किसी की बातें सुनने या दूसरों को कुछ ज़बानी बताने में व्यस्त रहता है। बीड़ी बनानेवाले मज़दूरों या तकली कातनेवाले छात्रों इत्यादि को इन कामों के साथ-साथ बहुत कुछ ज़बानी बताया जा सकता है।

शिक्षा-दीक्षा में आदतों का महत्त्व

आदतों के उपर्युक्त फ़ायदों से यह बात ख़ूब अच्छी तरह समझ में आ सकती है कि अच्छी आदतों की जिन्दगी में ग़ैर-मामूली अहमियत है। बचपन ही से अगर पसन्दीदा आदतें डलवाने की तरफ़ ध्यान दिया जाए, तो आदमी को तरक्क़ी की मंज़िलें तय करने में बहुत आसानी हो

जाती है। एक बच्चा जो समय पर खाने, खेलने, सोने, जागने का आदी हो, पढ़ने-लिखने और मेहनत-मशक़्क़त के कामों पर पाबन्दी से समय ख़र्च कर सकता हो, पसन्दीदा तौर-तरीक़ों और अलग-अलग मौक़ों के आदाब का पाबन्द हो, उसकी तन्दुरुस्ती, चाल-चलन और चरित्र भी अच्छा होगा और आगे बढ़ने और तरक़्क़ी करने के उसे ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े भी मिलेंगे।

वह समय, मौक़ा और फ़ुरसत की कमी का रोना कभी न रोएगा। उसे रोज़-रोज़ के मामलों की पाबन्दी के लिए मन पर ज़ोर नहीं डालना पड़ेगा। इसी लिए पसन्दीदा आदतों और तौर-तरीक़ों को अपनाने की तरफ़ गैर-मामूली ध्यान दिया जाता है।

अच्छी आदतें डलवाने का तरीक़ा

किसी बात का आदी बनाने के लिए—

- सबसे पहले बच्चे को सादा और आम फ़हम अन्दाज़ में क़िस्से-कहानियों, पोस्टरों, चित्रों, घटनाओं, बातचीत और महापुरुषों की जीवनियों की मदद से इस आदत के फ़ायदे, अहमियत और ज़रूरत महसूस कराई जाए।
- संक्षिप्त, स्पष्ट और निश्चित शब्दों में यह बात ज़ेहन में बिठाई जाए कि इस मामले में क्या ज़रूरी है और वहाँ तक पहुँचने का आसान रास्ता क्या है?
- इसके बाद बच्चे से वचन लिया जाए। यह वचन कई बच्चों से या पूरी कक्षा से एक साथ लिया जाए, तो ज़्यादा बेहतर है। प्रेरणा बहुत ज़ोरदार होनी चाहिए, ताकि बच्चा अमल पर मजबूर हो जाए।
- फिर इसपर अमल और बार-बार अभ्यास करने और दोहराने के मौक़े और आसानियाँ मुहैया कराई जाएँ।

- एक निर्धारित अवधि तक पूरे ध्यान से लगातार अभ्यास कराया जाए, मगर अभ्यास में रुचि और ख़ुशी का ध्यान रहे। बेहतर हो कि अच्छी आदतों और तौर-तरीक़ों के लिए सप्ताह मनाए जाएँ।
- आदतें डलवाने के दौरान ख़िलाफ़वर्ज़ी का बिलकुल मौक़ा न दिया जाए। इसके लिए कड़ी निगरानी और समय पर ही रोक-टोक की ज़रूरत है।
- अभ्यास, पुनरावृत्ति, दोहराने के प्रोग्राम व्यक्तिगत के बजाय सामूहिक हों, तो कई गुना ज़्यादा प्रभावी होते हैं; क्योंकि इस तरह प्रेरणा, ख़ुशी और सहूलत तीनों मसले एक ही साथ हल हो जाते हैं। एक से दूसरे को शक्ति और मदद मिलती है।

  इस्लामी इबादतें, ख़ुद के जायज़ों के बेहतरीन और बहुत ही प्रभावकारी साधन इसलिए भी साबित होते हैं कि समय की पाबन्दी के साथ सामूहिक रूप से उनका अदा करना फ़र्ज़ क़रार दिया गया है।
- माहौल ऐसा बनाएँ कि अमल करने में आसानी और ख़ुशी हो और ख़िलाफ़वर्ज़ी में दुश्वारी और तकलीफ़। क़रीबी माहौल में ख़िलाफ़वर्ज़ी के नमूने न हों। शिक्षक-प्रशिक्षक ख़ुद भी इन आदतों और तौर-तरीक़ों का सख़्ती से पाबन्द हों और अपने आचरण और व्यक्तित्व से बच्चों के लिए अनुसरण और प्रभाव ग्रहण करने के मौक़े मुहैया करें।
- आदतें डलवाने और मामलों का पाबन्द बनाने की ऐसी योजना और प्रोग्राम तैयार किया जाए कि एक से दूसरी को ताक़त पहुँचे। उदाहरण के लिए, फ़ज्र की नमाज़ के बाद उसी वुज़ू से तिलावत करने का एहतिमाम, वुज़ू के साथ दाँत माँजने की आदत इत्यादि।
- अच्छी आदतों और तौर-तरीक़ों के सम्बन्ध में वाज़ेह रहे कि उनके लिए छुट्टी का कोई दिन नहीं है। उनका बराबर प्रदर्शन

होना चाहिए।

अगर इस तरफ़ से लापरवाही बरती जाए, तो गिरावट शुरू हो जाती है और धीरे-धीरे सारे किये-धरे पर पानी फिर जाता है।

अच्छी आदतें और आचरण

इन नियमों को ध्यान में रखकर क्रमशः बच्चों को निम्नलिखित आदतों और तौर-तरीक़ों का पाबन्द बनाया जाए—

- सफ़ाई और पाकी की पाबन्दी, ख़ासकर शरीर और उसके अंगों की सफ़ाई (ग़ुस्ल करना, दाँत माँजना, हाथ धोना, बाल और नाख़ुन कटवाना इत्यादि), लिबास, बिस्तर, आम इस्तेमाल की चीज़ें, शिक्षा-सामग्री, कक्षा, कमरा, बरामदे और नालियों इत्यादि की सफ़ाई और सामान को क्रमबद्ध ढंग से रखवाना।

  इस्तिंजा पाक करने का तरीक़ा और ग़ुस्लख़ाने और पाख़ाने का मुनासिब इस्तेमाल।

  जल्द सोना, सवेरे उठना।

  ठीक ढंग से वुज़ू करना और नमाज़ के अरकान का लिहाज़ करके सलीक़े से नमाज़ अदा करना।

  समय की पाबन्दी—ख़ासकर नमाज़, तिलावत, हाज़िरी, खेल, खाने, इज्तिमा, पढ़ाई और व्यायाम इत्यादि में।

  सलाम करना, मिज़ाज पूछना और जहाँ तक मुमकिन हो, सलाम में पहल करना।

  मुनासिब तरीक़े से उठना-बैठना, चलना-फिरना, खड़े होना, बातचीत करना, खाना-पीना, कपड़े पहनना, टोपी ओढ़ना इत्यादि।

  सच बोलना और विभिन्न मामलों, ख़ासकर खेल, परीक्षा और रुपये-पैसे के मामले में ईमानदारी बरतना।

  ख़ुशी-ख़ुशी अपनी ग़लती मान लेना और भूल-चूक पर माफ़ी

माँग लेना।

- बोलने, प्रश्न करने, उत्तर देने या कोई चीज़ लेने में अपनी बारी का इन्तिज़ार करना।
- दिए गए कामों और ज़िम्मदारियों को पाबन्दी और लगन से अंजाम देना।
- टोलियों में सहयोग और आपसी मेल-मिलाप से काम करना।
- वादा पूरा करना या पूरा न हो सकने या कोई मजबूरी पेश आ जाने पर माफ़ी माँग लेना।
- इस्तेमाल के बाद चीज़ों को ठीक जगह पर सलीक़े से रख देना।
- जनसेवा करना, मुहताजों और मजबूरों की खोज-ख़बर लेना।
- इजाज़त लेकर आना-जाना।
- शुक्रिया अदा करना, चाहे किसी ने मामूली-सा भी एहसान किया हो।
- अच्छे अन्दाज़ से पुकारना और अदब से नाम लेना।
- हर मौक़े के आदाब का लिहाज़ रखना।
- अलग-अलग मोक़ों के ज़िक्रों और दुआओं का पाबन्द होना इत्यादि, इत्यादि।

स्पष्ट रहे कि अगर अच्छी आदतें और तौर-तरीक़े और अच्छे और सुन्दर आचरण का पाबन्द बनाने की कोशिश न की गई, तो बहरहाल बच्चे अपने अनुभव और दूसरों का अनुसरण करके कुछ न कुछ आदतें डाल ही लेंगे और ऐसी दशा में बहुत ज़्यादा आशंका इसी बात की है कि पसन्दीदा की ग़ैर-मौजूदगी में उनकी आदतें और तौर-तरीक़े आम तौर पर नापसन्दीदा ही होंगे, जो उनके चरित्र और व्यक्तित्व को सबकी नज़रों में घिनौना बना देंगे।

बच्चे क्यों बिगड़ते हैं?

बिगड़े हुए बच्चों की आदतों को देखने पर पता चलता है कि उनमें

बिगाड़ की शुरुआत आम तौर पर निम्नलिखित कारणों में से किसी एक या कुछ की वजह से होती है–

(1) **माँ-बाप या बड़ों का ग़लत नमूना :** बच्चे आम तौर पर अपने माहौल ही की पैदावार होते हैं। अपने आसपास लोगों को जो करते देखते हैं, जान-बूझकर या अनजाने उन्हीं का अनुसरण करते हैं।

(2) **माँ-बाप या बड़ों का आपसी सम्बन्ध ख़राब होना :** माँ-बाप या घर के दूसरे सदस्यों के आपसी सम्बन्ध का ख़राब होना बिगाड़ का कारण होता है। रोज़-रोज़ की तू-तू, मैं-मैं और शिकवा-शिकायत अच्छे-भले घर को जहन्नम बना देती है। जो बच्चे ऐसे घरों में पलते हैं, वे तरह-तरह के नैतिक और मानसिक बीमारियों का शिकार हो जाते हैं। ऐसे स्कूल और मदरसे भी जहाँ शिक्षकों के आपसी सम्बन्ध अच्छे न हों, बच्चों के बिगाड़ का अड्डा बन जाते हैं।

(3) **अनुचित व्यवहार :** यह अनुचित व्यवहार चाहे माँ-बाप की तरफ़ से हो या शिक्षकों की तरफ़ से, बहन-भाइयों की तरफ़ से हो या सहपाठियों और साथी-संगियों की तरफ़ से। उदाहरण के लिए, नफ़रत, नीचा दिखाना, मज़ाक़ उड़ाना, बार-बार की मार-पीट या डाँट-फटकार, शक-शुब्हा, सुधार की तरफ़ से निराश और दूसरों से शिकायतें करते फिरना इत्यादि।

(4) **हीन भावना, चाहे मानसिक, चाहे शारीरिक कमज़ोरी या ख़ामियों के कारण या नैतिक गिरावट की वजह से :** कुछ कोताहियों, कमज़ोरियों या शारीरिक ख़ामियों की वजह से जब बच्चे को चिढ़ाया जाता है, तो वह हीन भावना का शिकार होकर बिगड़ने लगता है।

(5) **बुरी संगति :** बुरे और बिगड़े हुए बच्चों की संगति में पड़कर

अक्सर शरीफ़ माँ-बाप के बच्चे भी बिगड़ जाते हैं।

(6) **साथियों का साथ न मिलना :** जहाँ बुरी संगति बच्चों को बिगाड़ देती है, वहीं अपने हमउम्र बच्चों की संगति से वंचित होना भी बिगाड़ और ख़राबियों का कारण होता है। बच्चे बहुत-सी बातें खेल-खेल में अपने साथियों से सीखते हैं। सर्वांगीण और सन्तुलित व्यक्तित्व के निर्माण और विकास के लिए अच्छे साथियों की संगति भी बहुत ही ज़रूरी है।

(7) **रचनात्मक और दिलचस्प गतिविधियों के मौक़े न मिलना :** बच्चे हरदम कुछ न कुछ बनाते-बिगाड़ते रहते हैं। फ़ुरसत के समयों के लिए अगर मुनासिब कामों और गतिविधियों का इन्तिज़ाम न हो, तो बेकारी की वजह से भी उनके बिगड़ने की आशंका रहती है।

(8) **महत्त्वपूर्ण मूल प्रवृत्तियों की माँगों के पूरे न होने, जैसे खाने-खेलने और पहनने-ओढ़ने के बारे में उनकी स्वाभाविक इच्छाओं की पूर्ति में बार-बार और बहुत ज़्यादा रुकावट :** जायज़ तरीक़े से जब पूरी नहीं होती, तो बच्चे ग़लत तरीक़े से पूरी करने की कोशिश करते हैं।

(9) **जानने-समझने की बहुत ज़्यादा ख़्वाहिश और ख़ुद प्रयोग और अनुभव प्राप्त करने का शौक़ :** बच्चों से कुछ कोताहियाँ इसलिए भी हो जाया करती हैं कि वे कुछ अनुचित बातों का प्रयोग करके जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं कि देखें ऐसा करने से क्या होता है और यही अनुभव नादानी की वजह से बिगाड़ का कारण बन जाता है।

(10) **आत्मविश्वास और संकल्प-शक्ति की कमी :** जो बचपन के अनिवार्य गुण हैं।

(11) **बड़ा बनने या मशहूर होने की इच्छा :** बहुत-सी अनुचित हरकतें बच्चे इसलिए भी करते हैं कि वे बड़ा बनना या साथियों में मशहूर

होना चाहते हैं। जब इस भावना की तुष्टि के लिए उचित रास्ता नहीं मिलता, तो ग़लत रास्ता अपनाते हैं।

(12) **प्रेम और स्नेह और उचित लाड़-प्यार से वंचित होना** : यह भी बिगाड़ का कारण बनता है।

(13) **ग़ैर-मामूली लाड़-प्यार** : यह भी बिगाड़ का बहुत बड़ा कारण है।

(14) नादानी और अनुभवहीनता, परिणामों और नतीजों पर निगाह न होना।

(15) उच्च विचारों, पवित्र भावनाओं और स्तरीय जीवन-लक्ष्य का अभाव।

(16) दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई अश्लीलता, बेहयाई और फ़ैशनपरस्ती : यह कितनों को बिगाड़ रही है।

(17) सनसनीख़ेज़ फ़िल्में, जासूसी उपन्यास, नंगी तस्वीरें और गन्दे लिटरेचर।

(18) नास्तिकता, ख़ुदा बेज़ारी और भौतिकवाद से नई नस्लें भी तेज़ी से प्रभावित हो रही हैं।

(19) **शिक्षण-प्रशिक्षण की दोषपूर्ण व्यवस्था इत्यादि** : आम तौर पर बच्चों के बिगाड़ का कारण बनते हैं।

इन कारणों से हमारे वे नौनिहाल, जो मासूम बच्चे के प्यारे नाम से याद किए जाते हैं और बेशक जो हमारी गोद में मासूम ही दिए जाते हैं, बालिग़ होने से पहले ही कुछ ऐसी नापसन्दीदा आदतें और तौर-तरीक़े, बल्कि अपराधों का शिकार हो जाते हैं, जिन्हें सुनकर शर्म से गर्दनें झुक जाती हैं।

आज वे कौन से अपराध हैं, जो नई उम्र के बच्चों में नहीं पाए जाते। माँ-बाप का आज्ञापालन और शिक्षकों का मान-सम्मान लगभग उठ चुका है। अच्छी आदतों और अच्छी भावनाओं की कोंपलें मुश्किल ही से

फूटती हैं। रहमदिली और हमदर्दी की भावनाओं से उनके दिल और दिमाग़ बिलकुल ख़ाली हो रहे हैं। उदारता, मन पर नियंत्रण और सहिष्णुता का कोसों पता नहीं चलता।

उपचार (Remady)

बिगाड़ का इलाज लोग आम तौर पर या तो सज़ा से करते हैं या कड़ी निगरानी करके। बेशक ये दोनों उपाय भी कभी-कभी कारगर साबित होते हैं। बच्चे को एक बुरी हरकत के नतीजे में जब दर्दनाक सज़ा भुगतनी पड़ती है, तो वह दर्द और तकलीफ़ के कड़वे अनुभवों की वजह से रुक जाता है। इसी तरह जब किसी बुरी हरकत के दोहराने का ज़्यादा दिनों तक मौक़ा नहीं मिलता, तो उसकी तरफ़ रुझान कमज़ोर पड़ जाता है। लेकिन अक्सर ऐसा भी होता है कि सज़ा की वजह से बच्चा और ज़्यादा ढीठ और बेबाक हो जाता है और बुरी आदतें जड़ पकड़ लेती हैं।

इसी तरह बिना अन्दरूनी आमादगी के एक हरकत से बच्चा ज़ोर-ज़बरदस्ती रोक दिया जाता है, तो मौक़ा मिलते ही वह खुलकर खेलता है। इसलिए इन दोनों इलाजों पर बहुत ज़्यादा भरोसा नहीं करना चाहिए।

हर बच्चे के बिगाड़ने की परिस्थितियाँ और कारण अलग-अलग होते हैं। इसलिए सबका इलाज भी एक ही नुस्ख़े से नहीं किया जा सकता। सबसे पहले बिगाड़ की बुनियादी वजहों का पता लगाया जाए और कोशिश की जाए कि अस्ल कारण दूर हो। जब तक जड़ मौजूद रहेगी, हो सकता है बिगाड़ का रूप बदल जाए, लेकिन पूरे तौर पर सुधार नहीं हो सकेगा।

नीचे कुछ और उपायों की निशानदेही की जाती है। हर क़िस्म के बिगाड़ में ये उपाय प्रभावी हो सकते हैं। पहले इन्हें आज़माइए—

बच्चे की कोताहियों के कारण आपके रवैये में जो बदलाव आ गया है, उसका सुधार कीजिए। वह आपकी मुहब्बत का भूखा है। उससे बिना शर्त, बेपनाह मुहब्बत कीजिए। उसकी अपनी हस्ती से, न कि गुण से और अपनी कथनी-करनी, आचरण और बरताव से। उसे अपनी मुहब्बत और स्नेह से यक़ीन दिलाइए। सैकड़ों कोताहियों का यही प्रामाणिक और प्रभावकारी इलाज है।

दिलचस्पी, उम्र और सलाहियत के मुताबिक़ रचनात्मक कामों और ज़िम्मेदारियों में हिस्सा लेने के मौक़े दीजिए।

कोताहियों पर तन्हाई में बहुत प्यार से समझाइए। दूसरों के सामने टोकने और सज़ा देने से परहेज़ कीजिए। हमदर्दी और मुहब्बत के साथ कोताहियों पर क़ाबू पाने के व्यावहारिक उपाय बताइए।

बहुत ज़्यादा आशाएँ न रखिए। उम्र, अनुभव और समझ की कमी का मुमकिन हद तक एलाउंस दीजिए। बच्चे बहरहाल नादान और अनुभवहीन होते हैं और बहुत-सी हरकतें बुनियादी ख़्वाहिशों और फ़ितरी तक़ाज़ों से मजबूर होकर कर गुज़रते हैं।

खेलने और अच्छे साथी-संगियों से मिलने-जुलने का मौक़ा दीजिए।

अपने बरताव में स्थायित्व पैदा कीजिए, ताकि बच्चा आपके मिज़ाज को अच्छी तरह समझ सके और आपकी ख़ुशी का लिहाज़ रख सके।

बच्चे को अपने विश्वास में लीजिए और उसपर भी विश्वास दर्शाइए।

उसके एहसासों और नज़रियों को भी महत्त्व दीजिए। उसके निजी व्यक्तित्व को स्वीकार कीजिए और उसके व्यक्तित्व के उचित मान-सम्मान का ध्यान रखिए।

दिचलस्प और शिक्षाप्रद कहानियों, घटनाओं इत्यादि से अच्छाइयों

से लगाव और बुराइयों से नफ़रत पैदा कराइए।

- मजबूरी की हालत में उसे ऐसे माहौल में और ऐसी जगह रखिए, जहाँ लोग उसके ऐबों को न जानते हों और उसकी शख़्सियत का एहतिराम करें। उम्मीद है कि इस तरह वह नए माहौल में अपना खोया हुआ मक़ाम प्राप्त कर लेगा और उसे बरक़रार रखने की कोशिश में कोताहियों से बचेगा।

बुरी आदतें और बुरे व्यवहार

बच्चे आम तौर पर निम्नलिखित नापसन्दीदा आदतों और तौर-तरीक़ों का शिकार हो जाते हैं। कोशिश करके धीरे-धीरे उन्हें छुड़वाना चाहिए–

● झूठ बोलना, ● चोरी करना, ● चुगलीखाना, ● मुँह चिढ़ाना, ● बिस्तर पर पेशाब करना, ● टाल-मटोल करना, ● अन्धेरे में डरना, ● पलट कर उत्तर देना, ● ज़िद और चिड़चिड़ापन, ● बीड़ी-सिगरेट पीना, ● गाली बकना, ● सिनेमा देखना, ● डींगें मारना, ● जासूसी उपन्यास पढ़ना, ● छोटे बच्चों को पीटना, ● फ़ुज़ूलख़र्ची, ● साथी-संगियों को सताना, ● फूहड़पन, ● जानवरों के साथ बेरहमी करना, ● कामचोरी, ● घर या स्कूल/मदरसे से भागना, ● लड़ना-झगड़ना और खेल बिगाड़ना, ● आवारागर्दी करना, ● ऊधम मचाना, ● नाम बिगाड़ना, नाफ़रमानी करना, ● धोखा देना, ● बेहयाई के काम इत्यादि।

छुड़वाने का तरीक़ा

- सबसे पहले बच्चे की नापसन्दीदा आदतों में से बड़ी-बड़ी ख़राबियों को नोट कर लीजिए।

फिर बारी-बारी से एक-एक ख़राबी पर ध्यान दीजिए। पहले उस बुरी आदत के अस्ल कारण का गहरी नज़र से जायज़ा लीजिए और उसे दूर करने की कोशिश कीजिए, ताकि सुधार स्थायी हो।

मुनासिब मौक़ा तलाश करके सीधे-सादे अन्दाज़ में शिक्षाप्रद क़िस्से-कहानियों की मदद से उस बुरी आदत के नुक़सानों और बुरे नतीजों को मन में बिठाइए।

निश्चित तौर पर बताइए कि क्या कुछ छोड़ना है और उसका आसान उपाय क्या है।

बच्चे को अच्छी तरह आमादा करके छोड़ने का वचन लीजिए। अगर वह अपनी ख़ुशी से ख़िलाफ़वर्ज़ी और वादाख़िलाफ़ी पर सदक़े, जुर्माना या सज़ा सुनिश्चित कर ले, तो ज़्यादा बेहतर है।

सुधार की तरफ़ से निराशा को पास न फटकने दीजिए।

बच्चे में इतना आत्मविश्वास पैदा कीजिए कि उसे यक़ीन हो जाए कि वह उसे छोड़ सकता है।

स्पष्ट रहे कि केवल सख़्ती करने या अपनी बात कहने का मौक़ा न देने से बुरी आदतें नहीं छूट जातीं, बल्कि ज़बरदस्ती और मार-पीट इत्यादि से कुछ और ख़राब आदतें पैदा हो जाती हैं। मिसाल के तौर पर, चोरी के साथ झूठ बोलना और धोखा देना इत्यादि। इसी तरह बिना आमादगी के इज़हार का मौक़ा न मिलने से कुछ बुरी आदतें वक़्ती तौर पर दब जाती हैं। लेकिन मौक़ा पाते ही वे ज़्यादा गम्भीर रूप से उभरती हैं।

बुरी आदत को जड़ से दूर करने के लिए अस्ल कारण को दूर करने के अलावा बच्चे की आमादगी और संकल्प-शक्ति (Will-power) ज़रूरी है।

आत्मविश्वास पैदा करने के लिए बच्चे की किसी उभरी हुई ख़ूबी का सहारा लीजिए और समझाइए कि जब तुम फ़ुलाँ मामले में

इतना अच्छा प्रदर्शन कर सकते, तो इस मामूली बात को छोड़ने में क्यों समर्थ नहीं हो सकते।

- आसपास के परिवेश में माहौल ऐसा बनाइए कि छोड़ने में आसानी और ख़ुशी का एहसास हो और बरक़रार रखने में दुश्वारी और तकलीफ़ महसूस हो।
- ज़रूरत महसूस हो तो बच्चे का आवास, कमरा या जगह बदल दीजिए।
- बुरी आदतें छुड़वाने में सामूहिक के मुक़ाबले में व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना ज़्यादा प्रभावी साबित होता है। इसलिए हर बच्चे पर अलग-अलग ध्यान दीजिए।
- जिस हद तक बच्चे को कामयाबी मिले, उसपर उसे शाबाशी देकर और ज़्यादा ताक़त पहुँचाइए।
- ख़िलाफ़वर्ज़ी का बिलकुल मौक़ा न दीजिए।
- अक्सर बुरी आदतें और तौर-तरीक़े इसलिए पड़ जाते हैं कि अच्छी आदतें और तौर-तरीक़े डलवाने का उपाय और प्रयास नहीं किया जाता। अच्छे आचरण और पसन्दीदा आदतें और तौर-तरीक़े डलवाने की कोशिश कीजिए। फिर नापसन्दीदा आदतें और तौर-तरीक़े और बुरे आचरण और दुर्गुण के लिए गुंजाइश ही नहीं रहेगी।
- बुरी आदतों और तौर-तरीक़ों, उनके नुक़सानों और बुरी हैसियत से उनके छोड़ने इत्यादि का बहुत ज़्यादा ज़िक्र न कीजिए, ख़ास तौर पर अच्छे बच्चों के सामने वरना ख़्वाह-मख़्वाह ढीठपन पैदा होगा और बुराइयों से नफ़रत घट जाएगी।

  झूठ छोड़ने के बजाय सकारात्मक रूप से सच बोलने के फ़ायदे और अच्छे नतीजे ज़ेहन में बिठाइए। कमज़ोरों को सताने की बुरी आदत की रोक-थाम के लिए उनकी ख़ोज-ख़बर लेने और मदद

करने पर उभारिए।

- अपनी ताक़त भर सलीक़े से कोशिश कीजिए। उम्मीद है, कामयाब होंगे वरना फ़र्ज़ से बहरहाल आज़ाद हो जाएँगे और बच्चा आपके एहसानों को उम्र भर याद रखेगा।

  आशा है कि किसी मोड़ पर खुद ब खुद सुधार हो जाएगा। कम से कम इतना तो होगा कि वे इन कोशिशों का अच्छे अन्दाज़ में ज़िक्र करेगा, जो आप उसके सुधार के सिलसिले में अंजाम देंगे। प्रबल आशा यही है कि अल्लाह तआला आपकी कोशिशों में बरकत अता फ़रमाएगा।

☆☆☆

<u>अध्याय-16</u>

शिक्षण-संस्थाओं की कामयाबी की शर्तें

शिक्षण-संस्थाओं, ख़ास कर दीनी मदरसों से बड़ी उम्मीदें जुड़ी होती हैं। बात भी बिलकुल सही है। जिन परिस्थितियों से आज हम दो-चार हैं और हमारी आनेवाली नस्लों के भविष्य पर अन्धकार के जो गहरे बादल छाए हुए हैं, उनमें उम्मीद की किरण अस्ल में इन टिमटिमाते चराग़ों ही से फूटती नज़र आती है। इसलिए अल्लाह ने जिन्हें कुछ भी बुद्धि-विवेक की रौशनी दी है, वे इन चराग़ों को बुझने से बचाने और नए चराग़ जलाने के लिए अपने तौर पर कोशिश कर रहे हैं; हालाँकि साधन-संसाधन सीमित होने की वजह से उन्हें तरह-तरह की कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। इसके अलावा सामान्य शिक्षण-संस्थाओं से तो सिर्फ़ शिक्षा की आशा की जाती है, जबकि दीनी मदरसों की ज़िम्मेदारियाँ तीन गुना शुमार होते हैं–

(1) विभिन्न विषयों का स्तर सामान्य शिक्षण-संस्थाओं से ऊँचा हो।

(2) इस्लाम धर्म का ज़रूरी ज्ञान प्रदान किया जाए, वह भी मातृभाषा (उर्दू) में।

(3) धार्मिक, नैतिक और सामाजिक दृष्टिकोण से छात्रों का ऐसा प्रशिक्षण हो, जो उन्हें इस्लाम पर क़ायम रखने, अल्लाह का नेक बन्दा, समाज का निस्स्वार्थ सेवक और देश का अच्छा नागरिक बनाने में मददगार हो और उन्हें नास्तिकता, भौतिकता और बुरे आचरण की मौजूदा बाढ़ की भेंट चढ़ने से बचा सके।

मौजूदा हालतों में ग़ैर-मामूली उम्मीदें जोड़ लेना आशातीत नहीं,

लेकिन उम्मीदें पूरी होने के लिए कुछ अनिवार्य शर्तों की पूर्ति भी ज़रूरी है। जिस हद तक ये शर्तें पूरी होंगी, उतने ही अच्छे नतीजे सामने आएँगे और शिक्षण-संस्थाओं से सम्बन्ध रखनेवाले सभी लोगों को इनकी पूर्ति की बराबर फ़िक्र रखनी और कोशिशें करनी चाहिए। शर्तें निम्नलिखित हैं–

(क) समर्पित स्टाफ़

सबसे महत्त्वपूर्ण शर्त यही है कि शिक्षण-संस्था को अगर ज़रूरत के मुताबिक़ सुयोग्य और समर्पित स्टाफ़ मिल जाएँ, तो बाक़ी शर्तें अगर अल्लाह ने चाहा तो आसानी से पूरी हो सकेंगी और शिक्षण-संस्था बहुत अच्छी तरह और कामयाबी के साथ चलेगी।

स्टाफ़ में निम्नलिखित गुण होने चाहिएँ–

- संस्था और उसके उद्देश्य से गहरा लगाव और उसके निर्माण और विकास के लिए नई राहें निकालने और रुकावटों पर क़ाबू पाने का मज़बूत और पक्का इरादा।
- शिक्षण-प्रशिक्षण की योग्यता।
- अपनी शैक्षणिक योग्यता और शिक्षण-क्षमता बढ़ाने की फ़िक्र।
- छात्रों को पूरा फ़ायदा पहुँचाने की प्रबल इच्छा।
- बच्चों से फ़ितरी लगाव, हमदर्दी और प्यार की भावना।
- संस्था के नियमों, क़ानूनों और समय की पाबन्दी।
- छात्रों के सामने उच्च नैतिक आदर्श और उम्दा आचरण और चरित्र का प्रदर्शन।
- सहकर्मियों और ज़िम्मेदारों से सहयोग की भावना और रवैया और टीमवर्क की सलाहियत।
- ज़िम्मेदारी के एहसास और लगन के साथ अपने कर्तव्यों को पूरा

करने की कोशिश।

- छात्रों के शिक्षण-प्रशिक्षण और माहौल के सुधार में उनके अभिभावकों की मदद प्राप्त करने की फ़िक्र।
- मदरसे की ज़रूरत और फ़ायदों को लोगों पर वाज़ेह करने की सलाहियत।
- त्याग और सन्तोष जिनके बिना आज की परिस्थितियों में धार्मिक शिक्षा (इस्लामी शिक्षा) के प्रचार-प्रसार का काम असम्भव नहीं, तो कठिन ज़रूर है।

(ख) सुनिश्चित और सुस्पष्ट उद्देश्य

संस्था का बुनियादी उद्देश्य न सिर्फ़ तय होना चाहिए, बल्कि शिक्षकों, छात्रों, अभिभावकों और आम जनता सब पर अच्छी तरह वाज़ेह होना चाहिए, ताकि सारे प्रोग्राम इसी लिहाज़ से बनाए जाएँ। स्टाफ़ इसी को ध्यान में रखकर काम करें। देखनेवाले इसी मानदण्ड पर जाँच-परख कर देख सकें और सबकी सामूहिक कोशिशें इस उद्देश्य प्राप्त करने में ख़र्च हों। उद्देश्य सुनिश्चित और सुस्पष्ट न हो, तो हर एक संस्था को अपने उद्देश्य के लिए इस्तेमाल करने लगता है। लोगों की कोशिशों का रुख़ अलग-अलग, बल्कि कभी-कभी विपरीत दिशाओं में हो जाता है और उसकी खींचा-तानी में असल उद्देश्य ही ख़त्म होकर रह जाता है। ज़ाहिर है, बिना उद्देश्य के संस्था चलाने से समय और शक्ति दोनों की बरबादी के सिवा हासिल क्या होगा।

(ग) आम लोगों का सहयोग

संस्थाओं की कामयाबी के लिए यह भी एक महत्त्वपूर्ण शर्त है। इसके बिना सामान्य स्कूल भी नहीं चल सकते और दीनी मदरसों की तो बात ही कुछ और है।

सामान्य स्कूलों की पीठ पर तो सरकार के साधन-संसाधन भी होते हैं और बल और प्रेरणा के हथियार भी होते हैं और आकर्षण का सबसे बड़ा कारण तो ख़ुद छात्र के सांसारिक भविष्य की समस्या होती है।

इसके उलट धार्मिक मदरसे न सिर्फ़ उन सुविधाओं से वंचित होते हैं, बल्कि तरह-तरह की रुकावटों से भी दो-चार होते हैं। ज़ाहिर है, वे तो आम लोगों की मदद के बिना चल ही नहीं सकते; क्योंकि आम लोगों ही से बच्चे मिलेंगे। उसी की मदद से चन्दा मिलेगा, उसी के दबाव और असर से रुकावटें दूर होंगी। अगर वह सहयोग न करे, तो संस्थाएँ किस तरह चल सकती हैं?

आम जनता उन्हीं शिक्षण-संस्थाओं की तरफ़ आकर्षित होती और उन्हीं के साथ सहयोग करती है, जिनकी प्रतिष्ठा (Credit) होती है और जो अपनी ग़ैर-मामूली जी-तोड़ कोशिश से अपनी ज़रूरत, अहमियत और उपयोगिता उसपर साबित कर देती हैं। आम जनता की मदद हासिल करने के लिए ज़रूरी है कि संस्था के स्टाफ़—

- अच्छे आचरणवाले और मिलनसार हों।
- आम लोगों से सम्पर्क बनाने के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े निकालें।
- स्कूल के समारोहों और कार्यक्रमों में शामिल होने की उन्हें दावत दें।
- आबादी की भलाई और तरक़्क़ी और उसके धार्मिक, नैतिक और सामाजिक सुधार और सामूहिक कल्याणकारी कामों में पूरी दिलचस्पी लें और विभिन्न मौक़ों पर उनकी रहनुमाई और मदद करें।
- पार्टीबन्दी से, जो लानत की तरह आजकल हमारी आबादियों पर छा चुकी है, न सिर्फ़ अलग रहें, बल्कि इस लानत से छुटकारा दिलाने की पूरी कोशिश करें।

लोगों को इस बात पर बराबर उभारते रहें कि वे नेकी और परहेज़गारी के कामों में एक-दूसरे की मदद करें और बुरी बातों या बुरे कामों में सहयोग न करें।

मज़हबी शिक्षा की अहमियत और इस बारे में मदरसे की ज़रूरत, अहमियत और उपयोगिता बराबर आम लोगों पर वाज़ेह करते रहें।

धर्म के छोटे-मोटे और बनावटी मतभेदों से बचते हुए सिर्फ़ उसूली और बुनियादी बातों पर ज़ोर दें और हर विचारधारा के लोगों की मदद हासिल करने की फ़िक्र करें।

संस्था के ख़िलाफ़ फैली हुई या फैलाई हुई ग़लतफ़हमियों और बदगुमानियों को दूर करने के लिए सम्बन्धित व्यक्ति से उसी समय मिलकर नरमी से वाज़ेह करें। एतिराज़ों को ख़ुशदिली से सुनें और दूर करने की फ़िक्र करें।

(घ) अनुकूल भवन

एक अहम शर्त स्कूल/मदरसे का अपना अनुकूल और पर्याप्त भवन है। भवन का पक्का या आलीशान होना ज़रूरी नहीं, मामूली भवन भी कहीं ज़्यादा कारामद और उपयोगी हो सकता है। अगर–

इसका स्थान उचित और माहौल शान्तिपूर्ण हो।

जगह के चुनाव और भवन-निर्माण में हर मौसम का लिहाज़ रखा गया हो।

हवा और रौशनी का ठीक-ठाक गुज़र हो।

हर कक्षा और विभाग के लिए ज़रूरी जगह हो।

पीने के पानी और पेशाब-पाख़ाने की उचित व्यवस्था हो।

सफ़ाई-सुथराई का पूरा ध्यान रखा जाता हो।

ः) ज़रूरी सामान

शिक्षण-संस्था की कामयाबी के लिए निम्नलिखित साज़ो-सामान भी ़री हैं–

समुचित पाठ्यपुस्तकें और इनके चुनाव में सावधानी और समय पर मुहैया कराने की कोशिश।

लेखन-कार्य या रचनात्मक गतिविधियों के लिए छात्रों के पास ज़रूरी चीज़ें, उदाहरण के लिए क़लम, पेंसिल, सिलेट, कॉपियाँ, ज्यूमेट्री बॉक्स, रंग, ब्रश इत्यादि।

छात्रों और शिक्षकों के बैठने के लिए साफ़-सुथरा फ़र्श, टाट, दरी, बेंच, डेस्क, मेज़, कुर्सी इत्यादि।

ब्लैकबोर्ड, चॉक, मानचित्र, ग्लोब, चित्र, चार्ट, मॉडल और विज्ञान के प्रयोगों के लिए ज़रूरी सामान।

छात्र/छात्राओं और शिक्षकों के उपयोग के लिए लाइब्रेरी, किताबें और वाचनालय (Study-Room) में पत्र-पत्रिकाएँ इत्यादि।

पाठ्यसहगामी कामों और गतिविधियों, हॉबीज़ (अभिरुचि के कामों) और रचनात्मक योग्यता को उभारने के लिए ज़रूरी सामान।

) खेल का मैदान

स्कूल/मदरसे के अपने परिसर या क़रीब में ही खेल का मैदान होना चाहिए।

सामूहिक हाज़िरी, समारोहों और खेलों के लिए समतल मैदान हो।

फूल-पौधे और सब्ज़ी-तरकारी इत्यादि के लिए गुंजाइश हो।

- छोटे बच्चों को खेल-खेल में शिक्षा देने या कोई मंसूबा चलाने : लिए जगह हो।

(छ) कुशल प्रबन्धन

- स्कूल/मदरसे का प्रबन्धन अच्छा और कुशल हो।
- आन्तरिक वातावरण बच्चों के शिक्षा-दीक्षा के लिए अनुकूल हो।
- शिक्षकों के आपसी सम्बन्ध अच्छे हों और वे आपस में अं प्रधानाध्यापक के साथ पूरा सहयोग करें।
- छात्रों और शिक्षकों के सम्बन्ध अच्छे हों।
- स्कूल/मदरसे की दिनचर्या और नियमों आदि की सब लो पाबन्दी करें।
- छात्रों को सज़ा देने या किसी शिक्षक के ख़िलाफ़ कार्रवाई कर की नौबत कम ही आए।
- स्कूल/मदरसे के नियम-क़ानून और प्रधानाध्याक और प्रबन्धन : आदेशों का छात्र और शिक्षक सम्मान करें।
- हाज़िरी और समय की सख़्ती से पाबन्दी की जाए।
- कक्षा, खेल के मैदान या बोर्डिंग (छात्रावास) में छात्र शरारत से (और नैतिक दोषों से सुरक्षित रहें।
- विभिन्न अवसरों के नियमों और शिष्टाचारों का पूरा ध्या रखा जाए।
- प्रबन्धन में लोगों की दिली मदद हासिल करने के लिए उन मशवरों को मुमकिन हद तक अहमियत दी जाए और संस्था व नुक़सान पहुँचाए बिना लोगों की सुविधाओं का ज़्यादा से ज़्या ध्यान रखा जाए।
- छात्रों और शिक्षकों में अनुशासन (Discipline) पैदा करने अं

उसे बढ़ावा देने की कोशिश की जाए, ताकि बाहरी दबाव की कम से कम ज़रूरत पेश आए।

ये हैं वे अनिवार्य शर्तें, जिनपर शिक्षण-संस्थाओं की कामयाबी निर्भर करती है। मगर इसका यह मतलब हरगिज़ नहीं कि जब तक ये शर्तें पूरी न हों, कोई स्कूल/मदरसा क़ायम न किया जाए या पहले से क़ायम हो, तो उसकी कामयाबी की तरफ़ से निराश और उदासीन हो जाया जाए, बल्कि कहने का मतलब सिर्फ़ यह है कि संस्था के स्टाफ़ और दूसरे ज़िम्मेदार लोग इन शर्तों को पूरा करने के लिए भरसक कोशिश करें और ग़ैर-मामूली उम्मीदें जोड़ लेने के बाद उम्मीद के ख़िलाफ़ नतीजा देखकर उदासी का शिकार न हों। स्टाफ़ अगर योग्य हों और काम का पूरा ख़ाका उनके सामने हो, तो धीरे-धीरे कठिनाइयों पर क़ाबू पाया जा सकता है और संस्था को ठीक ढंग से चलाने के लिए ज़रूरी शर्तें पूरी हो सकती हैं। संसाधनों की कमी से काम नहीं रुका करते। अपनी जी-तोड़ कोशिश और समर्पण-भाव से योग्यता पैदा कर ली जाए, तो अल्लाह तआला निराश नहीं करता। उसके ख़ज़ाना की कोई सीमा नहीं है।

☆☆☆

अध्याय-17

शिक्षक के गुण

शिक्षक का स्थान बहुत ऊँचा है। वह छात्रों का आध्यात्मिक पित और समुदाय का निर्माता है। आनेवाली नस्लों के चरित्र और व्यक्तित का निर्माण इसी के ज़िम्मे है। भविष्य के नागरिकों का बनना-बिगड़न बहुत कुछ इसी की कोशिश पर निर्भर है। एक शिक्षक का छात्रों । सम्पर्क होता है और उसके अभिभावकों से भी, संस्था के ज़िम्मेदारों । भी वास्ता पड़ता है और आम जनता से भी। इनमें से हर एक की निगा शिक्षक में कुछ गुण तलाश करती हैं, जो बहरहाल बहुत ज़रूरी भी हैं शिक्षक को अपने अन्दर इन गुणों को परवान चढ़ाने की फ़िक्र औ कोशिश करनी चाहिए, ताकि वह अपनी ज़िम्मेदारियों को भी उचित ढं से अंजाम दे सके और उन सबको संतुष्ट भी कर सके।

(क) छात्रों की नज़र में शिक्षक को कैसा होना चाहिए ?

इस प्रश्न के उत्तर में अलग-अलग योग्यताओं और रुझान के छात्र ने अपने विचार जो प्रकट किए, उनका सारांश यहाँ पेश किया जाता है-

- समुदाय (उम्मत) का निर्माता होने की हैसियत से शिक्षक को उच चरित्र और आचरण का मालिक होना चाहिए।
- उसके पहनावा और चाल-ढाल में सादगी के साथ पाकीज़गी औ शिष्टता हो।
- छात्रों से बरताव में इंसाफ़, न्याय और बराबरी का ध्यान रखे।
- सज़ा देने में सावधानी बरते।
- गुस्सा और उग्रता, डाँट-फटकार, ताना और निन्दा से काम लेने । बजाय छात्रों की भावनाओं और उनके आत्मसम्मान का ख़्या

रखे और ठंडे दिल से उनकी कठिनाइयों को समझने और उन्हें हल करने की कोशिश करे।

मेहनत से पढ़ाए और छात्रों से भी मेहनत ले, खेल का भी मौक़ा दे।

गृह-कार्य (Home-work) ज़रूर दे, मगर बहुत ज़्यादा बोझ न लादे। गृह-कार्य (होमवर्क) या दूसरे लेखन-कार्य को समय पर ही जाँच दिया करे और सुधार के बाद तुरन्त कॉपियाँ वापस कर दिया करे।

पढ़ाते समय छात्रों की दिलचस्पी और अभिरुचि का ध्यान रखे। उकताहट न पैदा होने दे।

कक्षा के सभी बच्चों की आदतों और व्यवहारों से परिचित हो और पूरी कक्षा पर नज़र रखे।

छात्रों के प्रश्नों और एतिराज़ों का ख़ुशी-ख़ुशी उत्तर दे।

दिल से पढ़ाए, सिर्फ़ ड्यूटी न बजाए।

अच्छे आचरण, मिलनसार, हँसमुख और नरम स्वभाव का हो।

सादा, आसान ज़बान और दिलकश अन्दाज़ में बातें समझाने की योग्यता रखता हो।

- पिछले पाठों को दोहराकर ख़ूब याद करा दिया करे।

डटकर पढ़ाए, मगर कभी-कभी दिलचस्प बातचीत का भी मौक़ा दे।

बातचीत का अन्दाज़ मीठा हो, कड़वी बातों को भी सहन कर ले, झगड़ालू बिलकुल न हो।

नम्बर देने में उदार हो।

अपने वर्ग का नाम ऊँचा करने की कोशिश करे।

छात्रों की ज़रूरतों को समझता हो।

ग़रीब-मुहताज छात्रों की सहयाता की भावना रखता हो।

कभी-कभी घुमाने-फिराने के लिए अपने साथ ले जाकर दर्शनीय स्थान दिखाए।

छात्रों को मुसीबत सहन करने की आदत डलवाए और मुसीबत में उनकी मदद करे।

छात्रों के सामान्य विचार अपने बारे में अच्छी बनाए। अपने ख़िलाफ़ नफ़रत न पैदा होने दे।

ये हैं वे गुण जो बच्चे अपने शिक्षक में देखना चाहते हैं। इन मासूमों की कौन-सी इच्छा अनुचित है? क्या इनमें से किसी को नज़रअन्दाज़ करके हम सफल शिक्षक बन सकते हैं?

(ख) अभिभावकों की नज़र में शिक्षक

बच्चों के अभिभावक शिक्षक में निम्नलिखित गुण देखना चाहते हैं–

अच्छे आचरणवाला और मिलनसार हो।

उनके बच्चों पर ज़्यादा से ज़्यादा ध्यान दे।

बच्चों के शैक्षिक और नैतिक विकास से उन्हें अवगत कराता रहे।

उनसे सम्पर्क रखे और उनके बच्चों के सिलसिले में उन्हें सुझाव देता और उनसे सुझाव लेता रहे।

उनके विचार मालूम करे और उनकी आलोचनाओं को ख़ुशी-ख़ुशी सुने।

उनके बच्चों से स्नेह और मुहब्बत का बरताव करे।

उनके बच्चों के सामने उनकी या उनके घर की बुराई न करे।

उनके बच्चों के ज्ञान और आचरण पर अपनी कोशिशों के प्रभाव उन्हें महसूस करा दे।

उनसे उनके बच्चों की ख़ामियों और कमियों को बयान करने में सावधानी और सतर्कता से काम ले।

उनके बच्चों के प्रशिक्षण, सुधार और भविष्य में सफलता की तरफ़ से खुद भी पूरी उम्मीद रखे और उन्हें भी निराश न करे।

(ग) ज़िम्मेदारों की नज़र में शिक्षक

शिक्षण-संस्थाओं के ज़िम्मेदार (पदाधिकारी) शिक्षकों में निम्नलिखित गुण तलाश करते हैं—

अपने पद और मनसब के योग्य हो।

अपनी ज़िम्मेदारियों को पहचाननेवाला हो।

संस्था की भलाई चाहनेवाला हो और उसकी लोकप्रियता को क़ायम करने या बरक़रार रखने के लिए ज़िम्मेदारी से कुछ बढ़कर काम करे।

स्वाभिमानी, आत्मसम्मान वाला और संतुष्ट स्वभाव वाला हो। अधिकारों और सुविधाओं की माँग करने में हठी और प्रतिस्पर्धा करने वाला न हो।

मिल-जुलकर काम करने की योग्यता रखता हो और अपने सहकर्मियों और संस्था के ज़िम्मेदारों का पूरा सहयोग करे।

हिदायतों और सुझावों पर स्वेच्छा से और ख़ुशी-ख़ुशी लगन के साथ अमल करे।

आलोचना को ख़ुशी-ख़ुशी सहन करे और स्थिति में सुधार की तरफ़ ध्यान दे।

संस्था के क़ानून-क़ायदों और समय का ख़ुद भी पाबन्द हो और छात्रों से भी पाबन्दी कराए।

अपने काम में सच्ची दिलचस्पी ले। ज़िम्मेदारी को बोझ न समझे।

अपनी योग्यता और क्षमता बढ़ाने की कोशिश करता रहे और

संस्था के विभिन्न कामों को अंजाम देने की भी कुछ न कुछ योग्यता पैदा करने की कोशिश और चिन्ता करे।

(घ) जनता (Public) की नज़र में शिक्षक

अच्छे आचरणवाला और मिलनसार हो।

उनकी भलाई और उन्नति से दिलचस्पी रखता हो।

समाज-सुधार के लिए प्रयासरत रहे और इस सिलसिले में उनकी मदद और मार्गदर्शन करे।

उनके आपसी झगड़ों में किसी का पक्ष न ले और निष्पक्ष-भाव से स्थिति के सुधार के लिए कोशिश करे।

संस्था के समारोहों और कार्यक्रमों में उनको शामिल होने का निमंत्रण दे।

कभी-कभी मशहूर लोगों के द्वारा सार्वजनिक सभा की व्यवस्था कराए और पब्लिक को उनसे मिलने के अवसर उपलब्ध कराए।

उनकी आपत्तियों, आलोचनाओं और सुझावों को खुशी-खुशी सुने और ठंडे दिल से उन्हें संतुष्ट करने की कोशिश करे।

(ङ) शिक्षाविदों की नज़र में शिक्षक

इन्हीं सभी कारणों से शिक्षाविदों ने शिक्षकों में निम्नलिखित गुण अनिवार्य ठहराए हैं–

उच्च्य आचरण और चरित्र;

शैक्षिक योग्यता और शिक्षण-क्षमता;

बाल-मनोविज्ञान और शिक्षण-विधि का जानकार होना;

तन्दुरुस्ती और ताक़त (ऊजा);

संयम और सहनशीलता, मामले की समझ और निर्णय-शक्ति;

बच्चों से स्वाभाविक लगाव;

पढ़ाने-लिखाने के पेशे से स्वाभाविक लगाव;

अध्ययन के प्रति गहरी अभिरुचि;

व्यवस्था और शान्ति क़ायम करने की योग्यता;

मीठे बोल बोलना और बातचीत का प्रभावी तरीक़ा;

समर्पण और लगन;

हमदर्दी, स्नेह और सुधार की भावना;

हँसमुख स्वभाव और मिलनसारी।

ये हैं वे ज़रूरी गुण जिन्हें हर शिक्षक को अपने अन्दर परवान चढ़ना चाहिए; क्योंकि इनके बिना शिक्षा-दीक्षा जैसा पित्तामारी का काम फलदायक हो ही नहीं सकता।

रहे दीनी (धार्मिक) मदरसों के शिक्षक, तो उनमें कुछ और ज़्यादा गुणों की भी ज़रूरत होती है। उदाहरण के लिए—

अक़ीदों (आस्थाओं), नज़रियों और अमली ज़िन्दगी की दृष्टि से भला होना;

धार्मिक विषयों में महारत के साथ अक़ीदों (अस्थाओं) और विचारधारा की दृष्टि से मुसलमान होना;

इस्लाम पर चलनेवाला और नैतिक गुणों से भरा-पूरा होना;

झूठे और बातिल नज़रियों से प्रभावित और पराजित न होना;

ज्ञान और कर्म के घमण्ड में न पड़ना;

सन्तोष और त्याग करनेवाला, मान-सम्मान और धन-दौलत का लोभी न होना;

अपने बाल-बच्चों और परिवारवालों को भी शरीअत (इस्लामी जीवन-विधान) की हदों की पाबन्दी कराना; क्योंकि इन गुणों के बिना धार्मिक शिक्षा-दीक्षा प्रभावी न होगी।

☆☆☆

अध्याय-18

प्रधानाध्यापक और उसकी ज़िम्मेदारियाँ

स्कूल/मदरसे में प्रधानाध्यापक की वही हैसियत होती है, जो शरीर में दिमाग़ और गाड़ी में ड्राइवर की होती है। संस्था को चलाने और शिक्षण-प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था करने का सीधे-सीधे वही ज़िम्मेदार होता है। स्कूल/मदरसे की सफलता, असफलता, विकास और गिरावट का भार बहुत कुछ उसी पर है। संस्था के ज़िम्मेदारों और शिक्षकों, छात्रों, अभिभावकों और समान्य लोगों को संतुष्ट रखना और उन सबकी सहायता प्राप्त करना उसी के ज़िम्मे होता है। स्कूल/मदरसे के स्तर क़ायम रखना या बनाए रखना, समुचित वातावरण, व्यवस्था और क़ानून-क़ायदों को लागू करने का भार भी उसी पर होता है। स्पष्ट है, इतनी बड़ी और व्यापक ज़िम्मेदारियों का बोझ ले जाने और अपने आपको इस पद की प्रतिष्ठा के अनुकूल होने के लिए प्रधानाध्यापक में निम्नलिखित गुण होने चाहिएँ—

प्रधानाध्यापक के गुण

आदर्श आचरण और चरित्र;

ज़िम्मदारी का ग़ैर-मामूली एहसास;

ज़िम्मेदारी का गहरा एहसास, लगन और तत्परता से ख़ुद काम करने और दूसरे में यही भावना पैदा करने की फ़िक्र;

लोगों की परख, परखी नज़र;

मामलों की समझ और निर्णय-शक्ति;

प्रबन्धन-क्षमता;

अच्छा आचरण और मिलनसारी;

संयम और दृढ़ता;

शिक्षण-संस्था का विकास करने और उसे आगे बढ़ाने की चिन्ता;

सहानुभूति और भलाई की भावना;

विनम्रतापूर्वक आलोचना सहने और आपत्ति करनेवालों को संतुष्ट करने और लोगों की सलाह पर ठंडे दिल से ग़ौर करने की योग्यता;

शैक्षणिक योग्यता और शैक्षणिक अनुभव बढ़ाने, अध्ययन-मनन और निरीक्षण का शौक़;

सहयोग करने और दूसरों का सहयोग प्राप्त करने की क्षमता;

आत्मविश्वासी होने और दूसरों को विश्वास में लेने और सबका विश्वास प्राप्त करने की योग्यता;

निरपेक्षता, निष्पक्षता और पार्टीबन्दी से बचना और सच्चाई और इंसाफ़ का ध्यान रखना;

नियम-क़ानून की कड़ाई से पाबन्दी और दूसरों को पाबन्द बनाने की कोशिश।

कर्तव्य

प्रधानाध्यापक के कर्तव्य और उसकी ज़िम्मेदारियाँ बहुत व्यापक और बहुआयामी होती हैं। स्कूल/मदरसे के छोटे-बड़े सभी कामों की देखभाल करनेवाला और उनके बारे में जवाबदेह वही होता है। उसके कार्य विभिन्न प्रकार के होते हैं। नीचे विभिन्न शीर्षकों के तहत उसके महत्त्वपूर्ण कर्तव्य दर्ज हैं—

(क) कुशल प्रबन्धन

स्कूल/मदरसे की इमारत में विस्तार, बदलाव, मरम्मत और सफ़ाई का इन्तिज़ाम ख़ुद करना या इस सम्बन्ध में ज़िम्मेदारों का ध्यान आकर्षित कराना।

फ़र्नीचर, ब्लैकबोर्ड, बैठने के सामान इत्यादि उपलब्ध कराना, मरम्मत व सफ़ाई और रंगाई-पुताई।

सुविधा के मुताबिक़ ज़रूरी शिक्षा-सामग्री मुहैया कराना। उदाहरण के लिए नक़्शे, ग्लोब, चार्ट्स, विज्ञान और प्रयोगशाला के उपकरण, शिक्षक के लिए सहायक पुस्तकें इत्यादि समय पर मुहैया कराना।

विभिन्न प्रकार के खेलों के लिए ज़रूरी सामान मुहैया कराना।

स्टाफ़-सदस्यों (शिक्षक आदि) और उनकी ज़िम्मेदारियों में ज़रूरत के मुताबिक़ गुंजाइश और बढ़ोत्तरी, रद्दो-बदल इत्यादि। ये सब काम अगर मुमकिन हो, तो लम्बी छुट्टियों के समय अंजाम पाने चाहिएँ, ताकि पढ़ाने-लिखाने का काम शुरू होने में क्षति न हो।

साल भर के काम की संक्षिप्त रिपोर्ट और भविष्य की योजनाओं का ख़ाका तैयार करना।

उम्र और योग्यता के लिहाज़ से बच्चों का नामांकन और वर्गीकरण आदि।

स्टाफ़ के विभिन्न सदस्यों की सलाहियतों के मुताबिक़ कामों का बंटावारा और उनके पूरा किए जाने के बारे में ज़रूरी दिशा-निर्देश।

पाठ्यक्रम से सम्बन्धित विषय और पाठ्यसहगामी गतिविधियों और कामों और शारीरिक और नैतिक प्रशिक्षण का विस्तृत ख़ाका और समय-सारिणी बनाना और ज़रूरत के मुताबिक़ उनमें बदलाव करना।

कक्षाओं के मॉनीटर, खेलों के कप्तान, छात्रों के इज्तिमा (सभा) और दूसरे पाठ्यसहगामी गतिविधियों के लिए विभिन्न अधिकारियों का चयन या मनोनयन इत्यादि का प्रबन्ध करना।

- स्कूल रिकॉर्ड (दाख़िल-ख़ारिज रजिस्टर, छात्रों की हाज़िरी का रजिस्टर, स्टाफ की हाज़िरी का रजिस्टर, स्टॉक-रजिस्टर, निरीक्षण पुस्तिका, शिक्षकों की डायरियाँ, छात्रों के तरक्क़ी चार्ट्स, हिसाबों के रजिस्टर इत्यादि) क्रमबद्ध तरीक़े और पाबन्दी से रखवाना।

(ख) देखभाल

स्कूल/मदरसे में छोटे-बड़े पाठ्यक्रम सम्बन्धी, पाठ्यसहगामी जितने काम भी अंजाम पा रहे हों, सबकी निगरानी प्रधानाध्यापक के ज़िम्मे होती है। उसकी ड्यूटी है कि वह देखे कि सारे काम ख़ूब अच्छी तरह अंजाम पा रहे हैं। अगर किसी सिलसिले में कोई कोताही हो रही हो, तो उसके दूर करने का मुनासिब उपाय करे। ख़ासकर–

- **हाज़िरी और समय की पाबन्दी की निगरानी :** प्रधानाध्यापक को बराबर देखते रहना चाहिए कि निर्धारित समय पर घंटी बजती है और शिक्षक और छात्र हाज़िरी की पूरी पाबन्दी करते हैं। बिना किसी उचित कारण के ग़ैर-हाज़िरी या देर हाज़िरी को हरगिज़ बरदाश्त नहीं करना चाहिए और न बिना इजाज़त कक्षा या स्कूल/मदरसे से बाहर जाने देना चाहिए। आने-जाने दोनों के लिए हाज़िरी रजिस्टर रखे जाएँ। समय पर हाज़िरी हो। छुट्टी के लिए यथासम्भव लिखित रूप में इजाज़त लेने का पाबन्द बनाया जाए।
- **शिक्षण-कार्य की निगरानी :** हर रोज़ कम से कम एक बार टहल-घूम कर देख लेना चाहिए कि पढ़ाई-लिखाई मेहनत और अच्छे ढंग से हो रही है। कक्षाओं की व्यवस्था ठीक-ठाक है, ब्लैकबोर्ड और शिक्षा-सामग्री का विधिवत प्रयोग हो रहा है। छात्रों के बैठने का इन्तिज़ाम और तौर-तरीक़ा इत्यादि ठीक है। कभी-कभी छात्रों की कॉपियाँ मँगाकर अन्दाज़ा लगा लेना चाहिए कि लेखन-कार्य ठीक-ठीक और सफ़ाई के साथ होता है और

कॉपियाँ समय पर ही जाँची जाती हैं। इसी तरह आर्ट-क्राफ़्ट में बच्चों के किए हुए काम का भी कभी-कभी जायज़ा लेते रहना चाहिए। नए और अनुभवहीन शिक्षकों के काम की ज़्यादा निगरानी होनी चाहिए। लेकिन वाज़ेह रहे निगरानी का यह सारा काम शिक्षकों की ग़लतियाँ पकड़ने के जज़्बे से नहीं, बल्कि शिक्षकों की कठिनाइयों को दूर करने, काम को ज़्यादा बेहतर तरीक़े से अंजाम देने में रहनुमाई करने और रचनात्मक और हमदर्दी भरी आलोचना के लिए होनी चाहिए। छात्रों के सामने शिक्षकों की ग़लतियों और कोताहियों की पकड़ हरगिज़ न होनी चाहिए, बल्कि ऑफ़िस में बुलाकर व्यक्तिगत मुलाक़ातों में बहुत अच्छे ढंग से तवज्जोह दिलानी चाहिए।

- **प्रशिक्षण-कार्य की निगरानी :** छात्रों की आदतों और उनके तौर-तरीक़ों पर कड़ी नज़र रखनी चाहिए और उनकी धार्मिक, नैतिक और व्यावहारिक शिक्षा-दीक्षा के प्रोग्राम को समुचित रूप से कार्य-रूप देने की पूरी देखभाल करनी चाहिए। कोताहियों और अनुशासन के तोड़ने का समय पर ही नोटिस लेना चाहिए और उसको दूर करने का उचित उपाय करना चाहिए। शिक्षकों और अभिभावकों को भी इस तरफ़ बराबर ध्यान दिलाते रहना चाहिए और खुद भी इस तरफ़ ग़ैर-मामूली ध्यान देना चाहिए। शिक्षा का ऊँचे से ऊँचा स्तर भी शिक्षा-दीक्षा की त्रुटियों की भरपाई नहीं कर सकता। इसलिए शिक्षा-दीक्षा के मामले में किसी कोताही को नज़रअन्दाज़ नहीं करना चाहिए।
- **ऑफ़िस के कामों की निगरानी :** रजिस्टरों को पूरा करना, आवदेनों के निपटाने, चिट्ठियों के समय पर ही उत्तर देने, विधिवत रूप से हिसाब-किताब रखने और शिक्षकों से सम्बन्धित मासिक रिपोर्टों, डायरियों, हाज़िरी रजिस्टर, छात्रों के प्रगति चार्ट

को पूरा किया जाने पर भी नज़र रखनी चाहिए।

- **तन्दुरुस्ती और सफ़ाई की निगरानी :** छात्रों के शरीर और लिबास, मसजिद, मदरसे के कमरे, बरामदे और परिसर, पाख़ाना, पेशाबख़ाना और नालियों इत्यादि की सफ़ाई की भी बराबर देखभाल करनी चाहिए। कभी-कभी छात्रों की तन्दुरुस्ती की जाँच और टीकाकरण इत्यादि का प्रबन्ध होना चाहिए।
- **खेलों की निगरानी :** बच्चों के लिए खेल भी निहायत ज़रूरी हैं। बच्चों की उम्र और शारीरिक दशा को ध्यान में रखकर उनके ग्रूप बना दिए जाएँ। तरह-तरह के खेलों, ड्रिल, पी॰ टी॰ इत्यादि की विधिवत् व्यवस्था की जाए। खेल से दिलचस्पी रखनेवाले शिक्षकों को उन ग्रूपों का निरीक्षक नियुक्त किया जाए। प्रधानाध्यापक को ख़ुद भी देखते रहना चाहिए कि खेल पाबन्दी से होते हैं, हर ग्रूप को खेलने का मौक़ा मिलता है और ज़िम्मेदार शिक्षक दिलचस्पी और तत्परता से निगरानी करते हैं। खेलों में कभी-कभी ख़ुद भी भाग लिया जा सके, तो दिलचस्पी में अभिवृद्धि हो जाती है। इस तरफ़ विशेष ध्यान देना चाहिए कि खेल-कूद में बेईमानी और मुक़ाबले में झगड़े इत्यादि की नौबत न आने पाए। बच्चों के मन में यह बात बिठा दी जाए कि ईमानदारी हार-जीत से बड़ी चीज़ है और हार हो या जीत आपे से बाहर न हों, बल्कि खिलाड़ियों की स्प्रिट से खेलें।
- **छात्रावास की देखभाल :** छात्रावासों में छात्रों को आम तौर से इस उद्देश्य से रखा जाता है कि उनकी शिक्षा-दीक्षा, विकास और लालन-पालन ज़्यादा बेहतर तरीक़े से होगा। प्रधानाध्यापक को देखते रहना चाहिए कि बच्चों के नैतिक और व्यावहारिक प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था की जाती है, खाने की व्यवस्था सन्तोषजनक है, तन्दुरुस्ती और सफ़ाई पर पूरा ध्यान दिया जाता है। छात्रावास

की ज़िन्दगी में छात्रों को सबसे ज़्यादा शिकायत खाने की होती है। इस तरफ़ विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। खाने की व्यवस्था में यथासम्भव छात्रों की पसन्द और मशवरों का ध्यान रखना चाहिए, ताकि उनमें असन्तोष की भावना न पैदा हो।

छात्रावासों में जहाँ शिक्षा-दीक्षा के अच्छे मौक़े होते हैं, वहाँ कुछ बिगड़े हुए बच्चों की वजह से नैतिक ख़राबियाँ पैदा होने की आशंका रहती है। इसकी बहुत ज़्यादा देखभाल होनी चाहिए।

इस बात की भी देखभाल होनी चाहिए कि छात्र छात्रावास की सफ़ाई, रसोईघर का इन्तिज़ाम, बीमार छात्रों की सेवा-सुश्रूषा, खिलाने-पिलाने की व्यवस्था, नमाज़ का आयोजन, वाचनालय और बच्चों की दुकान इत्यादि की व्यवस्था व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से खुद अंजाम दें। सादा ज़िन्दगी, मेहनत- मशक्क़त और हर तरह का काम खुद कर लेने के आदी बनें। स्वास्थ्य-सुरक्षा के नियमों और सामाजिक शिष्टाचारों के पाबन्द बनें। फ़ुरसत के समयों में उनकी व्यस्तता और दिलचस्पी का भी पूरा प्रबन्ध किया जाए।

- **विभिन्न कामों, गतिविधियों और मनसूबों की निगरानी :** बच्चों की शिक्षा-दीक्षा और भाषण-सम्बन्धी कार्यक्रम, अंत्याक्षरी, वाद-विवाद, परिचर्चा, जनसेवा-विभाग, हॉबियों, पिकनिक, शैक्षिक पर्यटन, महत्त्वपूर्ण लोगों के द्वारा भाषण, शैक्षिक सप्ताह और मदरसे के दूसरे समारोह और कार्यक्रम, प्राथमिक चिकित्सा सहायता, मदरसे की दुकान, संग्रहालय (अजायबघर), प्रदर्शनी इत्यादि की भी समुचित देखभाल होनी चाहिए, ताकि ये सभी काम खूब अच्छी और निरन्तरता के साथ अंजाम पाते रहें।
- **वाचनालय और लाइब्रेरी की निगरानी :** वाचनालय (Reading Room) में ज़रूरी और फ़ायदेमन्द अख़बार, पत्र-पत्रिकाएँ मँगवाने की व्यवस्था होनी चाहिए और इस बात की पूरी देखभाल होनी

चाहिए कि शिक्षक और छात्र इनसे पूरा-पूरा फ़ायदा उठाएँ। इसी तरह लाइब्रेरी को भी विभिन्न विषयों की ज़रूरी और फ़ायदेमन्द किताबों से सजाए रखने और छात्रों तथा शिक्षकों द्वारा उनसे लाभ उठाने का इन्तिज़ाम होना चाहिए। स्पष्ट रहे कि इन कामों के ज़िम्मेदार, यूँ तो विभिन्न शिक्षक, मॉनीटर या छात्रों की टोलियाँ होंगी, जिन्हें अपने विवेक से काम करने के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े मिलेंगे। मगर निगरानी बहरहाल प्रधानाध्यापक ही के ज़िम्मे होगी और निगरानी का उद्देश्य उनकी ग़लतियाँ पकड़ना नहीं, बल्कि ज़िम्मेदारियों को ठीक-ठीक अंजाम देने के लिए मुनासिब मशवरे देना, उपाय बताना और सही मार्गदर्शन करना होगा।

(ग) शिक्षण-कार्य

प्रधानाध्यापक को विधिवत् रूप से पढ़ाने-लिखाने की भी कुछ न कुछ ज़िम्मेदारी ज़रूर लेनी चाहिए। लेकिन पढ़ाने-लिखाने का यह काम किसी एक ही कक्षा तक सीमित न हो, बल्कि विभिन्न कक्षाओं में विभाजित हो, ताकि ज़्यादा से ज़्यादा कक्षाओं के छात्रों से सम्पर्क बन सके। इस तरह वह बच्चों के नैतिक और व्यावहारिक विकास का सीधे-सीधे अन्दाज़ा कर सकेगा और विभिन्न विषयों के सिलसिले में शिक्षण का व्यावहारिक नमूना भी पेश कर सकेगा, लेकिन शिक्षण का यह काम सप्ताह में अठारह-बीस पीरियड से ज़्यादा न हो, ताकि वह अपने दूसरे कामों को ख़ूब अच्छी तरह अंजाम देने के लिए एकाग्रता के साथ समय निकाल सके।

(घ) परीक्षा, जाँच, निरीक्षण और अवलोकन इत्यादि कार्य

छात्रों की शिक्षा-दीक्षा के बारे में संस्था की सामूहिक कोशिशों का अन्दाज़ा लगाने के लिए परीक्षाओं और जायज़ों इत्यादि की ग़ैर-मामूली अहमियत है। इसके लिए साप्ताहिक और मासिक जाँच, तिमाही, छमाही

और वार्षिक परीक्षाएँ, धार्मिक, नैतिक, सामाजिक और व्यावहारिक जीवन का समय-समय पर निरीक्षण, भाषण, निबन्ध-लेखन, अंत्याक्षरी, सुलेखन, आर्ट-क्राफ़्ट और खेल-प्रतियोगिताएँ, बौद्धिक परीक्षण और समय-समय पर संस्था के ज़िम्मेदार और दूसरे शिक्षा-विशेषज्ञों के निरीक्षण-कार्य की व्यवस्था होनी चाहिए। इन निरीक्षणों में निम्नलिखित कामों को ध्यान में रखना चाहिए—

(1) हर हाल में ईमानदारी बरती जाए और ईमानदारी को सफलता या असफलता पर प्राथमिकता दी जाए।

(2) सही जायज़ा लेने की कोशिश की जाए। किसी के बारे में अच्छे या बुरे विचार और जायज़ा लेनेवालों के व्यक्तिगत विचारों को कम से कम दख़ल हो।

(3) इनके लिए बनावटी व्यवस्था न की जाए, बल्कि ये स्कूल/मदरसे के क्रिया-कलापों का स्वाभाविक अंग मालूम हों। जायज़ा लेनेवालों या निरीक्षण (मुआइना) करनेवालों को ग़लतफ़हमी या भ्रम में डालने के लिए इन मौक़ों पर कुछ लोग जो विशेष प्रबन्ध करते हैं, वह एक तरह का धोखा और प्रधानाध्यापक और स्टाफ़ की शान के ख़िलाफ़ है। इन हरकतों से हर हाल में परहेज़ किया जाए।

(4) जाँच के नतीजों से छात्रों, अभिभावकों और संस्था के ज़िम्मेदारों को बराबर अवगत कराया जाए और स्थिति में सुधार के लिए समुचित प्रस्ताव, उपाय और सुझाव दिए जाएँ।

(5) नतीजों की रौशनी में स्टाफ़ के हर सदस्य अपनी कोशिशों, शिक्षण-प्रशिक्षण-विधि आदि में समुचित बदलाव करें और कोताहियों को भविष्य में दूर करने की योजना और नियमावली बनाएँ।

(ङ) सम्पर्क

अपने कर्तव्यों को ख़ूब अच्छी तरह अंजाम देने के लिए

प्रधानाध्यापक को विभिन्न लोगों के सहयोग की ज़रूरत पड़ती है। स्पष्ट है, यह उसी समय सम्भव है जब वह उन सभी लोगों से विशेष सम्बन्ध रखे, जिनके सहयोग की उसे ज़रूरत है। उदाहरण के लिए—

- **शिक्षकों से सम्पर्क :** शिक्षकों से सहानुभूति और मित्रता का सम्बन्ध बहुत ही ज़रूरी है। यही लोग प्रधानाध्यापक के हाथ-पैर हैं और इन्हीं की मदद से शिक्षा-दीक्षा का सारा काम अंजाम दिया जा सकता है। इनको संतुष्ट रखना, इनके सुझावों से पूरा फ़ायदा उठाना, इनकी कठिनाइयों को दूर करने की कोशिश करना, इनके साथ विनम्रता और मुहब्बत से पेश आना ज़रूरी है। इसके लिए इनसे व्यक्तिगत रूप से मुलाक़ातें करना, स्टाफ़ की मीटिंगों का आयोजन करना, अपने-अपने काम को अंजाम देने के सम्बन्ध में उनसे योजनाएँ बनवाना और हर सम्भव सहायता और मार्गदर्शन ज़रूरी है। हाँ, विनम्रता का हरगिज़ यह मतलब नहीं है कि नियम-क़ानूनों में ढील बरती जाए या कामचोरी, लापरवाही, नियमों के उल्लंघन और आपत्तिजनक हरकतों की छूट दी जाए। इन मामलों में कड़ी पकड़ होनी चाहिए और स्थिति को सुधारने की पूरी कोशिश करनी चाहिए।
- **छात्रों से सम्बन्ध :** कोशिश तो यही होनी चाहिए कि संस्था के सभी छात्रों से प्रधानाध्यापक का प्रत्यक्ष सम्बन्ध हो, लेकिन अगर संख्या बहुत ज़्यादा हो, तो कम से कम सभी कक्षाओं के मॉनीटरों, विभिन्न टोलियों के लीडरों, खेल के कप्तान, यूनियनों के पदाधिकारियों से तो ज़रूर ही सम्बन्ध रखना चाहिए। इस तरह छात्रों को संतुष्ट रखने और उनका सहयोग प्राप्त करने और उनका समुचित प्रशिक्षण करने के मौक़े मिलेंगे।
- **छात्रों के अभिभावकों से सम्पर्क :** मुलाक़ातों या चिट्ठी-पत्रियों द्वारा और स्कूल/मदरसे के समारोहों और कार्यक्रमों में शामिल होने

की दावत देकर छात्रों के अभिभावकों से भी सम्पर्क बनाया जाए ताकि बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में उनका सहयोग प्राप्त हो सके।

मुलाक़ात पर उनसे विनम्रता से पेश आया जाए। उनकी आलोचनाएँ विनम्रतापूर्वक सुनी जाएँ। उनके बच्चों की शिक्षा-दीक्षा और संस्था की बेहतरी के लिए उनसे सुझाव माँगे जाएँ और हमदर्दी के साथ उनके कर्तव्य समझाए जाएँ।

- **दूसरी शिक्षण-संस्थाओं के ज़िम्मेदारों से सम्पर्क :** पास-पड़ोस या क़रीब की दूसरी शिक्षण-संस्थाओं से भी सम्बन्ध रखना चाहिए। कभी-कभी उनके यहाँ जाकर उनकी गतिविधियों का जायज़ा लेना चाहिए और उनसे विचार-विनिमय करके उनके अनुभवों और सुझावों से फ़ायदा उठाना चाहिए। उन्हें स्कूल के समारोहों और कार्यक्रमों में शामिल होने के लिए आमंत्रित करना चाहिए।
- **आम लोगों (Public) से सम्बन्ध :** दीनी (धार्मिक) मदरसों के लिए लोगों का सहयोग बेहद ज़रूरी है। पब्लिक के ज़िम्मेदार लोगों से भी सम्पर्क बनाने और मदरसे की बेहतरी के लिए उनका सहयोग प्राप्त करने की भी कोशिश होनी चाहिए। आम लोगों का सहयोग उसी समय प्राप्त हो सकेगा, जब प्रधानाध्यापक स्थानीय पार्टीबन्दियों आदि से अलग रहे और आम लोगों की भलाई और तरक्क़ी और उनके सुधार के बारे में भरसक कोशिश करे।

उपर्युक्त बातों से आसानी के साथ अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि प्रधानाध्यापक की ज़िम्मेदारियाँ बहुत व्यापक और बहुआयामी हैं और वह अपने कर्तव्यों को उस स्थिति में ही पूरा कर सकता है, जब वह अत्यन्त कर्तव्यनिष्ठा, तत्परता, ईशपरायणता, विनम्रता और धीरज और दृढ़ता से काम ले।

☆☆☆

अध्याय-19

वर्ग-शिक्षक के कर्तव्य

(Duties of Class-Teacher)

छात्रों की उम्र, योग्यता और क्षमता की दृष्टि से उन्हें विभिन्न कक्षाओं में बाँट दिया जाता है। हर कक्षा में कमो-बेश 25-30 छात्र होते हैं। जहाँ तक पढ़ाने-लिखाने का सम्बन्ध है, तो एक कक्षा के अलग-अलग विषय और काम विभिन्न शिक्षकों के ज़िम्मे होते हैं। लेकिन प्राथमिक कक्षाओं में मुनासिब यही होता है कि एक कक्षा के ज़्यादातर विषय एक ही शिक्षक के सुपुर्द हों और जिस शिक्षक के ज़्यादा घंटे हों, उसी को वर्ग-शिक्षक (Class-Teacher) बना दिया जाए। वर्ग-शिक्षक की ज़िम्मेदारियाँ दूसरे विषयों को पढ़ाने के साथ अपनी कक्षा के सम्बन्ध में निम्नलिखित होती हैं–

- समय पर अपनी कक्षा की हाज़िरी लेना, हाज़िरी के बाद छात्रों को शिक्षा-दीक्षा के सम्बन्ध में ज़रूरी हिदायतें देना और हिदायतों पर अमल का जायज़ा लेते रहना।
- समय पर हाज़िर होने के लिए छात्रों को प्रेरित करना और ज़रूरत हो, तो उनके अभिभावकों को ध्यान दिलाना।
- ग़ैर-हाज़िरी के सही कारण का पता लगाने के लिए ज़रूरत हो, तो बच्चे के अभिभावक से सम्पर्क करना।
- अगर बच्चा बीमार हो, तो समय निकालकर हाल-चाल पूछने के लिए जाना और जो कुछ कर सकते हों, बच्चे के लिए करना।
- छात्रों में स्प्रिट पैदा करना कि बिना उचित कारण के वे ग़ैर-हाज़िर

न रहें और अगर उचित कारण की बुनियाद पर ग़ैर-हाज़िरी या छुट्टी की ज़रूरत पड़े, तो आवदेन के द्वारा पहले से छुट्टी ले लिया करें। अगर ख़ुद न कर सकते हों, तो अपने अभिभावक या और किसी ज़िम्मेदार के द्वारा इजाज़त हासिल करें।

- उचित कारण या इजाज़त के बिना ग़ैर-हाज़िर होने पर कड़ाई से पूछगछ करना और भविष्य में सतर्कता के लिए उनके अभिभावकों को ध्यान दिलाना।

- छात्रों से कक्षा के नियमों की पाबन्दी कराना। उदाहरण के लिए—

(क) सलाम करके कक्षा में आना या वापस जाना।

(ख) इजाज़त लेकर कक्षा से बाहर जाना।

(ग) फ़र्श पर बैठते हों, तो जूते एक तरफ़ अच्छी तरह रखना।

(घ) कक्षा में शोर-शराबा या मार-पीट और छेड़-छाड़ से परहेज़ करना।

(ङ) सलाम करके और इजाज़त लेकर दूसरी कक्षाओं में दाख़िल होना।

(च) विलम्ब से आने पर इजाज़त लेकर अन्दर आना।

(छ) बातचीत में शिष्टाचार का लिहाज़ रखना और अच्छी तरह प्रश्न करना या उत्तर देना। (मुस्कराते, खुजलाते हुए, मुँह या नाक में उँगली डालकर या बेढंगे तरीक़े से प्रश्न करें या उत्तर दें, तो उनका उसी समय सुधार किया जाए।)

(ज) प्रश्न-उत्तर, बातचीत, सामान का बँटवारा इत्यादि और सामान्य सामूहिक अवसरों पर अपनी बारी का ध्यान रखना।

(झ) अपनी जगह को साफ़-सुथरा और अपने सामान को क्रम से और अच्छी तरह रखना।

(ञ) अपनी बारी पर कक्षा, बरामदे या सेहन को साफ़-सुथरा करना और सामान को सजाकर क्रमबद्ध ढंग से रखना।

(ट) सफ़ाई के बाद कूड़ा-कर्कट, एक तरफ़ टीन या टोकरी में जमा

करके कूड़े की जगह पर डाल आना।

(ठ) काग़ज़ के टुकड़े, फलों के बीज और छिलके इत्यादि को इधर-उधर बिखेरने के बजाय कूड़ेदान में डाल आना।

(ड) कक्षा में मॉनीटर, खेल के कप्तान, टोली के लीडर, मीटिंगों के अधिकारियों इत्यादि की देख-रेख में आज्ञापालन और अपने कर्तव्यों को पूरा करने में उनके साथ पूरा सहयोग करना।

(ण) कक्षा की सजावट, सफ़ाई, अच्छाई और बेहतरी के लिए आपस में सहयोग करना।

- महीने में कम से कम एक बार—

(क) छात्रों की शिक्षा-सामग्री, किताबों, कॉपियों, ज्यूमेट्री बॉक्स, रंग के डब्बों, क्राफ्ट के उपकरणों इत्यादि का जायज़ा लेना और उन चीज़ों की हिफ़ाज़त, क्रमबद्धता और सफ़ाई के लिए ज़रूरी हिदायतें देना।

(ख) अगर मौसम अच्छा हो, तो शैक्षिक पर्यटन (Excursion) या पिकनिक (मनोरंजन) के लिए ले जाना। (पिकनिक या भ्रमण पर बाहर ले जाने से पहले उद्देश्य तय करके छात्रों को बता दिया जाए और ज़रूरी तैयारी करके सारे काम छात्रों में व्यक्तिगत रूप से या टोलियाँ बनाकर बाँट दिया जाए। यथासम्भव सारा काम अपनी देख-रेख में छात्रों ही को करने दिया जाए, ताकि शैक्षिक पर्यटन या पिकनिक का मक़सद ज़्यादा से ज़्यादा हासिल हो सके।)

(ग) सामान्य तन्दुरुस्ती और सफ़ाई का जायज़ा लेना और शरीर और कपड़ों की सफ़ाई और ग़ुस्ल, हजामत, नाख़ुन कटवाने इत्यादि के बारे में ज़रूरत के मुताबिक़ हिदायतें देना।

(घ) छात्रों की साप्ताहिक गोष्ठी में हर बच्चे को महीने में कम से कम

एक बार व्यावहारिक रूप से हिस्सा लेने यानी भाषण देने, कविता या कहानी सुनाने पर आमादा करना।

(ङ) हर बच्चे से व्यक्तिगत रूप से मुलाक़ात करके पढ़ने-लिखने या आदतों और तौर-तरीक़ों से सम्बन्धित बातों की तरफ़ ध्यान दिलाना।

(च) तरक्क़ी का जायज़ा लेकर नतीजा से अभिभावकों को सूचित करना।

- अपनी कक्षा के छात्रों के अभिभावकों से निजी सम्पर्क रखना। कभी-कभी अभिभावकों से मुलाक़ात करके या टेलीफ़ोन या पत्रों के द्वारा उनके बच्चों की शिक्षा-दीक्षा के बारे में उचित सुझाव देना और उनकी मदद हासिल करना।
- कक्षा की सफ़ाई, इज्तिमा, पिकनिक, शैक्षिक पर्यटन, हस्तलिखित पत्रिका, कक्षा की सजावट, स्कूल/मदरसे के विभिन्न समारोहों, कार्यक्रमों और पाठ्यसहगामी गतिविधियों की व्यवस्थाओं में सभी छात्रों को उनकी क्षमताओं के मुताबिक़ ज़िम्मेदारियाँ सौंपे।
- अपनी कक्षा के सभी छात्रों की धार्मिक, शैक्षिक, नैतिक और शारीरिक दशा पर नज़र रखना। इनके बारे में ज़रूरी रिकॉर्ड रखना और ज़रूरत के मुताबिक़ व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से ध्यान दिलाना।
- कोताहियों और कमज़ोरियों पर क़ाबू पाने के लिए छात्रों में आत्मविश्वास और तौबा करने की भावना उभारना। (यह उसी समय हो सकता है, जब छात्रों के साथ प्यार और मुहब्बत से पेश आया जाए। उनके मान-सम्मान का ध्यान रखा जाए। शिक्षा-दीक्षा में ताना और निन्दा, डाँट-फटकार, कड़ाई और शारीरिक सज़ा से यथासम्भव बचा जाए।)

- कक्षा में छात्रों के सामने अनुकरण के योग्य आदर्श पेश करना। (छात्रों के आचरण और चरित्र पर सबसे ज़्यादा प्रभाव शिक्षकों के व्यावहारिक और नैतिक जीवन का पड़ता है। उनके सामने जिन ख़ूबियों या ख़ामियों का प्रदर्शन किया जाता है, उन्हीं का वे जाने-अनजाने अनुकरण करते हैं। अगर शिक्षकों की कथनी और करनी में समानता न हो, तो छात्रों का चरित्र बहुत प्रभावित होता है। ख़ासकर नियम-क़ानून और समय की पाबन्दी, बातचीत का अच्छा ढंग, इस्लामी चाल-ढाल, सद्व्यवहार, हमदर्दी, त्याग, सहयोग और ज़िम्मेदारियों के पूरा करने में लगन और तत्परता इत्यादि के बारे में।)
- हाज़िरी रजिस्टर, डायरी, प्रगति चार्ट और कक्षा के दूसरे रिकॉर्ड रखना।

☆☆☆

अध्याय-20

विषय-शिक्षक के कर्तव्य

(Duties of Subject-Teacher)

हर शिक्षक को एक या कई विषय पढ़ाने पड़ते हैं। विषय-शिक्षक की हैसियत से हर शिक्षक को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए—

- घंटा बजने के बाद जल्द कक्षा में पहुँचना और ख़त्म होते ही जल्द दूसरे शिक्षक के लिए जगह ख़ाली कर देना।
- सलाम करके कक्षा में दाख़िल होना और सलाम करके वापस जाना।
- कक्षा में दाख़िल होते ही निम्नलिखित बातों पर एक सरसरी नज़र डाल लेना और पढ़ाई शुरू करने से पहले यथासम्भव समुचित कार्रवाई कर देना—

(क) बच्चों के जूते एक तरफ़ विधिवत रखे हैं (शर्त यह है कि बच्चे फ़र्श पर बैठे हों)।

(ख) कक्षा साफ़-सुथरा है और सारा सामान (डेस्क, बेंच, ब्लैकबोर्ड इत्यादि) ठीक ढंग से लगा हुआ है।

(ग) सभी छात्र हाज़िर हैं? अगर नहीं तो ग़ैर-हाज़िरी का कारण।

(घ) ब्लैकबोर्ड साफ़ है।

(ङ) छात्रों की शिक्षा-सामग्री (सम्बन्धित विषय से परे) इधर-उधर बिखरे हुए तो नहीं हैं।

(च) छात्र किसी दूसरे काम में लगे हुए तो नहीं हैं।

(छ) चॉक, डस्टर, सहायक सामग्री (चार्ट, नक़्शे, ग्लोब इत्यादि) मौजूद हैं।

- समुचित और संक्षिप्त भूमिका के द्वारा छात्रों को आमादा करके शिक्षण-कार्य शुरू करना।
- नया पाठ शुरू करने से पहले संक्षेप में पिछले पाठ को दोहराना।
- शिक्षण-कार्य हमेशा औसत योग्यता के छात्रों (जिनकी संख्या कक्षा में आधे से ज़्यादा होती है) की रफ़्तार से अंजाम देना।
- पढ़ाने-लिखाने के दौरान निम्नलिखित बातें नज़र के सामने रहें–

(क) बोलने का ढंग आसान और दिलचस्प हो।

(ख) शिक्षक को पाठ को पढ़ाने में ख़ुद आनन्द आ रहा हो और वह ग़ैर-मामूली दिलचस्पी और लगन का प्रशर्दन करे।

(ग) कभी-कभी प्रश्न करके अन्दाज़ा कर लिया करे कि पाठ को छात्र ख़ूब अच्छी तरह समझ रहे हैं।

(घ) छात्र के बैठने का ढंग या खड़े होने का अन्दाज़, किताब की पकड़, किताब और आँखों के बीच की दूरी मुनासिब है।

(ङ) पाठ को आगे बढ़ाने में छात्र अमली दिलचस्पी ले रहे हैं।

(च) पूरी कक्षा एकाग्र है। कोई छात्र किसी दूसरे काम में लगा हुआ तो नहीं है।

(छ) ब्लैकबोर्ड का मुनासिब इस्तेमाल हो रहा है। पाठ को स्पष्ट करने के लिए सहायक सामग्री, उपकरण, चार्ट्स इत्यादि से मदद ली जा रही है।

(ज) प्रश्न और उत्तर या बातचीत में छात्र अपनी बारी और शिष्टाचार और शालीनता का ध्यान रखते हैं।

(झ) छात्रों के प्रश्नों या आपत्तियों के सन्तोषजनक उत्तर दिए जा रहे हैं।

(ञ) रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से पाठ को जोड़ कर पढ़ाया जा रहा है।

(ट) पाठ 'बिस्मिल्लाह' पढ़कर शुरू किए जाते हैं।

- व्यावहारिक और लेखन-कार्य के दौरान निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाए–

(क) छात्रों की सीटें ठीक हों। कमर सीधी रहे। कॉपी और आँख के बीच दूरी उचित हो।

(ख) क़लम, औज़ार या ब्रुश की पकड़ सही हो और काम सही-सही और सफ़ाई के साथ अंजाम दिया जाए।

(ग) कक्षा में टहल-घूमकर ज़रूरत के मुताबिक़ व्यक्तिगत रूप से मदद की जाए।

(घ) हाशिया, दिनांक, विषय-शीर्षक, पैराग्राफ़, डैश इत्यादि का ध्यान रखा जाए।

(ङ) छात्र स्याही या रंग इधर-उधर फैलाने, छिड़कने या उँगलियों में भरने न पाएँ।

(च) कॉपी, क़लम, ब्रुश, पेंसिल या दूसरे सामान का इस्तेमाल उचित ढंग से हो।

- लेखन-कार्य हो या गृह-कार्य (होमवर्क) जल्द से ज़ल्द जाँचकर वापस किया जाए।
- सप्ताह में पाँच दिन पढ़ाया जाए और एक दिन दोहराने के लिए रखा जाए।
- साप्ताहिक या मासिक जाँच (Test) पाबन्दी से करके रिकॉर्ड रखा जाए।
- साल भर के काम को सत्रवार, मासिक और साप्ताहिक ईकाइयों में बाँटकर यथासम्भव योजना के मुताबिक़ किया जाए। लेकिन दोहराने की पूरी गुंजाइश रखी जाए।
- छात्रों की उम्र, उनकी दिलचस्पियों, तन्दुरुस्ती और काम के मौक़ों

को ध्यान में रखकर गृह-कार्य (होमवर्क) दिया जाए।

प्राथमिक कक्षाओं में, जहाँ तक हो, कक्षा में किए हुए काम ही पर बस करना चाहिए।

गृह-कार्य (होमवर्क) पर यथासम्भव भरोसा न किया जाए।

अपने विषय को आसान और दिलचस्प बनाने के लिए ज़रूरी सहायक सामग्री मुहैया कराई जाए।

पढ़ाने के दौरान अगर छात्रों से किसी नैतिक कमज़ोरी ज़ाहिर हो या शिष्टाचारों का उल्लंघन हो, तो उसी समय सुधार किया जाए या परिस्थिति की माँग हो, तो बाद में अलग बुला कर समझा दिया जाए।

सम्बन्धित विषय में अपनी योग्यता बढ़ाने और शिक्षण-कार्य को ख़ूब अच्छी तरह अंजाम देने के लिए शिक्षक को पाबन्दी से कुछ पढ़ते रहना चाहिए।

विषय-शिक्षक की सबसे बड़ी सफलता यही है कि छात्रों में उस विषय से लगाव पैदा हो जाए। इसके लिए ज़रूरी है कि शिक्षक को अपने विषय से खुद बहुत लगाव हो और वह पढ़ाने में छात्रों की दिलचस्पी और आसानी का ध्यान रखे।

इस्लामी मदरसों के शिक्षकों की ज़िम्मेदारियाँ

ये तो थे वे कर्तव्य जो हर शिक्षण संस्था के शिक्षकों को अंजाम देने ही पड़ते हैं। रहे इस्लामी शिक्षण संस्थाओं के शिक्षक तो उनसे कुछ और ज़्यादा उम्मीदें रखी जाती हैं। उदाहरण के लिए—

दूसरों के मुक़ाबले में अधिक मेहनत और पूरे समर्पण भाव से शिक्षण के काम को अंजाम देना।

भौतिकता के इस दौर में छात्रों और उनके अभिभावकों को धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता और महत्त्व का एहसास दिलाना।

सीमित संसाधनों और सीमित स्टाफ़ से काम चलाना।

धार्मिक (इस्लामी) शिक्षा और मातृभाषा के साथ दूसरे विषयों में भी स्तर ऊँचा करना।

कम वेतन पर ही सन्तोष करना और काम की अधिकता को सहर्ष स्वीकार करना।

शिक्षित करने के साथ-साथ बच्चों का स्नेह और प्रेम से प्रशिक्षण और सुधार करना।

अपने अच्छे रवैये और आदर्श नमूने से इस्लाम और मुस्लिम समुदाय और धार्मिक संस्थाओं और हस्तियों के प्रति मुहब्बत व लगाव पैदा कराना।

मदरसे को लोगों के ध्यान और दिलचस्पियों का केन्द्र बनाना और इसके विकास के लिए सबकी सहायता प्राप्त करना।

मदरसे को आसपास की आबादी में इस्लाम के प्रचार-प्रसार का केन्द्र बनाना और इसके द्वारा बच्चों के अभिभावकों का भी धार्मिक प्रशिक्षण करना।

पार्टीबन्दी से दामन बचाते हुए हर विचारधारा के लोगों की सहानुभूति प्राप्त करना।

आम तौर पर ख़ुद ही फ़ंड भी उपलब्ध करना और मदरसे को अपने बल-बूते पर चलाना।

संस्था के ज़िम्मेदारों को संतुष्ट करना और आपत्ति करनेवालों की आपत्तियों और सन्देहों को दूर करना।

शिक्षा-विभाग के स्थानीय कर्मचारियों से निमटना, आदि।

अल्लाह तआला मदरसे की शिक्षकों तरह-तरह के इन कर्तव्यों को पूरा करने का सौभाग्य प्रदान करे। आमीन!

☆☆☆

अध्याय-21

शारीरिक प्रशिक्षण

(Physical Training)

अल्लाह तआला ने मनुष्य को अपना प्रतिनिधि (ख़लीफ़ा) बनाया है। इस पद की गरिमा के मुताबिक़ उसे एक सुडौल शरीर प्रदान किया है, जिसमें विभिन्न आश्वयक और संतुलित अंग रखे हैं; तरह-तरह की शक्तियाँ, योग्यताएँ और प्रतिभा प्रदान की हैं। मनुष्य की शक्तियाँ और योग्यताएँ उसी समय काम आ सकती हैं, जब उसका शरीर स्वस्थ और शक्तिशाली हो। इसलिए हमें बच्चों के शारीरिक विकास और तन्दुरुस्ती की तरफ़ विशेष ध्यान देना चाहिए। यह काम घर और स्कूल/मदरसे दोनों के सहयोग से सम्भव होगा।

शारीरिक विकास के लिए ज़रूरी चीज़ें

तन्दुरुस्ती और शक्ति के लिए निम्नलिखित चीज़ें ज़रूरी हैं—

(1) सन्तुलित आहार, (2) साफ़ पानी, (3) ताज़ा हवा, (4) समुचित रौशनी, (5) शारीरिक परिश्रम या व्यायाम और खेल, (6) अच्छा पोशाक, (7) सफ़ाई-सुथराई, (8) गहरी नींद, (9) उमंग और उत्साह, (10) सच्चरित्रता।

(1) सन्तुलित आहार

शरीर के समुचित विकास के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ पौष्टिक और सन्तुलित आहार है। जन्म के बाद बच्चे के लिए सबसे अच्छा आहार माँ

का दूध है। जो बच्चे माँ के दूध से वंचित रह जाते हैं, वे तरह-तरह की शारीरिक कमज़ोरियों का शिकार हो जाते हैं। इसलिए किसी विवशता के बिना बच्चे को माँ के दूध से हरगिज़ वंचित न किया जाए। दूध छुड़ाने के बाद भी कोशिश यही होनी चाहिए कि बच्चे को उचित मात्रा में दूध मिले और दूसरे आहार भी, जो पतले और जल्द पचनेवाले हों। इसके बाद क्रमशः सन्तुलन के साथ वे सभी हलाल और साफ़-सुथरा भोजन खाए और खिलाए जा सकते हैं, जो आदर-सम्मान के साथ जायज़ तरीक़े से हासिल हो सकें। हाँ, खाने में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाए—

- भोजन यथासम्भव सन्तुलित और पौष्टिक हो। भोजन में वे सभी चीज़ें उचित मात्रा मे शामिल हों, जो शरीर के समुचित विकास के लिए ज़रूरी हैं।
- सादा और जल्द पचनेवाला हो यानी बहुत ज़्यादा चटपटा, मसालेदार, तैलीय या मीठा न हो और न शरीर में गड़बड़ी पैदा करनेवाला या नशीला हो।
- साफ़-सुथरा हो, अनाज, सब्ज़ी या तरकारी इत्यादि पकाने से पहले ख़ूब साफ़-सुथरा कर लिया जाए। साफ़ बर्तन में पकाया और खाया जाए। मक्खी और धूल-गर्द से खाने को बचाया जाए। ख़्वांचावालों की चीज़ों से परहेज़ किया जाए।
- अच्छी तरह पका हो, ताकि मज़ेदार और सुपाच्य हो जाए और भरपूर रुचि से खाया जाए।
- मौसमी फल और सब्ज़ियाँ, दूध, घी, गोश्त, मछली, अंडा इत्यादि में से जो चीज़ें भी मुहैया हो सकें, भोजन का ज़रूरी हिस्सा बनाए जाएँ। पास-पड़ोस के मौसमी फल और तरकारियाँ तो बहरहाल हासिल करने की कोशिश की जाए।
- यथासम्भव तरो-ताज़ा हो; सड़े-गले, बासी या डब्बों में बन्द भोजन

से परहेज़ करना चाहिए।

भूख ख़ूब लगने पर खाया जाए और कुछ भूख बाक़ी हो, तो हाथ रोक लिया जाए।

खाना इत्मीनान से ख़ूब चबा-चबाकर खाया जाए।

दो खानों के बीच में कम से कम तीन घंटे का अन्तराल रखा जाए, ताकि भोजन ख़ूब पच जाए।

खुश-खुश 'बिस्मिल्लाह' करके खाना शुरू किया जाए और खाने के बाद अल्लाह का शुक्र अदा किया जाए।

सन्तुलित आहार : सन्तुलित आहार वह है, जो शरीर के लिए ज़रूरी हो।

आहार इसलिए इस्तेमाल किया जाता है कि –

काम-काज के लिए शरीर को शक्ति और ऊर्जा प्राप्त हो।

काम या क्रिया-कलाप में शरीर की जो कोशिका काम आ गई या टूट गई है, उसकी मरम्मत हो जाए।

शरीर के विकास और हृष्ट-पुष्ट बनाने में मदद मिले।

रोगाणुओं से लड़ने की शरीर में शक्ति और क्षमता पैदा हो।

ये लक्ष्य उसी समय प्राप्त हो सकते हैं, जब आहार में निम्नलिखित तत्त्व हों–

(1) कार्बोहाइड्रेट, (2) वसा (चिकनाई), (3) प्रोटीन (शरीर के विकास के लिए आवश्यक तत्त्व), (4) लवण, (5) पानी, (6) विटामिन।

(1) कार्बोहाइड्रेट : भोजन का यह तत्त्व ऑक्सीजन के साथ शरीर को ऊर्जा और शक्ति पहुँचाता है। गेहूँ, जौ, चावल, आलू, गाजर, सागोदाना, मक्का, गुड़, शक्कर, चुकन्दर, अंगूर इत्यादि से प्राप्त होता है।

(2) वसा : यह भी ऑक्सीजन के साथ मिलकर जलती और शरीर को

शक्ति और ऊर्जा पहुँचाती है। बाल, त्वचा और नाखुनों को अच्छी हालत में रखती है। दूसरे तत्त्वों को पचाने में भी मदद देती है। तेल, घी, मक्खन और चर्बी से प्राप्त होती है। चिकनाइयों में आम तौर पर विटामिन 'ए' और 'डी' पाए जाते हैं।

(3) प्रोटीन : भोजन का यह तत्त्व पचकर शरीर के विकास और टूटे-फूटे हिस्सों की मरम्मत में मदद देता है। इसलिए मटर, विभिन्न प्रकार की दालों, गोश्त, अंडा, मछली, दूध, दही और अनाजों की ऊपरी परत में (जिसे चोकर समझकर फेंक दिया जाता है) यह तत्त्व पाया जाता है।

(4) लवण (खनिज पदार्थ) : यह तत्त्व हड्डियाँ, दाँत, लार, रग, पुट्ठे इत्यादि बनाने में काम आता है। ख़ून के पर्याप्त निर्माण और शरीर के संतुलित विकास में मदद करता है। इनमें नमक, लोहा, चूना और फ़ॉसफ़ोरस इत्यादि के तत्त्व शामिल होते हैं। खाने के नमक, मौसमी फल, तरकारियों, ताज़ा सब्ज़ियों, गोश्त, अंडा, मछली इत्यादि से यह तत्त्व प्राप्त होता है।

(5) पानी : यह भी भोजन का महत्त्वपूर्ण और बड़ा अंग है। इसकी मदद से भोजन पचता और पतला होकर शरीर के विभिन्न हिस्सों में पहुँचता है। ख़ून का संचार इसी की मदद से होता है। शरीर की गन्दगी धुलकर बाहर निकलती है। शरीर के विभिन्न अंगों से जो लाभदायक द्रव निकलता है, इसके बनने में भी पानी से मदद मिलती है। इसलिए खाने के साथ थोड़ा, मगर डेढ़-दो घंटे बाद काफ़ी मात्रा में पानी पीना चाहिए।

(6) विटामिन : जैसा कि इनके नाम से स्पष्ट है, ये भोजन के वे ज़रूरी तत्त्व हैं, जो जीवित और स्वस्थ रहने के लिए बहुत ही ज़रूरी हैं। इनके बिना—

- तन्दुरुस्ती अच्छी नहीं रह सकती।
- शरीर का समुचित विकास नहीं हो सकता।

- बीमारियों का सामना करने की शरीर में क्षमता नहीं रह जाती।
- शरीर तरह-तरह की बीमारियों का शिकार हो जाता है।

विटामिन के विभिन्न प्रकार हैं, जिनमें ख़ास-ख़ास ये हैं–

(अ) **विटामिन 'ए'** : शरीर को विकसित करने, संक्रामक रोगों से बचाने और रोगों का मुक़ाबला करने के लिए विटामिन 'ए' बहुत ज़रूरी है। इससे फेफड़े और दाँत मज़बूत होते हैं। आँखों और त्वचा को स्वस्थ रखने में इससे मदद मिलती है। विटामिन 'ए' कलेजी, गुर्दा, साग-सब्ज़ी, दूध, मक्खन, अंडा इत्यादि में होता है। तेज़ आँच में पकाने या भूनने से विटामिन नष्ट हो जाते हैं। इसका ध्यान रखना चाहिए। फल, सब्ज़ियाँ, सलाद इत्यादि यथासम्भव कच्चे खाने चाहिएँ। इसकी कमी से रतौंधी हो जाती है और बच्चों का समुचित विकास नहीं हो पाता।

(आ) **विटामिन 'बी'** : भूख बढ़ाने, पाचन-शक्ति को ठीक रखने, ख़ून में लाल कण बनाने के लिए ज़रूरी है। इससे क़ब्ज़, चिड़चिड़ापन और सरदर्द दूर होता है। दूध, अंडे, ख़मीर, अंकुरित चने, बिना छने हुए मोटे आटे में पाया जाता है। चावल की ऊपरी परत में भी होता है। लेकिन बहुत ज़्यादा साफ़ कर देने या पीच (मांड़) निकाल देने से नष्ट हो जाता है। इसकी कमी से शरीर फूल जाता है। हाथ-पैर कमज़ोर हो जाते हैं और तरह-तरह की स्नायु-सम्बन्धी बीमारियों की आशंका रहती है।

(इ) **विटामिन 'सी'** : यह दाँतों के लिए ज़रूरी है। इसकी कमी से मसूढ़े फूल जाते हैं और इनसे ख़ून निकलने लगता है। चर्मरोग की भी आशंका रहती है। ये काले किशमिश, नीबू, सन्तरे, टमाटर, गाजर, आलू, ताज़ा फल और सब्ज़ियों में पाया जाता है। फल और सब्ज़ी के सूख जाने पर नष्ट हो जाता है।

(ई) **विटामिन 'डी'** : दूध, मक्खन, अंडे, कलेजी, मछली के तेल और

सूरज की रौशनी में पाया जाता है। यह हड्डियाँ बनाने, शरीर को बढ़ाने और मज़बूत करने में मदद देता है। इसकी कमी से बच्चों को 'सूखा रोग' हो जाता है या हड्डियों की बनावट में ख़राबी आ जाती है।

(उ) मिटामिन 'ई' : प्रजनन-सम्बन्धी तत्त्व के लिए ज़रूरी है। यह विटामिन साग, वनस्पति तेल, बिनौले, मटर, बादाम, पिस्ता, खजूर, छुहारे, ख़रबूज़ा के बीज इत्यादि में होता है। इसकी कमी से यौन-दुर्बलता की आशंका रहती है।

स्पष्ट है सन्तुलित आहार में इन सभी तत्त्वों का समुचित मात्रा में होना ज़रूरी है। हर रोज़ भोजन में कमो-बेश–

● काबोहाइड्रेट : 470 ग्राम; ● प्रोटीन 120 ग्राम; ● चिकनाई (वसा) 60 ग्राम; ● लवण 45 ग्राम मिलना चाहिए।

दूध एक ऐसा आहार है, जिसमें लगभग सभी तत्त्व पाए जाते हैं। मौसमी फल, तरकारियों, साग-सब्ज़ियों, गोश्त, मछली, अंडे इत्यादि में भी तरह-तरह के तत्त्व पाए जाते हैं। इसी लिए बच्चों को ये चीज़ें मिलनी चाहिएँ। एक दिन-रात के विभिन्न समयों में सात-आठ साल से चौदह-पन्द्रह साल की उम्र तक बच्चों के लिए सन्तुलित भोजन की कुल मात्रा कमो-बेश यह होनी चाहिए–

● आटा, चावल इत्यादि 400 ग्राम; ● साग-सब्ज़ी, आलू, गोश्त, मछली, अंडा, दालें इत्यादि मिलाकर 235 ग्राम; ● दूध 250 मिलीलीटर; ● घी, मक्खन, तेल या चर्बी 60 मिलीलीटर; ● फल, गाजर, टमाटर इत्यादि 120 ग्राम, गुड़ या शक्कर 90 मिलीग्राम।

(2) साफ़ पानी

तन्दुरुस्ती के लिए दूसरी ज़रूरी चीज़ साफ़ पानी है। हर आदमी को एक दिन-रात में कमो-बेश डेढ़ लीटर पानी पीना पड़ता है।

पानी के लाभ : पानी की मदद से–

- रक्त का संचार ठीक रहता है और रक्त शरीर के हर हिस्से तक आसानी से पहुँच जाता है।
- भोजन ख़ूब अच्छी तरह पचता और शरीर की कोशिकाएँ बनती हैं।
- शरीर का तापमान सन्तुलित रहता है।
- शरीर के अन्दर की गन्दगी और ज़हरीला पदार्थ, पेशाब, पसीना, थूक, बलग़म इत्यादि के साथ बाहर निकलता है।
- आमाशय, आँतें और नालियाँ इत्यादि धुलकर साफ़ हो जाती हैं।

पानी साफ़ और ताज़ा होना चाहिए। साफ़ पानी की पहचान यह है कि इसमें किसी तरह का स्वाद, रंग या गन्ध न हो। गन्दा पानी तन्दुरुस्ती के लिए बहुत ही हानिकारक है। विभिन्न घातक रोग इसी से फैलते हैं। इसलिए साफ़ और ताज़ा पानी प्राप्त करने का पूरा प्रबन्ध होना चाहिए। संक्रामक रोगों के समय पानी उबालकर पीना चाहिए।

(3) ताज़ा हवा

तन्दुरुस्ती के लिए तीसरी महत्त्वपूर्ण चीज़ साफ़ और ताज़ा हवा है। ज़िन्दा रहने के लिए हवा की ज़रूरत और उपयोगिता बयान की मुहताज नहीं। साफ़ पानी की तरह साफ़ हवा में भी न तो कोई रंग होता है, न मज़ा और न गन्ध। हवा में यूँ तो विभिन्न गैसें शामिल होती हैं, लेकिन इनमें दो मुख्य हैं–

(1) ऑक्सीजन 21 प्रतिशत यानी कमो-बेश पाँचवाँ हिस्सा।

(2) नाइट्रोजन 78 प्रतिशत यानी लगभग 4/5 हिस्सा, बाक़ी एक प्रतिशत से कुछ कम ऑर्गन और नाममात्र कॉर्बन डाइऑक्साइड, जल-वाष्प और धूल के कण इत्यादि। ऑक्सीजन की विशेषता है चीज़ों के जलने में मदद देना और नाइट्रोजन का काम ऑक्सीजन

की तीव्रता को सन्तुलित और बरदाश्त के लायक़ बनाना है। ऑक्सीजन शरीर के लिए बहुत ज़रूरी है। इसी के कारण–

- शरीर में हरारत, ख़ून में गर्मी और फ़ुर्ती और चुस्ती पैदा होती है।
- शरीर के अन्दर का ज़हरीला पदार्थ गैस बनकर बाहर निकलता है। अगर शरीर को समुचित मात्रा में ऑक्सीजन न मिले, तो जीना कठिन हो जाए।

हवा क्यों गन्दी हो जाती है?

वायु-प्रदूषण के आम तौर पर निम्नलिखित कारण होते हैं–

- सांस निकालने से शरीर के अन्दर की ज़हरीली गैस हवा में मिलकर हवा को गन्दा कर देती है।
- आग के जलने से ऑक्सीजन ख़र्च हो जाती है और कॉर्बन डाइऑक्साइड हवा में मिलकर हवा को ख़राब कर देती है।
- चीज़ों के सड़ने-गलने से बदबूदार और ज़हरीली गैसें हवा में शामिल होकर हवा को गन्दा कर देती हैं।
- हवा में गर्द-गुब्बार शामिल हो जाने से भी हवा तन्दुरुस्ती के लिए हानिकारक हो जाती है। इसलिए मुँह ढाँपकर या कमरा बन्द करके सोना, बन्द कमरे में जलती हुई आग या अंगीठी सुलगाकर सोना, बदबूदार हवा में सांस लेना या गर्द-गुब्बार में नाक पर रूमाल न रखना तन्दुरुस्ती के लिए अत्यन्त हानिकारक, बल्कि कभी-कभी घातक साबित होता है।

हवा को साफ़ करने के प्राकृतिक साधन

- **पेड़-पौधे :** हवा को साफ़ करने में पेड़-पौधे बड़ी मदद देते हैं। जानदार जो गन्दी हवा सांस के साथ बाहर निकालते हैं, ये उनको अवशोषित करके ऑक्सीजन बाहर निकालते हैं। इस तरह हवा

साफ़ होती रहती है।

- **सूरज :** सूरज की किरणें हवा में शामिल होकर रोगाणुओं को ख़त्म करके हवा को साफ़ कर देती हैं।
- **बारिश :** बारिश की वजह से हवा में मिली हुई गर्द-गुब्बार नीचे गिर जाती है और तन्दुरुस्ती के लिए हानिकारक गैसें ख़त्म हो जाती हैं।
- **हवा का चलना :** हवा के चलते रहने से भी गन्दगी साफ़ हो जाती है।
- **ऑक्सीजन :** हवा में मिली हुई ऑक्सीजन ख़ुद भी हवा की गन्दगी को तितर-बितर और ख़त्म करके साफ़ करती रहती है।

साफ़ हवा प्राप्त करने के लिए मकान हवादार होना चाहिए। खुले मैदानों में खेलने और बाग़ों या पार्कों में टहलने-घूमने का अवसर मिलना चाहिए। मुँह (चेहरा) खोलकर हवादार जगहों में सोने की आदत डालनी चाहिए। सेहन में पौधे लगाए जा सकें, तो थोड़े-बहुत फूल-पौधे ज़रूर लगाने चाहिएँ।

(4) रौशनी

तन्दुरुस्ती के लिए चौथी ज़रूरी चीज़ रौशनी है। जिन पौधों को रौशनी नहीं मिल पाती है, वे पीले पड़ जाते हैं और उनका विकास रुक जाता है। शहरों की तंग और अंधेरी गलियों में रहने और घुटे-घुटे माहौल में सांस लेनेवालों के मुक़ाबले में देहात के रौशनी भरे और खुले माहौल में पलनेवालों की तन्दुरुस्ती की तुलना करके रौशनी की ज़रूरत और उपयोगिता का ख़ूब अच्छी तरह अन्दाज़ा किया जा सकता है।

रौशनी प्राप्त करने के दो साधन हैं—

- **प्राकृतिक :** जैसे सूरज और चाँद से।
- **कृत्रिम :** यानी चराग़, लालटेन, बिजली इत्यादि से।

सूरज की रौशनी तन्दुरुस्ती के लिए बेहद ज़रूरी है। मकान में धूप आने की पूरी गुंजाइश होनी चाहिए। इससे मकान में सीलन भी नहीं रहती! और बीमारियों के जीवाणु मर जाते हैं। सामान को कभी-कभी धूप देना चाहिए। जिन घरों में धूप का गुज़र नहीं होता और वे सीले और घुटे हुए होते हैं। उनमें तरह-तरह के रोगाणु पलते और तन्दुरुस्ती पर बुरा असर डालते हैं। अगर कमरों में धूप का गुज़र न हो या उनमें सीलन हो तो कभी-कभार चूना छिड़कना और गन्धक, लोबान इत्यादि सुलगाने का प्रबन्ध होना चाहिए। पढ़ने-लिखने या बारीक काम करने के लिए पर्याप्त रौशनी होनी चाहिए। लेकिन रौशनी सामने या दाएँ से न आए, बल्कि बाएँ या ऊपर या पीछे से आए तो आँखों पर बुरा असर नहीं पड़ता। बहुत मद्धिम या बहुत तेज़ रौशनी आँखों को ख़राब कर देती है। पढ़ने-लिखने या बारीक काम करनेवालों को रौशनी के इस्तेमाल में बहुत सचेत रहना चाहिए। पर्याप्त रौशनी में काम करें और आँखों में सीधे-सीधे रौशनी न पड़ने दें।

(5) शारीरिक परिश्रम, व्यायाम और खेल

अल्लाह तआला ने हमें यह शरीर काम-काज और मेहनत-मशक़्क़त के लिए दिया है। शारीरिक परिश्रम ही से शरीर के अंग मज़बूत होते हैं। उनमें चुस्ती और शक्ति आती है। भूख ख़ूब लगती, गहरी नींद आती और भोजन अच्छी तरह पचता है और जो कुछ खाइए शरीर की कोशिकाएँ बनती हैं। शरीर के अन्दर की गन्दगी और ज़हरीले या अवशिष्ट पदार्थ आसानी से बाहर निकल जाते हैं और तबीअत ठीक रहती है। जिस अंग से काम नहीं लिया जाता, वह धीरे-धीरे कमज़ोर होकर बेकार हो जाता है। इसलिए मेहनत-मशक़्क़त का आदी बनना चाहिए। बच्चे खेल-कूद के रसिया होते हैं। वे खेल ही खेल में काफ़ी शारीरिक परिश्रम कर लेते हैं, शर्त यह है कि उन्हें खेल की सुविधाएँ

प्राप्त हों। हाँ, लिखने-पढ़ने, मानसिक काम करने या दुकान पर बैठनेवाले लोगों को आम तौर पर शारीरिक परिश्रम का अवसर कम मिलता है। ऐसे लोगों के लिए ज़रूरी है कि वे कुछ समय शारीरिक व्यायाम या खेल के लिए ज़रूर निकालें। बड़ी उम्र के लोग सुबह-शाम नियमित रूप से टहलें। अगर मेहनत-मशक़्क़त के कामों में खेल की स्प्रिट पैदा कर दी जाए, तो बच्चे खेल समझ कर बहुत-से फ़ायदेमन्द काम भी कर सकते हैं और ज़रूरी शारीरिक मेहनत भी हो सकती है। शारीरिक मेहनत से जो लोग जी चुराते हैं, उनकी तन्दुरुस्ती हमेशा ख़राब रहती है। वे सुस्त, काहिल और दूसरों पर बोझ बनकर रहते हैं।

(6) उपयुक्त पोशाक

तन्दुरुस्ती के लिए उपयुक्त पहनावा भी ज़रूरी है। पोशाक वही ठीक होता है जिससे–

अंग (सतूर) अच्छी तरह छिप जाए और बेपरदगी न होती हो।

गर्मी, सर्दी और मौसमों के प्रभाव से शरीर सुरक्षित रहे।

शरीर को किसी तरह का कष्ट या नुक़सान न पहुँचे।

शरीर की समुचित सजावट होती हो।

शालीनता, मर्यादा, सुन्दर पहनावा से गौरव और स्वाभिमान का प्रदर्शन होता है।

कपड़े विभिन्न चीज़ों से तैयार किए जाते हैं। लेकिन हमारे देश के अधिकांश क्षेत्रों के निवासियों के लिए विभिन्न हैसियतों से सबसे अच्छा और उपयुक्त सूती वस्त्र है; क्योंकि–

यह अपेक्षाकृत सस्ता और मज़बूत होता है। आसानी के साथ धूल जाता है।

पसीने को अच्छी तरह सोख लेता है।

हर मौसम के लिए उपयुक्त है। सर्दी-गर्मी दोनों से शरीर को

सुरक्षित रखता है।

- रूई बहुत अधिक पैदा होती है और ज़्यादातर लोगों की ज़रूरत इससे पूरी हो सकती हैं।

गर्मियों में हल्के-फुल्के और यथासम्भव सफ़ेद या हल्के रंग के कपड़े उपयुक्त होते हैं। सर्दियों में मोटे और गहरे रंग के, क्योंकि सफ़ेद या हल्के रंग के कपड़ों की अपेक्षा गहरे रंग के कपड़े सूरज की रौशनी सोखकर जल्द गर्म हो जाते हैं। साधन-सम्पन्न लोग अगर सर्दियों में ऊनी कपड़े इस्तेमाल करें, तो तन्दुरुस्ती के लिए बेहतर है। इसी तरह साधन-सम्पन्न महिलाएँ अगर रेशम इस्तेमाल करें, तो सौन्दर्य के अलावा तन्दुरुस्ती के लिए भी लाभदायक है।

चुस्त पोशाक तन्दुरुस्ती के लिए बहुत हानिकारक होता है। इससे रक्त-संचार प्रभावित होता है। शरीर को आवश्यक मात्रा में ताज़ा हवा नहीं मिलती और शरीर के अन्दर और बाहर का तापमान एक समान रहता है।

कपड़ों में सत्र की तरफ़ से लापरवाही, दूसरों का अनुकरण, ग़ैर-ज़रूरी साज-शृंगार, दिखावा या गन्दगी और लापरवाही इत्यादि तरह-तरह के नैतिक और मनोवैज्ञानिक बीमारियों का शिकार बना देती हैं, जो परोक्ष रूप से शरीर की तन्दुरुस्ती के लिए भी हानिकारक हैं। इनसे बचना चाहिए।

(7) सफ़ाई-सुथराई

तन्दुरुस्ती और सफ़ाई का चोली-दामन का साथ है। इस्लाम ने पाकी और सफ़ाई को ईमान का हिस्सा क़रार दिया है। तन्दुरुस्ती के लिए ज़रूरी है कि शरीर, पहनावा, आवास, उपयोग में लानेवाले सामान, नालियों और आस-पास की नियमित सफ़ाई का प्रबन्ध किया जाए। इनमें से किसी की तरफ़ से लापरवाही तन्दुरुस्ती को प्रभावित कर

सकती है।

शरीर की सफ़ाई : शरीर के अन्दर अनेक प्रकार के अवशिष्ट पदार्थ, गन्दगी और ज़हरीले पदार्थ जमा होते रहते हैं। इनका बाहर निकलते रहना ज़रूरी है; क्योंकि किसी प्रकार का भी प्रदूषित पदार्थ रुक जाए तो आदमी बीमार हो जाए। यह गन्दगी पाख़ाने, पेशाब, पसीना, बलग़म इत्यादि के रूप में विभिन्न रास्तों से बाहर निकलता रहता है। जहाँ इस गन्दगी को बाहर निकालने का पूरा-पूरा प्रयास होना चाहिए, वहीं उन रास्तों को भी ख़ूब साफ़ रखना चाहिए जिनसे यह गन्दगी बाहर निकलकर उन्हें भी गन्दा कर देती है। पाख़ाना-पेशाब के बाद अच्छी तरह धो लेना, पाबन्दी से दातून इत्यादि करना, नाक में पानी डालकर ख़ूब साफ़ करना, आँखों और कानों को बराबर साफ़ करते रहना, बाल और नाख़ुन कटवाने का एहतिमाम करना चाहिए और पाबन्दी से ग़ुस्ल करके त्वचा की उन छिद्रों को खुला रखना चाहिए, जो पसीने की वजह से मैल से बन्द हो जाते हैं। शुरू ही से बच्चों को शरीर की सफ़ाई का पाबन्द बनाने की कोशिश होनी चाहिए।

कपड़ों की सफ़ाई : मैला-कुचैला वस्त्र त्वचा को गन्दा करके तरह-तरह के चर्मरोगों में ग्रस्त कर देता है। इसलिए कपड़े की सफ़ाई का पूरा एहतिमाम होना चाहिए। पाबन्दी से कपड़े बदलने और उसके धोने-धुलाने की तरफ़ ध्यान होना चाहिए।

घर की सफ़ाई : कमरे, बरामदे, सेहन में बराबर झाड़ू देना, सामान को धूल-मिट्टी से बचाना, चीज़ों को झाड़-पोंछकर अच्छे ढंग से सजाकर रखना, रसोईघर, नालियों और पाख़ाना, पेशाबख़ाना इत्यादि की सफ़ाई की तरफ़ पूरा ध्यान देना चाहिए। घर के आसपास भी गन्दगी नहीं होनी चाहिए वरना रोगाणु पलेंगे और घर भर का स्वास्थ्य प्रभावित होगा।

(8) गहरी नींद

तन्दुरुस्ती के लिए गहरी नींद भी ज़रूरी है। मानसिक-शारीरिक परिश्रम, खेल-कूद और शरीर के अन्दर होनेवाली हरकतों के कारण शरीर थककर चूर हो जाता है। थकान दूर करने और ताज़ा दम होकर फिर काम-काज के लायक़ होने के लिए आराम और गहरी नींद ज़रूरी है।

नींद के बारे में निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए—

- अल्लाह तआला ने सोने के लिए रात बनाई है। गर्मियों के सिवा दिन में सोने से यथासम्भव बचें।
- आधी रात से पहले की एक घंटे की नींद बाद के दो घंटे की नींद के बराबर होती है। इसलिए यथाम्भव इशा की नमाज़ के तुरन्त बाद सोने की आदत डालें। नींद भी अच्छी आएगी और सवेरे जल्द उठ सकेंगे।
- खाने और सोने के बीच दो-तीन घंटों का अन्तराल होना चाहिए। इसलिए बेहतर यही है कि मग़रिब की नमाज़ के बाद खाना खा लिया जाए।
- सोते समय सारे मामलों को अल्लाह के हवाले करके ख़ाली ज़ेहन और निश्चिन्त हो जाएँ, ताकि गहरी नींद आए।
- चित या पेट के बल हरगिज़ न सोएँ और न सोते समय सीने पर हाथ रखें; क्योंकि इससे बुरे-बुरे सपने नज़र आते हैं और गहरी नींद नहीं आती। करवट लेने की आदत डालें।
- सोने से पहले बच्चों को डरावने क़िस्से, कहानियाँ या घटनाएँ हरगिज़ न सुनाएँ वरना डरावने सपने दिखाई देंगे।
- मुँह ढाँपकर या कमरे के दरवाज़े-खिड़कियाँ बन्द करके न सोएँ, ताकि सांस लेने के लिए ताज़ा हवा मिल सके।
- सोने से पहले रौशनी बुझा दें, आग बुझा दें और बच्चों को पेशाब

करा दिया करें।

- बच्चों को सोने का पर्याप्त अवसर मिलना चाहिए। नौजवानों को कमो-बेश आठ घंटे, मर्दों को छह और औरतों को सात घंटे की गहरी नींद अच्छी तन्दुरुस्ती के लिए पर्याप्त हो सकती है।
- बच्चों को माँ-बाप से अलग लेटने का आदी बनाना चाहिए। दस साल की उम्र के बाद तो बिस्तर ज़रूर ही अलग कर देना चाहिए।
- यथासम्भव चारपाई पर लेटना चाहिए, ताकि ज़हरीले कीड़े-मकोड़ों, कीटाणुओं, धूल, मिट्टी और तन्दुरुस्ती के लिए हानिकारक गैसों इत्यादि से शरीर सुरक्षित रहे।
- बहुत अधिक खा लेने या ख़ाली पेट सोने से भी गहरी नींद नहीं आती।
- मच्छर, पिस्सू और खटमल से बचाव का पूरा प्रबन्ध करें, ताकि नींद में बाधा न पड़े और बीमारियों से बचाव हो सके।

(9) प्रसन्नता और ख़ुशहाली

चिन्ता और शोक घुन की तरह शरीर को खोखला कर देता और कभी-कभी तपेदिक़ का शिकार बना देता है। उन्माद, आत्महत्या, हृदय-गति बन्द होना, समय से पहले बूढ़ा हो जाना ये सब ग़ैर-मामूली चिन्ता और शोक के ही बुरे नतीजे हैं। प्रसन्न और ख़ुश रहने से तन्दुरुस्ती अच्छी रहती है और रोगों का सामना करने के लिए प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। ख़ुद भी प्रसन्न रहना चाहिए और बच्चों को भी प्रसन्न और आनन्दित रखने की पूरी कोशिश करनी चाहिए। चिन्ता और शोक के मौक़े अगर आ ही जाएँ, तो जल्द उनको भुला देने या उनको दूर कर देने की कोशिश होनी चाहिए, ताकि शरीर को यह घुन न लगने पाए। अल्लाह पर भरोसा और उम्मीद मनुष्य को हर तरह की चिन्ता और शोक से छुटकारा दे देता है। हर हाल में उसी पर भरोसा रखना चाहिए।

(10) अच्छा आचरण

तन्दुरुस्ती और सुख-चैन के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कारक अच्छा आचरण और चरित्र है। सब कुछ प्राप्त हो, लेकिन आचरण और चरित्र घिनौना हो तो मनुष्य की तन्दुरुस्ती धीरे-धीरे बरबाद हो जाती है। इसके विपरीत अच्छी आस्था, अच्छे कर्म, अच्छे चाल-चलन, पसन्दीदा तौर-तरीक़े, सहानुभूति, सद्व्यवहार, भलाई, जनसेवा इत्यादि से ख़ुदा और उसके बन्दे दोनों ख़ुश होते हैं। इसलिए हार्दिक शान्ति और सन्तुष्टि प्राप्त होती है। मोटा-झोटा खाकर भी मनुष्य प्रसन्न और आनन्दित रहता है। उसकी तन्दुरुस्ती सँवरती और उम्र बढ़ती है। हमारा दैनिक अनुभव है कि बदचलनी और बुरी आदतें और तौर-तरीक़े मनुष्य को तरह-तरह के घातक रोगों में ग्रस्त कर देते हैं। परलोक की सफलता के साथ-साथ तन्दुरुस्ती और सांसारिक सफलता की दृष्टि से भी अच्छे आचरण और अच्छी आदतें निहायत ज़रूरी हैं। आनेवाली नस्लों के हर हितैषी का परम कर्तव्य है कि वह सबसे ज़्यादा इस तरफ़ ध्यान दे।

बच्चों की तन्दुरुस्ती और स्कूल/मदरसा

स्कूल/मदरसे का काम सिर्फ़ लिखना-पढ़ना सिखा देना ही नहीं है, जैसा कि आम तौर पर समझा जाता है, बल्कि छात्रों के स्वास्थ्य और शारीरिक प्रशिक्षण की तरफ़ ध्यान देना भी उसका बुनियादी कर्तव्य है, क्योंकि—

- शारीरिक दृष्टि से बच्चों के विकास का बेहतरीन दौर स्कूल/ मदरसे ही में गुज़रता है।
- माँ-बाप की निरक्षरता, स्वास्थ्य-सुरक्षा के नियमों से उनका अनजान होना, रहन-सहन की ख़राबियाँ और समाज की बुरी दशा के इस दौर में स्कूल/मदरसे ही से उम्मीद की जा सकती है कि वह बच्चों की तन्दुरुस्ती के बारे में समुचित मदद और मार्गदर्शन करेगा।

- बच्चों की तन्दुरुस्ती ही अच्छी न होगी, तो उनकी शिक्षा-दीक्षा कैसे हो सकेगी?

इसलिए पढ़ाई-लिखाई पर तन्दुरुस्ती को क़ुरबान कर देने का जो ग़लत विचार फैल गया है, वह बहुत ही हानिकारक और घातक है। स्कूल/मदरसे से पढ़ाई पूरी करके निकलने के बाद सिर्फ़ हड्डी-चमड़ा वापस नहीं जाना चाहिए, बल्कि व्यक्तिगत और सामूहिक ज़िम्मेदारियों को अदा करने के लिए मज़बूत और स्वस्थ शरीर भी मिलना चाहिए।

मदरसे की ज़िम्मेदारियाँ

तन्दुरुस्ती के बारे में मदरसे को निम्नलिखित बातों की तरफ़ ध्यान देना चाहिए—

- स्कूल/मदरसा यथासम्भव आबादी से बाहर और खुले वातावरण और साफ़-सुथरे परिवेश में हो। आसपास पेड़-पौधे भी रोपे जाएँ।
- इमारत चाहे कच्ची हो या पक्की, मामूली हो या आलीशान, बड़ी और हवादार होनी चाहिए।
- कमरे हवादार और रौशन होने चाहिएँ। दीवारें ऊँची, खिड़कियाँ रौशन और दरवाज़े पर्याप्त और छात्रों की संख्या के लिहाज़ से बैठने के लिए जगह पर्याप्त होनी चाहिए।
- ब्लैकबोर्ड ऐसी जगह रखा जाए कि पूरी कक्षा आसानी से देख सके और उसपर रौशनी इस तरह पड़े कि चमक न पैदा हो। ब्लैकबोर्ड पर साफ़ और मोटे अक्षरों में लिखा जाए, ताकि पढ़ने में आँखों पर ज़ोर न पड़े। बच्चों की सीटें ऐसी हों कि रौशनी बाएँ या पीछे से आए। सामने या दाएँ से रौशनी आँखों के लिए हानिकारक होती है। लिखते-पढ़ते समय किताब या कॉपी से आँख की दूरी एक फुट हो और बैठने का ढंग ऐसा हो कि रीढ़ की हड्डी सीधी रहे। बच्चों के बैठने के ढंग की तरफ़ इस पहलू से

विशेष ध्यान देना चाहिए वरना आँखें ख़राब हो जाती हैं और रीढ़ की हड्डी झुक जाती है।

- कक्षा, बरामदे, सेहन, पाख़ाना, पेशाबख़ाना, नालियों इत्यादि की नियमित सफ़ाई का पूरा प्रबन्ध हो और कूड़ा-कर्कट दूर डालने की व्यवस्था की जाए। पीने के पानी की ख़ास तौर पर देख-भाल की जाए, ताकि बच्चे गन्दा न कर दें। अधिकतर संक्रामक रोग पानी की गन्दगी से फैलते हैं।
- समय-सारिणी ऐसी बनाई जाए कि मुश्किल और थका देनेवाले विषय लगातार न पड़ें, बल्कि आसान और मुश्किल, मौखिक और लिखित, मानसिक और शारीरिक काम एक के बाद दूसरे हों। ताज़ा दम होने के लिए अन्तराल रखे जाएँ। अन्तराल ऐसे हों कि खाने, नाश्ते, नमाज़ और खेल के लिए पर्याप्त समय मिल सके।
- बाक़ायदा पढ़ाई शुरू करने से पहले 20-25 मिनट सामूहिक हाज़िरी के लिए रखे जाएँ, जिसमें क़द और कक्षा की दृष्टि से सारे छात्र लाइन में खड़े हों। कभी-कभी उनकी तन्दुरुस्ती और सफ़ाई की जाँच की जाए। ख़ास तौर पर शरीर और वस्त्र की सफ़ाई, नाख़ुन, दाँत, आँख, कान, नाक इत्यादि की सफ़ाई देखी जाए और ज़रूरत के मुताबिक़ व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से हिदायतें दी जाएँ। सामूहिक रूप से ड्रील और पी॰ टी॰ (शारीरिक प्रशिक्षण) का हल्का-सा प्रोग्राम भी रखा जाए और कुछ मिनट ऊँची आवाज़ से एक साथ दुआ या तराना इत्यादि का भी इन्तिज़ाम किया जाए।
- प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों को यथासम्भव खेल-खेल में शिक्षा दी जाए। उन्हें ज़्यादा देर तक चैन से बैठने पर मजबूर न किया जाए। पढ़ाने-लिखाने के समय ही में से कुछ समय उनके खेल और पी॰ टी॰ के लिए भी निकाला जाए।

- स्वास्थ्य विभाग के अधिकारियों से सम्पर्क करके समय-समय पर छात्रों की चिकित्सा-जाँच, चेचक, हैज़े, टाइफ़ाइड, प्लेग इत्यादि के टीके लगाने की व्यवस्था की जाएँ। बच्चों की आँखों और कानों की ख़ास तौर पर जाँच कराई जाए।
- छात्रों को एक क्रम से स्वास्थ्य-सुरक्षा के आवश्यक नियम समझाए जाएँ और उनपर अमल करने के तरीक़े साफ़-साफ़ बताए जाएँ। बड़े बच्चों को प्राथमिक चिकित्सा सहायता और रोगियों की सेवा-सुश्रूषा के बारे में ज़रूरी जानकारियाँ दी जाएँ और पट्टियाँ बाँधने, बुख़ार देखने, दवा देने इत्यादि के सम्बन्ध में व्यावहारिक प्रशिक्षण भी दिया जाए। स्कूल/मदरसे में प्राथमिक चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराने के लिए ज़रूरी सामान भी रखा जाए, ताकि खेल-कूद और दौड़-भाग इत्यादि में अगर बच्चों को चोट लग जाए या कोई घटना घट जाए, तो समय पर ही चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराई जा सके।
- प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों पर होमवर्क (घर पर पढ़ने-लिखने का काम) का बोझ न डाला जाए, ताकि वे फ़ुरसत के समय में निश्चिन्त होकर खेल-कूद या अपनी मर्ज़ी से कुछ बना-बिगाड़ सकें। बाद की कक्षाओं में भी यथासम्भव स्वतंत्र अध्ययन या स्वाध्याय या हॉबियों इत्यादि के बारे में ही होमवर्क होना चाहिए, ताकि बच्चे बोझ महसूस न करें, बल्कि फ़ुरसत के समय को हँसी-ख़ुशी लाभप्रद कामों में इस्तेमाल करने के आदी बनें।
- स्कूल/मदरसे के द्वारा खेल-कूद, व्यायाम (पी॰ टी॰), शारीरिक परिश्रम और पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ और क्रिया-कलाप (बाग़बानी, शैक्षिक पर्यटन, पिकनिक, जनसेवा इत्यादि) का आयोजन किया जाए और इसके लिए मैदान और ज़रूरी सामान उपलब्ध कराए जाएँ। खेल-प्रतियोगिताएँ और दूसरी संस्थाओं से

मैच लेने के अवसर उपलब्ध कराए जाएँ।

- खाने-पीने, लिखने-पढ़ने, सोने-जागने, नहाने-धोने, खेलने-कूदने और साफ़-सुथरे रहने इत्यादि के बारे में अच्छी आदतें डलवाई जाएँ। सभी क्लास टीचर अपनी कक्षाओं के बच्चों को इस सम्बन्ध में बराबर ध्यान दिलाते रहें।
- एक क्रम से सतर्कता के उपाय भी बतलाए जाएँ। उदाहरण के लिए बीमार होने पर बड़ों को सूचित करना, बीमारी में दवा और परहेज़ी भोजन इस्तेमाल करना, सड़क पर चलने के नियम और विधि और संक्रामक रोगों के बारे में ज़रूरी सावधानियाँ इत्यादि।
- बच्चों के सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य बातों की तरफ़ बच्चों के अभिभावकों का ध्यान आकर्षित कराके उचित कार्रवाई पर उभारा जाए।

☆☆☆

अध्याय-22

सीखना

(Learning)

शिक्षण-प्रशिक्षण की पूरी व्यवस्था ही वास्तव में सीखने-सिखाने के लिए क़ायम की जाती है। स्कूल/मदरसे नासमझ और अबोध बच्चों को एक क्रम से वे बातें सिखाने ही के लिए खोले जाते हैं, जो वे नहीं जानते या जो उन्हें बहरहाल जानना चाहिए। उदाहरण के लिए, लिखना-पढ़ना, विभिन्न कला-कौशलों में महारत, अच्छी आदतें और तौर-तरीक़े, विभिन्न मौक़े के शिष्टाचार, लोगों के साथ उपयुक्त बरताव इत्यादि। सीखने का यह काम जन्म से लेकर मृत्यु तक निरन्तर जारी रहता है।

सीखने का काम आम तौर पर निम्नलिखित तरीक़ों से अंजाम पाता है—

खुद करके सीखना

बच्चे स्वाभाव से बहुत चंचल होते हैं। उनके हाथ-पैर बराबर चलते रहते हैं। जब देखो कुछ न कुछ करते, कुछ बनाते और कुछ बिगाड़ते नज़र आते हैं। अपनी इन हरकतों और क्रिया-कलापों के दौरान वे विभिन्न अनुभवों और व्यावहारिक कामों से अवगत होते हैं, जिनमें कुछ बुरे और कुछ अच्छे होते हैं। कभी निशाना ठीक बैठता है, कभी चूक जाता है। इस तरह वे प्रयोगों के द्वारा तरह-तरह की बातें सीखते हैं।

प्रशिक्षण द्वारा सीखना

माँ-बाप, शिक्षक और दूसरे सम्बन्धित लोग बच्चों के प्रशिक्षण को अपना महत्त्वपूर्ण कर्तव्य समझते हैं। वे उन्हें प्यार-मुहब्बत या सख़्ती-

नरमी से कुछ न कुछ सिखाते रहते हैं। कोई ग़लत काम करते देखते हैं तो रोक-टोक करके सुधार कर देते और सही तरीक़ा बता देते हैं। इसलिए बहुत-सी बातें बच्चे प्रशिक्षण के द्वारा सीखते हैं।

निरीक्षण और अनुकरण द्वारा सीखना

(Learning by Observation and Imitation)

हर आदमी के ज्ञान का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन उसकी आँखें हैं। वह जो कुछ जानता है, उसका 4/5 हिस्सा आम तौर पर आँखों ही के द्वारा प्राप्त किया हुआ होता है। उसकी आँखें हर समय उसे तरह-तरह की बातों का अवलोकन कराती और उनके बारे में जानकारियाँ मुहैया कराती रहती हैं। बहुत-सी बातें बच्चे दूसरों की देखा-देखी सीखते हैं और वे उनकी नक़ल करने लगते हैं। तात्पर्य अवलोकन, प्रत्यक्षीकरण और अनुकरण भी सीखने के बहुत ही अहम साधन हैं।

बुद्धि-विवेक द्वारा सीखना

हर बच्चे को विभिन्न तरह की परिस्थितियों से दो-चार होना पड़ता है। कभी गेन्द लुढ़ककर नाली में चली जाती है, उसे निकालने की समस्या सामने होती है; पतंग की डोरी किसी चीज़ में फँस जाती है, उसे छुड़ाने का प्रश्न होता है; कभी खाने-पीने की चीज़ पहुँच से बाहर होती है, उसे हासिल करने की चिन्ता होती है; कभी शिक्षक के ग़ुस्से से बचने और कभी माँ-बाप की खुशी हासिल करने का प्रश्न सामने होता है इत्यादि। मतलब यह कि तरह-तरह के मसलों से दो-चार होना पड़ता है। उनसे निपटने और छुटकारा पाने के लिए बच्चों को बुद्धि-विवेक और सोच-विचार और बहुत ही ग़ैर-मामूली कोशिशों से काम लेना पड़ता है। तरह-तरह के समाधान सामने आते हैं, वे उन्हें आज़माते हैं और अपनी कोशिशों में अक्सर वे सफल हो जाते हैं। इस तरह विभिन्न बातें वे बुद्धि-विवेक के द्वारा सीख लेते हैं।

पूर्वानुभव (Previous Knowledge) के द्वारा सीखना

अपनी मूल प्रवृत्तियों की माँगों और स्वाभाविक जिज्ञासाओं की पूर्ति के दौरान में बच्चों को तरह-तरह के अनुभव होते हैं। यही अनुभव बच्चों को किसी के बारे में अपना रवैया तय करने में मदद करते हैं। उदाहरण के लिए, माँ-बाप और बहन-भाइयों से मुहब्बत, शिक्षकों का आदर-सम्मान, विषयों से लगाव, क्रिया-कलापों में दिलचस्पी, अन्धेरे और हानिकारक प्राणियों का डर इत्यादि।

ये हैं विभिन्न तरीक़े और साधन, जो सीखने की प्रक्रिया में सहायक होते हैं।

सीखने के नियम

सीखने के तीन बुनियादी नियम हैं—

(1) तत्परता का नियम (2) परिणाम का नियम (3) अभ्यास का नियम।

इन नियमों की पाबन्दी से ही बच्चों को कुछ सिखाया जा सकता है।

(1) तत्परता का नियम (Law of Readiness)

सीखने का काम उसी समय अंजाम पा सकता है, जब सीखनेवाला इसके लिए तत्पर या तैयार (Ready) हो। तत्परता (आमादगी) के बिना कुछ नहीं सीखा जा सकता; क्योंकि ऐसी स्थिति में वह इसके लिए कोई कोशिश ही नहीं करेगा। इसी लिए पाठ पढ़ाने या कुछ सिखाने से पहले बच्चों को इसके लिए पूरी तरह तैयार और तत्पर कर लेने पर बहुत ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है। सज़ा के डर या बाहरी दबाव और ज़ोर-ज़बरदस्ती और मार-पीट के तहत जो काम लिया जाता है, उसमें बच्चों की पूरी तत्परता शामिल नहीं होती, इसी लिए बहुत कम

फलदायक होता है। इसके विपरीत अगर बच्चे की स्वाभाविक इच्छाओं और उसकी दिलचस्पियों का ध्यान रखकर और काम की ज़रूरत और उपयोगिता ख़ूब अच्छी तरह मन में बिठाकर काम लिया जाता है, तो वह पूरी आमादगी से काम करता है और उसके पूरा करने में अपनी पूरी ताक़त झोंक देता है। इसलिए ऐसा काम फलदायक होता है।

(2) परिणाम अथवा प्रभाव का नियम (Law of Effect)

कोई काम उस समय पूरी दिलचस्पी और लगन से किया जाता है, जब उससे अच्छे परिणाम निकलें। अगर किसी काम के करने से आराम के बजाय तकलीफ़ पहुँचेगी या कड़ुवे अनुभव से दो-चार होना पड़ेगा, तो कोई आदमी उसके पास भी नहीं फटकेगा। चाहे उसको ख़ुशी से ही अंजाम देना चाहे। बच्चे शुरू में नासमझी में कुछ ऐसे काम कर बैठते हैं, जिनके नतीजे कष्ट पहुँचानेवाले होते हैं। लेकिन यही कटु अनुभव उसे भविष्य में इन कामों से दूर रखते हैं। इसके विपरीत वे ऐसे कामों को बार-बार करते हैं जिनसे उन्हें आराम, आनन्द और प्रसन्नता मिलती हो। इसी नियम के आधार पर नापसन्दीदा हरकतों के साथ कटु अनुभव और अच्छी आदतों और तौर-तरीक़ों के साथ सुखद अनुभव जोड़ने के लिए ग़लतियों और कोताहियों पर सज़ा दी जाती है और अच्छे कामों पर शाबाशी और इनाम।

(3) अभ्यास का नियम (Law of Exercise)

किसी काम को बार-बार करने से उसमें महारत पैदा हो जाती है और वह आसानी से अंजाम पाने लगता है। अगर कुछ समय तक छोड़ दिया जाय तो महारत घट जाती है। कुछ सिखाने और काम में महारत पैदा करने के लिए ज़रूरी है कि अभ्यास के पर्याप्त अवसर मिलें। इसी सिद्धान्त के आधार पर कोई नियम सिखाने और ख़ूब अच्छी तरह मन में बिठाने, कोई तरीक़ा, विधि बताने और अच्छी आदतों और तौर-तरीक़ों

को मज़बूत कराने के लिए बार-बार अभ्यास कराया जाता है और बुरी आदतों और तौर-तरीक़ों को छुड़वाने के लिए उनके दोबारा किए जाने के अवसर से वंचित कर दिया जाता है और पूरी देख-भाल की जाती है कि उसके व्यवहार में आने की नौबत ही न आने पाए। सिगरेट पीने या चोरी आदि छुड़ाने के लिए आम तौर पर 'इस्तेमाल के छुड़ाने' ही पर अमल किया जाता है।

सीखने की गति

कुछ सीखने के दौरान में विकास की गति एक समान नहीं रहती। अगर पूरी आमादगी के साथ काम शुरू किया गया है, मेहनत और लगन से काम किया जा रहा है, वातावरण अनुकूल है, रुकावट और विरोध की सम्भावनाएँ नहीं हैं, इस काम की ज़रूरत और उपयोगिता भी ख़ूब अच्छी तरह समझ में आ गई है, थकान और उकताहट की भी आशंका नहीं है, अभ्यास के पर्याप्त अवसर मिल रहे हैं, परिणाम भी अच्छे निकल रहे हैं, तो सीखने की गति तेज़ होती है वरना धीमी। इसलिए इन शर्तों को पूरा करने का पूरा प्रयास होना चाहिए।

- अगर उपर्युक्त सारी शर्तें पूरी हो जाती हैं तो शुरुआत में रफ़्तार बहुत तेज़ होती है, लेकिन कुछ समय बाद तरक़्क़ी बिलकुल रुक जाती है। यह स्वाभाविक है। ऐसी नौबत आए तो नाराज़ या निराश नहीं होना चाहिए। सीखी हुई बात को जमने या जगह पकड़ने के लिए समय की ज़रूरत होती है। हाँ, रफ़्तार की सुस्ती का कोई और कारण हो तो उसे दूर करना चाहिए।
- पूरी तरह अभ्यस्त और माहिर होने से पहले विकास की गति में इस तरह के बहुत-से उतार-चढ़ाव आते हैं। कभी रफ़्तार अचानक तेज़ हो जाती है, कभी मद्धिम पड़ जाती है या बिलकुल रुक जाती है।

- महारत की सीमा होती है, वहाँ तक पहुँचने पर विकास हमेशा के लिए बिलकुल रुक जाता है। अब चाहे कितनी भी कोशिश की जाए और अधिक विकास सम्भव नहीं। इसलिए जब अन्दाज़ा हो जाए कि किसी काम में महारत अपने आख़िरी दरजे को पहुँच चुकी है, तो और ज़्यादा कोशिश में समय बरबाद न किया जाए। हाँ, अभ्यास और पुनरावृत्ति बराबर जारी रखी जाए, ताकि किए-धरे पर पानी न फिरने पाए।

सीखने में महारत

सीखने में महारत (दक्षता) की निर्भरता विभिन्न बातों पर है—

(1) **सीखने का पक्का इरादा :** महारत प्राप्त करने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण शर्त सीखनेवाले का अपना मज़बूत और पक्का इरादा है। जब तक सीखनेवाला किसी काम के सीखने का खुद पक्का इरादा न करे, वह बिलकुल ही कुछ नहीं सीख सकता। सिखानेवाला चाहे कितना ही माहिर हो और सिखाने के लिए लाख सिर मारे, मगर सीखनेवाले की आमादगी और इरादे के बिना वह हरगिज़ कामयाब नहीं हो सकता। पक्के और मज़बूत इरादे के लिए ज़ोरदार प्रेरक होना चाहिए। काम का महत्त्व और फ़ायदा पूरी तरह मन में बिठा देनी चाहिए और इस बात का यक़ीन होना चाहिए कि वह इस काम को सीख सकता है।

(2) **सीखने के लिए क़दम उठाना :** सिर्फ़ इरादे से कुछ नहीं बनता। सीखना है तो उसके लिए व्यावहारिक रूप से जी-तोड़ कोशिश करनी होगी। हाथ-पैर मारे बिना सीखा नहीं जा सकता। कुछ करने ही से हुनर आता है। उदाहरण के लिए, तैराकी की कला है। सिखानेवाला चाहे ज़बरदस्त तैराक हो और पूरी दिलचस्पी और महारत के साथ सैद्धान्तिक रूप से तैरने के तरीक़े बताता या

व्यावहारिक रूप से करके दिखाता रहे और ख़ुद सीखनेवाला पूरी दिलचस्पी से उसकी बातें सुनता और ग़ौर से उसकी तैराकी को देखता रहे; लेकिन जब तक वह ख़ुद नदी में उतरकर हाथ-पैर नहीं मारेगा, तैरना हरगिज़ नहीं सीख सकता। इसलिए स्कूल/मदरसे में ज्ञान को व्यवहार में लाने और ख़ुद करके सीखने पर बहुत ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है; क्योंकि सिर्फ़ दर्शक बनकर किसी हुनर या कला में महारत हरगिज़ प्राप्त नहीं किया जा सकता।

(3) **काम के लिए अनुकूल वातावरण :** सीखने के लिए परिस्थितियाँ जितनी अनुकूल और उपयुक्त होंगी, सीखने में उतनी ही सुविधा और आसानी होगी। अगर आसपास की परिस्थितियाँ शान्तिपूर्ण हों, वातावरण अनुकूल और मौसम सुहाना हो, ध्यान केन्द्रित करने और एकाग्रता के साथ काम पर लगने में कोई ख़ास चीज़ बाधक न हो, तो सीखने में बड़ी आसानी होती है। लेकिन अगर ध्यान को भटकाने, उकताहट पैदा करने और काम में बाधा डालनेवाले कारक मौजूद हों, तो सीखने में बड़ी कठिनाई होगी। मुश्किल से ही कुछ सीखा जा सकेगा। इसलिए शान्तिपूर्ण माहौल और अनुकूल वातारण में शिक्षा देने पर ज़ोर दिया जाता है और ध्यान को भटकानेवाली चीज़ों से बच्चों को दूर रखा जाता है।

(4) **कठोर परिश्रम :** महारत हासिल करने के लिए ज़रूरी है कि पूरा ध्यान, लगन और पूरा जी-जान लगाकर काम किया जाए। पूरी कोशिश, कड़ी मेहनत और ग़ैर-मामूली गम्भीर प्रयासों के बिना महारत हासिल नहीं होती। महारत और कुशलता के साथ काम में तेज़ रफ़्तारी और शीघ्रता की तरफ़ भी ध्यान देना चाहिए। इत्मीनान के साथ काम करना तो बहरहाल ज़रूरी है, लेकिन इसका यह उद्देश्य हरगिज़ नहीं कि काहिली और सुस्त रफ़्तारी के साथ काम किया जाए। कला-कौशल में माहिर लोग आम तौर पर

धीरे-धीरे काम करते हैं। आरम्भ ही से इस तरफ़ ध्यान दिया जाए, तो महारत के साथ तेज़ रफ़्तारी भी आसानी के साथ पैदा हो सकती है।

(5) **काम की अवधि :** काम की अवधि न तो बहुत लम्बी होनी चाहिए कि बच्चा थककर चूर-चूर हो जाए और न इतनी छोटी हो कि कोई ख़ास नतीजा न निकल सके, बल्कि उम्र और तन्दुरुस्ती का ध्यान रखकर तय की जाए। अगर थकान का असर नज़र आने लगे, तो काम रोककर आराम का मौक़ा मिलना चाहिए। बहुत ज़्यादा थकान और परेशानी की हालत में काम करना तन्दुरुस्ती के लिए बहुत नुक़सानदेह होता है और बेकार भी। अतः समय-सारिणी में थकान और उकताहट का इसलिए बहुत ही ज़्यादा ध्यान रखा जाता है।

बच्चों के सीखने की गति पर असर डालनेवाले कारक

अनुभव से पता चलता है कि बच्चों के सीखने की गति पर निम्नलिखित कारक बहुत ज़्यादा असर डालते हैं–

(1) **प्रतिभा (Intelligence) :** जो बच्चा जितना ज़्यादा प्रतिभाशाली होता है, वह उतनी ही आसानी से सीखता है और सीखी हुई बातों को नई परिस्थितियों पर लागू या नई समस्या से निपटने में इस्तेमाल कर सकता है।

(2) **उम्र (Age) :** पन्द्रह-सोलह साल तक सामान्य उम्र के साथ बच्चों की मानसिक उम्र में भी लगातार बढ़ोत्तरी होती रहती है। इसलिए सीखने का अमल भी तेज़ी और सहूलत के साथ बराबर जारी रहता है। इस उम्र तक बच्चों को बहुत कुछ सिखया जा सकता है। इसके बाद मानसिक उम्र में कम ही बढ़ोत्तरी होती है और सीखने की गति बहुत धीमी हो जाती है और सिर्फ़ किसी ख़ास

कला या कुछ ही विषयों में महारत हासिल कर सकता है। इसलिए अभिरुचि पैदा कराने और विभिन्न कला-कौशलों से लगाव पैदा कराने का सबसे अच्छा दौर पन्द्रह-सोलह साल की उम्र ही तक होता है। इसी दौरान में विभिन्न कला-कौशलों की समझ विकसित करा देनी चाहिए, ताकि वे खुद या उसके बड़े बाद के मरहले के लिए उपयुक्त विषयों या क्रिया-कलापों का चुनाव कर सकें।

(3) **अनुभव (Experience) :** सीखे हुए काम को व्यवहार में लाकर अनुभव प्राप्त करने के लिए जितने ज़्यादा मौक़े मिलेंगे, उतनी ही ज़्यादा महारत भी होगी और इस सम्बन्ध में या इस तरह की नई बातें सीखने में आसानी भी होगी। इसलिए करके सीखने और अनुभवों के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े दिए जाएँ।

(4) **प्रेरणा (Motivation) :** सीखने के लिए जितनी ज़ोरदार प्रेरणा और बच्चे की तरफ़ से जितनी ज़्यादा आमादगी होगी, उतनी ही ज़्यादा वह ताक़त लगाएगा और उतनी ही कड़ी मेहनत और जान-तोड़ कोशिश करेगा। नतीजे में उतना ही ज़्यादा वह कामयाब होगा। इसलिए कुछ सिखाने से पहले बच्चों को इसके लिए पूरे तौर पर तत्पर और तैयार कर लेना चाहिए।

(5) **सुखद परिणाम (Good Result) :** सीखने के दौरान अगर कठोर परिश्रम का सन्तोषजनक परिणाम भी आँखों के सामने आता रहे, तो गम्भीर प्रयास में और ज़्यादा बढ़ोत्तरी हो जाती है। कामयाबी खुद ही बहुत ज़बरदस्त प्रेरक है। इसलिए बच्चों को अपनी कोशिशों के नतीजों को देखने के बराबर मौक़े मिलने चाहिएँ।

(6) **प्रोत्साहन और पुनर्बलन (Encourgement) :** सीखने के दौरान में इनाम या शाबाशी के द्वारा बराबर और ज़्यादा ताक़त पहुँचाते रहना चाहिए। इससे सीखने की प्रक्रिया में आसानी और विकास की गति में तेज़ी पैदा हो जाती है। बच्चे अपनी कोशिशों में

जितना भी सफलता का प्रदर्शन करेंगे, उसपर उन्हें शाबाशी मिलनी चाहिए और उनकी कोशिशों को अच्छी नज़र से देखना चाहिए और विभिन्न तरीक़ों से उनकी हिम्मत बढ़ानी चाहिए। इससे चुस्ती और लगन पैदा होती और काम करने की शक्ति बढ़ती है। इनाम, पोज़ीशन, नम्बर, प्रमाणपत्र इत्यादि इस सिलसिले के लाभदायक हथियार हैं।

(7) **पुनरावृत्ति (Recaptulation) :** पुनरावृत्ति और दोहराने का जितना ज़्यादा मौक़ा मिलेगा, सीखने का काम उतना ही ज़्यादा आसानी और तेज़ी से अंजाम पाएगा और इससे सम्बन्धित नई-नई बातें सीखने की भी प्रेरणा मिलेगी।

(8) **जिज्ञासा (Curiosity) :** बच्चों में नई बातें जानने या नई चीज़ें सीखने की जितनी ज़्यादा तड़प, बेचैनी और लगन होगी, उतना ही ज़्यादा ध्यान, लगन और कोशिश से वे उसे सीखेंगे। लगन और सीखने की प्यास पैदा करने या जिज्ञासा उभार देने से सिखाने में आसानी पैदा हो जाती है। भावी जीवन से पढ़ी हुई चीज़ों का सम्बन्ध जोड़े बिना कुछ सीखना-सिखाना मुश्किल है।

☆☆☆

अध्याय-23

ध्यान और अभिरुचि

(Attention and Interest)

मन की उस दशा को अवधान या ध्यान (Attention) कहते हैं, जब उसे दूसरी तमाम चीज़ों से हटाकर किसी एक चीज़ पर केन्द्रित कर दिया जाता है, ताकि उस एक चीज़ के बारे में काफ़ी जानकारियाँ हासिल की जा सकें।

शिक्षक अपने छात्रों से आम तौर पर पढ़ाई पर ध्यान देने को कहते रहते हैं। उनका यह कहना है भी उचित; क्योंकि शिक्षण-प्रशिक्षण में किसी प्रगति या विकास की उस समय तक आशा ही नहीं की जा सकती, जब तक छात्र लिखने-पढ़ने, शिक्षक की बातें ध्यान से सुनने और दिए हुए कामों को अंजाम देने की तरफ़ पूरे तन-मन से एकाग्र न हों—

- जागृत और चेतन अवस्था में मन् बराबर किसी न किसी चीज़ की तरफ़ लगा रहता है— कभी आसपास की चीज़ों की तरफ़, कभी किसी की बातों या हरकतों की तरफ़, कभी ख़ुद अपने ही कामों या विचारों और कल्पनाओं की तरफ़। जब हम बज़ाहिर ख़ाली बैठे होते हैं, उस समय भी विचारों और कल्पनाओं की एक धारा निरन्तर बहती रहती है। कभी एक बात मन में आती है, कभी दूसरी।
- मन जब किसी चीज़ की तरफ़ केन्द्रित होता है, तो थोड़ी देर के लिए वह चीज़ मन के केन्द्र में आ जाती है; बाक़ी चीज़ें मन के हाशिए में पहुँच जाती हैं। एक बार में ध्यान एक ही चीज़ पर केन्द्रित होता है। दूसरी चीज़ ज्यों ही ध्यान का केन्द्र बनती है,

पहली तुरन्त हटकर हाशिए में चली जाती है। चेतन अवस्था में यही प्रक्रिया जारी रहती है।

- एक ही चीज़ पर देर तक ध्यान केन्द्रित नहीं रह सकता। मिनट में आम तौर पर चार-पाँच बार ध्यान भटकता है। छोटे बच्चे तो पाँच-सात सेकंड से ज़्यादा किसी एक चीज़ पर ध्यान केन्द्रित कर ही नहीं सकते। यह अलग बात है कि उस चीज़ के विभिन्न पक्षों को बारी-बारी से सामने लाया जाए। ऐसी स्थिति में कुछ देर तक ध्यान केन्द्रित हो सकता है। अगर ऐसा न किया जाए, तो कुछ सेकंड में ध्यान किसी दूसरी तरफ़ चला जाएगा। नमाज़ में निरन्तर ध्यान मग्न रहने के लिए ज़रूरी है कि जो कुछ पढ़ा जाए, उसके अर्थों और माँगों पर भी साथ ही साथ ग़ौर किया जाए वरना मालूम नहीं क्या-क्या विचार आने लगते हैं।
- एक आदमी का एक बार में एक ही चीज़ पर ध्यान केन्द्रित हो सकता है। जो लोग एक ही समय में कई बातों पर ध्यान देने की कोशिश करते हैं, वे भयंकर भूल करते हैं। इस तरह वे एकाग्रता के साथ एक चीज़ की तरफ़ भी ध्यान नहीं दे सकते। कई चीज़ों पर एक ही समय में उस स्थिति में ध्यान दिया जा सकता है, जब वे सब मिलकर एक ऐसी समग्र वस्तु में बदल जाएँ, जिसपर समग्र रूप से नज़र डाली जा सके। उदाहरण के लिए, छह तारों के समूह 'छहभैया तारे' और सात तारों का समूह 'सतभैया तारे' इत्यादि या मानव-शरीर जो विभिन्न अंगों से मिलकर बना है या कोई दृश्य जो विभिन्न चीज़ों पर आधारित होता है। सामूहिक रूप से एक नज़र में ये चीज़ें ध्यान का केन्द्र बन सकती हैं, लेकिन जब भी उनके किसी एक अंश पर ध्यान केन्द्रित होगा, शेष अंश ध्यान से अलग हट जाएँगे।
- कुछ बच्चे लिखते-पढ़ते या पढ़े हुए पाठ को दोहराते समय कुछ

खाते भी जाते हैं या इधर-उधर देखते या शिक्षा-सामग्री को अनावश्यक रूप से छूते या उससे खेलते रहते हैं। यह ठीक नहीं। इस तरह ध्यान केन्द्रित नहीं रह सकता, बल्कि भटक कर दूसरी तरफ़ चला जाता है। इन हरकतों से बच्चों को रोकना चाहिए। एक समय में एक ही काम हो सकता है।

ध्यान केन्द्रित करने की शर्तें

शिक्षकों और माता-पिता को आम तौर पर यह शिकायत रहती है कि बच्चे लिखने-पढ़ने या किसी गम्भीर काम को पूरा करने के लिए ध्यान नहीं देते। आम तौर पर खेलने-कूदने, आवारागर्दी करने, साथियों से गप्पें लड़ाने या कुछ बनाने-बिगाड़ने ही में अपना समय बरबाद करते रहते हैं। शिक्षा की बजाय उनका ध्यान दूसरी बेकार और अनुपयोगी चीज़ों की तरफ़ होता है। उनकी शिकायत है तो असल में सच्चाई पर आधारित, लेकिन इसमें सिर्फ़ बच्चों का दोष नहीं, बल्कि वे भी इसमें बराबर के हिस्सेदार हैं; क्योंकि उनकी तरफ़ से असल में वे शर्तें पूरी नहीं की जातीं, जो बच्चों को लिखने-पढ़ने या किसी समुचित काम पर ध्यान देने के लिए ज़रूरी हैं–

किसी तरफ़ ध्यान केन्द्रित करने के बहुत-सी शर्तें हैं, उनमें से (1) कुछ बाहरी हैं और (2) कुछ आन्तरिक।

बाहरी शर्तें (Externa Incentives)

बाहरी शर्तें निम्नलिखित हैं–

तीव्रता (Intensity) : जो चीज़ तीव्रता में जितनी ज़्यादा और आकार में जितनी बड़ी होती है, उतनी ज़्यादा ध्यान को आकर्षित करनेवाली होती है। जैसे भड़कीला रंग, तेज़ रौशनी, ऊँची आवाज़, सुन्दर रूप, बड़ा पोस्टर इत्यादि। इसके विपरीत साइज़ में छोटी या तीव्रता में छोटी चीज़ें नज़रअन्दाज़ हो जाती हैं। इसलिए ब्लैकबोर्ड पर स्केच बड़ा,

लिखावट मोटी होनी चाहिए। छोटे बच्चों के सामने पेश किए जानेवाले चित्रों में रंग गहरा होना चाहिए और यथासम्भव चॉक भी रंगीन ही इस्तेमाल करना चाहिए। छात्रों के सामने बहुत धीमी आवाज़ में बोलना भी ठीक नहीं। इतनी ऊँची आवाज़ से बोलना चाहिए कि पूरी कक्षा ख़ूब अच्छी तरह सुन सके। हाँ, चीख़ना-चिल्लाना बहुत-से कारणों से सही नहीं।

- **पुनरावृत्ति या दोहराना (Repeatation)** : किसी शब्द, पद या वाक्य की पुनरावृत्ति जैसे 'दौड़ो! दौड़ो!! साँप! साँप!! चोर! चोर!! मारा गया वह! मारा गया वह!! इत्यादि बड़ी आसानी से ध्यान को खींच लेते हैं। ऐसी कहानियाँ बच्चे बड़े ध्यान से सुनते हैं, जिनमें एक रोचक वाक्य थोड़े-थोड़े अन्तराल के बाद दोहराया जाता है। इसी तरह किसी विज्ञापन का बार-बार सामने आना भी ध्यान को अपनी तरफ़ खींच लेता है।
- **बदलाव (Change)** : हरकत करने, फैलने, बढ़ने या बराबर रूप बदलनेवाली चीज़ें भी ध्यान को आसानी से खींच लेती हैं और देर तक ध्यान को केन्द्रित रखती हैं। साइन बोर्डों पर लगे हुए बल्ब जो जलते-बुझते रहते हैं, इसी मक़सद से लगाए जाते हैं कि लोग आसानी से इस तरफ़ आकर्षित हों। आवाज़ में उतार-चढ़ाव भी ध्यान को केन्द्रित रखता है।

  चलते-चलते किसी का फिसल कर गिर पड़ना, जलती हुई बत्ती का अचानक बुझ जाना, रौशनी का मद्धिम होने लगना या चलते-चलते पंखे का रुक जाना आम हालत में इन पर ध्यान नहीं होता, लेकिन ज्यों ही इनमें कोई परिवर्तन होता है, ध्यान तुरन्त ही उसकी तरफ़ चला जाता है।
- **नयापन (Novelty)** : कोई नई चीज़ सामने आती है, तो तुरन्त ध्यान को खींच लेती है। कोई जानी-पहचानी चीज़ भी अप्रत्याशित

रूप से अपना रूप बदलकर या किसी असाधारण अवस्था में सामने आती है, तो ध्यान का केन्द्र बन जाती है। उदाहरण के लिए, किसी साथी का अजीबो-ग़रीब लिबास में आना। हाँ, किसी बिलकुल नई चीज़ का बिलकुल अनजान होना ठीक नहीं। पिछली जानकारियों का हर चीज़ से कुछ सम्बन्ध होना चाहिए, चाहे इसका सम्बन्ध समानता के बजाय विषमता ही का क्यों न हो वरना नज़रअन्दाज़ हो जाएगी या बच्चे उससे डर महसूस करेंगे।

- **स्पष्ट और समझने योग्य होना :** वे चीज़ें ध्यान को अपनी तरफ़ अपेक्षाकृत अधिक खींचनेवाली होती हैं, जो साफ़-सुथरी, ख़ूबसूरत और स्पष्ट हों और आसानी से समझ में आ जाएँ। भ्रम पैदा करनेवाली और अस्पष्ट चीज़ों पर कम ही ध्यान जाता है।
- **तुलना :** दो विषम चीज़ों को एक-दूसरे के मुक़ाबले में प्रस्तुत किया जाए, तो ध्यान का केन्द्र बन जाती हैं। दो विरोधी रंगों में बनी हुई तस्वीरें या चार्ट्स, दो जगहों की पैदावार, दो आदमियों की आमदनियाँ, दो देशों की मृत्यु-दर इत्यादि, जिनमें स्पष्ट अन्तर हो, अगर साथ-साथ प्रस्तुत की जाए, तो ध्यान को ज़्यादा आसानी से खींच लेती हैं। ये तो रहीं बाहरी शर्तें।

आन्तरिक शर्तें (Internal Incentives)

ध्यान की कुछ आन्तरिक शर्तें भी हैं। उदाहरण के लिए–

- **दिलचस्पी (Interest) :** हम आम तौर पर सिर्फ़ उन चीज़ों की तरफ़ ध्यान देते हैं, जिनसे हमें फ़ितरी दिलचस्पी या दिली लगाव होता है। एक बच्चा खाने-खेलने की चीज़ों की तरफ़ आसानी से आकर्षित होगा, जबकि एक शोधकर्ता हस्तलिखित लेखों और प्राचीन पांडुलिपियों की तरफ़।
- **आदत (Habit) :** प्रशिक्षण के द्वारा जिस चीज़ पर ध्यान देने की

आदत डलवाई जाएगी, धीरे-धीरे उस तरफ़ ध्यान होने लगेगा, चाहे वह खुद बहुत ज़्यादा ध्यान आकृष्ट करनेवाली न हो। एक इंजीनियर इंजन पर, तार बाबू तार की आवाज़ पर, क़ारी क़िरअत पर और डॉक्टर रोगियों के लिए लिखी गई दवा की पर्ची की तरफ़ आसानी से आकृष्ट हो जाता है; क्योंकि उनपर ध्यान देने की उन्हें आदत हो गई है। यही वजह है कि विभिन्न विभागों में काम करनेवाले लोग घरों पर भी आपस में मिलते हैं, तो अपने विभागों की ही बातें करते रहते हैं, हालाँकि विभागीय काम आम तौर पर नीरस ही होते हैं।

- **मूल प्रवृत्ति और जीवन-सम्बन्धी आवश्यकताएँ :** वे चीज़ें आसानी से बच्चों के ध्यान का केन्द्र बन जाती हैं, जिनसे उनकी कोई स्वाभाविक इच्छा या ज़िन्दगी की ज़रूरत पूरी हो। उदाहरण के लिए, खाने-पीने या खेलने-कूदने की चीज़ें इत्यादि।
- **मनोवृत्ति और मूड (Aptitude and Mood) :** ध्यान पर मिज़ाज और मूड का भी असर पड़ता है। कुछ लोग अपनी मनोवृत्ति ही की वजह अपने विचारों में मग्न और अपनी कल्पनाओं में गुम रहते हैं, तो कुछ बाहरी दुनिया और अपने आसपास के माहौल में ज़्यादा दिलचस्पी लेते और उनपर ध्यान देते हैं। इसी तरह जब मूड बिगड़ जाता है, तो माहौल की छोटी-छोटी गड़बड़ी भी ध्यान खींच लेती हैं और ग़ुस्से को और ज़्यादा भड़का देती हैं, जबकि हँसी-खुशी की दशा में इस तरह की छोटी-छोटी कोताहियों की तरफ़ से नज़र फेर लेते हैं और उनपर बिलकुल ही कोई ध्यान नहीं देते।
- **मानसिक शक्ति :** ताज़ा दम और खुश होने की दशा में किसी चीज़ की तरफ़ देर तक ध्यान केन्द्रित रह सकता है, लेकिन दुख या तकलीफ़ की स्थिति में बाहरी के बजाय आन्तरिक चीज़ों पर

ध्यान होता है। थकान की स्थिति में ध्यान बार-बार भटकता है और मन किसी एक चीज़ पर नहीं टिकता।

ध्यान के प्रकार (Kinds of Attention)

ध्यान के कई प्रकार हैं—

(1) ऐच्छिक और अनैच्छिक ध्यान

- जब किसी चीज़ पर इसलिए ध्यान दिया जाता है कि वह किसी और लक्ष्य को प्राप्त करने का साधन होती है, तो उसे ऐच्छिक ध्यान कहते हैं। उदाहरण के लिए, परीक्षा पास करने, छात्रों में लोकप्रिय होने, शिक्षकों की प्रसन्नता प्राप्त करने या माता-पिता की नज़रों में प्रिय बनने के लिए शिक्षा या किसी और काम पर ध्यान देना।
- जब कोई चीज़ खुद ही ध्यान को खींचनेवाली हो और उसकी तरफ़ ध्यान देने के लिए किसी इच्छा की ज़रूरत न पड़े, तो उसे अनैच्छिक ध्यान कहते हैं। उदाहरण के लिए, तेज़ आवाज़, भड़कीला रंग, शोर-गुल, डुगडुगी की आवाज़, चलती हुई ट्रेन, उड़ते हुए जहाज़, गुज़रते हुए जुलूस इत्यादि की तरफ़ आकर्षित होना।

ऐच्छिक और अनैच्छिक ध्यान की भी नीचे लिखी दो-दो क़िस्में हैं—

ध्यान (Attention)			
ऐच्छिक ध्यान (Volitional Attention)		अनैच्छिक ध्यान (Non-Volitional Attention)	
अविचारित (Implicit)	विचारित (Explicit)	सहज (Spountaneous)	बाध्य (Enforced)

- **अविचारित ऐच्छिक ध्यान (Implicit Volitional Attention) :** जब किसी चीज़ की तरफ़ ध्यान केन्द्रित करने के लिए सिर्फ़ एक बार इरादा

कर लेना काफ़ी हो, तो यह ऐच्छिक ध्यान कहलाएगा। उदाहरण के लिए, इरादा करके पढ़ने-लिखने या किसी काम पर बच्चा लग गया और बिना किसी रुकावट के देर तक लगा रहा।

- **विचारित ऐच्छिक ध्यान (Explicit Volitional Attention) :** जब किसी कारण से ध्यान भटकता रहे और किसी चीज़ की तरफ़ ध्यान केन्द्रित रहने के लिए बार-बार इरादे और कोशिश की ज़रूरत पेश आए, तो वह स्पष्ट ऐच्छिक ध्यान कहलाएगा। उदाहरण के लिए, पढ़ने-लिखने या किसी काम के समय ध्यान को अपनी तरफ़ खींचनेवाली बहुत-सी चीज़ें आसपास हों या कोई विचार बार-बार मन में आकर ध्यान को भटकाने की कोशिश करे, लेकिन बार-बार उनकी तरफ़ से नज़र हटाकर ध्यान को काम पर लगाए रखने की कोशिश की जाए।

- **बाध्य अनैच्छिक ध्यान (Enforced Non-Volitional Attention) :** जब इच्छा और मर्ज़ी के ख़िलाफ़ बलपूर्वक ध्यान किसी चीज़ की तरफ़ आकर्षित हो जाता है, तो उसे बलपूर्वक होनेवाला अनैच्छिक ध्यान कहते हैं। उदाहरण के लिए, एक बच्चा अपनी इच्छा के साथ पढ़ने-लिखने के लिए बैठा। परीक्षा क़रीब है। वह मेहनत और ध्यान से तैयारी करना चाहता है। लेकिन आसपास शोर-ग़ुल या लोगों के आने-जाने की वजह से वह मजबूर होकर पढ़ने के बजाय दूसरी तरफ़ ध्यान लगा देता है।

- **सहज अनैच्छिक ध्यान (Spountaneous Non-Volitional Attention) :** जब स्वाभाविक दिलचस्पी या लगाव के कारण मन किसी चीज़ की तरफ़ एकाएक आकर्षित हो जाता है, तो उसे सहज या अनयास अनैच्छिक ध्यान कहते हैं। उदाहरण के लिए, पढ़ने के दौरान में किसी जिगरी दोस्त का आना या नज़रों के सामने साथियों का कोई दिलचस्प खेल शुरू कर देना इत्यादि। ऐसी स्थिति में बच्चा ख़ुशी के जोश में या स्वभाविक दिलचस्पी की वजह से अस्ल काम को भूलकर अनायास दूसरी तरफ़ आकृष्ट हो जाता है।

(2) केन्द्रित और विकेन्द्रित ध्यान

कुछ लोग स्वाभाविक रूप से गम्भीर ध्यान के मालिक होते हैं और किसी एक ही चीज़ पर देर तक ध्यान केन्द्रित रख सकते हैं। कुछ का ध्यान बँटा हुआ होता है और थोड़ी-थोड़ी देर बदल-बदल कर विभिन्न चीज़ों की तरफ़ एक साथ ध्यान दे सकते हैं। ज्ञानपरक काम करने के लिए गम्भीर ध्यान की ज़रूरत होती है और व्यावहारिक काम या प्रबन्ध-व्यवस्था के लिए विकेन्द्रित ध्यान की। लड़कियाँ विकेन्द्रित ध्यान की मालिक होती हैं। इसलिए गणित में वे कमज़ोर रहती हैं; क्योंकि यह विषय गम्भीर ध्यान की अपेक्षा करता है।

(3) डावाँडोल और स्थिर ध्यान

छोटे बच्चों का ध्यान बार-बार भटकता है। वे किसी एक चीज़ पर ज़्यादा देर तक ध्यान नहीं दे सकते, जबकि बड़ों का ध्यान अपेक्षाकृत स्थिर और दृढ़ होता है और वे देर तक एक ही तरफ़ ध्यान लगाए रह सकते हैं। बीमारी या थकान की वजह से भी ध्यान जल्द-जल्द भटकता है।

ध्यान और दिलचस्पी

ध्यान और दिलचस्पी (Attention and Interest) में चोली-दामन का साथ है। हर आदमी आम तौर पर उन चीज़ों की तरफ़ ध्यान देता है, जो उसके लिए दिलचस्प होती हैं।

बच्चों के बारे में हम सब जानते हैं कि वे—

- मेहनत-मशक़्क़त से जी चुराते हैं और जम कर कोई काम करना नहीं चाहते।
- छुट्टियों का बेचैनी से इन्तिज़ार करते रहते और घूमने-फिरने और मनोरंजन या खेल-कूद की योजनाएँ बनाया करते हैं।

- स्वतंत्र प्रवृत्ति के होते हैं। किसी का दबाव और प्रभुत्व पसन्द नहीं करते और न कोई पावन्दी गवारा करते हैं।
- ध्यान और व्यस्तता (लगन) से घबराते और कोसों दूर भागते हैं।
- तोड़-फोड़, शोर-शराबा, हंगामा करने और खेल-कूद के रसिया होते हैं।

  ज़ाहिर है ऐसे जीव को लिखने-पढ़ने या किसी गम्भीर काम पर लगना आसान नहीं है। बच्चे इन चीज़ों पर उसी स्थिति में ध्यान देंगे, जब ये काम उनके लिए दिलचस्प बना दिए जाएँ।
- पाठों को दिलचस्प बनाने के लिए निम्नलिखित उपाय कारगर हो सकते हैं—

(1) सबसे पहले पाठ का उद्देश्य और लक्ष्य बच्चों के मन में ख़ूब अच्छी तरह बिठा दिया जाए, यहाँ तक कि वे अपने तौर पर उसकी ज़रूरत और उपयोगिता महसूस कर लें।

(2) पाठ इस अन्दाज़ से पेश किया जाए कि उससे बच्चे की अपनी कोई बुनियादी इच्छा, मूल प्रवृत्ति, सहज अपेक्षाएँ या व्यक्तिगत उद्देश्य पूरे होते हों। उदाहरण के लिए, खेल-खेल में शिक्षा दी जाए या जिज्ञासा और उत्सुकता को उभार कर उसे शान्त करने का उपाय किया जाए। कुछ रचनात्मक काम और बनाने-बिगाड़ने का मौक़ा दिया जाए। साथियों का सम्मान, बड़ों का प्रोत्साहन, शिक्षक की प्रसन्नता प्राप्त करने इत्यादि का साधन बनाया जाए आदि।

(3) अगर मुमकिन हो तो पाठ की विषय-वस्तु को कहानी या लेख के रूप में पेश किया जाए।

(4) सैद्धान्तिक बातों और अमूर्त विचारों को ठोस पदार्थों, रोचक उदाहरणों और मानचित्रों-चार्टों इत्यादि की मदद से

समझाया जाए।

(5) सहायक और उपयोगी सामान, ग्लोब, चार्ट्स, मानचित्र, मॉडल के चित्र, रंगीन चॉक के स्केच इत्यादि से पाठ स्पष्ट किया जाए।

(6) बच्चों के व्यक्तित्व और उनकी कोशिशों को महत्त्व दिया जाए। पाठ को आगे बढ़ाने में उनसे मदद ली जाए। उनसे सुझाव माँगे जाएँ। हाँ, असफलता के अवसर न आने पाएँ।

(7) किसी हद तक प्रतियोगिता और स्पर्धा के अवसर दिए जाएँ।

(8) बच्चों को अपनी कोशिश के लाभदायक परिणाम अपनी नज़रों से देख लेने की व्यवस्था की जाए।

(9) कोशिशों में सफलता पर दिल खोलकर सराहा जाए और शाबाशी दी जाए।

(10) पाठ उसकी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से जोड़ दिया और उससे सम्बन्धित कोई ऐसा काम दिया जाए, जिससे उसकी किसी मूल प्रवृत्ति की तुष्टि होती हो। उदाहरण के लिए, टिकट, पत्तियाँ, बीज इत्यादि जमा करना, कोई मॉडल बनाना आदि।

(11) सवेरे जब बच्चे स्कूल/मदरसे आते हैं, तो उनका ध्यान भटकता रहता है। इसलिए पहले घंटे में कोई आसान या फ़ितरी दिलचस्पी का विषय रखा जाए।

(12) थोड़ी देर के बाद बच्चों का ध्यान बड़ी तेज़ी से बढ़ता है और दूसरे, तीसरे घंटे में अपने चरम पर पहुँच जाता है। इन घंटों में पूरे ध्यान से पढ़े जानेवाले महत्त्वपूर्ण और मुश्किल विषय रखे जाएँ। उदाहरण के लिए, हिसाब, अरबी, मातृभाषा इत्यादि।

(13) छोटे बच्चों का ध्यान जल्द-जल्द भटकता है। वे किसी एक चीज़ पर ज़्यादा देर तक ध्यान केन्द्रित नहीं रख सकते। इसलिए उनके घंटे छोटे रखे जाएँ और देर तक ध्यान केन्द्रित करने का आदी

बनाने के लिए विषय बदल-बदल कर और अनूठेपन की कुछ चाश्नी शामिल करके चीज़ों को पेश किया जाए, ताकि वे कुछ देर तक ध्यान केन्द्रित कर सकें।

(14) बच्चों को आकर्षित करने और पाठ में उनकी दिलचस्पी बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि शिक्षक ख़ुद अपने काम की तरफ़ असाधारण ध्यान दे और पाठ में पूरा ध्यान और दिलचस्पी दर्शाएँ।

(15) पाठ के विभिन्न हिस्सों को इस ढंग से क्रमबद्ध करके और आपस में जोड़कर पेश किया जाए कि एक हिस्सा दूसरे का पूरक मा़लूम हो और स्वाभाविक रूप से ध्यान अगले हिस्से की तरफ़ चला जाए। ऐसा न होने पाए कि एक हिस्सा ख़त्म होने पर साथ ही ध्यान भी ख़त्म हो जाए।

(16) इसी तरह विभिन्न विषयों को भी आपस में इस तरह जोड़कर पढ़ाया जाए कि एक विषय से स्वाभाविक रूप से ध्यान दूसरे विषय की तरफ़ मुड़ जाए, ताकि एक विषय ख़त्म होने पर ध्यान भटकने न पाए।

(17) हर नई बात पिछली जानकारियों से जोड़कर पेश की जाए, ताकि पाठ बच्चों के लिए बिलकुल अपरिचित या समझ से परे न रहे।

(18) प्राथमिक कक्षाओं के बच्चे सिर्फ़ उन चीज़ों की तरफ़ ध्यान देते हैं, जिनमें फ़ितरी दिलचस्पी होती है या जो ध्यान को अपने आप ही खींच लेती हैं। जैसे खेल, आर्ट और क्राफ़्ट के काम, गहरा रंग, तेज़ आवाज़, गतिशील और आकार बदलनेवाली चीज़ें इत्यादि। इन चीज़ों के द्वारा अगर शिक्षा दी जाए, तो उनके ध्यान की समस्या हल हो सकती है। उदाहरण के लिए, खेल-खेल में शिक्षा देना, पढ़ाई में रंगीन चित्रों का इस्तेमाल इत्यादि। लेकिन क्रमशः बच्चों को स्वतः ध्यान केन्द्रित करने का अभ्यस्त बनाना चाहिए; क्योंकि ज़िन्दगी में मनुष्य को ऐसे कामों का सामना होता है, जो ख़ुद

दिलचस्प नहीं होते, ताकि बच्चे उन कामों पर भी ध्यान देने लगें, जो बहरहाल उनके लिए बहुत ही फ़ायदेमन्द और निहायत ज़रूरी होते हैं। लेकिन उनमें फ़ितरी दिलचस्पी नहीं होती।

(19) पढ़ाने-लिखाने का काम शान्तिपूर्ण माहौल और अच्छे वातावरण में अंजाम दें, ताकि छात्र आसानी से ध्यान दें और ध्यान हटानेवाली चीज़ों को क़रीब न फटकने दें। असम्बद्ध शिक्षा-सामग्री बस्ते में रखवा दें। ब्लैकबोर्ड पर लिखी हुई अनावश्यक चीज़ों को मिटा दें। विषय से सम्बन्ध न रखनेवाले चित्र और चार्ट्स सामने से हटा दें।

(20) बच्चों को आकृष्ट करने के लिए बार-बार डराना, धमकाना, मेज़ पर हाथ मारना, छड़ी रखना, चीख़ना-चिल्लाना उचित नहीं। ऐसा करने से थोड़ी देर के लिए बच्चे ध्यान तो देने लगते हैं, लेकिन ऐसे ध्यान में एकाग्रता नहीं होती। साथ ही, इन चीज़ों का ज़्यादा इस्तेमाल कुछ ऐसी भावनाएँ पैदा कर देता है, जो असल चीज़ की तरफ़ ध्यान देने में बाधक होते हैं। कुछ दिनों के बाद इस तरह के प्रयास प्रभावहीन और अलाभकारी साबित होते हैं।

(21) कक्षा पर बराबर नज़र रखनी चाहिए। ब्लैकबोर्ड पर लिखते समय भी कक्षा की तरफ़ पीठ नहीं करनी चाहिए, बल्कि एक तरफ़ से लिखना और बार-बार कक्षा की तरफ़ देखते रहना चाहिए। जो छात्र ध्यान न दे रहे हों, उनसे अचानक प्रश्न कर लेना चाहिए। इस तरह पाठ की तरफ़ कक्षा का ध्यान बना रहेगा।

(22) बच्चों के ध्यान का दायरा बहुत सीमित होता है। एक समय में कुछ ही चीज़ें समा सकती हैं। इसलिए पढ़ाते समय छोटे वाक्य इस्तेमाल करने चाहिएँ। बहुत ठहर-ठहर कर बोलना चाहिए। श्रुतिलेख लिखाते समय एक बार में बहुत छोटा वाक्य बोलना चाहिए।

☆☆☆

अध्याय-24

स्मृति

(Memory)

स्मृति (याद्दाश्त) हमारे मस्तिष्क की वह शक्ति है, जिसके द्वारा हम सामने आनेवाली बातों, घटनाओं, अनुभवों और आकृतियों इत्यादि को मस्तिष्क में बिठाते, दोबारा ध्यान में लाते और पहले आई हुई की हैसियत से पहचानते हैं।

स्मृति की महत्ता और उपयोगिता वर्णन की मुहताज नहीं। इसके बिना हम एक क़दम भी चल नहीं सकते। ज़रा ध्यान दीजिए, अगर हम अपने पुराने अनुभव भूलते जाएँ, हमें अपने वादे, क़र्ज़ और लेन-देन के मामले याद ही न रहें, विभिन्न जगहों, वहाँ तक आने-जाने के रास्ते, जाने-पहचाने चेहरे, लोगों से रिश्ते-नाते और उनकी बातें और शक्लें अगर हमारे मन से ग़ायब हो जाएँ या ख़ुदा और रसूल (सल्ल०) की हिदायतें हमें याद ही न रहें, तो सोचिए ज़िन्दगी दूभर और जान की वबाल हो जाए। स्मृति के बिना हम जिन कठिनाइयों से दो-चार हो सकते हैं, हर एक इसका आसानी से अन्दाज़ा कर सकता है।

स्मृति एक प्राकृतिक शक्ति है। इसका सम्बन्ध दिमाग़ की प्राकृतिक बनावट से है। इसलिए इसमें किसी तरह की कमी-बेशी का तो प्रश्न नहीं। जैसी कुछ अल्लाह तआला की तरफ़ से मिल जाए, वैसी ही बनी रहेगी। हाँ, अगर इससे काम लेने का तरीक़ा आता हो, तो मामूली स्मृतिवाला आदमी भी, अल्लाह ने चाहा तो, अपना काम ख़ूब अच्छी तरह चला सकता है। इसलिए इस शक्ति से समुचित काम लेने का तरीक़ा बहरहाल हर एक को जान लेना चाहिए।

स्मृति में अगर निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाएँ तो वह अच्छी स्मृति कहलाती है–

- जल्द याद कर लेना;
- ज़रूरत के समय याद आ जाना;
- देर तक याद रखना;
- बेकार बातों को भूल जाना।

अगर हम इस शक्ति को अच्छे ढंग से काम में लाना सीख लें, तो स्मृति में ये विशेषताएँ पैदा हो सकती हैं।

इस सन्दर्भ के उपायों पर ग़ौर करने से पहले स्मृति की प्रक्रिया के बारे में कुछ और ज़रूरी बातें जान लेनी चाहिएँ–

स्मृति के कारक (Factors of Memory)

स्मृति की हर प्रक्रिया में निम्नलिखित कारक पाए जाते हैं–

(1) **सुरक्षित करना :** यानी किसी घटना, बात या चीज़ इत्यादि का मन-मस्तिष्क में दाख़िल होकर जगह पकड़ लेना, जो बात मन-मस्तिष्क में जितनी स्पष्टता से दाख़िल होती और जितना ध्यान से जमाई जाती है, मन पर उतने ही गहरे छाप छोड़ती और देर तक सुरक्षित रहती है। अगर इस सम्बन्ध में लापरवाही बरती जाए या इसपर से सरसरी गुज़र जाया जाए, तो छाप धुंधली होंगी और जल्द मिट जाएँगी। याद कराने से पहले अगर उसका मतलब, उसकी ज़रूरत और उपयोगिता ख़ूब अच्छी तरह मन में बिठा दिया जाए, तो वह सोच-समझकर और ज़्यादा ध्यान से याद की जाएगी और ज़्यादा दिनों तक याद रहेगी। शुरुआत में बच्चे बहुत-सी बातें बेसमझे-बूझे, केवल सुन-सुनाकर और बार-बार दोहराकर अनुकरण करके रट लेते हैं और इस तरह भी उनको बहुत कुछ रटाया जा सकता है। इस तरह की रटाई हुई बातें भी बड़े महत्त्व की और उपयोगी होती हैं। मिसाल के तौर दुआएँ, ज़िक्र, शेअर, लोकोक्ति, पहाड़े इत्यादि। लेकिन अगर याद करने से पहले बच्चों को उनका

अर्थ समझा दिया जाए और उनकी अहमियत और उपयोगिता भी संक्षेप में मन में बिठा दिया जाए या खेल-खेल में याद कराई जाएँ, तो याद करने में ज़्यादा आसानी होती है। अगर कोई बात ध्यान और दिलचस्पी से याद की जाती है, तो वह ज़्यादा दिनों तक याद रहती है। यूँ भी मनुष्य का स्वभाव है कि आम तौर पर वही बातें वह ज़्यादा याद रखता है, जिनसे उसे दिलचस्पी और लगाव होता है।

(2) **पुनः स्मरण (Recall) यानी सुरक्षित की गई बात को दोबारा मन में लाना :** यह भी स्मृति (Memory) का बहुत ही ज़रूरी हिस्सा है। हमारे मन में बहुत-सी बातों का भण्डार हो, लेकिन समय पर अगर याद ही न आए तो किस काम का? इसके विपरीत जितना कुछ भी याद हो, अगर ज़रूरत के समय याद आ जाया करे, तब तो हमारे लिए उपयोगी है।

जितनी अच्छी तरह से कोई बात मस्तिष्क में जमा की जाती है, उतनी ही आसानी से ज़रूरत के मुताबिक़ याद आ जाती है। याद करते समय निम्नलिखित बातों का अगर ध्यान रखा जाए, तो दोबारा याद करने (Recall) में बड़ी आसानी होती है–

- एक बात दूसरी बात के सहारे आसानी से याद आ जाती है। इसके विपरीत अगर हर बात अलग-अलग मन में बिठाई जाए, तो ज़रूरत के समय उसके याद आने में कठिनाई होती है। इसलिए जो नई बात भी याद कराई जाए, पिछले ज्ञान से उसका सम्बन्ध ज़रूर जोड़ दिया जाए। उदाहरण के लिए, अल्लामा शिबली की पैदाइश (1857 ई॰) पर 'ग़दर' हुआ और मौत (1914 ई॰) पर विश्वयुद्ध छिड़ा। मौलाना आज़ाद की पैदाइश के साल (1888 ई॰) में आठ के तीन अंक हैं। मौलाना आज़ाद पंडित नेहरू (1889 ई॰) से एक साल बड़े थे।

● विभिन्न चीज़ों में यह पारस्परिक सम्बन्ध तीन तरीक़ों से क़ायम हो सकता है–

(क) **निरन्तरता के द्वारा :** दो या दो से अधिक चीज़ों में आपस में जितनी नज़दीकी, सम्बन्ध और मेल होगा, उतना ही वे एक-दूसरे से जुड़ी होंगी और एक-दूसरे को याद दिलाने का साधन बनेंगी। उदाहरण के लिए, दो दोस्तों को अगर कई बार एक साथ देखा जाए, तो एक को देखते ही दूसरा याद आ जाएगा। अज़ान की आवाज़ सुनते ही नमाज़ की याद आ जाना अनिवार्य है; क्योंकि दोनों में अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। इस तरह अगर दो चीज़ों में सम्बन्ध जोड़ दिया जाए, तो स्मरण (Memory) और पुनःस्मरण (Recall) दोनों में आसानी होती है।

(ख) **समानता :** नई चीज़ की अगर किसी जानी-पहचानी चीज़ से तुलना करके दोनों के बीच समानता और सादृश्य को अच्छी तरह मन में बिठा दिया जाए, तो एक के याद आते ही दूसरी खुद-ब-खुद याद आ जाएगी। उदाहरण के लिए, ज़ेबरे की गधे से और ज़िराफ़ की ऊँट से तुलना। लेकिन स्पष्ट रहे अगर समानता बहुत ज़्यादा होती है, तो पहचानने में कभी-कभी धोखा भी हो जाता है। दो हमशक्ल भाइयों के बारे में लोगों को अक्सर धोखा होता है। इसलिए समानता और सादृश्य बताने के साथ तुलना करते समय आंशिक अन्तर को भी स्पष्ट कर दिया जाए, ताकि इस तरह का धोखा न हो। ज़ेबरे और गधे और ज़िराफ़ और ऊँट में स्पष्ट अन्तर यह होता है कि ज़ेबरे के शरीर पर काली-सफ़ेद धारियाँ होती हैं और ज़िराफ़ के पूरे शरीर पर चित्तियाँ होती हैं, इत्यादि। क़ुरआन मजीद की उन आयतों के बारे में हाफ़िज़ों को अक्सर धोखा हो जाता है, जिसके शब्द या विषय-सामंग्री मिलते-जुलते या बिलकुल एक समान होते हैं। प्रसंग और सन्दर्भ

से इस तरह की आयतों का ख़ूब अच्छी तरह सम्बन्ध जोड़कर आंशिक अन्तर को ख़ूब अच्छी तरह मन में बिठा देना चाहिए, ताकि ग़लती की आशंका न रहे।

(ग) **तुलना करके :** किसी जानी-पहचानी चीज़ से नई चीज़ की तुलना करके अगर दोनों के बीच अन्तर को स्पष्ट कर दिया जाए, तो भी एक की मदद से दूसरी को याद करने और एक की वजह से दूसरी के याद आ जाने में आसानी होती है। चीज़ें अपनी विपरीत चीज़ से आसानी से पहचान ली जाती हैं। त्याग की किसी घटना के साथ स्वार्थपरता की कोई घटना, धार्मिक नीति के मामले में औरंगज़ेब और अकबर की तुलना।

मतलब यह कि विभिन्न तरीक़ों से पिछली जानकारियों से नई जानकारियों का सम्बन्ध जोड़ देने से समानता के द्वारा हो या तुलना या अन्तर के द्वारा बात भी ख़ूब अच्छी तरह समझ में आ जाती है और इसको याद करने और दोबारा याद आने में बड़ी मदद मिलती है। इसलिए बच्चों को पाठ पढ़ाते समय इसका पूरा ध्यान रखा जाए। हर बात का पिछली बातों से सम्बन्ध जोड़ा जाए और समानता, विषमता और तुलना इत्यादि ख़ूब अच्छी तरह याद कराई जाए।

- कोई भाषण या किसी पाठ का विषय याद रखना हो, तो उचित स्थिति यह होगी कि पहले इसका एक शीर्षक तय कर लिया जाए और उपशीर्षकों के तहत नोट के रूप में उसका एक संक्षिप्त प्रारूप तैयार कर लिया जाए। शीर्षक की वजह से वह भाषण या लेख याद आ जाएगा और उपशीर्षक की सहायता से क्रमशः पूरे लेख या भाषण की विषय-सामग्री याद आ जाएगी।
- याद करते समय पूरी दृढ़ता और आत्मविश्वास के साथ कंठस्थ किया जाए। सन्देह और भ्रम की गुंजाइश न छोड़ी जाए, तो याद

आने में चूक कम होती है वरना भूलने की बहुत ज़्यादा आशंका रहती है।

- किसी जगह, चीज़ या समय इत्यादि के साथ जुड़ जाने पर भी बातें आसानी से याद आ जाती हैं।
- बच्चों का सोचने-समझने का दायरा बहुत छोटा होता है। वे एक समय में सिर्फ़ दो-तीन बातें याद रख सकते हैं। इसलिए उनकी किताबों में वाक्य संक्षिप्त और शब्द छोटे होने चाहिएँ। इबारती प्रश्नों में भी पेचीदगी कम से कम होनी चाहिए। एक साथ कई बातों का हुक्म नहीं देना चाहिए, वरना कुछ बातें स्मृति से ग़ायब हो जाएँगी। बाज़ार से सौदा मँगवाना हो, तो एक साथ आठ-दस चीज़ों की फ़रमाइश न की जाए। अगर ऐसा करना बहुत ज़रूरी हो, तो लिखकर दिया जाए वरना याद न रहेगा।

(3) जान-पहचान **(Recognition)** : यानी सामने आते या मन में लाते ही पिछली बातों या चीज़ों का याद आ जाना और उन्हें पिछली बातों या चीज़ों की हैसियत से ख़ूब अच्छी तरह पहचान लेना। यह भी स्मरण का बहुत ही महत्त्वपूर्ण अंग है। अगर हम याद की हुई चीज़ों की पिछली चीज़ों के रूप में पहचान ही न कर सकें, तो बड़ी कठिनाई सामने आए। हम उनके साथ वह रवैया अपना नहीं सकेंगे, जो होना चाहिए। ऐसे मौक़ों पर बहुत ही शर्मिन्दगी होती है। जब एक पुराने मुलाक़ाती से बहुत दिनों के बाद मुलाक़ात होने पर हमको इतना तो याद रहता कि उन्हें कहीं देखा है, लेकिन नाम और जगह हम भूल जाते हैं और अच्छी तरह पहचान नहीं पाते। वे तो हमारे साथ पुरानी बेतकल्लुफ़ी बरतना चाहते हैं और कुछ चीज़ों का हवाला देते हैं और हम अन्धेरे में रहते हैं और समुचित स्वागत और आदर-सम्मान नहीं कर पाते। इसलिए आदमियों और चीज़ों की शक्लों के साथ नाम और हैसियत और बातों या

घटनाओं के साथ उनकी पृष्ठभूमि भी याद हो जानी चाहिए, ताकि पहचान में आसानी हो।

बच्चों का पाठ रटकर सुना देना, लेकिन अक्षरों या शब्दों का पहचान न सकना जितना हानिकारक होता है, हम सब जानते हैं। स्मरण और पुनःस्मरण के साथ पहचान का भी ख़ूब अच्छी तरह अभ्यास कराना चाहिए।

कक्षा के छात्रों के नाम याद रखना और नाम लेकर उन्हें पुकारना उनसे ग़ैर-मामूली लगाव और अपनेपन का प्रमाण है। इससे छात्रों को अपनी अहमियत और पहचान का एहसास होता है।

शिक्षक को चाहिए कि वह कक्षा के हर बच्चे की सिर्फ़ शक्ल पहचानने पर बस न करे, बल्कि उनका नाम भी याद रखे। नाम लेकर हुक्म देने या किसी बात से रोकने का उंगलियों से सिर्फ़ इशारा करके कुछ कहने के मुक़ाबले में ज़्यादा असर होता है। इस तरह कंट्रोल में भी आसानी होती है।

याद कराने की विधि और तरीक़े

याद कराने के निम्नलिखित तरीक़े और उपाय अनुभव से बहुत फ़ायदेमन्द साबित हुए हैं। इनको अपनाने से जल्द याद हो जाता है। देर तक याद रहता है और ज़रूरत के समय याद आ जाता है—

(1) **ख़ुशदिल और ताज़ा दम होने पर याद कराना चाहिए :** थकान, उकताहट, सदमे की हालत में कुछ याद कराना तन्दुरुस्ती के लिए नुक़सानदेह भी होता है और काफ़ी समय और मेहनत ख़र्च करने के बावजूद अपेक्षित सफलता नहीं मिलती। इसलिए हमेशा ऐसे समय याद कराया जाए, जब दिमाग़ तरो-ताज़ा हो।

(2) **अंश के बजाय पूर्ण को याद कराना चाहिए :** यानी पूरी चीज़ को हिस्सों में बाँटकर याद कराने के बजाय पूरी चीज़ को एक साथ

याद कराने की कोशिश की जाए। अगर कोई छोटी सूरा, छोटा रुकूअ, छोटी दुआ, कुछ शेअरवाली कविता या लिखी हुई संक्षिप्त चीज़ याद करनी हो, तो बेहतर यह होगा कि पूरे को एक साथ याद कराया जाए। पूरी सूरा, रुकूअ या कविता को बार-बार पढ़ाया जाए। जो हिस्से याद होते जाएँ, उनको बिना देखे हुए और बाक़ी देख-देखकर दोहराया जाए। थोड़ी देर में पूरी याद हो जाएगी। एक-एक वाक्य या मिसरा (चरण) अलग-अलग याद कराके जोड़ने में रवानी भी नहीं आती और समय भी ज़्यादा लगता है।

(3) **पूरी चीज़ को उपयुक्त हिस्सों में बाँटकर याद कराना चाहिए :** अगर सूरा, कविता, भाषण या आलेख लम्बा हो, तो एक-दो बार पूरा पढ़वाकर अर्थ अच्छी तरह समझने दिया जाए। फिर उसे उचित हिस्सों में बाँटकर ऊपर के तरीक़ों से याद कराया जाए। हिस्से ऐसे हों कि हर हिस्से में एक पूरी बात आ जाती हो। उदाहरण के लिए, पाँच बन्द (शेअर) की कोई नज़्म (कविता) याद करानी हो तो हर बन्द को एक हिस्सा माना जाए। हाँ, हर हिस्से के आख़िरी शब्द का उसके बाद के हिस्से के पहले शब्द से सम्बन्ध स्थापित करा दिया जाए, ताकि क्रम और रवानी बनी रहे।

(4) **अन्तरालों से याद कराना चाहिए :** एक ही बैठक में पूरा याद करने के बजाय अगर अन्तराल देकर कई बैठकों में याद कराया जाए, तो बहुत मज़बूती के साथ याद होता है और बहुत दिनों तक नहीं भूलता। इसमें समय भी कम लगता है; क्योंकि हर बैठक में दिमाग़ तरो-ताज़ा होता है और चुस्ती और मुस्तैदी से याद करता है और अन्तराल रखने से याद की हुई बातों को मन में जड़ पकड़ने का मौक़ा मिलता है और कुछ समय गुज़रने के बाद दोहराने से पुनःस्मरण में भी आसानी होती है।

(5) **याद करने के बाद कुछ देर ख़ाली रखना चाहिए :** मन-मस्तिष्क को लगातार काम पर लगाए रखने से किए-धरे पर पानी फिर जाता है। इसलिए कुछ याद करा लेने के बाद मन-मस्तिष्क को याद की हुई चीज़ को जमाने का कुछ मौक़ा देना चाहिए।

(6) **विभिन्न चीज़ों को आपस में जोड़कर याद कराना चाहिए :** पहले से जो चीज़ें याद हों, उनके साथ नई चीज़ों का सम्बन्ध जोड़कर याद कराने से जल्द याद भी हो जाता है और उनके सहारे ज़रूरत के मुताबिक़ आसानी से याद आ जाता है। बिना जमा की हुई और बिना क्रमवाली बातों को याद करना और याद रखना बहुत मुश्किल होता है, जबकि क्रमबद्ध और आपस में जुड़े हिस्से आसानी से याद हो जाते हैं और ख़ूब अच्छी तरह याद रहते हैं। शब्दों के अक्षरों, शेअर और वाक्यों के शब्द और इबारतों के वाक्यों, इतिहास की घटनाओं और सन्-ईसवियों इत्यादि में परस्पर विशेष सम्बन्ध और एक क्रम होता है। इसका ध्यान रखा जाए तो याद करने में आसानी होती है।

(7) **याद की हुई चीज़ों को दोहराते रहना चाहिए :** याद होने के बाद कुछ तो एक ही दिन में, बहुत-सा तीन-चार दिन में भूल जाता है। इसलिए याद करा लेने के बाद निश्चिन्त नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि तीन-चार दिन तक लगातार दोहराते रहना चाहिए, ताकि अच्छी तरह याद हो जाए और भूलने की आशंका न रहे।

(8) **याद कराने से पहले मन-मस्तिष्क को इसके लिए अच्छी तरह तैयार कर लेना चाहिए :** जो कुछ याद कराना हो, उसकी अहमियत और फ़ायदा मन में बिठाने और दिलचस्पी पैदा कर देने के बाद याद कराना चाहिए। मन जितना ज़्यादा तैयार होगा, याद करने में उतनी ही ज़्यादा आसानी होगी।

स्मृति के प्रकार

स्मृति के विभिन्न प्रकार होते हैं—

शीघ्र स्मृति : यानी वह स्मृति जो सामयिक रूप से काम देती है और काम ख़त्म होने बाद याद की हुई बातों को मन से मिटा दिया जाता है। उदाहरण के लिए, वाद-संवाद में अपनी भूमिका, कोई भाषण जो किसी विशेष अवसर के लिए तैयार किया गया हो।

चिरस्थायी स्मृति : वह स्मृति जो हमेशा काम देती है। जैसे, शब्दों के अर्थ, पहाड़े, गुर, फ़ॉर्मूले, ऐतिहासिक घटनाएँ, सन् इत्यादि।

रट्टू स्मृति : जिसमें शब्द-शब्द रटकर ज़रूरत के मुताबिक़ ठीक वैसे ही दोहरा दिया जाता है। इस तरह की स्मृति में अर्थों पर ध्यान देना ज़रूरी नहीं होता। बच्चे अक्सर बिना समझे-बूझे रट लिया करते हैं।

तार्किक स्मृति : जिसमें शब्दों के बजाय अर्थों को मस्तिष्क में बिठाया जाता है और ज़रूरत के मुताबिक़ अपने शब्दों में पूरी बात दोहरा दी जाती है।

तीव्र स्मृति : यानी कम समय में याद कर लेने की योग्यता।

मन्द स्मृति : काफ़ी समय लगाने के बाद याद करने में समर्थ होना।

विशिष्ट स्मृति : कुछ लोग दृश्य-सामग्री को आसानी से याद कर पाते हैं, कुछ लोग सुनी हुई चीज़ों को। जो लोग दृश्य-स्मृति की योग्यता रखते हैं, वे जब तक लिखी हुई चीज़ों को ख़ुद पढ़ न लें, मौखिक रूप से सुनकर याद नहीं कर सकते। ऐसे लोग याद करते समय किताब के पन्नों और पंक्तियों को या ब्लैकबोर्ड का पूरा

चित्र और उसपर लिखे हुए शब्द या वाक्यों की छवि मन में लाते हैं। कुछ हाफ़िज़ क़ुरआन सुनाते समय ऐसा महसूस करते हैं कि वह क़ुरआन देखकर पढ़ रहे हैं, यहाँ तक कि पन्ना उलटता नज़र आता है। ऐसी स्मृति रखनेवालों को शक्लें याद रखने में बड़ी आसानी होती है। इसलिए जिससे एक बार मिल लेते हैं, उन्हें बहुत दिनों बाद भी आसानी से पहचान लेते हैं। इसके विपरीत श्रवण-स्मृति रखनेवाले सुनकर आसानी से याद कर लेते हैं और ठीक-ठीक वैसा ही दोहरा देते हैं। ऐसे लोग क़िरअत, शेअर, राग, गीत की नक़ल आसानी से उतार सकते हैं।

- **अक्रमबद्ध स्मृति :** छोटे बच्चों की स्मृति में कोई क्रमबद्धता नहीं होती। वे बहुत-से बिना क्रम के शब्द और वाक्य इत्यादि याद कर लेते हैं। शुरुआत में वे कई साल तक इसी बिना क्रम की स्मृति से काम चलाते हैं। इसके बाद अनुभव और समझ-बूझ में बढ़ोत्तरी के साथ उन अक्रमबद्ध बातों में सम्बन्ध और क्रम मिलाना सीखते हैं।

ध्यान देने योग्य बातें

बच्चों को उसी समय याद करने में लगया जाए, जब वे ख़ुश और ताज़ा दम हों—

- जो कुछ याद कराना हो उसमें दिलचस्पी पैदा कराई जाए। उसका अर्थ और भाव और उसकी अहमियत और उपयोगिता ख़ूब अच्छी तरह समझा कर याद कराने के लिए ज़ोरदार प्रेरणा दी जाए। इसके बारे में किसी शक और दुविधा का शिकार होने से बचाया जाए।
- बच्चों में आत्मविश्वास पैदा कराया जाए और इस बात का विश्वास पैदा कराया जाए कि वे आसानी से याद कर सकते हैं।
- याद करने के लिए चीज़ों को बार-बार पढ़ने का मौक़ा दिया जाए।

जितनी बार दोहराया जाएगा, उतना ही ज़्यादा पक्का याद होगा।

उचित हो अगर कुछ देर याद करने के बाद बिना देखे बच्चे एक-दूसरे को सुनाने की कोशिश किया करें और इस तरह आपस में सुन-सुनाकर पूरा याद करें।

याद की हुई चीज़ों का समय-समय पर दौरा (पुनरावृत्ति) कराया जाता रहे, ताकि दिमाग़ से मिटने न पाए।

एक ही बैठक में पक्का याद करा देने के बजाय अन्तराल देकर कई बैठकों में याद कराया जाए। इस तरह याद किया हुआ ज़्यादा मज़बूत और स्थायी होता है।

नई चीज़ों को संगठित और क्रमबद्ध रूप में पेश किया जाए और पिछले ज्ञान से उसका गहरा सम्बन्ध बिठाया जाए।

ज़्यादा से ज़्यादा ज्ञानेन्द्रियों से काम लेने का अवसर दिया जाए यानी जो कुछ याद कराना हो, उसे अच्छे अन्दाज़ से ज़बानी सुना दिया जाए। ब्लैकबोर्ड पर लिखकर या कॉपी-किताब के पन्नों से दिखा दिया जाए और अगर मुमकिन हो तो छात्रों से कॉपियों पर नक़ल भी करा दिया जाए। जितना अधिक ज्ञानेन्द्रियों से काम लेने का अवसर मिलेगा, उतना ही पक्का याद होगा।

थोड़ी-थोड़ी देर याद करने के बाद बिना देखे ज़बानी अदा करके इस बात का अन्दाज़ा लगा लिया करें कि कितना हिस्सा याद हो गया और कितना बाक़ी है। जितना हिस्सा ठीक याद न हो, उसपर और ज़्यादा ध्यान केन्द्रित करें।

बचपन में याद करने की शक्ति से ख़ूब काम लिया जाए और बहुत-सी ज़रूरी चीज़ें —कुरआन मजीद, दुआएँ, अज़कार (ज़िक्र), अशआर (कविताएँ), लोकोक्तियाँ, कथन इत्यादि —ख़ूब अच्छी तरह याद करा दी जाएँ। अगर सात-आठ साल के बच्चे को सहानुभूति, प्रेम और अच्छे तरीक़े से याद कराया जाए और साथ

ही प्रतिदिन थोड़ा-सा समय देकर मातृभाषा लिखने-पढ़ने और मामूली हिसाब करने का अभ्यास कराया जाए, तो वे दस-ग्यारह साल की उम्र में ही क़ुरआन का हाफ़िज़ भी हो सकता है और उन बच्चों के साथ भविष्य में आसानी से चल सकता है, जो शुरू से सारे विषय लेकर चल रहे थे और क़ुरआन मजीद को याद करने के सौभाग्य से वंचित रह गए हैं।

☆☆☆

अध्याय-25

शिक्षण (पढ़ाई-लिखाई)

शिक्षण क्या है?

शिक्षण का अर्थ है शिक्षा देना, बच्चों को लिखना-पढ़ना सिखाना या विभिन्न कला-कौशलों में महारत पैदा कराना। शिक्षण के द्वारा शिक्षक एक क्रम से बच्चों को तरह-तरह की जानकारियाँ देता है। उन्हें तरह-तरह की बातें जानने, सीखने या करने का मौक़ा देता है और आनेवाली ज़िन्दगी के लिए उन्हें तैयार करता है।

शिक्षण का काम उस समय अंजाम पाता है जब (1) कोई सीखनेवाला हो (बच्चा), (2) कोई सिखानेवाला हो (शिक्षक), (3) कोई चीज़ हो, जो सिखाई जाए (विषय-सामग्री)।

शिक्षण के द्वारा शिक्षक, बच्चे और विषय-सामग्री में सम्बन्ध जोड़ता है।

पढ़ाने-लिखाने के काम और दूसरे पेशों में बड़ा फ़र्क़ है। सोनार, बढ़ई, लोहार इत्यादि को अपने पेशे के सिलसिले में ऐसी चीज़ों से वास्ता पड़ता है, जो बेजान (निर्जीव) होती हैं, जिनका अपना कोई इरादा नहीं होता। ये कच्ची चीज़ें पूरी तरह उनके अधिकार में होती हैं। वे अपनी कला-कौशल का जिस तरह चाहें, प्रदर्शन करें। ये चीज़ें कोई विरोध नहीं कर सकतीं। इसलिए वे खटखट किए जाएँ, तो उनसे कुछ न कुछ बन ही जाता है। लेकिन शिक्षक को एक ऐसी ज़िन्दा, सोच-समझ रखनेवाली हस्ती (बच्चे) से सामना होता है, जिसमें अपना इरादा होता है, जिसकी अपनी ख़्वाहिशें और दिलचस्पियाँ होती हैं। अगर उसकी आमादगी और दिलचस्पी या उसका इरादा, ध्यान और इच्छा शामिल न हो या उसकी

उम्र, समझ और पिछली जानकारियों का ध्यान न रखा जाए, तो शिक्षकों की लाख कोशिशों का नतीजा भी बिलकुल बेकार होगा। वह घंटों सिर मारता रहे, कोई कामयाबी न होगी।

यही कारण है कि एक अच्छे शिक्षक के लिए ज़रूरी है कि वह बच्चे, विषय-वस्तु और शिक्षण-कला तीनों से ख़ूब अच्छी तरह अवगत हो और उन गुणों का मालिक हो, जो बच्चों से ख़ूब अच्छी तरह निपटने और उनको फ़ायदा पहुँचाने के लिए ज़रूरी हैं–

- बच्चे के बारे में वह जानता हो कि उसका स्वभाव क्या है, पलने-बढ़ने के विभिन्न चरण क्या हैं? हर चरण की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ क्या होती हैं, उसकी इच्छाएँ, रुझान और दिलचस्पियाँ क्या हैं, वह किस तरह आकर्षित होता, दिलचस्पी लेता, याद करता या किसी चीज़ का आदी बनता है। वह किस क्रम से आगे बढ़ता और किस तरह नई बातें सीखता है, उसके काम करने का अन्दाज़ क्या होता है, किस तरह की हरकतों में उसे मज़ा आता है, बड़ों से किन बातों में वह अलग होता हैं, इत्यादि।
- उसे अपने विषय से गहरा लगाव और विषय-सामग्री का ख़ूब अच्छा जानकार होना चाहिए। अपनी जानकारियों को बराबर बढ़ाते रहने की कोशिश करनी चाहिए।
- उसे जानना चाहिए कि बच्चों को क्या कुछ पढ़ाया जाए, किस क्रम से विषय-वस्तु को पेश किया जाए और सिखाने-पढ़ाने के लिए क्या तरीक़ा अपनाया जाए।

इन बातों को जाने बिना शिक्षण-कार्य फलदायक नहीं हो सकता।

सफल शिक्षण की विशेषताएँ

वही शिक्षण सफल कहलाता है–

- जो छात्रों में ज्ञान और कला सीखने की प्यास और चाहत

पैदा करे।

जिसके लिए पहले ही ख़ूब अच्छी तरह तैयारी कर ली जाती हो और पढ़ाई-लिखाई तैयार किए हुए पाठ और पहले तैयार ख़ाके (प्रारूप) के मुताबिक़ की जाती हो।

जिसके दौरान कक्षा में प्यार और हमदर्दी का वातावरण छाया रहता और डाँट-फटकार या मार-पीट की नौबत कम आती हो।

जो शिक्षकों और छात्रों में सहयोग की भावना (Sprit) पैदा करे और छात्रों की दिलचस्पी और ध्यान को केन्द्रित रख सके।

जिसमें नई बातें, पिछली जानकारियों और रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से जोड़कर या उससे तुलना करके बताई जाती हों।

जिसमें सामूहिक और व्यक्तिगत कठिनाइयों को दूर करने की तरफ़ पूरा ध्यान दिया जाता हो।

जो छात्रों में नवसृजन, सोचने-विचारने की आज़ादी, आत्मविश्वास और अपने ज्ञान पर विश्वास और भरोसा पैदा करे।

जो ज्ञान को व्यवहार में लाने और सीखे हुए को बरतने का तरीक़ा सिखाए और प्रयोग तथा अनुभव के लिए उसके मौके मुहैया करे।

☆☆☆

अध्याय-26

शिक्षण-विधि : क़ुरआन मजीद की रौशनी में

शिक्षण-प्रशिक्षण-कला पर आदर्श नमूने की रौशनी में, संक्षेप में, हम पहले ही विचार कर चुके हैं। अब हमें सरसरी तौर पर यह देख लेना चाहिए कि क़ुरआन मजीद से शिक्षण-विधि (Teaching Method) पर क्या रौशनी पड़ती है।

छात्रों की अभिरुचि और तत्परता

क़ुरआन मजीद खोलते ही जो बात स्पष्ट रूप से सामने आती है, वह यह है कि शिक्षण-प्रशिक्षण से फ़ायदा उठाने के लिए छात्र में सच्ची चाहत ज़रूरी है। जब तक वह ख़ुद इच्छुक न हो और उसका दिल और दिमाग़ पूरे तौर पर एकाग्रता के साथ आमादा न हो शिक्षण-प्रशिक्षण हरगिज़ फलदायक नहीं हो सकता, चाहे कुछ भी बताया और सिखाया जा रहा हो। वह उसके हक़ में कितना ही फ़ायदेमन्द क्यों न हो और चाहे उसका सिखाने और बतानेवाला कितना ही बड़ा और प्रभावकारी व्यक्तित्व का मालिक ही क्यों न हो।

क़ुरआन मजीद की सूरा फ़ातिहा में शिक्षार्थी की तरफ़ से—

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۝

'हमें सीधा रास्ता दिखा.....' (क़ुरआन, सूरा-1 फ़ातिहा, आयत-5) की ख़ुलूस से भरी दुआ का तक़ाज़ा इसका स्पष्ट प्रमाण है। शिक्षक को चाहिए कि सबसे पहले छात्रों में ज्ञान की प्यास और सच्ची चाहत पैदा करे। उनको ज्ञान प्राप्त करने पर आमादा करे। इसके बिना उसकी सारी

कोशिशें प्रभावहीन होंगी। इस उद्देश्य से शिक्षक को चाहिए कि वह पूरी हमदर्दी से छात्रों को पढ़े-लिखे और अनपढ़ का अन्तर, पढ़े-लिखे लोगों पर अल्लाह की ख़ास मेहरबानी और शिक्षा की ज़रूरत और अहमियत दिलकश अन्दाज़ में दलीलों के साथ वाक़िए का हवाला देकर बराबर समझाता रहे, ताकि शिक्षा की तरफ़ उनकी अभिरुचि जाग्रत हो और ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन्हें विभिन्न तरीक़ों से प्रेरित करता रहे।

ख़ुद क़ुरआन मजीद में निम्नलिखित आयतों के द्वारा ज्ञान प्राप्त करने की प्रेरणा दी गई है—

هَلْ يَسْتَوِي الَّذِينَ يَعْلَمُونَ وَالَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ ۗ إِنَّمَا يَتَذَكَّرُ أُولُوا الْأَلْبَابِ ۝

"कहीं पढ़े-लिखे और अनपढ़ बराबर होते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-9)

مَنْ يُؤْتَ الْحِكْمَةَ فَقَدْ أُوتِيَ خَيْرًا كَثِيرًا ط

"जिसे हिकमत (तत्त्वज्ञान) दी गई, उसे हक़ीक़त में बहुत बड़ी दौलत मिल गई।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-269)

يَرْفَعِ اللَّهُ الَّذِينَ آمَنُوا مِنْكُمْ وَالَّذِينَ أُوتُوا الْعِلْمَ دَرَجَاتٍ ط

"अल्लाह तुममें ईमानवालों के और उन लोगों के लिए, जिनको ज्ञान दिया गया है, दरजे बुलन्द करेगा।"

(क़ुरआन, सूरा-58 मुजादला, आयत-11)

إِنَّمَا يَخْشَى اللَّهَ مِنْ عِبَادِهِ الْعُلَمَاءُ ط

"अल्लाह से वही डरते हैं, जो ज्ञान रखते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-35 फ़ातिर, आयत-28)

शिक्षक के ज्ञान पर भरोसा

फ़ायदा उठाने के लिए दूसरी बहुत ही ज़रूरी शर्त शिक्षक के ज्ञान पर असाधारण भरोसा रखना है। शिक्षक का काम ही यह है कि छात्रों को वे चीज़ें बताए, जो वे नहीं जानते। अब अगर शिक्षक की अयोग्यता या अपनी किसी कोताही की वजह से छात्रों का विश्वास डगमगा जाए और उन्हें विश्वास ही न हो कि शिक्षक जो कुछ बता रहा है वह ठीक है और उसी में उसकी भलाई और कामयाबी है, तो वे उसकी शिक्षा-दीक्षा से किस तरह फ़ायदा उठा सकते हैं—

هُدًى لِّلْمُتَّقِيْنَ ۝٢ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْغَيْبِ

"हिदायत और मार्गदर्शन है उन डरनेवालों के लिए, जो ग़ैब (परोक्ष) पर ईमान लाते हैं।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयतें-2, 3)

(यानी सिर्फ़ क़ुरआन मजीद के बताने से उन हक़ीक़तों पर यक़ीन कर लेते और ईमान ले आते हैं, जो मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियों से परे हैं और कभी सीधे-सीधे जनसाधारण के अनुभव और प्रत्यक्षीकरण (Observation) में नहीं आतीं। उदाहरण के लिए, ख़ुदा की हस्ती और उसके गुण, फ़रिश्ते, वह्य (प्रकाशना), जन्नत, जहन्नम इत्यादि।

इस आयत से उपर्युक्त शर्त की पुष्टि होती है। इसलिए शिक्षक को चाहिए कि वह छात्रों का विश्वास बहाल रखे और यह उसी समय मुमकिन है, जब वह ज्ञान की दृष्टि से आवश्यक योग्याता और गुणोंवाला हो, ख़ूब पढ़ा-लिखा और योग्य हो।

अल्लाह ही को ज्ञान का स्रोत मानना

किसी आदमी का ज्ञान ख़ुद उसके या समाज और मनुष्यों के हक़ में उसी समय फ़ायदेमन्द साबित हो सकता है, जब अल्लाह के नाम से शुरू किया जाए। उसकी हस्ती और गुणों को ध्यान में रख कर और उसकी पनाह में आकर हासिल किया जाए।

उसी को ज्ञान का स्रोत माना जाए और यह विश्वास किया जाए कि ज्ञान सिर्फ़ उसी के पास है और ज्ञान का जो हिस्सा भी किसी को मिलता है, वह उसी की देन होता है। उसी स्थिति में वह आदमी ज्ञान के अहंकार में पड़ने, ज्ञान को ग़लत रास्तों से हासिल करने और ग़लत मक़सदों पर इस्तेमाल करने और ज्ञान की राह में शैतान के आड़े आने से सुरक्षित रह सकेगा और ज्ञान में वृद्धि के लिए अल्लाह तआला से दुआ करता रहेगा। इन सच्चाइयों पर निम्नलिखित आयतें दलील पेश करती हैं–

إِنَّ اللَّهَ عَلِيمٌ خَبِيرٌ ﴿١٣﴾

"बेशक ख़ुदा सब कुछ जाननेवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-49 हुजूरात, आयत-13)

وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿١٨﴾

"और अल्लाह जाननेवाला और हिकमतवाला है।"

(क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-18)

وَاللَّهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٣٥﴾

"और अल्लाह हर चीज़ से परिचित है।"

(क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-35)

وَسِعَ رَبِّي كُلَّ شَيْءٍ عِلْمًا

"मेरे पालनहार रब का ज्ञान हर चीज़ पर छाया हुआ है।"

(क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-80)

اقْرَأْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِي خَلَقَ ﴿١﴾

"अपने रब का नाम लेकर पढ़, जिसने (सब को) पैदा किया।"

(क़ुरआन, सूरा-96 अलक़, आयत-1)

فَإِذَا قَرَأْتَ الْقُرْآنَ فَاسْتَعِذْ بِاللَّهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ ﴿٩٨﴾

"फिर जब तुम क़ुरआन पढ़ने लगो, तो शैतान मरदूद से पनाह माँग लिया करो।" (क़ुरआन, सूरा-16 नह्ल, आयत-98)

وَإِمَّا يَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطَانِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللَّهِ إِنَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٠٠﴾

"अगर कभी शैतान तुम्हें उकसाए, तो अल्लाह की पनाह माँग लो।" (क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-200)

शिक्षकों को चाहिए कि छात्रों के मन में यह बात ख़ूब अच्छी तरह बिठा दे कि ज्ञान का स्रोत अल्लाह तआला है। उसका ज्ञान हर चीज़ पर छाया हुआ है। ज्ञान का जो हिस्सा भी किसी को मिलता है, अल्लाह तआला ही का अनुदान होता है।

पढ़ना-लिखना शुरू करते समय शिक्षक को चाहिए कि ख़ुद भी 'अऊज़ूबिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम[6] पढ़ा करे और छात्रों से भी कहलवा लिया करे। ख़ुद भी यह दुआ माँगता रहे—

رَّبِّ زِدْنِي عِلْمًا ﴿﴾

"ऐ मेरे रब, मेरे ज्ञान में वृद्धि कर।"

(क़ुरआन, सूरा-20 ता-हा, आयत-114)

और छात्रों को भी इसकी हिदायत देता रहे। इस स्थिति में ख़ुद वह और उसके छात्र ज्ञान के घमंड में पड़ने, ज्ञान को नाजायज़ तरीक़े से हासिल करने और नाजायज़ मक़सदों पर इस्तेमाल करने और ज्ञान की राह में शैतान के अड़चन से सुरक्षित रह सकेंगे।

---

6. أعوذ بالله من الشيطان الرجيم بسم الله الرحمن الرحيم

अर्थ—मैं शैतान मरदूद से बचने के लिए अल्लाह की पनाह में आता हूँ।

कुछ बताने से पहले ख़ूब अच्छी तरह छात्रों का ध्यान आकर्षित करना

बात उसी समय दिल लगाकर सुनी जाती और उसपर ठंडे दिल से सोच-विचार किया जाता है, जब मन उसकी तरफ़ ख़ूब अच्छी तरह आकृष्ट और उसके लिए उत्सुक हो। क़ुरआन मजीद जिज्ञासा जगाने और आदमी को दिलो-जान से ध्यान देने के लिए बहुत-से तरीक़े अपनाता है। उनमें से कुछ ये हैं—

- हुरूफ़े-मुक़त्तआत[7] से बातचीत शुरू करता है—

  अलिफ़-लाम-मीम, अलिफ़-लाम-रा, ता-हा, हा-मीम इत्यादि।

- कोई प्रश्न करता है—

  يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا هَلْ اَدُلُّكُمْ عَلٰى تِجَارَةٍ تُنْجِيْكُمْ مِّنْ عَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝١٠

  "ऐ ईमानवालो! क्या मैं तुमको ऐसा व्यापार बता दूँ, जो तुम्हें दर्दनाक अज़ाब से बचा दे?"

  (क़ुरआन, सूरा-61 सफ़्फ़, आयत-10)

  هَلْ نُنَبِّئُكُمْ بِالْاَخْسَرِيْنَ اَعْمَالًا ۝١٠٣

  "क्या मैं तुम्हें उनकी ख़बर दूँ, जो कर्म की दृष्टि बड़े घाटे में हैं?" (क़ुरआन, सूरा-18 कह्फ़, आयत-103)

- कोई दृश्य प्रस्तुत करता है—

  اِذَا زُلْزِلَتِ الْاَرْضُ زِلْزَالَهَا ۝١ وَاَخْرَجَتِ الْاَرْضُ اَثْقَالَهَا ۝٢ وَقَالَ الْاِنْسَانُ مَا لَهَا ۝٣

  "जब ज़मीन भूकम्प से हिला दी जाएगी और ज़मीन अपने अन्दर का बोझ निकाल फेंकेगी और मनुष्य हैरत से कहेगा : इसको

---

[7] अरबी के वर्ण जो क़ुरआन मजीद के कुछ अध्यायों (सूरतों) के आरम्भ में आए हैं ।

क्या हो गया है!" (क़ुरआन, सूरा-99 ज़िलज़ाल, आयतें-1-3)

إِذَا السَّمَاءُ انفَطَرَتْ ① وَإِذَا الْكَوَاكِبُ انتَثَرَتْ ② وَإِذَا الْبِحَارُ فُجِّرَتْ ③
وَإِذَا الْقُبُورُ بُعْثِرَتْ ④

जब आसमान फट जाएगा, और जब तारे झड़ पड़ेंगे और जब दरिया बहकर एक-दूसरे में मिल जाएँगे और जब क़ब्रें उखेड़ दी जाएँगी।" (क़ुरआन, सूरा-82 इनफ़ितार, आयतें-1-4)

أُولَٰئِكَ الْمُقَرَّبُونَ ⑪ فِي جَنَّاتِ النَّعِيمِ ⑫ أَصْحَابُ الْيَمِينِ مَا أَصْحَابُ
الْيَمِينِ ㉗

"वही लोग तो हैं, जो नेमत भरी जन्नतों में रहेंगे।.....और दाएँ बाज़ूवाले, दाएँ बाज़ूवालों (के सौभाग्य) का क्या कहना!"

(क़ुरआन, सूरा-56 वाक़िआ, आयतें—11, 12, 27)

और सूरा-55, रहमान में बड़े विस्तार से इन सब का चित्रण किया गया है।

- दूसरों के प्रश्नों या आपत्तियों को सामने रखकर उनके उत्तरों की तरफ़ ध्यान को केन्द्रित करवाता है—

سَأَلَ سَائِلٌ بِعَذَابٍ وَاقِعٍ ①

"एक माँगनेवाले ने अज़ाब माँगा है, जो नाज़िल होकर रहेगा।"

(क़ुरआन, सूरा-70 मआरिज, आयत-1)

'वे तुमसे पूछते हैं' से पन्द्रह जगहों पर बात शुरू होती है—

وَقَالُوا أَإِذَا كُنَّا عِظَامًا وَرُفَاتًا أَإِنَّا لَمَبْعُوثُونَ خَلْقًا جَدِيدًا ㊽

और कहा : क्या जब हम हड्डियाँ और मिट्टी होकर रह जाएँगे, तो नए सिरे से हमको पैदा करके उठा खड़ा किया जाएगा?"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-98)

قَالُوٓا اَبَعَثَ اللّٰهُ بَشَرًا رَّسُوْلًا ﴿٩٤﴾

"वे कहने लगे : क्या अल्लाह ने मनुष्य को पैग़म्बर बनाकर भेज दिया?" (क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-94)

● अचानक किसी घटना की ख़बर देकर या भविष्यवाणी करके लोगों को बात सुनने पर आमादा करता है—

الٓمّٓ ﴿١﴾ غُلِبَتِ الرُّوْمُ ﴿٢﴾ فِيْٓ اَدْنَى الْاَرْضِ وَهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ غَلَبِهِمْ سَيَغْلِبُوْنَ ﴿٣﴾ فِيْ بِضْعِ سِنِيْنَ

"अलिफ़-लाम-मीम। रूमी क़रीब के भूभाग में पराजित हो गए हैं; और अपनी इस पराजय के बाद कुछ ही सालों में वे विजयी हो जाएँगे।" (क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयतें—1-4)

इन आयतों में रूमियों (रोमवालों) की जीत की उस समय भविष्यवाणी की गई, जब ईरानी उन्हें पराजित कर चुके थे और उनकी जीत स्पष्ट रूप से असम्भव नज़र आ रही थी—

اِنَّا فَتَحْنَا لَكَ فَتْحًا مُّبِيْنًا ﴿١﴾

"हमने तुमको जीत प्रदान की, जीत भी स्पष्ट और साफ़।"

(क़ुरआन, सूरा-48 फ़त्ह, आयत-1)

इस आयत में मक्का-विजय की उस समय भविष्यवाणी की गई थी, जब हुदैबिया के स्थान पर स्पष्ट रूप से दबकर मुसलमानों ने सत्य के इनकारियों से सुलह-सन्धि की थी।

बहुत अधिक चौकन्ना करने या चौंका देने के लिए बात करनी होती है, तो कभी-कभी उपर्युक्त तरीक़ों में से एक साथ ही कई एक को इस्तेमाल करता है। उदाहरण के लिए—

اَلْقَارِعَةُ ۝١ مَا الْقَارِعَةُ ۝٢ وَمَآ اَدْرٰىكَ مَا الْقَارِعَةُ ۝٣ يَوْمَ يَكُوْنُ النَّاسُ كَالْفَرَاشِ الْمَبْثُوْثِ ۝٤ وَتَكُوْنُ الْجِبَالُ كَالْعِهْنِ الْمَنْفُوْشِ ۝٥

"खड़खड़ानेवाली, खड़ड़ानेवाली क्या है? और तुम क्या जानो कि खड़खड़ानेवाली क्या है? वह क़ियामत है, जिस दिन लोग ऐसे होंगे, जैसे बिखरे हुए पतिंगे और पहाड़ ऐसे हो जाएँगे, जैसे धुनकी हुई रंग-बिरंग की ऊन।"

(क़ुरआन, सूरा-101 क़ारिअ़ह, आयतें—1-5)

इन आयतों में सूचना, प्रश्न, दृश्य सब एक साथ पेश करके ध्यान को आकर्षित किया गया है। शिक्षक को भी सन्दर्भ और मौक़े की दृष्टि से विभिन्न तरीक़ों को अपना कर पढ़ाने से पहले छात्रों का ध्यान पूरी तरह आकर्षित कर लेना चाहिए। फिर उन्हें कोई बात बतानी चाहिए।

प्रस्तुतीकरण

सच्ची चाहत पैदा कर देने और अपनी तरफ़ पूरी तरह आकर्षित कर लेने के बाद क़ुरआन मजीद अपनी बात पेश करता है। अपनी बात पेश करने के लिए वह सम्बोधन का ढंग अपनाता है और बेशक है भी यही सबसे ज़्यादा प्रभावकारी तरीक़ा। पूरा क़ुरआन पाक विभिन्न छोटे-बड़े भाषणों के रूप में उतरता रहा और हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) भाषणों ही की शक्ल में उन्हें दूसरों के सामने पेश करते रहे। क़ुरआन मजीद के भाषण में बयान इतना ज़ोरदार, बाचतीत करने का ढंग इतना उम्दा है कि सुननेवाला मुग्ध हो जाता है। कोई अभागा ही होगा जिसके कानों तक यह आवाज़ पहुँचे और वह प्रभावित न हो। उतबा जैसा इस्लाम का कट्टर दुश्मन इसकी कुछ आयतें सुनते ही हथियार डाल देता और चौकड़ी भूल जाता है। इसका एक टुकड़ा हज़रत उमर (रज़ि.) जैसे कट्टर विरोधी की ज़िन्दगी में क्रान्ति पैदा कर देता है। कहाँ तक गिनाया जाए। क़ुरआन मजीद अपनी पाक हिदायतों, उत्कृष्ट भाषा, बातचीत

करने के उत्तम ढंग, असाधरण प्रभावशीलता, प्रभावकारी लहजा, लय और बयान के ज़ोर के द्वारा बहरहाल हर एक से अपना लोहा मनवा ही लेता है। क़ुरआन मजीद तो ख़ैर अल्लाह का कलाम (ईशवाणी) है, इसकी प्रभावशीलता का क्या कहना। जो लोग अपने भाषण या बातचीत के ढंग में इसकी हल्की-सी झलक पैदा कर लेते हैं, वे भी कितनों की ज़िन्दगियों में इंक़िलाब बरपा कर देते हैं। मौलाना रूम अपनी मसनवी, अल्लामा इक़बाल अपनी कुछ नज़्मों, इख़्वानुस्सफ़ा अपने कुछ लेखनों और पुस्तकों, मौलाना आज़ाद और मौलाना मौदूदी इत्यादि अपने कुछ भाषणों और लेखनों में क़ुरआन पाक की मदद से उसके बयान के ज़ोर की हल्की-सी झलक पैदा कर सके हैं। इसपर हाल यह है कि पढ़नेवाला बहरहाल झूम जाता और एक अजीब-ग़रीब दुनिया में पहुँच जाता है।

शिक्षक को भी अपने बयान में ज़ोर पैदा करना चाहिए और यह उसी समय मुमकिन है, जब उसको अपने ज्ञान पर भरोसा हो। उसके पास पेश करने के लिए सचमुच कोई पैग़ाम हो और बात दिल की गहराइयों से निकले।

स्पष्टीकरण और व्याख्या

क़ुरआन मजीद सिर्फ़ बयान के ज़ोर पर बस नहीं करता, बल्कि अपनी बात ख़ूब अच्छी तरह स्पष्ट और मन में बिठाने के लिए—

- अन्दर-बाहर से साक्ष्य पेश करता है।
- आसपास के हवाले देता है।
- रोज़मर्रा के अनुभवों और देखी-भाली चीज़ों को दलील के तौर पर सामने लाता है।
- तरह-तरह की मिसालें देता और उपमाओं से काम लेता है।
- मशहूर ऐतिहासिक घटनाओं और उजड़ी हुई बस्तियों के खण्डरों से सुबूत पेश करता है।

- विभिन्न घटनाओं को बयान करके मनचाहे नतीजे निकलवाता है।
- नबियों और क़ौमों के क़िस्से-कहानियों से मदद लेता है।
- एक ही सच्चाई को तरह-तरह से बयान करता है, ताकि हर योग्यता और क्षमता के लोग आसानी से समझ सकें।
- शब्दों में इतना स्पष्ट और सजीव चित्रण करता है, मानो सिर की आँखों से देख रहे हैं।
- लोगों की उलझनों, भ्रमों और सन्देहों को दलीलों से दूर करता है।

शिक्षक को भी व्याख्या और स्पष्टीकरण के सन्दर्भ में ज़रूरत और समय के मुताबिक़ इन उपायों से काम लेने की कोशिश करनी चाहिए।

प्रश्न

ध्यान को केन्द्रित रखने और सोच-विचार की तरफ़ प्रेरित करने के लिए बीच-बीच में प्रश्न करता जाता है–

اَلَمْ تَرَ كَيْفَ فَعَلَ رَبُّكَ بِعَادٍ ﴿٦﴾

"क्या तुमने नहीं देखा कि तुम्हारे रब ने आद के साथ क्या किया?" (क़ुरआन, सूरा-89 फ़ज्र, आयत-6)

اَفَلَا يَنْظُرُوْنَ اِلَى الْاِبِلِ كَيْفَ خُلِقَتْ ﴿١٧﴾ وَاِلَى السَّمَآءِ كَيْفَ رُفِعَتْ ﴿١٨﴾

"क्या ये लोग ऊँटों की तरफ़ नहीं देखते कि कैसे अजीब पैदा किए गए हैं और आसमान की तरफ़ कि कैसा बुलन्द किया गया है?" (क़ुरआन, सूरा-88 ग़ाशियह, आयतें–17,18)

وَمَا تِلْكَ بِيَمِيْنِكَ يٰمُوْسٰى ﴿١٧﴾

"और ऐ मूसा! यह तुम्हारे दाहिने हाथ में क्या है?"

(क़ुरआन, सूरा-20 ता-हा, आयत-17)

प्रश्नों के उत्तर सुनता और अगर उत्तर स्पष्ट नहीं होते हैं,

तो उनकी तरफ़ से ख़ुद ही उत्तर देकर आगे बढ़ जाता है—

قَالَ هِيَ عَصَايَ أَتَوَكَّؤُا عَلَيْهَا وَأَهُشُّ بِهَا عَلَىٰ غَنَمِي وَلِيَ فِيهَا مَآرِبُ أُخْرَىٰ ۝١٨

"उसने उत्तर दिया : यह मेरी लाठी है। इसपर मैं सहारा लेता हूँ। इससे मैं अपनी बकरियों के लिए पत्ते झाड़ता हूँ और इसमें मेरे लिए और भी कई फ़ायदे हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-20 ता-हा, आयत-18)

وَلَئِن سَأَلْتَهُم مَّنْ خَلَقَ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ لَيَقُولُنَّ اللَّهُ ۚ

"और अगर तुम उनसे पूछो कि आसमानों और ज़मीन को किसने पैदा किया है, तो वे बोल उठेंगे कि ख़ुदा ने।"

(क़ुरआन, सूरा-31 लुक़मान, आयत-25)

शिक्षकों को भी चाहिए कि पढ़ाते समय छात्रों से प्रश्न करे और उनको भी प्रश्न करने का मौक़ा दे। छात्रों की तरफ़ से जो प्रश्न, एतिराज़ या सन्देह उभरें, उनका सन्तोषजनक उत्तर दे। छात्रों के उत्तर ध्यान से सुने और उन्हें दिल की बात कहने का मौक़ा दे, ताकि खुलकर उनका ज़ेहन सामने आ सके।

सारांश

क़ुरआन मजीद थोड़ी देर के बाद कुछ शब्दों में सारांश पेश कर दिया करता है। शुरुआती भाषणों, सूरतों, रुकुओं में जो बातें ख़ूब विस्तार से स्पष्टता के साथ बयान की गई हैं, आख़िरी सूरतों में वही बातें निहायत संक्षिप्त रूप में कुछ शब्दों में बयान कर दी हैं या इशारों और संकेतों में पूरी बात कह दी गई है, ताकि आसानी से याद हो जाए और हमेशा याद रहे।

तीसवें पारे की आख़िरी सूरतों (अध्यायों) में ज़रा ग़ौर कीजिए

'गागर में सागर' भरा है। उदाहरण के लिए—

وَالْعَصْرِ ۝ اِنَّ الْاِنْسَانَ لَفِیْ خُسْرٍ ۝ اِلَّا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ ۙ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ ۝

"ज़माने की क़सम! (ज़माना गवाह है) बेशक मनुष्य घाटे में है, मगर वे लोग जो ईमान लाए और अच्छे कर्म करते रहे और आपस में हक़ (बात) की हिदायत और सब्र की ताकीद करते रहे।" (क़ुरआन, सूरा-103 अस्र, आयतें—1-3)

इस छोटी-सी सूरा में तो क़ुरआन मजीद ने अपना पूरा सारांश समेटकर रख दिया है।

शिक्षकों को भी चाहिए कि पाठ का एक-एक हिस्सा पेश करके उसका सारांश भी बयान करता जाए और आख़िर में अपनी पूरी बात का बहुत ही संक्षेप में सांराश पेश कर दिया करे। इस तरह छात्रों को पूरी बात याद करने और याद रखने में आसानी होती है।

पुनरावृत्ति और पुनराभ्यास

क़ुरआन मजीद ने पुनरावृत्ति (दोहराने) और पुनराभ्यास का बड़ा ख़याल रखा है। एक ही बात को बार-बार अलग-अलग अन्दाज़ से सामने लाता है, ताकि ख़ूब अच्छी तरह मन में बैठ जाए। शायद ही कोई ऐसा पन्ना हो जिसपर इसने अपनी बुनियादी दावत या उसके किसी हिस्से को न दोहराया हो, लेकिन दोहराने में भी अन्दाज़ ऐसा अपनाया है कि वही बात हर बार नया आनन्द दे जाती है।

शिक्षक को भी पुनरावृत्ति (दोहराने) और पुनराभ्यास की तरफ़ पूरा ध्यान देना चाहिए। लेकिन अन्दाज़ ऐसा अपनाना चाहिए कि उदासीनता और उकताहट न पैदा होने पाए।

करने के काम देना

अपनी बात को साफ़ तौर पर समझा देने, तर्कों से सन्तुष्ट कर देने और बयान के ज़ोर से मनवा लेने पर ही बस नहीं करता, बल्कि कुछ प्रश्न देकर अपने तौर पर सोच-विचार करके संतुष्ट होने को प्रेरित करता है और दिल का संतोष हासिल करने के लिए, अनुभव, प्रत्यक्षीकरण और अवलोकन का अवसर देता है और जाननेवालों से भी पूछकर इत्मीनान हासिल कर लेने की तरफ़ ध्यान दिलाता है।

'ज़रा ज़मीन पर चल-फिरकर देखो' क़ुरआन मजीद में छह जगहों पर कहकर और *"क्या उन्होंने ज़मीन का भ्रमण नहीं किया?"* सात जगहों पर कहकर खुद देखकर इत्मीनान हासिल करने की तरफ़ ध्यान दिलाया गया है। इसी तरह *"पूछ लो"* नौ जगहों पर कहकर जाननेवालों से पुष्टि करके इत्मीनान हासिल करने की तरफ़ क़ुरआन मजीद ने ध्यान दिलाया है।

शिक्षकों को भी चाहिए कि जो कुछ छात्रों को बताए उससे सम्बन्धित कोई काम देकर अनुभव और अवलोकन का और अधिक अवसर प्रदान करे, ताकि उन्हें पूरी सन्तुष्टि भी हो जाए और वे अपने ज्ञान को व्यवहार में लाना और बरतना सीखें।

यह है क़ुरआन मजीद की बुद्धिसंगत और विवेकपूर्ण शिक्षण-विधि की सरसरी रूप-रेखा।

इस तरह इसने अपनी शिक्षाओं को लोगों के लिए बेहद आसान बना दिया है—

وَلَقَدْ يَسَّرْنَا الْقُرْاٰنَ لِلذِّكْرِ فَهَلْ مِنْ مُّدَّكِرٍ ۝

"और हमने क़ुरआन को समझने के लिए आसान कर दिया है। तो कोई है कि सोचे-समझे?" (क़ुरआन, सूरा-54 क़मर, आयत-17)

☆☆☆

अध्याय-27

शिक्षण-प्रशिक्षण के सामान्य नियम

नीचे शिक्षण के कुछ सामान्य नियम दिए जा रहे हैं—

ये लम्बे शिक्षण अनुभव और बाल-मनोविज्ञान (Child Psychology) की रौशनी में लिखे गए हैं। सारे विषय और हर तरह के पाठों में इन्हें यथासम्भव ध्यान में रखना चाहिए, ताकि शिक्षण-कार्य लाभदायक और प्रभावी हो सके।

तत्परता के नियम

यानी छात्रों को पढ़ने के लिए ख़ूब अच्छी तरह तैयार करके पाठ शुरू किया जाए; क्योंकि जिस काम के लिए मन पूरे तौर पर तैयार होता है, वह तत्परता और पूरे लगन से किया जाता है और जो काम किसी तरह के दबाव या ज़ोर के तहत अंजाम पाता है, वह बेगार समझकर टाल दिया जाता है। हम सब जानते हैं कि बच्चे ध्यान और एकाग्रता से घबराते हैं। किसी की ज़ोर-ज़बरदस्ती और दबाव पसन्द नहीं करते। लिखने-पढ़ने जैसे नीरस काम से उन्हें कोई दिलचस्पी नहीं होती। इसलिए उन्हें पढ़ने-लिखने पर आमादा करने के लिए शिक्षक आम तौर पर डराते-धमकाते और बल-प्रयोग और मार-पीट से काम लेते हैं, जिसका नतीजा यह होता है कि ज़्यादातर बच्चे इस नीरस काम से और ज़्यादा घबराने और शिक्षा से भागने लगते हैं और जो मारे-बाँधे रह जाते हैं, वे काम में पूरी दिलचस्पी नहीं लेते। इसके लिए मौक़े के मुताबिक़ निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं—

- उपयुक्त प्रश्न, संक्षिप्त बातचीत, सुन्दर चित्र, ध्यान आकर्षित

करनेवाले मॉडल इत्यादि के द्वारा नई जानकारी के लिए बच्चों की जिज्ञासा जगा दी जाए।

- फिर पाठ के उद्देश्य और जो कुछ पढ़ने जा रहे हैं, उसकी ज़रूरत और उपयोगिता ख़ूब अच्छी तरह मन में बिठा दी जाए।
- काम में खेल या एक-दूसरे से आगे बढ़ जाने की भावना पैदा कर दी जाए या पाठ्यसामग्री को कहानी के रूप में पेश किया जाए।
- बच्चों को कुछ बनाने या व्यावहारिक काम करने का मौक़ा दिया जाए।
- पाठ को आगे बढ़ाने में उनकी मदद और मशवरों को अहमियत दी जाए।

आमादगी के बाद ध्यान और दिलचस्पी का मसला भी बहुत कुछ हल हो जाएगा; क्योंकि जिस काम को करने के लिए बच्चे ख़ुशी से तैयार हो जाएँगे, उसपर पूरा ध्यान भी देंगे और बाद में चाहे कठिनाइयाँ आएँ, पूरे लगन, दिलचस्पी और एकाग्रता से काम करेंगे।

चयन के नियम

यानी बच्चों को सिर्फ़ वही कुछ पढ़ाया और सिखाया जाए जो उनके लिए बहुत ही ज़रूरी, फ़ायदेमन्द, मुनासिब, उनकी प्रकृति और योग्यता और उद्देश्य के पूरी तरह अनुकूल हो और जिसे शिक्षक अपने सीमित साधनों-संसाधनों से ख़ूब अच्छी तरह अंजाम दे सकता हो।

हम सब जानते हैं कि ज्ञान एक अथाह समुद्र है, जबकि शिक्षा की अवधि बहुत ही कम और जीवन-काल अत्यन्त सीमित। ज़िन्दगी भर ग़ोते लगाइए, उथले तट से आगे बढ़ नहीं सकते और कुछ पत्थरों के कुछ टुकड़ों के सिवा कुछ हाथ नहीं आ सकता और बहुत-सी बातें तो बच्चों के लिए यूँ भी समय से पहले की बातें होती हैं। इसलिए शिक्षकों को चाहिए कि बहुत ही सावधानीपूर्वक चयन करे और उसी को हासिल करने

के लिए बच्चों का समय लगाए, जो हक़ीक़त में ज़रूरी और फ़ायदेमन्द हो। बेकार और निरर्थक कामों में समय बरबाद न होने दे। हाँ, यह अलग बात है कि पाठ को दिलचस्प और प्रभावकारी बनाने के लिए ऐसा करना बहुत ज़रूरी हो।

व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध

यानी नई जानकारियाँ यथासम्भव बच्चों की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी की घटनाओं, उनकी पिछली जानकारियों, उनके अनुभव और अवलोकन और सामाजिक और प्राकृतिक माहौल से जोड़कर प्रदान की जाए। इस तरह बात आसानी से समझ में आ जाएगी और ख़ूब अच्छी तरह मन में बैठ जाएगी। साथ ही बच्चों पर नई जानकारियों की ज़रूरत और उपयोगिता स्पष्ट करने और रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में उसके इस्तेमाल का तरीक़ा सिखाने में भी मदद मिलेगी। जिस चीज़ का ज़िन्दगी से कोई सम्बन्ध महसूस न हो या उसकी ज़रूरत और उपयोगिता नज़र न आए, उसे सीखने को मन तैयार नहीं होता और न ज़्यादा देर तक वह मन में सुरक्षित रहती है। उदाहरण के लिए, पाकी-सफ़ाई इत्यादि के वे मसले जिनकी ज़रूरत वयस्क होने के बाद होती है। सर्वप्रथम तो समय से पहले की बात होने के कारण छोटे बच्चों की समझ में नहीं आते; दूसरे ज़रूरत पेश न आने की वजह से ज़्यादा दिनों तक याद भी नहीं रह सकते।

ख़ुद करके सीखना

यानी सारी बातें ख़ुद बता देने के बजाय बच्चों को ख़ुद करके सीखने के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े दिए जाएँ। जिन पाठों में करके सीखने की सम्भावनाएँ न हों, उनको भी कम से कम किसी व्यावहारिक काम पर ख़त्म किया जाए। उदाहरण के लिए, मौखिक रूप से बता चुकने पर उससे सम्बन्धित लिखित काम लेना। मालूमाती पाठ के बारे में ऐसे काम सुपुर्द करना, जिनमें बच्चों को ख़ुद कुछ करना पड़े। उदाहरण के लिए,

टिकट या चित्र जमा करना, कोई मॉडल या चित्र बनाना, फूल-पत्तियाँ इत्यादि जमा करना।

बच्चे चूँकि हर समय कुछ न कुछ करना चाहते और बनाते-बिगाड़ते रहते हैं। इसी में उन्हें मज़ा भी आता है और इसी तरह वे बहुत कुछ सीखते और अनुभव प्राप्त करते हैं। इसलिए अगर पढ़ाने-लिखाने में इसका इस्तेमाल किया जाए, तो शिक्षा ज़्यादा आसान, प्रभावकारी और दिलचस्प हो जाती है और बच्चे जो कुछ सीखते हैं, वे ज़्यादा मज़बूत और स्थायी होता है। उदाहरण के लिए, वुज़ू, नमाज़ का तरीक़ा, मौखिक रूप से बताने के बजाय व्यावहारिक रूप से कराकर बताया जाए और ज़रूरत के मुताबिक़ सुधार कर दिया जाए, तो बच्चे पूरी दिलचस्पी से सीखेंगे और उन्हें आसानी से याद हो जाएगा।

विभाजन के नियम

यानी जो कुछ पढ़ाना हो उसे समुचित हिस्सों में बांट कर पढ़ाया जाए। यह बंटवारा इस अन्दाज़ का हो कि हर हिस्सा अपने पहले और बाद के हिस्से से प्राकृतिक रूप से जुड़ा भी रहे और बीच का पड़ाव और कड़ी भी हो। इस तरह क़दम-क़दम आगे बढ़ने और मुनासिब हिस्सों में बांट करके जानकारी देने में समझना भी आसान होता है और बिन्दुवार एक क्रम से याद भी हो जाता है। इसका ध्यान रखे बिना शिक्षा देने से जानकारियाँ उलझी हुई और धुन्धली होती हैं और ज़रूरत के समय ठीक तरह से इस्तेमाल नहीं हो पातीं।

दोहराने के नियम

यानी जो कुछ बच्चों को पढ़ाया जाए उसे दोहराकर और अभ्यास करवा कर ख़ूब याद करा दिया जाए। बहुत ज़्यादा जानकारी देने की चिन्ता में अक्सर शिक्षक दोहराने की तरफ़ से लापरवाही बरतते हैं, जिसका उन्हें बहरहाल नुक़सान उठाना पड़ता है; क्योंकि बच्चे पिछला भी

भूल जाते हैं और अगला उनकी समझ में नहीं आता। इसलिए दोहराने और अभ्यास की तरफ़ बहुत ज़्यादा ध्यान देना चाहिए। पाठ के हर हिस्से के बाद उस हिस्से का और पाठ पूरा होने पर पूरे पाठ की पुनरावृत्ति कराई जाए। जो नियम भी सिखाया जाए, उसका ख़ूब अभ्यास कराया जाए। प्रत्येक पाठ के पूरा होने के बाद पाबन्दी से कुछ समय और सप्ताह के अन्तराल में कम से कम एक दिन पुनरावृत्ति और अभ्यास के लिए निर्धारित कर दिया जाए, ताकि सप्ताह भर का काम ख़ूब अच्छी तरह मन में बैठ जाए। बिना पुनरावृत्ति के आगे न बढ़ा जाए। सोचने की बात है जिस ज्ञान पर बच्चों को महारत हासिल न हो सके, वह आख़िर उनके किस काम का होगा?

☆☆☆

अध्याय-28

शिक्षण-सूत्र

(Maxims of Teaching)

शिक्षण के सामान्य नियम बता देने के बाद अब नीचे शिक्षण (पढ़ाने-लिखाने) के कुछ से सूत्र (Maxims) बताए जा रहे हैं. जो प्राथमिक कक्षाओं के छात्रों के शिक्षण में अनुभव से बहुत प्रभावी और उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इसलिए इनको शिक्षण-कला में सिद्ध नियमों की हैसियत प्राप्त हो चुकी है। ये सूत्र मनोविज्ञान की कसौटी पर भी पूरे उतरते हैं और बुद्धि भी इनकी सत्यता और उपयोगिता की गवाही देती है। इसलिए यथासम्भव इनपर अमल करना चाहिए। हाँ, शिक्षक को चाहिए कि ज़रूरत के मुताबिक़ इनमें परिवर्तन कर लिया करे। ख़ास तौर पर जब समय कम हो या जब अधिक उम्र के छात्रों या वयस्कों को पढ़ाना हो।

ज्ञात से अज्ञात की तरफ़ चलें

यानी बच्चे जो कुछ पहले से जानते हों, उसी के सहारे उन्हें नई बातें बताई या समझाई जाएँ। शिक्षण का यह फ़ितरी तरीक़ा है। इसी तरह बात ठीक-ठीक समझ में आती है; क्योंकि पहले तो बच्चों का मन उन्हीं चीज़ों में ध्यान और दिलचस्पी प्रकट करता है, जिनमें अजूबापन और नएपन के साथ किसी हद तक लगाव भी हो। बिलकुल नई चीज़, जिसका पिछली जानकारी, अनुभव और प्रत्यक्षीकरण से किसी तरह का कोई सम्बन्ध न हो, बच्चों के नज़दीक कभी हमदर्दी के लायक़ नहीं होती। दूसरे, नई चीज़ की व्याख्या और स्पष्टीकरण बहरहाल पिछली जानकारियों ही की रौशनी में की जा सकती है।

इस सूत्र की माँग है कि शिक्षण में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाए–

- हर नए पाठ के सम्बन्ध में सबसे पहले बच्चों की पिछली योग्यता का ठीक-ठीक अन्दाज़ा लगा लिया जाए, ताकि इसी बुनियाद पर नई बातें बताई या सिखाई जा सकें।
- पाठ को शुरू करते समय ऐसे प्रश्न किए जाएँ, जिनसे बच्चों की इस विषय की पिछली जानकारियों का ख़ूब अच्छी तरह अन्दाज़ा हो सके। प्रश्न विषय से सम्बन्धित होने के साथ इतने आसान होने चाहिएँ कि बच्चों को उत्तर देने में कठिनाई न हो और ऐसे अन्दाज़ से पूछे जाने चाहिएँ कि वे अपने मन की बात उगल दें।
- एक विषय के कई पाठ इस अन्दाज़ से तैयार किए जाएँ कि हर अगले पाठ का पिछले पाठ से सम्बन्ध जुड़ता जाए।
- हर नया पाठ बच्चों की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी या उनके अनुभव और प्रत्यक्षीकरण से जोड़कर पढ़ाया जाए।
- नई जानकारियों की बच्चों की पिछली जानकारियों से तुलना और मिलान करके उनकी समानताओं या असमानताओं को अच्छी तरह मन में बिठा दिया जाए।
- बच्चों के अनुभव दोषपूर्ण और कल्पनाएँ अस्पष्ट होती हैं। इसलिए उनकी पिछली योग्यता से पाठ में लाभ उठाते समय उनकी पिछली संकल्पनाओं को स्पष्ट करने की कोशिश की जाए।

आसान से मुश्किल की तरफ़ चलें

यानी हर पाठ की शुरुआत आसान से हो और क्रमशः जटिलता पैदा की जाएँ। शिक्षण का यह बहुत ही उपयुक्त सूत्र है। इस तरह बच्चे महसूस किए बिना धीरे-धीरे कठिनाइयों पर क़ाबू पाते जाते हैं। उनका हौसला बढ़ता है। उनकी दिलचस्पी बनी रहती है और वे कठिनाइयों को

असाध्य नहीं समझते, बल्कि डटकर उनका मुक़ाबला करते हैं। इसके विपरीत अगर शुरू ही में उन्हें किसी मुश्किल में फँसा दिया जाए, तो वे घबराकर हिम्मत हार बैठते हैं और मायूस होकर कोशिश ही छोड़ देते हैं। इस सन्दर्भ में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाए—

- 'आसान' और 'मुश्किल' परस्पर पूरक शब्द हैं। एक ही बात किसी के लिए आसान होती है, किसी के लिए मुश्किल। इसी तरह सीखने से पहले जो बात मुश्किल नज़र आती है, सीखने के बाद वही आसान हो जाती है। इसलिए आसान और मुश्किल का फ़ैसला सम्बन्धित बच्चों के स्तर को ध्यान में रखकर किया जाए, न कि अपने या किसी और के स्तर से। शिक्षकों से इस सन्दर्भ में अक्सर चूक हो जाती है। वे एक चीज़ को आसान समझकर छात्रों पर ज़बरदस्ती ठूँसने की कोशिश करते हैं, हालाँकि वह चीज़ बच्चों के लिए बहुत मुश्किल और समझने लायक़ नहीं होती है। इसलिए जब बच्चे समझ नहीं पाते या कुछ की समझ में आ जाता है और कुछ को कठिनाई होती है, तो शिक्षक उनपर बिगड़ते और कभी-कभी सख़्ती पर उतर आते हैं। हालाँकि बच्चे बेचारे मजबूर और मासूम हैं।

  सत्र (Session) की शुरुआत ही में हर विषय के पाठों को आसान और मुश्किल की दृष्टि से क्रमबद्ध कर दिया जाए और पढ़ाते समय इसका पूरा ध्यान रखा जाए कि पहले आसान, फिर क्रमशः कठिन पाठ आएँ।

- पाठ के बहुत कठिन होने की स्थिति में जहाँ निराशा और उदासीनता पैदा होती है, वहीं बहुत आसान होने की स्थिति में उकताहट और ध्यान न देने की आशंका होती है और उसपर समय ख़र्च करने से कुछ हासिल भी नहीं होता। इसलिए पाठ के शुरू में आसानी का ध्यान रखा जाए, तो आख़िर तक क्रमशः

जटिलताएँ और कठिनाइयाँ पैदा की जाएँ, ताकि बच्चों को समस्याओं और कठिनाइयों से निपटने का सलीक़ा आए।

सादा से पेचीदा की तरफ़ चलें

यानी हर पाठ में आसान संकल्पनाएँ पहले लें। फिर क्रमशः पेचीदा बातें समझाएँ। इसी तरह बच्चों की उम्र, उनकी समझ, उनके अनुभव, अवलोकन को सामने रखकर हर विषय का पाठ्यक्रम इस तरह तैयार किया जाए कि सरल और आसानी से समझ में आनेवाली चीज़ पहले हो और फिर क्रमशः आसान और कठिन का समिश्रण तथा पेचीदा चीज़ें ली जाएँ। उदाहरण के लिए गणित में एक नियम समझाने के बाद अभ्यास के लिए पहले उस नियम से आसानी से निकलनेवाले कुछ सरल प्रश्न दिए जाएँ, फिर क्रमशः उसमें पेचीदगी लाई जाए और आख़िर में ऐसे प्रश्न दिए जाएँ, जिनको हल करने में उस नियम के साथ पहले से पढ़े हुए कुछ नियमों को भी इस्तेमाल करने की ज़रूरत पड़े। नियम, उपनियम सिखाते समय भी इस बात को ध्यान में रखा जाए। यानी शुरू में आसान और सादा नियम बताए जाएँ, धीरे-धीरे पेचीदा। लेकिन सादगी और पेचीदगी का फ़ैसला हमेशा बच्चों के स्तर से होना चाहिए; क्योंकि एक चीज़ बड़ों को ज़ाहिरी तौर पर बहुत ही आसान और सादा महसूस होती है, लेकिन एक बच्चे के लिए वह अपने बहुत-सारी पेचीदगियाँ रखती हैं और बड़ी मुश्किल से समझ में आती हैं।

ठोस से अमूर्त की तरफ़ चलें (From Concrete to Abstract)

यानी अमूर्त विचार क़ायम करने के लिए ठोस चीज़ की मदद ली जाए। उदाहरण के लिए, बच्चों को गिनती, पहाड़े, जोड़, घटाव इत्यादि सिखाने के लिए उंगलियों, बॉल-फ्रेम, गोलियों और इमली के बीजों इत्यादि से मदद ली जाए, तो बड़ी सहूलत होती है और धीरे-धीरे वे बिना किसी चीज़ की मदद के जोड़ने-घटाने लगते हैं। इसी तरह मॉडल, चित्र,

मानचित्र इत्यादि की मदद से अमूर्त विचार आसानी से क़ायम कराए जा सकते हैं। बिलकुल नई या अजनबी चीज़ का परिचय कराना हो, तो उसका मॉडल या चित्र दिखाने से संकल्पनाएँ स्पष्ट बनती हैं।

इस सूत्र से फ़ायदा उठाने के लिए निम्नलिखित बातें नज़र के सामने रहें–

- पाठों की शुरुआत ठोस चीज़ों, निर्धारित और आसपास की मिसालों से हो, लेकिन अन्त यथासम्भव अमूर्त विचारों पर होना चाहिए।
- ठोस चीज़ या निर्धारित और आसपास के उदाहरणों से उसी समय तक मदद ली जाए, जब ज़रूरी हो। धीरे-धीरे अमूर्त विचार क़ायम कराने की कोशिश की जाए।
- अमूर्त संकल्पनाओं का निर्माण हो जाने के बाद उन्हें अमूर्त ही न छोड़ दिया जाए, बल्कि फिर ठोस पदार्थों को निर्धारित उदाहरणों पर इस्तेमाल करके और अधिक विवरण मालूम किए जाएँ।

अनिश्चित और अस्पष्ट संकल्पनाओं को सुनिश्चित और स्पष्ट करें

बच्चों के अनुभव और प्रत्यक्षीकरण अपूर्ण होते हैं। इसलिए विभिन्न चीज़ों के बारे में उनके विचार अनिश्चित और अस्पष्ट होते हैं। शिक्षक को चाहिए कि वे उन्हें धीरे-धीरे निश्चित और स्पष्ट करे, ताकि बच्चों का ज्ञान दृढ़ और विश्वसनीय हो। यह काम इसी तरह हो सकता है कि बच्चों को अनुभव-प्रयोग, अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण के पर्याप्त अवसर दिए जाएँ और उनकी अवलोकन-क्षमता का ख़ूब अच्छी तरह प्रशिक्षण हो, ताकि वे अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण में आनेवाली चीज़ों से सरसरी तौर पर न गुज़र जाया करें। बच्चों के ग़लत और अपूर्ण विचारों को ठीक और स्पष्ट करने के लिए चित्र, मानचित्र, व्याख्या, स्पष्टीकरण

और उदाहरणों से मदद ली जाए। हमारे यहाँ आम तौर पर बच्चों को पारिभाषिक शब्दों की परिभाषा और कठिन शब्दों के अर्थ रटवा दिए जाते हैं और उसी पर सन्तोष कर लिया जाता है, हालाँकि इस तरह न तो विचार स्पष्ट होते हैं और न अर्थ अच्छी तरह समझ में आता है। उपयुक्त तरीक़ों से इसका समाधान होना चाहिए।

विशिष्ट से सामान्य की तरफ़ (From General to Specific) चलें

यानी मुख्य-मुख्य बातें पहले बताई जाएँ और सामान्य बहसें बाद में छेड़ी जाएँ। कोई सामान्य नियम बनाने या किसी सामान्य परिणाम पर पहुँचने के लिए बच्चों को जाँचने-परखने, प्रयोग और प्रत्यक्षीकरण के पर्याप्त अवसर दिए जाएँ। नैतिक नियम और सिद्धान्त समझाने के लिए सैद्धान्तिक बहसें करने के बजाय सच्ची घटनाएँ बताई जाएँ, ऐतिहासिक हस्तियों के प्रमुख वृत्तान्त पहले सुनाए जाएँ और विधिवत् इतिहास और क़ौमों के उत्थान-पतन की गाथाएँ सिलसिलेवार बाद में बताई जाएँ।

आसानी के लिए शिक्षक आम तौर पर नियम-उपनियम रटवा देते या सर्वमान्य सिद्धान्त और उसूल याद करा देते हैं और छात्रों को ख़ुद प्रयोग करके उन परिणामों पर पहुँचने का अवसर नहीं देते। यह तरीक़ा सही नहीं है; क्योंकि इस तरह एक बात बच्चों को दूसरे के विश्वास पर याद करना पड़ता है, जिसे वे ख़ूब अच्छी तरह समझ भी नहीं पाते और जल्द ही भूल जाते हैं।

हाँ, प्रयोग और प्रत्यक्षीकरण आदि पर छात्रों का सिर्फ़ उतना ही समय ख़र्च कराया जाए, जितना अनिवार्य हो। जब कोई सामान्य नियम बन जाए, तो और अधिक जाँच-परख या प्रत्यक्षीकरण, प्रयोग और उदाहरणों आदि पर समय ख़र्च न कराया जाए, बल्कि नियम-उपनियमों और सर्वमान्य सिद्धान्त को और अधिक मसलों के हल करने पर इस्तेमाल कराया जाए।

पूर्ण से अंश की तरफ़ चलें (From Whole to Part)

यानी पहले पूर्ण पर सर्वांग रूप से एक सरसरी नज़र डाल ली जाए, फिर एक-एक हिस्से के बारे में विस्तार से जानकारी मुहैया कराई जाए। इस तरह शुरुआत में एक संक्षिप्त ख़ाका (प्रारूप) मन में आ जाएगा और पूरा ख़ाका मन में सुरक्षित रहेगा और धीरे-धीरे वे एक-एक अंश के विस्तृत रूप से भी ख़ूब अच्छी तरह परिचित हो जाएँगे।

शुरू-शुरू में बच्चों की नज़र अंशों और उसके विस्तार पर नहीं जाती, बल्कि वे पूरी चीज़ पर व्यापक दृष्टि डालते हैं और हर चीज़ की एक सामान्य संकल्पना मन में रखते हैं। छात्रों को धीरे-धीरे एक-एक अंश का स्पष्टीकरण करके पूरी चीज़ की अधिक स्पष्ट और सुनिश्चित संकल्पना बनवानी चाहिए।

अंशों पर बातचीत करने के बाद पूर्ण से उनका सम्बन्ध भी जोड़ना चाहिए।

प्रकृति का अनुसरण करें

यानी बच्चे मानसिक और शारीरिक रूप से जिस चरण से गुज़र रहे हों, उस चरण की विशेषताएँ नज़र के सामने रहें और उनकी प्रकृति और उनका मन जिन चीज़ों को ग्रहण और स्वीकार कर सकता हो, वही कुछ पढ़ाएँ और सिखाएँ। नैसर्गिक इच्छाओं, मूल इच्छओं, रुझानों और अभिरुचियों को ध्यान में रखें और उचित सीमाओं में उनको पूरी छूट दें। बच्चों की प्रकृति से जंग न करें और न ही प्रकृति के विरुद्ध उनपर कुछ ठूँसें। इससे फ़ायदे के बजाय उलटा नुक़सान होता है। मेहनत तो बरबाद होती ही है, अक्सर प्रतिक्रिया बहुत तीव्र और कठोर होती है। कुछ लोग बच्चों को समय से पहले मानसिक रूप से वयस्क बना देने की कोशिश करते हैं। यह सही नहीं है। बच्चे को बच्चे की हैसियत से परवान चढ़ने दिया जाए और शिक्षण में ख़ुद उनकी उम्र, मानसिक और शारीरिक

स्थिति, उसकी प्रकृति, उसकी अभिरुचि और रुझान, उसकी भावनाओं और अनुभूतियों इत्यादि का पूरा ध्यान रखा जाए। इसी स्थिति में पाठ सफल और प्रभावी हो सकते हैं।

तार्किक के बजाय मनोवैज्ञानिक क्रम से चलें (From Psychological to Logical)

यानी विषय-सामग्री बच्चों के सामने उस क्रम से पेश न करें, जिस क्रम से सामान्य रूप से जानकारियाँ प्रदान करनेवाली पुस्तकों में पेश की जाती हैं, बल्कि क्रम वह हो, जिसे बच्चों का मस्तिष्क स्वीकार कर सके। उदाहरण के लिए, पढ़ना सिखाने में तार्किक क्रम तो यह है कि पहले वर्णमाला पर महारत प्राप्त करवाया जाए, फिर मात्राएँ बताई जाएँ। फिर दो अक्षरोंवाले, तीन अक्षरोंवाले, चार अक्षरोंवाले ऐसे शब्द पढ़ाए जाएँ, जिनमें अक्षर अलग-अलग हों। फिर अक्षरों के जोड़-पैवन्द और संयुक्त शब्द, फिर वाक्य और आख़िर में इबारतें पढ़ाई जाएँ। ज़ाहिर है यह क्रम तार्किक दृष्टि से तो सही है, लेकिन अनुभव गवाह है कि बच्चों के लिए यह क्रम इतना नीरस और निरर्थक साबित होता है कि वे बिलकुल दिलचस्पी नहीं लेते। इसके विपरीत अगर बच्चों को पहले सुन्दर रंग, जाने-पहचाने और बड़े चित्र या वास्तविक वस्तुओं की सहायता से कुछ संक्षिप्त वाक्य, जिनमें शब्दों की अधिक से अधिक पुनरावृत्ति हो, पूरा पढ़ा दें और फिर उनका विश्लेषण करके शब्दों और शब्दों का विश्लेषण करके अक्षरों और उनकी आवाज़ों को पहचनवा दें, तो बच्चों के लिए उनमें सार्थकता भी होती है और दिलचस्पी भी। इसी तरह गणित में तार्किक क्रम तो यह है कि पहले बिन्दु, फिर रेखाएँ, उसके बाद कोणों, समतल आकृतियों और अन्त में ठोस चीज़ों की चर्चा आए, लेकिन बच्चों के लिए उपयुक्त यह है कि पहले ठोस और समतल आकृतियाँ पहचान करवाई जाएँ और रेखाएँ, कोणों और बिन्दुओं की बातें बाद में आएँ।

लेकिन स्पष्ट रहे कि विषयों का तार्किक क्रम भी बड़ा महत्त्वपूर्ण

और उपयोगी है। व्यवस्थित और सुगठित ज्ञान और कला-कौशलों पर महारत इसी क्रम को ध्यान में रखकर प्राप्त हो सकती है और आख़िरकार बच्चों को धीरे-धीरे लाना इसी पर है। इसलिए शिक्षण प्रभावी बनाने के लिए प्राथमिक कक्षाओं में क्रम उलट दिया जाए, वह भी बहुत ही ज़रूरी हद तक, सिर्फ़ पाठ को दिलचस्प और प्रभावी बनाने के लिए। ज्यों ही तार्किक क्रम से चीज़ें पेश करने की गुंजाइश नज़र आए, इसी क्रम को ध्यान में रखें।

अपवादों से पहले सामान्य नियम सिखाएँ

यानी पहले सामान्य नियम और उपनियम विभिन्न अभ्यासों के द्वारा ख़ूब अच्छी तरह मन में बिठा दिए जाएँ। फिर अपवाद की बातें बताई जाएँ, नहीं तो मन बेचैनी और अस्त-व्यस्तता का शिकार हो जाएगा और जो नियम बताया जाएगा, उसमें भी शक और दुविधा की स्थिति पैदा होगी, जिसे मन में सुरक्षित रखने और समय पर याद आने में कठिनाई होगी। उदाहरण के लिए बेटी, लड़की, कॉपी, कुर्सी, बकरी, मुर्ग़ी इत्यादि उदाहरणों से यह नियम समझाते ही कि जिन शब्दों के आख़िर में 'ई' हो, वे स्त्रीलिंग ही होते हैं। उसी साँस में यह भी न बता दिया जाए कि हाथी, पानी, घी, दही इत्यादि इस नियम के अपवाद हैं; बल्कि उन्हें बाद के लिए छोड़ दिया जाए।

☆☆☆

अध्याय-29

शिक्षण सहायक सामग्री और प्रयोग-विधि
(Teaching Aids and It's Use)

शिक्षण के जहाँ कुछ बुनियादी नियम और तरीक़े हैं, जिनका ध्यान रखना सफल शिक्षण के लिए ज़रूरी है, वहीं कुछ विधि और सहायक सामग्री हैं, जिनको ज़रूरत के मुताबिक़ इस्तेमाल करना चाहिए—

(1) प्रश्नोत्तर;

(2) व्याख्यान;

(3) ब्लैकबोर्ड;

(4) व्याख्या और स्पष्टीकरण;

(5) मानचित्र, मॉडल, चार्ट, चित्र इत्यादि;

(6) होमवर्क (गृह-कार्य या घर पर करने के लिए काम);

(7) पाठ्यपुस्तक;

(8) सहायक सामग्री (ग्रामोफ़ोन, रेडियो, जादुई लालटेन, फ़िल्में, टीवी, कम्प्यूटर, नोट पैड, इंटरनेट इत्यादि);

(9) वाचनालय और लाइब्रेरी;

(10) परीक्षाएँ, जाँच और निरीक्षण।

प्रश्नोत्तर

शिक्षण में प्रश्नों को बहुत अहमियत हासिल है। जो शिक्षक लगातार बोले जाते हैं, न खुद प्रश्न करते और न छात्रों को प्रश्न करने

का अवसर देते हैं, उनकी पढ़ाई से छात्रों को बहुत कम फ़ायदा पहुँचता है। ऐसे पाठ में बच्चे बहुत कम दिलचस्पी लेते हैं।

प्रश्नों का महत्त्व और उपयोगिता

उपयुक्त प्रश्नों की बड़ी अहमियत और उपयोगिता है। इनके द्वारा–

जिज्ञासा (Curiosity) को जगाकर बच्चों को पाठ के लिए तैयार किया जा सकता है।

पाठ में उनका ध्यान और उनकी दिलचस्पी बनाए रखा जा सकता है।

ध्यान न देनेवाले छात्रों को ध्यान देने और सुस्त रफ़्तार छात्रों को प्रेरित करने और हिम्मत बँधाने का काम लिया जा सकता है।

छात्रों को चिन्तन-मनन, प्रत्यक्षीकरण और अध्ययन पर उकसाया जा सकता है।

उनकी योग्यता की जाँच की जा सकती है।

छात्रों को उनकी ग़लतियाँ महसूस कराई जा सकती हैं।

पाठों को आगे बढ़ाने में मदद ली जा सकती है।

- पाठों की पुनरावृत्ति कराई जा सकती है।

लक्ष्य और उद्देश्य

पढ़ाते समय शिक्षक को तरह-तरह के सवाल करने पड़ते हैं। कुछ पाठ के शुरू में, कुछ बीच में और कुछ ख़त्म होने पर–

(क) **भूमिका के प्रश्न :** ये पाठ के शुरू में किए जाते हैं। संख्या में थोड़े और बहुत ही आसान होते हैं और विषय से उनका निकट सम्बन्ध होता है। इनका उद्देश्य यह होता है–

बच्चों की पिछली योग्यता का पता चल जाए, ताकि इसी बुनियाद

पर नई जानकारियाँ मुहैया कराई जाएँ।

बच्चों के मन को पाठ के लिए तैयार और एकाग्र किया जाए।

पाठ का लक्ष्य और उद्देश्य और ज़रूरत और उपयोगिता उनपर ख़ूब अच्छी तरह से स्पष्ट हो जाएं।

(ख) **बीच के प्रश्न** : पाठ के बीच में विभिन्न प्रश्न किए जाते हैं, जिनका उद्देश्य यह होता है कि–

शिक्षक अन्दाज़ा कर सके कि बच्चे पाठ को ख़ूब अच्छी तरह समझ रहे हैं।

पाठ में बच्चों की दिलचस्पी और उनका ध्यान बना रहे।

पाठ को आगे बढ़ाने में छात्र अमली तौर से हिस्सा लें।

पाठ के मुश्किल हिस्से स्पष्ट हों और मन में बैठते जाएँ।

सोचने-समझने का अवसर मिले और जानकारियों में क्रम बना रहे।

नई जानकारियों का पिछली जानकारियों से सम्बन्ध जुड़े।

बच्चों के रोज़मर्रा की घटनाओं, अनुभव, प्रयोग, अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण इत्यादि से नई जानकारियों का मुक़ाबला और तुलना हो सके।

कुछ अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण कराने या किसी चीज़ पर ध्यान केन्द्रित कराने में मदद मिले।

ध्यान न देनेवाले छात्रों को ध्यान दिलवाया जा सके और सुस्त रफ़्तार छात्रों को साथ लिया जा सके।

(ग) **पाठ के अन्त में पूछे जानेवाले प्रश्न** : पाठ के आख़िर में कुछ प्रश्न इस उद्देश्य से किए जाते हैं कि–

पूरे पाठ की पुनरावृत्ति हो जाए।

पाठ के द्वारा जो कुछ बताया और सिखाया गया है, बच्चों को उसे

इस्तेमाल करने का मौक़ा मिल जाए।

- बच्चों को किसी होमवर्क या अमली काम पर आमादा किया जा सके या हल किए जा सकनेवाले मसले के रूप में उन्हें कोई काम दिया जा सके।

प्रश्न कैसे हों?

प्रश्नों से उपर्युक्त लक्ष्य और उद्देश्य उसी समय प्राप्त हो सकते हैं, जब उनमें निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाएँ—

- प्रश्नों की भाषा, साफ़, रोचक और सरल हो और अतिरिक्त बातों से पाक हो, ताकि बच्चों की समझ में ख़ूब अच्छी तरह से आ सके कि आप क्या बताना और जानना चाहते हैं। भाषा की रोचकता उनका ध्यान खींचने और उत्तर सोचने पर आमादा कर दे। कुछ लोग प्रश्नों में अकारण अनावश्यक शब्दों की वृद्धि कर देते हैं। उदाहरण के लिए पूछना है, *"आप (सल्ल.) किस सन् में पैदा हुए?"* इस तरह की अनावश्यक शब्दों से प्रश्न की भाषा पाक होनी चाहिएँ।
- मौखिक प्रश्न छोटे और उनकी इबारत बहुत संक्षिप्त हो, ताकि पूरा प्रश्न आसानी से बच्चों के दिमाग़ में सुरक्षित रह सके। उदाहरण के लिए, *"हुज़ूर (सल्ल.) ने हिजरत क्यों फ़रमाई?"* एक उपयुक्त मौखिक प्रश्न है। इसी को अगर इन शब्दों में पूछा जाए, *"हुज़ूर (सल्ल.) ने मक्का छोड़कर, जो आपका वतन भी था और अरब का केन्द्रीय शहर भी, मदीना हिजरत क्यों फ़रमाई, जबकि वह शहर आपके लिए अजनबी भी था और मक्का से काफ़ी दूर भी?"* तो यह प्रश्न दोषपूर्ण होगा।
- प्रश्न छात्रों की सलाहियत का ध्यान रखकर बनाए गए हों। न इतने आसान हों कि छात्र उनपर ध्यान देने या सोचने-विचारने की

ज़रूरत ही न समझें और न इतने मुश्किल हों कि बच्चे उत्तर देने की हिम्मत ही न कर सकें।

- पाठ के दौरान जितने प्रश्न पूछे जाएँ, वे आपस में इतने जुड़े हों कि वे एक-दूसरे का ज़रूरी हिस्सा मालूम हों और सबका समग्र रूप से मूल प्रश्न से निकट का सम्बन्ध हो। इस तरह विचारों में भी क्रम बना रहता है और असम्बद्ध बातों पर समय बरबाद नहीं होता।
- दो या अधिक प्रश्न मिलाकर न पूछे जाएँ। उदाहरण के लिए, नमाज़ के समय, रकअतें और फ़ायदे बताओ? महमूद ग़ज़नवी ने कहाँ-कहाँ और क्यों हमला किया?
- प्रश्न स्पष्ट, सुनिश्चित और भ्रम रहित हों, ताकि बच्चों का ध्यान मूल उत्तर की तरफ़ चला जाए। ऐसे प्रश्न हरगिज़ न किए जाएँ, जिनके एक से ज़्यादा उत्तर हो सकते हों। उदाहरण के लिए, सामने क्या नज़र आ रहा है? या मानचित्र में क्या दिखाई दे रहा है? दोनों स्थितियों में बहुत-से उत्तर सम्भव हैं।
- प्रश्न सिर्फ़ याद्दाश्त या स्मरण-शक्ति से सम्बन्धित न हों, बल्कि सोचने-विचारने पर मजबूर करनेवाले भी हों, ताकि बच्चों को सोचने-विचारने पर आमादा कर सकें।
- प्राथमिक कक्षाओं में प्रश्न आम तौर पर सीधे-सादे और ऐसे हों, जिनमें बच्चों को ख़ूब बोलना पड़े। हाँ, ऊँची कक्षाओं में अपेक्षाकृत पेचीदा हों, ताकि बच्चों को सोच-विचार और तर्क से काम लेना पड़े।
- बताए बिना धोखे और भ्रम में डालनेवाले प्रश्न न किए जाएँ। उदाहरण के लिए, एक लड़का एक घंटे में तीन किलोमीटर जाता है, तो पाँच लड़के एक घंटे में कितने किलोमीटर जाएँगे?

- प्रश्न ऐसे न हों जिनके उत्तर सिर्फ़ 'हाँ', 'नहीं' या एक ही शब्द में पूरे हो जाएँ। अगर इस तरह के प्रश्न पूछने ही पड़ें, तो साथ ही क्यों या कैसे इत्यादि भी होना चाहिए, ताकि उत्तर देने में कुछ मेहनत करनी पड़े और शिक्षक को सन्तोष हो सके कि बच्चे ने सोच-समझकर 'हाँ' या 'नहीं' कहा है।

  प्रश्न ऐसे भी न हों, जिनके अन्दर ही उत्तर मौजूद हों या जो अपने उत्तर की तरफ़ खुद इशारा कर रहे हों।

  मिसाल के तौर, क्या हज़रत ईसा (अलैहि.) नबी नहीं थे? गेण्डा घास चरनेवाला जानवर है या फाड़ खानेवाला? इत्यादि।

- कुछ बताते ही उलट कर प्रश्न न कर लिया गया हो। उदाहरण के लिए, आप (सल्ल.) 571 ई. में पैदा हुए, हुज़ूर (सल्ल.) किस सन् में पैदा हुए? हाँ, अगर कोई बच्चा ध्यान न दे रहा हो या खोया-खोया-सा नज़र आए, तो उससे अचानक इस तरह का प्रश्न किया जा सकता है या इस तरह का प्रश्न कि अमुक बच्चे ने क्या उत्तर दिया? इत्यादि।

प्रश्न करने की विधि

जिस तरह उपयुक्त प्रश्न बनाना एक कला है, जिसमें काफ़ी सावधानी, सूझ-बूझ, अभ्यास और महारत की ज़रूरत होती है; उसी तरह प्रश्न पूछना भी कलात्मक महारत चाहता है। प्रश्न पूछते समय निम्नलिखित बातें सामने रहनी चाहिएँ—

- पूरी कक्षा को सम्बोधित करके प्रश्न किया जाए; किसी की तरफ़ इशारा करके या किसी का नाम लेकर प्रश्न न किया जाए। हाँ, उत्तर किसी एक ही बच्चे से माँगा जाए।
- प्रश्न करने के बाद उत्तर सोचने का कुछ मौक़ा दिया जाए, तुरन्त उत्तर न माँगा जाए।

कुछ ख़ास बच्चों ही से प्रश्न न किए जाएँ, बल्कि बारी-बारी सबसे पूछे जाएँ। हाँ, इस बारी में कुछ ख़ास क्रम न हो, वरना जिनसे पूछा जा चुका होगा या जिनकी बारी न होगी, वे तो उत्तर नहीं देंगे।

प्रश्न करते समय साफ़ बोला जाए, ताकि पूरी कक्षा ख़ूब अच्छी तरह सुन सके और प्रश्न का अस्ल भाव ज़ाहिर करनेवाले उच्चारण पर ख़ास तौर से ज़ोर दिया जाए।

प्रश्न हरगिज़ न दोहराएँ। यह अलग बात है कि किसी कारण से छात्र सुन या समझ ही न सके हों। ऐसी स्थिति में फिर से प्रश्न किया जाए या कोई आसान प्रश्न करके अस्ल प्रश्न की तरफ़ मार्गदर्शन कर दिया जाए।

मौक़ा हो और ज़रूरत समझें तो ब्लैकबोर्ड पर प्रश्न लिख दिया करें। विशेषकर जाँच या होमवर्क के लिए प्रश्न ब्लैकबोर्ड पर लिख देना ही बेहतर होता है।

ध्यान न देनेवाले छात्रों से अचानक प्रश्न किया जाए।

प्रश्न करने का ढंग सुन्दर और हमदर्दी भरा हो, ताकि बच्चे आत्मविश्वास के साथ उत्तर देने को तैयार हो जाएँ, डर-भय या झिझक महसूस न करें।

उत्तर निकलवाने में बहुत ज़्यादा समय न लगाया जाए।

अगर एक बच्चा ठीक उत्तर दे दे, तो भी कुछ और बच्चों से उत्तर माँगे जाएँ।

कभी-कभी बच्चों को भी प्रश्न करने का मौक़ा दिया जाए और प्रश्न करने पर उन्हें प्रेरित किया जाए। साथ ही कक्षा का माहौल ऐसा बनाया जाए कि पढ़ाई के दौरान जो बात समझ में न आए, छात्र बेझिझक पूछ सकें। इससे बच्चों के समझने-बूझने, सोच-

विचार करने, पाठ में पूरी दिलचस्पी लेने में मदद मिलती है। हाँ, असम्बद्ध प्रश्न को नज़रअन्दाज़ कर दिया जाए। प्रश्न अगर ज़रूरी और उपयोगी हो तो बाद में अलग से उसका उत्तर दे दिया जाए।

प्रश्न इत्मीनान से किए जाएँ। जल्दबाज़ी करना या प्रश्नों की बौछार कर देना ठीक नहीं। इससे बच्चे घबरा और बौखला जाते हैं।

छात्रों के उत्तर

प्रश्नों से पूरा-पूरा फ़ायदा उसी समय पहुँच सकता है, जब छात्रों के उत्तरों के सिलसिले में उपयुक्त तरीक़ा अपनाया जाए। इस सन्दर्भ में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाए–

बच्चों के उत्तर प्रसन्नतापूर्वक सुने जाएँ। उन्हें उत्तर देने पर प्रेरित किया जाए। सही उत्तर पर शाबाशी दी जाए। ग़लत या मूर्खतापूर्ण उत्तर पर व्यंग्य और उपहास से परहेज़ किया जाए। निरर्थक और असम्बद्ध उत्तर नज़रअन्दाज़ कर दिए जाएँ।

- छात्रों के कुछ ग़लत, लेकिन 'दिलचस्प' उत्तरों से कक्षा में हँसी और प्रसन्नता की लहर दौड़ाने का काम लिया जा सकता है। हाँ, ऐसा करते समय उत्तर देनेवाले बच्चों की भावनाओं का पूरा ध्यान रखना चाहिए।

सिर्फ़ उन उत्तरों को बिलकुल ठीक गिना जाए जो–

(1) भाषा और व्याकरण की दृष्टि से बिलकुल ठीक हों।

(2) प्रश्न से सम्बन्धित हों।

(3) जितनी बात पूछी गई है उससे न कम हों, न ज़्यादा।

(4) पूरे वाक्य में दिए गए हों, लेकिन हमेशा इसी पर ज़ोर नहीं डालना चाहिए; क्योंकि कभी-कभी स्वाभाविक उत्तर अधूरे वाक्यों में ही हो जाता है।

(5) पूरी आवाज़ से दिया गया हो, ताकि पूरी कक्षा आसानी से सुन सके।

अगर इन पहलुओं से कमी हो, तो क़बूल करने से पहले उसका सुधार करा दिया जाए।

- यथासम्भव बच्चों ही के उत्तर आंशिक बदलाव के बाद क़बूल कर लिए जाएँ। अगर पूरा उत्तर सही न हो, तो जितना अंश ठीक हो उतना ही क़बूल कर दिया जाए। बाक़ी हिस्सा और अधिक प्रश्न करके या समय कम हो तो खुद बताकर पूरा करा लिया जाए। इससे बच्चों की हिम्मत बढ़ती है।
- ठीक उत्तरों को दूसरे छात्र से दोहरवा दिया जाए। कभी-कभी छात्रों के अच्छे उत्तरों को कक्षा के सामने नमूने के तौर पर पेश किया जाए।
- ठीक उत्तर तुरन्त मान लेने के बजाय कुछ और छात्रों से पूछ लेने के बाद मान लिया जाए; ताकि दूसरे बच्चों की जानकारियों के बारे में भी अन्दाज़ा हो सके।
- उत्तर सोचते समय न तो बोला जाए और न उत्तर दिए जाने के बीच हस्तक्षेप किया जाए। अगर मदद की ज़रूरत हो, तो किसी दूसरे बच्चे से दिलवा दी जाए।
- बच्चा अगर ग़लत उत्तर दे या उत्तर ही न दे सके, तो तुरन्त बता न दिया जाए, बल्कि या तो और अधिक प्रश्न करके उत्तर की तरफ़ मार्गदर्शन किया जाए या दूसरे बच्चों से सही उत्तर मिलने के बाद उसे दोहरावा दिया जाए।
- छात्रों के सारे ग़लत उत्तर ध्यान देने के क़ाबिल नहीं होते, लेकिन वे जबाव जिनसे अन्दाज़ा हो कि बच्चा बात समझ ही नहीं सका है, उसका ज़रूर सुधार किया जाए। साथ ही, यह भी स्पष्ट किया

जाए कि उसका उत्तर क्यों ग़लत है।

- लापरवाही या अशिष्टता से दिए गए उत्तरों पर कभी-कभी हमदर्दी और स्नेह से डाँट-फटकार फ़ायदेमन्द होती है।
- सामूहिक उत्तर आम तौर पर न माँगे जाएँ और न क़बूल किए जाएँ। हाँ, दोहराने या अभ्यास करवाने की स्थिति में समय बचाने के लिए कभी-कभी ऐसा किया जा सकता है।
- बच्चों को इसका आदी बनाया जाए कि जिससे प्रश्न किया जाए वही उत्तर दे। दूसरे न बोल पड़ें, क्योंकि अक्सर तेज़ बच्चों के बोल पड़ने की वजह से धोखा हो जाता है कि सबको आता है और बाद में पता चलता है कि ज़्यादातर बच्चों ने समझा ही नहीं।
- अगर पूरी कक्षा या ज़्यादा छात्र बार-बार ग़लत उत्तर दें, तो कारण पता लगाकर समाधान किया जाए। कारण आम तौर पर ये हो सकते हैं—

(1) प्रश्न छात्रों की योग्यता से ऊँचे हों।

(2) पढ़ाने के तरीक़े में दोष हो और पाठ समझ में न आ रहा हो।

(3) कक्षा की अनुशासन-व्यवस्था ठीक न हो।

(4) बच्चे थक गए हों।

(5) पाठ नीरस, बेजान और अरुचिकर हो।

व्याख्यान (Lecture)

शिक्षण में व्याख्यान-विधि को भी बहुत अधिक महत्त्व प्राप्त है। नई जानकारियाँ देते समय शिक्षक को अक्सर इससे काम लेना पड़ता है। विशेष रूप से इतिहास, भूगोल, महापुरुषों की जीवनियाँ, पाठ्यसामग्री की जानकारी देने और कहानियाँ सुनाने के सन्दर्भ में। शिक्षक को कभी कोई घटना सुनानी पड़ती है, कभी किसी आदमी, चीज़ या जगह के बारे में कुछ बताना होता है। अक्सर कहानियाँ सुनानी पड़ती हैं, इसलिए जब

तक उसे बोलने पर महारत न हो और उसके बोलने का अन्दाज़ प्रभावकारी न हो, वह सफल शिक्षक कभी नहीं बन सकता।

(क) किसी आदमी, जगह या चीज़ के बारे में वर्णन : किसी आदमी, जगह, जानवर, चीज़ या घटना के बारे में कुछ बताना हो, तो निम्नलिखित बातें नज़र के सामने रहनी चाहिएँ–

शिक्षक के मन में उसका इतना स्पष्ट विचार हो, मानो उसने ख़ुद ध्यान से उसे देखा है। यह उसी समय मुमकिन है जब उसने उसका गहरा अध्ययन या अवलोकन और परीक्षण किया हो।

आसान शब्दों और उपयुक्त भाषा में स्पष्ट नक़्शा खींचा जाए, ताकि बच्चों के मन में सही विचार बन सकें।

यथासम्भव संक्षेप से काम लिया जाए। बहुत अधिक विस्तार से बच्चों का मन उलझ जाता है। हाँ, जितना कुछ बताया जाए, उसका इतना स्पष्ट चित्रण किया जाए कि पूरा नक़्शा आँखों के सामने फिर जाए।

पहले सम्पूर्ण पाठ का एक संक्षिप्त ख़ाका पेश किया जाए। फिर एक विशेष क्रम से उसे विस्तार में बताया जाए।

मौखिक बता देने ही पर संतुष्ट न हो जाया जाए, बल्कि मौक़े के मुताबिक़ मॉडल, चित्र, चार्ट और मानचित्र इत्यादि से मदद ली जाए।

अनदेखी और अनजान चीज़ों के बारे में बताते समय देखी हुई या ज्ञात चीज़ों से मुक़ाबला और तुलना की जाए, ताकि अन्तर और समानता ख़ूब अच्छी तरह समझ में आ जाए।

जो कुछ बताना हो, उसका संक्षिप्त प्रारूप पहले से तैयार कर लिया जाए और बताते समय इस क्रम का ध्यान रखा जाए, ताकि कड़ी से कड़ी मिलती जाए।

- जो कुछ बताना हो उसे लगातार और एक ही सुर में न बयान किया जाए, बल्कि दो या तीन समुचित हिस्सों में बाँट कर बारी-बारी एक-एक हिस्सा पेश किया जाए। हर हिस्सा के आख़िर में प्रश्न करके पुनरावृत्ति करा दी जाए और फिर सारांश नोट करा दिया जाए।

(ख) कहानियाँ कहना : कहानियाँ पुराने ज़माने से ही शिक्षा-दीक्षा का बहुत ही दिलचस्प और प्रभावकारी साधन रही हैं। कौन है जिसे कहानियों में मज़ा नहीं आता। लेकिन बच्चे तो उनके बहुत ही ज़्यादा शौक़ीन होते हैं। दादी अम्मा के जहाँ और बहुत-से उपकार होते हैं, जिनसे बच्चे उनकी तरफ़ खिंचते हैं, वहाँ सबसे ज़्यादा आकर्षण उनकी कहानियों के कारण होता है। कहानियों से उनकी फ़ितरी दिलचस्पी का अन्दाज़ा उस ज़िद से हो सकता है, जो कहानियाँ सुनने के लिए वे करते रहते हैं। वे पूरी तरह एकाग्र और मग्न होकर कहानियाँ सुनते हैं, यहाँ तक कि उनकी नींद उड़ जाती है और दादी अम्मा की जान उस समय छूटती है, जब सुनते-सुनते आख़िर में वे नींद की गोद में चले जाते हैं।

महत्त्व और उपयोगिता

(1) कहानियों से बच्चों के मानसिक, नैतिक और सामाजिक प्रशिक्षण में बड़ी मदद मिलती है। वे अपने को हीरो का प्रतिनिधि बनाकर या .ख़ुद को हीरो मानकर अपने ऊपर उसी जैसी सारी कैफ़ियतें पैदा कर लेते हैं। सुनते-सुनते उछल पड़ते हैं और हाव-भाव और शरीर की हरकतों से साफ़ महसूस होने लगता है कि उनके दिल और दिमाग़ पर वही कुछ गुज़र रही है, जो कहानी में हीरो पर गुज़रती है।

(2) कल्पना-शक्ति का विकास, उद्देश्य और आदर्श का निर्माण, चरित्र-निर्माण और ऊँचे विचारों को परवान चढ़ाने में कहानियाँ

बहुत ज़्यादा मददगार साबित होती हैं।

(3) कठिन और नीरस विषय कहानियों के सहारे आसान, दिलचस्प और क़बूल करने के क़ाबिल बन जाते हैं।

(4) अमूर्त विचार (ऐसी बातें जिनका कोई रूप नहीं होता) और सैद्धान्तिक बातें कहानियों के द्वारा आसानी से समझ में आ जाती हैं।

(5) भाषा सिखाने, शब्दों के भंडार में वृद्धि करने, विचारों और भावों को प्रकट और स्पष्ट करने में महारत प्राप्त करने में भी कहानियाँ बड़ी सहायक होती हैं।

(6) इस्लाम से सम्बन्धित विषय, इतिहास, भूगोल, पैग़म्बर की जीवनी इत्यादि से सम्बन्धित जानकारी इनके द्वारा आसानी से दी जा सकती हैं, जो इन्हीं के सहारे अच्छी तरह याद भी हो जाती हैं।

ध्यान देने योग्य बातें

- शुरुआत में कहानियाँ आसान और छोटी-छोटी होनी चाहिएँ, धीरे-धीरे लम्बी और पेचीदा।
- शब्द आसान, वाक्य छोटे और भाषा दिलचस्प होनी चाहिए।
- घटनाएँ आपस में जुड़ी हुई और बच्चों ही की ज़िन्दगी के बारे में और उनकी दिलचस्पी, समझ, निरीक्षण, प्रत्यक्षीकरण और अनुभव से निकट होनी चाहिएँ।
- क़िस्से-कहानी का हीरो यथासम्भव बच्चा हो और उसकी हरकतों, क्रिया-कलापों या कारनामों और स्पष्ट भूमिकाओं का भी वर्णन किया जाए।
- क़िस्से-कहानी की विषय-सामग्री बच्चों की उम्र, योग्यता, मनोवैज्ञानिक रुझानों और दिलचस्पियों को ध्यान में रखकर चुनना चाहिए।

कहानियों के पात्र, स्थान और चीज़ों को सुनिश्चित रूप में बताना चाहिए।

कहानियाँ हरकत और जोश से भरपूर होनी चाहिएँ। उनमें दौड़-भाग, उछल-कूद, मुक़ाबला और प्रतिस्पर्धा, हिम्मत और बहादुरी और पर्यटन, अभियानों और खोजों की घटनाएँ होनी चाहिएँ।

संवाद की अधिकता होनी चाहिए।

कहानी लगातार फैलती जाए, ताकि ध्यान केन्द्रित हो और दिलचस्पी बनी रहे।

अगर एक दिलचस्प वाक्य या पद थोड़े-थोड़े अन्तराल पर दोहराया जा सके, तो छोटे बच्चों को बहुत मज़ा आता है।

कहानी चाहे किसी विषय से सम्बन्धित हो, उसमें कहानीपन प्रभावी होना चाहिए। हाँ, वह उद्देश्य हमेशा नज़र के सामने रहना चाहिए, जिसके लिए वह कहानी सुनाई जा रही है।

मशहूर और जानी-पहचानी कहानियों को ज्यों का त्यों पेश करने के बजाय ज़रूरत के मुताबिक़ बच्चों की योग्यता और सलाहियत के अनुसार ढाल कर पेश क़रना चाहिए। लेकिन ऐतिहासिक कहानियों में इसका ध्यान रहे कि ऐतिहासिक सच्चाइयाँ या घटनाएँ बिगड़ने न पाएँ।

कुछ कहानियाँ जगबीती के बजाय आपबीती के तौर पर पेश की जाएँ, तो ज़्यादा मज़ा देती हैं। ऐसी कहानियाँ बच्चों को जल्द याद हो जाती हैं और वे उन्हें आसानी से बयान कर सकते हैं। इसलिए कभी-कभी हीरो ही की ज़बान से कहानी कहलवानी चाहिए।

बचपन में भूत-प्रेत और जिन्न और परी के क़िस्सों से अन्धविश्वास पैदा होता है और जवानी की शुरुआत में जासूसी या प्रेम कहानियों से बेशर्मी और अपराध की प्रवृत्ति पैदा होती है।

इसलिए इस तरह की कहानियों से बचाना चाहिए।

- कहानी शिक्षक को ख़ूब याद होनी चाहिए, ताकि सुनाते समय रवानी रहे। बीच-बीच में रुकना या किताब खोलकर देखना न पड़े वरना सारा मज़ा किरकिरा हो जाता है।
- कहानियों के हिस्से बातचीत के रूप में पेश किए जा सकते हैं। उन्हें कभी कक्षा या समूह के सामने वार्तालाप के रूप में पेश करने का मौक़ा देना चाहिए। हाँ, ऐसी कहानियाँ वार्तालाप के लिए नहीं चुननी चाहिए, जिनसे किसी बच्चे को कोई घिनौना पार्ट अदा करना पड़े वरना उस बच्चे पर वही भावनाएँ छा जाएँगी और इसकी आशंका रहेगी, वही कहीं जड़ न पकड़ जाएँ।

कहानियाँ सुनाने का तरीक़ा

कहानियाँ हमेशा ज़बानी सुनानी चाहिएँ। पढ़कर सुनाने में न तो मज़ा ही आता है और न वह भाव ही पैदा होता है, जिसके लिए कहानी सुनाई जाती है। अगर कभी पढ़कर सुनाना ही पड़े तो सुनाने का अन्दाज़ ज़बानी सुनाने जैसा होना चाहिए।

- अन्दाज़ दिलचस्प और हाव-भाव फ़ितरी होना चाहिए। ज़रूरत के मुताबिक़ आवाज़ में उतार-चढ़ाव और हरकतों और क्रिया-कलापों से जोश और जज़्बे का इज़हार भी ज़रूरी है।
- शिक्षक जब ख़ुद मज़े लेकर कहानी सुनाते और घटनाओं से प्रभावित होने का प्रदर्शन करते हैं, तो बच्चे भी मज़े लेते हैं और प्रभावित होते हैं। इसलिए भाषा, वर्णन-शैली और अन्दाज़ हर चीज़ से मनचाही कैफ़ियत और माहौल पैदा करने की कोशिश करनी चाहिए।
- कहानी लगातार सुनाने के बजाय दो-तीन उपयुक्त हिस्सों में बाँटकर सुनानी चाहिए। एक हिस्सा सुनाने के बाद उपयुक्त प्रश्नों

के द्वारा महत्त्वपूर्ण घटनाओं की पुनरावृत्ति कराके अगला हिस्सा पेश करना चाहिए। आख़िर में कई प्रश्न करके पूरी कहानी का सारांश सुन लेना चाहिए।

- शब्दों में स्पष्ट चित्रांकन करने और हर घटना की पृष्ठभूमि बयान करने के बाद भी यथासम्भव कहानी के भाव को स्पष्ट करनेवाले चित्र दिखाने चाहिएँ और ब्लैकबोर्ड की मदद से और ज़्यादा स्पष्टीकरण करना चाहिए।
- ज्ञानवर्द्धक कहानियों में से उपयुक्त प्रश्नों के द्वारा वे बातें धारण करवा लेनी चाहिएँ, जिनके लिए कहानी की मदद ली गई थी।
- कहानी सुनाने के दौरान में वह मक़सद हमेशा ध्यान में रहना चाहिए, जिसके लिए वह कहानी सुनाई जा रही है।
- कहानी के वे हिस्से, जिन्हें बच्चों से वार्तालाप के रूप में बाद में पेश कराना हो, सुनाते समय शिक्षक उन्हें वार्तालाप के रूप में ही पेश करे।
- कभी-कभी बच्चों को भी कहानियाँ सुनाने का मौक़ा देना चाहिए और इस सन्दर्भ में चयन और प्रस्तुति इत्यादि के बारे में उपयुक्त मार्गदर्शन होना चाहिए।

श्यामपट्ट (Blackboard)

शिक्षण को सरल, प्रभावी और दिलचस्प बनाने में श्यामपट्ट को भी बहुत ज़्यादा अहमियत हासिल है। पाठ को स्पष्ट करने में इससे बहुत मदद मिलती है। मगर बहुत ही अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि इससे बहुत कम शिक्षक पूरा फ़ायदा उठाते हैं।

महत्त्व और उपयोगिता

- पाठ के कठिन हिस्सों की व्याख्या और उनके स्पष्टीकरण के लिए श्यामपट्ट बहुत ही सस्ता और उपयुक्त माध्यम है। ज़रूरत के

मुताबिक़ इसपर बहुत ही स्पष्ट और सुन्दर रंगीन चित्र, चार्ट्स और नक़्शे इत्यादि बनाए जा सकते हैं, जिनमें समय और पैसे की भी बचत होती है और बनाने का ढंग हो तो पहले से बनी या छपी हुई चीज़ों के मुक़ाबले में ये ज़्यादा असरदार होती हैं।

- बच्चों के सामने उसपर जो लिखा और बनाया जाता है, उसे बच्चे ज़्यादा ध्यान और लगन से देखते हैं। उनकी समझ में ख़ूब अच्छी तरह आता है और ज़रूरत हो तो वे ख़ूब अच्छी तरह उसकी नक़ल भी उतार सकते हैं।
- ज़बानी पढ़ाते रहिए तो बच्चों को सिर्फ़ कानों से काम लेने का मौक़ा मिलता है और लगातार सुनते रहने से वे उकता भी जाते हैं। श्यामपट्ट (Blackboard) की वजह से उन्हें आँखों से भी काम लेने का मौक़ा मिलता है और बोलना बन्द करके जब शिक्षक ब्लैकबोर्ड इस्तेमाल करने लगता है, तो काम के स्वरूप में परिवर्तन हो जाने की वजह से उकताहट भी दूर हो जाती है और ध्यान, लगन और दिलचस्पी पैदा करने में मदद मिलती है और एक से ज़्यादा ज्ञानेन्द्रियों से काम लेने की वजह से समझने और याद रखने में भी आसानी होती है।
- छात्रों को ज़बानी कोई हिदायत दी जाए या हल करने के लिए कोई काम या होमवर्क, तो कभी-कभी वे ग़लतफ़हमी का शिकार हो जाते हैं। कहा कुछ जाता है और बच्चे करते कुछ और हैं। श्यामपट्ट (Blackboard) पर नोट कर देने से काम सुनिश्चत हो जाता है और छात्र भटकने या भ्रम में पड़ने से सुरक्षित हो जाते हैं।
- श्यामपट्ट के सहारे पाठ का सारांश और संक्षित नोट सुगठित और लिखित रूप में छात्रों को मिल जाता है, जिसे वे आसानी के साथ याद भी कर सकते हैं और अपनी कॉपियों पर सही-सही रूप में

नोट भी कर सकते हैं। पाठ के ख़ास-ख़ास पॉइंट पर ध्यान केन्द्रित कराने में भी ब्लैकबोर्ड से बड़ी मदद मिलती है।

श्यामपट्ट का इस्तेमाल

श्यामपट्ट (Blackboard) शिक्षक की बाईं तरफ़ इस अन्दाज़ से लगाया जाए कि उसकी सतह चमके नहीं और उसे पूरी कक्षा आसानी से देख सके और शिक्षक को वहाँ तक पहुँचने और लिखने में आसानी हो।

- इस्तेमाल से पहले ब्लैकबोर्ड ख़ूब अच्छी तरह साफ़ कर लिया जाए। झाड़न (Duster) अगर अपेक्षाकृत भीगा हुआ इस्तेमाल किया जाए, तो बेहतर है। मगर बहुत गीला न हो। काम ख़त्म होने के बाद जल्द से जल्द साफ़ कर दिया जाए।
- ब्लैकबोर्ड पर जो कुछ लिखा या बनाया जाए वह बहुत ही साफ़, स्पष्ट, सही, सीधी लाइन और मोटी और एक समान लिखावट में हो।
- चॉक सिरे के क़रीब पकड़ा जाए। 45 डिग्री का कोण बनाते हुए ब्लैकबोर्ड पर लिखा जाए। मोटा लिखना हो, तो चॉक का सिरा घिस लिया जाए। लम्बी लकीर खींचनी हो तो दोनों सिरे के बिन्दु सुनिश्चित करके मिला दिए जाएँ और रंग भरना हो, तो ब्लैकबोर्ड को पट कर दिया जाए।
- लिखते समय चॉक से खड़खड़ाहट की आवाज़ न निकले, नहीं तो ध्यान भटकेगा। कभी-कभी सिरे पर कंकरी आ जाने से आवाज़ निकलती है। ऐसी स्थिति में सिरा तोड़कर कंकरी निकाल दी जाए।
- पूरी कक्षा का ध्यान रखकर लिखा जाए और कभी-कभी पीछे जाकर इत्मीनान कर लिया जाए कि सबको ख़ूब अच्छी तरह दिखाई दे रहा है।

- कक्षा की तरफ़ पीठ करके नहीं, बल्कि एक पहलू या थोड़ा तिरछा होकर लिखा जाए। लिखते समय कक्षा की तरफ़ मुड़-मुड़ कर देखते या कुछ बोलते या पूछते जाना चाहिए, ताकि कक्षा की अनुशासन-व्यवस्था बनी रहे।

  लिखा हुआ या तो खुद ऊँची आवाज़ से पढ़ दिया जाए या बच्चों से पढ़वा दिया जाए, ताकि कुछ छूट गया हो या पढ़ने में कठिनाई हो, तो सुधार कर दिया जाए।

  साफ़ और सुन्दर अक्षर लिखने या स्कैच करने का ख़ूब अभ्यास कर लिया जाए। ड्राइंग की लाइन आसान भी होती है और प्रभावकारी भी और मामूली अभ्यास से आ जाती है। ध्यान रहे, ग़लत या ख़राब अक्षर और गन्दा लिखने से न लिखना बेहतर है। इससे बच्चों पर ख़राब असर पड़ता है। इसलिए शुद्धता और सफ़ाई की तरफ़ ख़ास ध्यान दिया जाए।

- प्राथमिक कक्षाओं में यथासम्भव रंगीन चॉक इस्तेमाल की जाए। इससे बच्चों का ध्यान और दिलचस्पी हासिल करने में मदद मिलती है। हाँ, ऊँची कक्षाओं में आम तौर पर सफ़ेद चॉक इस्तेमाल की जाए। महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं, शीर्षकों और उपशीर्षकों को रंगीन चॉक से लिखना चाहिए।

  पाठ का सारांश बहुत ही संक्षेप में लिखा जाए। पाठ के साथ-साथ सारांश लिखते जाना चाहिए। इस तरह पाठ ख़त्म होते-होते सारांश भी तैयार हो जाता है।

  कभी-कभी छात्रों को भी श्यामपट्ट इस्तेमाल करने का मौक़ा दिया जाए।

व्याख्या और स्पष्टीकरण

पढ़ाते समय बहुत-से ऐसे मौक़े आते हैं, जब शिक्षक को किसी

कठिन, अनजान और अस्पष्ट बातों की व्याख्या करनी पड़ती है, ताकि–

कठिनाई दूर हो जाए।

विचार स्पष्ट बनें।

बात ख़ूब अच्छी तरह से दिमाग़ में बैठ जाए।

ये व्याख्याएँ और स्पष्टीकरण दो तरह के होते हैं–

(1) मौखिक

(2) नज़र आनेवाली या दृश्यमान। उदाहरण के लिए चित्र, नक़्शे, ग्लोब, चार्ट इत्यादि।

मौखिक व्याख्याएँ

मौखिक व्याख्या करते समय ज़रूरत और मौक़े के मुताबिक़ कई तरीक़े अपनाए जाते हैं। उदाहरण के लिए–

कठिन शब्दों का अर्थ समझाने के लिए या तो आसान पर्यायवाची शब्द दे दिए जाते हैं या उनके विलोम (विपरीतार्थक) शब्द बता दिए जाते हैं या उन्हें वाक्यों में इस्तेमाल करके भाव स्पष्ट कर दिया जाता और प्रयोग का सन्दर्भ और प्रसंग बता दिया जाता है।

अन्तर्कथा-सम्बन्धी शब्द का संक्षप में वृत्तान्त सुना दिया जाता है– पारिभाषिक शब्द हों, तो उनकी परिभाषा देकर उदाहरण के द्वारा स्पष्ट कर दिया जाता है।

अपरिचित और अमूर्त चीज़ की स्पष्ट अवधारणा बनाने के लिए किसी जानी-पहचानी चीज़ से उपमा दी जाती है या उससे मुक़ाबला और तुलना करके सामनता और अन्तर स्पष्ट कर दिया जाता है।

गाथा, पुरातन कथा, चुटकुले, लोकोक्ति इत्यादि की मदद से किसी अमूर्त विचार का स्पष्टीकरण कर दिया जाता है।

कठिन इबारत का अर्थ अपनी आसान भाषा में और सहज ढंग से

बयान कर दिया जाता है।

ध्यान देने योग्य बातें

व्याख्या और स्पष्टीकरण करने से पहले इसकी ज़रूरत महसूस कराई जाए, ताकि बच्चे ध्यान से सुनें। व्याख्या से पहले अगर बच्चों ही को कठिनाइयों को हल करने के लिए कहा जाए, तो वे व्याख्या की ज़रूरत आसानी से महसूस कर लेंगे।

बच्चों ही की भाषा और बातचीत के ढंग में व्याख्या की जाए, ताकि बात भी ख़ूब अच्छी तरह समझ में आ जाए और बच्चे ज़रूरत के मुताबिक़ ख़ुद भी व्याख्या कर सकें।

स्पष्ट करते समय पाठ का मूल लक्ष्य और उद्देश्य नज़र के सामने रहे और यथासम्भव संक्षेप में बात पेश की जाए, ताकि असम्बद्ध या निरर्थक वर्णन में समय बरबाद न हो।

व्याख्या के ज़रूरी पोइंट्स अगर ब्लैकबोर्ड पर लिख दिए जाएँ, तो उपयोगिता बढ़ जाती है।

ज़बानी बता देने ही पर बस न करें, बल्कि मुमकिन हो, तो ब्लैकबोर्ड पर आकृतियाँ और ग्राफ़ इत्यादि खींचकर और अधिक स्पष्टीकरण किया जाए।

व्याख्या और स्पष्टीकरण के दौरान छात्रों को ज़्यादा से ज़्यादा सवाल पूछने का मौक़ा दिया जाए।

चित्र, मॉडल, चार्ट इत्यादि

प्राथमिक कक्षाओं में प्रभावी शिक्षण के लिए विभिन्न चीज़ों उनके मॉडल, चित्र और चार्ट इत्यादि का इस्तेमाल बहुत ही फ़ायदेमन्द और ज़रूरी है; क्योंकि उनकी मदद से—

नई जानकारियाँ आसानी से मुहैया कराई और मन में बिठाई जा

सकती हैं।

- बच्चों की अवधारणाएँ सही और स्पष्ट बनती हैं।
- पाठ में दिलचस्पी पैदा होती है और बच्चे ध्यान देते हैं।
- बयान का ख़ूब अच्छी तरह स्पष्टीकरण हो जाता है।
- मौखिक व्याख्या के मुक़ाबले में उन चित्रों आदि के कारण मन पर गहरी छाप पड़ती है। इसलिए बात ज़्यादा दिनों तक याद रहती है।
- किसी चीज़ को प्रत्यक्ष रूप से ध्यानपूर्वक देखने और परीक्षण करने का प्रशिक्षण होता है और ध्यान देने योग्य पहलुओं पर बच्चों की नज़रें जमने लगती हैं।

सहायक दृश्य सामग्री के प्रकार

स्पष्टीकरण करनेवाली सहायक दृश्य सामग्री निम्नलिखित प्रकार की होती हैं–

(1) मूल वस्तुएँ,
(2) मॉडल, स्टैंड पर दृश्य, ग्लोब इत्यादि;
(3) चित्र, फ़ोटो, प्राकृतिक दृश्य, पोस्टर्स इत्यादि;
(4) नक़्शे, ख़ाके, ग्रांफ़, चार्ट इत्यादि;
(5) काम या प्रयोग करके दिखाना या अवलोकन के लिए जाना;
(6) शैक्षिक पर्यटन और पिकनिक।

(1) मूल वस्तुएँ

पढ़ाते समय अगर मूल वस्तु बच्चों के सामने पेश की जा सकें और बच्चों को उन्हें देखने, छूने और खाने-पीने की चीज़ें हों तो सूंघने और चखने का भी मौक़ा हो, तो जानकारियाँ बहुत ही स्पष्ट होंगी और अवधारणाएँ सही बनेंगी। इसलिए जो चीज़ें आसानी से हासिल हो सकती

हों और कक्षा में लाई भी जा सकें, या उन तक आसानी से पहुँचा जा सके, उनके बारे में तो जानकारियाँ इसी तरीक़े से मुहैया कराई जाएँ। छोटे बच्चों के सन्दर्भ में तो ऐसा करना बहुत ज़रूरी है; क्योंकि उनके अनुभव और अवलोकन अपूर्ण और सीमित होते हैं और चित्रों, मानचित्रों और चार्टों इत्यादि की मदद से वे ख़ूब अच्छी तरह समझ नहीं पाते। मूल वस्तु को यथासम्भव उनकी पृष्ठभूमि में ही दिखाना चाहिए। प्रत्यक्षीकरण के समय महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं की तरफ़ बच्चों को ध्यान दिलाना चाहिए, नहीं तो बहुत-सी बातें वे अपने तौर पर देख नहीं पाते, न उनकी प्रत्यक्षीकरण की शक्ति का प्रशिक्षण हो पाता है।

(2) मॉडल

भूगोल, इतिहास और सामान्य विज्ञान में बहुत-से ऐसे दृश्यों और चीज़ों के बारे में जानकारियाँ देनी होती हैं, जिन तक पहुँचना मुश्किल है या जो बहुत बड़ी होती हैं या किसी और वजह से कक्षा में लाई नहीं जा सकतीं, मजबूरन उनके मॉडलों से काम चलाना पड़ता है। मॉडल सस्ते, मगर साफ़ और सही बनाने या हासिल करने की कोशिश करनी चाहिए। मॉडल चीज़ों के भी होते हैं और दृश्यों और मानचित्रों के भी, जो ठोस होने की वजह से बच्चों के लिए समझने लायक़ भी होते हैं और आकर्षक भी, लेकिन चूँकि मूल चीज़ों की तुलना में सामान्य रूप से बहुत छोटे होते हैं। इसलिए उनको देखकर ग़लत अवधारणा बनने की आशंका रहती है। अच्छा यह है कि मॉडल के साथ उसका असल चित्र भी दिखाया जाए, ताकि आकार और पृष्ठभूमि इत्यादि के बारे में सही अवधारणाएँ बनें।

(3) चित्र, पोस्टर आदि

बच्चे कहानियों की तरह चित्रों के भी बड़े शौक़ीन होते हैं। कोई चित्र सामने आए, तो उसको ध्यान से देखने और उनके बारे में

जानकारियाँ हासिल करने के इच्छुक होते हैं। इसलिए आकर्षक और सुन्दर रंग के पोस्टर और चित्रों की वजह से पाठ बहुत दिलचस्प भी हो जाता है और समझने में आसान भी। स्पष्ट अवधारणाएँ बनाने में इनसे बड़ी मदद मिलती है। इनके बारे में निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिएँ—

- आकृतियाँ बहुत बड़ी, सुन्दर रंगोंवाली और आकर्षक हों और उनमें सिर्फ़ वही बातें स्पष्ट रूप से दिखाई गई हों, जिनके लिए वे बच्चों के सामने पेश की गई हैं।
- खुद बनाई जाएँ या साथी शिक्षकों की मदद तैयार की जा सकें, तो बेहतर है।
- हर शिक्षक को एक ऐसा एलबम तैयार करना चाहिए, जिसमें अपने विषय से सम्बन्धित चित्र और आकृतियाँ आदि लगातार जमा की जाती रहें, ताकि समय पर ही दिखाई जा सकें। पुरानी पत्र-पत्रिकाओं से अच्छा-ख़ासा भंडार जमा हो सकता है।
- पोस्टर्स इत्यादि तैयार करने में बड़े बच्चों से भी मदद ली जाए।
- प्रत्येक शिक्षक को नए तरीक़े के सरल चित्र या आकृतियाँ बनाने का अभ्यास कर लेना चाहिए। ये बहुत ही आसानी से और बहुत कम समय में तैयार हो जाती हैं। ये बड़ी प्रभावकारी और दिलचस्प होती हैं। बच्चे उन्हें ज़्यादा पसन्द करते हैं।

(4) नक़्शे, चार्ट, ग्राफ़ इत्यादि

नौ-दस साल के बच्चे मूल चीज़ों या उनके मॉडलों और चित्रों की जगह नक़्शों (मानचित्रों) और ख़ाकों (रेखाचित्रों) की मदद से भी ख़ूब अच्छी तरह समझ सकते हैं। इसलिए धीरे-धीरे उनसे पूरा फ़ायदा उठाना चाहिए। इतिहास में मानचित्रों और टाइम चार्ट से, भूगोल और सामान्य

विज्ञान में विभिन्न प्रकार के ख़ाकों, नक़्शों, ग्लोब, ग्राफ़ और चार्टों इत्यादि से मदद लेनी चाहिए।

(5) काम, प्रयोग और निरीक्षण

मौखिक रूप से समझाने की तुलना में अगर बच्चों के सामने करके दिखा दिया जाए, उदाहरण के लिए नमाज़ पढ़ने का पूरा तरीक़ा, तो बात आसानी से समझ में आ जाती है। ऐसे सारे मौक़ों पर ज़बानी से ज़्यादा व्यावहारिक प्रदर्शन उपयुक्त होता है। इसी तरह सामान्य विज्ञान और भूगोल के सन्दर्भ में प्रयोग करके दिखाना या बच्चों को प्रयोग और प्रत्यक्षीकरण का मौक़ा मुहैया करना भी जानकारियों को स्पष्ट करने में बहुत मददगार होता है। इनसे भी पूरा फ़ायदा उठाना चाहिए।

ध्यान देने योग्य बातें

- सहायक सामग्री के चयन में बच्चों की उम्र, मानसिक क्षमता और दिलचस्पियों को ध्यान में रखा जाए, ताकि बच्चों के ध्यान को खींचनेवाली भी हों और समझने लायक़ भी। इनसे बात भी ख़ूब अच्छी तरह समझ में आ जाएगी और याददाश्त (Memory) में आसानी से सुरक्षित हो जाएगी।
- जिस चीज़ को समझाने के लिए सहायक सामग्री इस्तेमाल की जा रही है, उससे सीधे-सीधे जुड़ी हो और यथासम्भव सिर्फ़ उन विवरणों पर निर्भर हो, जिनकी वास्तव में ज़रूरत है। असम्बद्ध या अनावश्यक विवरणों से बात स्पष्ट होने के बजाय और पेचीदा हो जाती है।
- कक्षा के सामने अच्छे और आकर्षक ढंग से पेश की जाए, ताकि हर बच्चे ख़ूब अच्छी तरह देख सकें। ध्यान देने लायक़ पहलुओं की तरफ़ उपयुक्त प्रश्नों या हिदायतों के द्वारा ध्यान आकर्षित किया जाए, ताकि ज़रूरी बातें अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण से न

रह जाएँ।

- सहायक सामग्री के सन्दर्भ में बच्चों को जितनी अधिक से अधिक ज्ञानेन्द्रियों से काम लेने का मौक़ा दिया जा सके, उतना ही फ़ायदेमन्द होता है। उदाहरण के लिए, देखने, छूने, सूंघने, चखने और अगर आवाज़ निकलती हो, तो सुनने के मौक़े। इस तरह ज़्यादा सही और स्पष्ट विचार बन सकेगा।
- प्राथमिक कक्षाओं में मूल चीज़ें या उनके मॉडल दिखलाए जाएँ। फिर क्रमशः चित्र, मानचित्र और ग्राफ़ इत्यादि से काम चलाया जाए।
- सारी सहायक सामग्री एक साथ बच्चों के सामने नहीं लानी चाहिए, बल्कि आड़ में रखना चाहिए और मौक़ा और ज़रूरत के मुताबिक़ एक-एक को कक्षा के सामने पेश करना चाहिए; नहीं तो बच्चों का ध्यान भटकता है और जिज्ञासा और उत्सुकता ख़त्म हो जाने के बाद वह आकर्षण भी बाक़ी नहीं रहता, जो दिखलाते समय अपेक्षित है।
- बच्चों के सामने पेश करके तुरन्त हटा न लिया जाए, बल्कि इतनी देर सामने रखा जाए कि उन्हें सन्तुष्टि हो जाए और ज़रूरी बातों का वे ख़ूब अच्छी तरह अवलोकन और प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त कर लें।
- हर स्कूल/मदरसे को मानचित्र, ग्लोब, मॉडल, एलबम, तरह-तरह के पोस्टर्स, चित्र, चार्ट इत्यादि ज़्यादा से ज़्यादा इकट्ठा और तैयार करना चाहिए, ताकि शिक्षण को प्रभावी और दिलचस्प बनाने में शिक्षक उनसे मदद ले सकें। आजकल इस तरह की विभिन्न संस्थाएँ काम कर रही हैं, जिनके यहाँ से तरह-तरह की शैक्षिक सामग्रियाँ सस्ते में हासिल हो सकती हैं।

(6) शैक्षिक पर्यटन और पिकनिक

सामाजिक और प्राकृतिक वातावरण से सम्बन्धित विभिन्न ऐसे विषय पाठ्यक्रम में शामिल होते हैं, जिनके बारे में स्पष्ट विचार न तो किताबों के द्वारा सम्भव है और न कक्षा में बिठाकर पारम्परिक शिक्षण से, बल्कि बच्चों को ख़ुद सम्बन्धित स्थल पर ले जाकर प्रत्यक्ष और गहरे अवलोकन ही से सही जानकारियाँ मुहैया कराई जा सकती हैं। उदाहरण के लिए, कारख़ानों, मंडियों, नदी, नालों, फ़सलों और प्राकृतिक दृश्यों इत्यादि के बारे में और इसी तरह बहुत-सी ऐसी सामूहिक, व्यक्तिगत और सामाजिक विशेषताएँ हैं, जिनके प्रशिक्षण के फ़ितरी मौक़े कक्षा में हाथ नहीं आते, बल्कि उनके लिए बाहर निकलना ज़रूरी होता है।

पारम्परिक शिक्षण से जहाँ बच्चे आम तौर पर घबराते और छुट्टियों का बेचैनी से इन्तिज़ार करते रहते हैं, घूमने-फिरने में उन्हें बड़ा मज़ा आता है। वे पूरी दिलचस्पी और गहरे लगन से उनमें शामिल होते हैं और इससे सम्बन्धित बहुत-सी कठिनाइयों और परेशानियों को ख़ूब अच्छी तरह झेल लेते हैं। ज़ाहिर है शिक्षण-प्रशिक्षण में ऐसे लाभदायक और प्रभावकारी साधनों से लाभ उठाने की हर मुमकिन कोशिश ज़रूर करनी चाहिए।

शैक्षिक पर्यटनों में शैक्षिक लक्ष्य और उद्देश्य सर्वोपरि होना चाहिए और पिकनिक में प्रशिक्षणात्मक। लेकिन इसका यह मतलब हरगिज़ नहीं कि कक्षा का माहौल यहाँ भी छाया रहे, बल्कि उचित सीमाओं में बच्चों को आज़ादी, दिलचस्प चीज़ों के करने और मनोरंजन की पूरी गुंजाइश दी जाए।

शैक्षिक उद्देश्य और लक्ष्य का मतलब यह है कि जिस चीज़ का अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण कराना अभीष्ट है, बच्चे उसका ख़ूब अच्छी तरह अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण कर सकें। उनकी अवलोकन-शक्ति का प्रशिक्षण हो। उनके विचार स्पष्ट हों। जानकारियों में वृद्धि हो। पाठ का

उद्देश्य बहुत सलीक़े से और अच्छी तरह पूरा हो। प्राकृतिक और सामाजिक माहौल और उनकी चीज़ों के बारे में सही जानकारियाँ हासिल करने की दिलचस्पी उभर आए।

पर्यटन का मक़सद यह है कि बच्चे चलने-फिरने, खाने-पीने, मिलने-जुलने के तरीक़े सीखें। यात्रा अथवा पर्यटन और उसकी व्यवस्था का अनुभव प्राप्त करें। मिल-बांटकर खाएँ-पिएँ, एक-दूसरे की मदद करें, घर के बाहर की मेहनत और परिश्रम की ज़िन्दगी का अनुभव हो और यात्रा में खाने-पीने, नमाज़ और आराम इत्यादि के बारे में ज़रूरी व्यवस्थाओं के लिए राह पैदा करने का उन्हें ढंग आए।

प्राथमिक कक्षाओं में ये प्रोग्राम बहुत लम्बे नहीं होने चाहिएँ। छोटे बच्चों के लिए आम तौर पर घंटे-दो घंटे के और स्कूल/मदरसे या आबादी के क़रीब ही हो। बड़े बच्चों के लिए आम तौर पर तीन-चार घंटे और कम दूरी पर इस तरह के संक्षिप्त प्रोग्राम बीच के अवकाश से सटे घंटों या आख़िरी घंटों में हो सकते हैं। हाँ, कभी-कभी दिन भर का प्रोग्राम होना चाहिए, ताकि शिक्षण और प्रशिक्षण दोनों तरह के उद्देश्य पूरे हो सकें। इस तरह का प्रोग्राम सप्ताह के आख़िरी दिन या छुट्टियों में उपयुक्त होते हैं, ताकि वापसी पर आराम का कुछ मौक़ा मिल सके।

ध्यान देने योग्य बातें

इन पर्यटनों से पूरा फ़ायदा उसी समय हासिल हो सकता है, जब निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाए—

- छात्रों की संख्या इतनी हो कि सम्भालने में ज़्यादा कठिनाई न हो।
- रवाना होने से पहले पर्यटन का मक़सद बच्चों पर अच्छी तरह स्पष्ट कर दिया जाए।
- सफ़र का पूरा ख़ाका उनके मशवरे से तैयार किया जाए। ज़रूरी सामान की सूची तैयार कर ली जाए और उनके उपलब्ध करने

और निगरानी का काम छात्रों की टोलियों से अंजाम दिलाया जाए।

जिस जगह ले जाना हो, शिक्षक एक बार वहाँ जाकर विस्तृत जानकारी ख़ुद प्राप्त कर आए।

कम से कम समय और कम से कम पैसा ख़र्च किया जाए, ताकि ये पर्यटन शिक्षा में रुकावट या जेब पर बोझ न हो।

सारे काम यथासम्भव बच्चों ही से अंजाम दिलाए जाएँ।

उचित सीमाओं में बच्चों को पूरी आज़ादी दी जाए।

(7) अन्य सहायक सामग्री

उपर्युक्त चीज़ों के अलावा अगर गुंजाइश हो तो निम्नलिखित चीज़ों से भी शिक्षण को प्रभावी और दिलचस्प बनाने में बड़ी मदद मिल सकती है और छात्रों को तरह-तरह की नई जानकारियाँ उनकी मदद से आसानी के साथ उपलब्ध कराई जा सकती हैं—

रेडियो और टेलीविज़न के द्वारा वे प्रोग्राम, जो बच्चों की शिक्षा-दीक्षा के लिए प्रसारित होते हैं;

ग्रामोफ़ोन या सीडी-डीवीडी इत्यादि के वे रिकॉर्ड जो उच्चारण इत्यादि सिखाने के लिए तैयार किए जाते हैं;

टेपरिकॉर्डिंग मशीन की मदद से उपलब्ध कराई जानेवाली सामग्री;

जादुई लालटेन के द्वारा दिखाए जानेवाले चित्र और दृश्य;

बाल-फ़िल्में जो शिक्षा-दीक्षा के लिए तैयार की जाती हैं;

व्यूमास्टर (Viewmaster) की मदद से पेश किए जानेवाले चित्र और दृश्य;

पत्र-पत्रिकाएँ, जो बच्चों ही के लिए निकलती हैं।

(8) गृह-कार्य (Homework)

लिखने-पढ़ने या व्यावहारिक और नैतिक प्रशिक्षण से सम्बन्धित वह काम जो छात्रों को घर पर करने के लिए दिए जाता है, गृह-कार्य (Homework) कहलाता है।

बच्चों में अपने क़द के लिहाज़ से काफ़ी ऊर्जा होती है। वे हर समय किसी न किसी काम में लगे रहना चाहते हैं। चूँकि स्कूल/मदरसे में वे सिर्फ़ कुछ घंटे गुज़ारते हैं, घरेलू ज़िम्मेदारियाँ भी उनपर नाममात्र को ही डाली जाती हैं। इसलिए उनके पास अतिरिक्त ऊर्जा भी होती है और छुट्टी के पल भी। लेकिन उचित मार्गदर्शन और उपयोगी व्यस्तता न होने की स्थिति में अक्सर उनकी शक्ति ग़लत रुख़ पर पड़ जाती और बहुमूल्य समय बेकार और हानिकारक कामों में बरबाद होने लगते हैं। बच्चों की अतिरिक्त ऊर्जा और छुट्टी के समय को कारामद बनाने और उपयोगी कामों में लगाने के लिए होमवर्क बहुत ही ज़रूरी है।

होमवर्क देने का आम तौर पर जो रिवाज चला आ रहा है, वह यह है कि लिखने-पढ़ने, शब्दार्थ याद करने, लेखन, अनुवाद और व्याकरण के अभ्यास या गणित के प्रश्नों को हल करने का जो नीरस काम स्कूल/मदरसे में होता है, उसका शेष हिस्सा घर से पूरा करके लाने के लिए दे दिया जाता है। उसे पूरा कराने की ज़िम्मेदारी अभिभावक की समझी जाती है। इसलिए वे छात्र बड़े ख़ुशक़िस्मत कहलाते हैं, जो समय पर काम कर लाते हैं और वे अभिभावक बहुत अच्छे समझे जाते हैं, जो इस सम्बन्ध में पूरा सहयोग करते हैं, चाहे इसके लिए उन्हें ट्यूटर ही क्यों न रखना पड़े। इसके विपरीत उन छात्रों को सज़ा का हक़दार समझा जाता है, जो होमवर्क (घर का काम) पूरा नहीं करते और उन अभिभावकों को दोषी ठहराया जाता है, जो काम पूरा करने की उचित व्यवस्था नहीं करते। होमवर्क के इस रिवायती अन्दाज़ में बहुत-सी ख़राबियाँ हैं। इसलिए इसपर कड़ी आलोचना की जाती है। उदाहरण

के लिए—

- बच्चों पर काम का बहुत बोझ पड़ जाता है, जिससे उनकी सेहत (स्वास्थ्य) प्रभावित होती है।
- जो काम बच्चे दिन भर स्कूलों में करते हैं और जिनसे वे उकता चुके होते हैं, वही काम जब उनपर लाद दिया जाता है तो वे बेगार समझते हैं और उसे ख़ुशी से करने को तत्पर नहीं होते। इसलिए होमवर्क पूरा करने के लिए उन्हें अक्सर सज़ा देनी पड़ती है, जिसके नतीजे में बच्चे पढ़ने ही से भागने लगते हैं।
- आज़ादी के साथ अपनी दिलचस्पी के काम और गतिविधियों में भाग लेने का बच्चों को समय ही नहीं मिलता।
- बच्चों की घरेलू ज़िन्दगी तबाह हो जाती है। वे बहन-भाइयों के साथ खेलने-कूदने और प्यार-मुहब्बत से रहने-सहने, घर के काम-काज में हाथ बटाने, माँ-बाप की ख़िदमत करने और सामाजिक सम्पर्क बनाने के लिए समय ही नहीं निकाल पाते। हालाँकि ये सारी चीज़ें भी उनकी शिक्षा-दीक्षा के लिए भी बहुत ही ज़रूरी हैं।
- कितने बच्चे ऐसे होते हैं, जिनकी घरेलू परिस्थितियाँ इस तरह के कामों की इजाज़त नहीं देतीं या वे अपने तौर पर कर ही नहीं सकते। वे सज़ा के डर से दूसरों की नक़ल करने और शिक्षक को धोखा देने की आदत का शिकार हो जाते हैं।
- शिक्षक अपनी ज़िम्मेदारी से बचते, कतराते और उसे ज़बरदस्ती अभिभावकों पर डालते हैं और इस सम्बन्ध में छात्रों को परेशान करते हैं।

महत्त्व और उपयोगिता

लेकिन ये आपत्तियाँ असल में होमवर्क की स्थिति, मात्रा और इस सन्दर्भ में शिक्षक के रवैये पर हैं। अगर इनका समाधान हो जाए, तो

होमवर्क का महत्त्व और उपयोगिता से किसी को इनकार नहीं हो सकता। होमवर्क अगर ठीक ढंग से दिया जाए और हमदर्दी से जाँचा जाए, तो यह शिक्षा का बहुत ही प्रभावकारी साधन है और इससे निम्नलिखित फ़ायदों की उम्मीद है—

बच्चे छुट्टी के समयों को आवारागर्दी या शरारत में बरबाद करने के बजाय घर ही पर फ़ायदेमन्द कामों में ख़र्च करते हैं।

किसी की मदद या हस्तक्षेप के बिना खुद ख़ाका बनाकर काम अंजाम देने का उन्हें तौर-तरीक़ा आता है और आज़ाद पढ़ने की आदत पड़ती है।

कक्षा में किए हुए कामों में अभ्यस्त होने और महारत हासिल करने और पढ़ी हुई चीज़ों को बरतने या उसे दोहराने का मौक़ा मिलता है।

पाठ्यसहगामी क्रियाएँ और गतिविधियाँ, जो अब पाठ्यक्रम का अहम हिस्सा गिनी जाती हैं, को पूरा करने में मदद मिलती है और जिस विषय या क्रिया-कलाप से उन्हें ज़्यादा लगाव और दिलचस्पी होती है, उसपर और ज़्यादा ध्यान लगाने का मौक़ा हाथ आता है।

कुछ ऐसे काम जो बच्चे अपने तौर पर कर सकते हैं, उनमें शिक्षक का समय बरबाद होने से बच जाता है। इसी लिए वह इस बचे हुए समय को शिक्षण के दूसरे ज़रूरी कामों पर लगा सकता है।

पाठ्यक्रम जो समाज की पेचीदगी और व्यापकता में वृद्धि के साथ दिन-प्रतिदिन फैलता जा रहा है, इसकी पूर्ति होमवर्क के बिना मुमकिन नहीं है।

अभिभावकों को अपने बच्चों के विकास की गति का अन्दाज़ा हो सकेगा और वे शिक्षकों की मदद और सलाह से उचित क़दम उठा सकेंगे। इस तरह होमवर्क अभिभावकों से सम्पर्क क़ायम करने

और घर और स्कूल/मदरसे में सहयोग का साधन बन सकता है।

- बच्चों में आत्मविश्वास पैदा होगा और वे अपनी जानकारियों और अभ्यास और महारत में बढ़ोत्तरी के लिए पाबन्दी से मेहनत और परिश्रम के आदी बनेंगे।
- होमवर्क के द्वारा छात्रों में कुछ ऐसी स्थायी आदतों और दिलचस्पियों को परवान चढ़ाया जा सकता है, जिनसे उनकी फ़ुरसत के पल ज़िन्दगी भर उपयोगी कामों में लग सकें।

ध्यान देने योग्य बातें

- होमवर्क देने में बच्चों की उम्र, उनकी मानसिक और शारीरिक दशा, उनकी घरेलू परिस्थितियाँ, उनकी योग्यता और क्षमता और उनकी दिलचस्पियाँ नज़रों के सामने रहनी चाहिएँ। बच्चों के खाने-खेलने के दिन होते हैं। उन्हें इसके पूरे मौक़े मिलने चाहिएँ। छह-सात साल की उम्र तक तो उन्हें कोई होमवर्क नहीं देना चाहिए। दस साल की उम्र तक भी जो कुछ कक्षा में हो जाए, उसी पर भरोसा करना चाहिए। हाँ, स्कूल/मदरसे के अजायबघर के लिए फूल-पत्तियाँ, चिड़ियों के पंख, फलों के बीज, घोंघे, शीशे और चीनी मिट्टी के ख़ूबसूरत टुकड़े, टिकट, चित्र इत्यादि जमा करने, प्रत्यक्षीकरण और ज्ञान में वृद्धि के लिए सुनियोजित प्रोग्राम के तहत पर्यटन पर जाने, फूल-बूटे लगाने, कबूतर, बकरी, ख़रगोश इत्यादि पालने, कोई मॉडल या किसी चीज़ की ड्राइंग बनाने, घर के काम-काज में हाथ बटाने, माँ-बाप की ख़िदमत, ग़रीबों, असहायों की मदद, छोटे भाई-बहनों को बहलाने, मसजिद की सफ़ाई इत्यादि के काम दिए जा सकते हैं या पढ़ने के लिए आसान ज़बान में दिलचस्प और सुन्दर चित्रोंवाली कहानियाँ, महापुरुषों के कारनामे और अभियान और यात्रा-वृत्तान्त और

आसान कविताओं के संग्रह इत्यादि दिए जाएँ। बाद की कक्षाओं में भी छात्रों की व्यक्तिगत दिलचस्पी, योग्यता, घरेलू परिस्थिति और घर में बच्चे की ज़िम्मेदारियों, माँ-बाप की व्यस्तताएँ, बीमारी, आर्थिक स्थिति इत्यादि का पूरा ध्यान रखना चाहिए। उतना ही काम देना चाहिए, जितना दूसरों की मदद के बिना सीमित समय में खुद आसानी से अंजाम दे सकते हों।

- विभिन्न विषयों के शिक्षकों को मिलकर होमवर्क का ऐसा टाइम-टेबुल बनाना चाहिए, जिससे उनके दिए हुए कामों में समानता रहे। बच्चों पर काम का बोझ भी न होने पाए और हर शिक्षक अपनी बारी पर ज़रूरी होमवर्क दे सके। प्रधानाध्यापक को इस तरफ़ विशेष ध्यान देना चाहिए, नहीं तो हर शिक्षक अपने ही विषय का ज़्यादा से ज़्यादा काम लेना चाहता है और बच्चे अकारण पिसते हैं। समय-सारिणी के द्वारा पाबन्द कर दिया जाए कि कोई शिक्षक सीमित और निर्धारित समय से ज़्यादा काम न ले।
- छुट्टियाँ इसलिए मिलती हैं कि बच्चे स्कूल/मदरसे कि चिन्ता से आज़ाद कुछ दूसरी तरह की गतिविधियों में हिस्सा ले सकें। लेकिन शिक्षक आम तौर पर छुट्टियों में जानकारीपरक विषयों का बहुत-सा होमवर्क दे देते हैं, जो बच्चों के मन पर बोझ भी होता है और दूसरी दिलचस्प और ज़रूरी व्यस्तताओं के कारण वे कर भी नहीं पाते और अकारण सज़ा के भागी होते हैं। छुट्टियाँ बच्चों की तन्दुरुस्ती और सफ़ाई, शारीरिक, नैतिक, धार्मिक और सामाजिक प्रशिक्षण के लिए बहुत मुनासिब मौक़े मुहैया करती हैं। इसलिए होमवर्क इन गतिविधियों से सम्बन्ध रखनेवाला और ऐसा होना चाहिए जिसमें घर के दूसरे लोग भी दिलचस्पी ले सकें।
- ग़ुस्से की अवस्था में या सज़ा के रूप में होमवर्क हरगिज़ न दिया

जाए और न इस अन्दाज़ से कि बच्चे उसे बहुत ही मुश्किल और हल न होने लायक़ मानने लगें, बल्कि उन्हें तैयार कर लिया जाए और देते समय यह विश्वास दिलाया जाए कि थोड़ी-सी मेहनत और कोशिश से वे उन्हें हल कर ले जाएँगे और काम होना भी इस स्तर का चाहिए कि बच्चे कोशिश करके ख़ुद पूरा कर सकें। इस तरह और अधिक काम के लिए हिम्मत बंधती है। अगर काम इतना मुश्किल हो कि कोशिश के बावजूद वे हल ही न कर सकें, तो निराशा छा जाएगी और ज़्यादा काम के लिए उनका मन तैयार न होगा।

- जो काम भी दिया जाए उसके बारे में यह यक़ीन कर लिया जाए कि इससे बच्चों की फ़ुरसत के समयों को उनके शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए उपयोगी बनाने में मदद मिलेगी और वे अपने तौर पर अध्ययन या किसी और लाभदायक कामों में छुट्टियों के पलों को लगाने के आदी बनेंगे।
- नियम समझाने और उसका इस्तेमाल बताने और शुरुआती अभ्यास कराने का काम कक्षा में करा लिया जाए। फिर और ज़्यादा अभ्यास और महारत के लिए ऐसा काम दिया जा सकता है, जिसको बच्चे अपने तौर पर मेहनत करके हल कर सकते हों।
- समय पर ही होमवर्क की जाँच और सुधार होना चाहिए, नहीं तो बच्चों का जोश ठंडा पड़ जाएगा और उनमें ढील पैदा होगी।

लेखन-कार्य की जाँच और सुधार

बच्चों से कक्षा में या घर पर लिखने का जो काम लिया जाए, उस पूरे काम का सुधार, हालाँकि है तो मुश्किल, लेकिन है बहुत ही ज़रूरी; क्योंकि इसी तरह बच्चे अपनी ग़लतियों को जानकर अपना सुधार कर सकेंगे।

इस बारे में निम्नलिखित बातें नज़रों के सामने रहें—

- काम पूरा होने के बाद उसमें जल्द से जल्द सुधार कर दिया जाए। सुधार अगर मार्गदर्शन करके खुद बच्चे के द्वारा कराया जा सके तो बहुत अच्छा हो, नहीं तो यथासम्भव उसके सामने होना चाहिए। इस तरह बच्चे की समझ में अपनी ग़लती ख़ूब अच्छी तरह आ जाएगी और इससे आसानी से छुटकारा पा सकेगा।
- लेखन-कार्य से पहले मौखिक अभ्यास करा लिया जाए, तो ग़लतियाँ कम होंगी और सुधार में ज़्यादा कठिनाई नहीं होगी।
- संशोधन के लिए चिह्न निर्धारित करके छात्रों को उनसे अवगत कर देना चाहिए। इस तरह समय कम लगेगा।

  एक समान ग़लती का सुधार सामूहिक रूप से होना चाहिए, ताकि वही बात हर एक को अलग-अलग न समझानी पड़े।
- अच्छे काम पर अच्छा रिमार्क और ग़लत काम पर ज़रूरी हिदायतें दी जाएँ। इससे आगे के काम में मदद मिलेगी।

पाठ्यपुस्तकें

शिक्षण के काम में उपयुक्त पाठ्यपुस्तक को बहुत ज़्यादा महत्त्व प्राप्त है। इनके कारण से शिक्षक का काम बहुत आसान हो जाता है; क्योंकि उसे पाठ के लिए बहुत ज़्यादा नोट लेने और अभ्यास तैयार करने की ज़रूरत पेश नहीं आती। कम योग्यता के शिक्षक भी उनकी मदद से काम चला लेते हैं।

अभ्यास और पुनरावृत्ति के लिए छात्रों के पास पाठ्यपुस्तकों के रूप में पूरी सामग्री हर समय मौजूद रहती है।

उपयुक्त पुस्तकों का चयन

बाज़ार में पाठ्यपुस्तकें तो तरह-तरह की मिलती हैं, लेकिन विभिन्न

हैसियतों से उपयुक्त उनमें बहुत कम ही होती हैं। बच्चों के लिए वही किताबें चुनी जाएँ–

जो पक्षपात, पूर्वाग्रह, संकीर्णता और सत्य के इनकार और बहुदेववाद से मुक्त हों।

जिनसे उच्च उद्देश्य और ज़िन्दगी का पाक-साफ़ नज़रिया बनाने, आचरण और चरित्र को सँवारने और विचारों को उच्च बनाने में मदद मिले।

जिनकी भाषा आसान और मुहावरेदार, कहने का अन्दाज़ निराला, बच्चों के दिलचस्प और समझने के लायक़ हो; जो बच्चों की उम्र, मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति, अभिरुचि, रुझान और स्वाभाविक दिलचस्पियों को ध्यान में रखकर लिखी गई हों।

जिनका काग़ज़ मज़बूत, टाइटल आकर्षक, छपाई साफ़ और सही, अक्षर स्पष्ट और मोटे, कम क़ीमत और आकार और मोटाई इतना हो कि बच्चों को स्कूल/मदरसे लाने-ले जाने में कठिनाई न हो और आसानी से मिल सकें।

जिसमें पाठ्यक्रम में स्वीकृत पूरी पाठ्यसामग्री यथासम्भव मौजूद हो, ताकि बाहर से मदद लेने की कम ही ज़रूरत पड़े।

जो सुन्दर रंगों, दृश्यों और ज़रूरी चित्रों या आकृतियों और ख़ाकों इत्यादि से सुसज्जित हों।

जो उपयुक्त अभ्यासों और शिक्षण-विधियों इत्यादि से सम्बन्धित ज़रूरी हिदायतों से भरपूर हों।

जिनकी तैयारी में परिस्थितियों और ज़रूरतों का पूरा ध्यान रखा गया हो और जिनकी विषय-वस्तु बच्चों के अनुभवों, अवलोकनों और रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से सम्बद्ध करके पेश की गई हो।

- जिनके पाठ बच्चों की जिज्ञासा को उभारने, उन्हें पढ़ने के लिए प्रेरित करने और उनके ध्यान को खींचने और उनकी दिलचस्पी को बनाए रखने में सहायक हों।

पाठ्यपुस्तकों का इस्तेमाल

- सिर्फ़ पाठ्यपुस्तकें पढ़ा देने पर बस न किया जाए, बल्कि ज़रूरी जानकारियाँ अपनी तरफ़ से भी दी जाएँ।,
- हर किताब के सभी पाठ एक समान ज़रूरी और उपयोगी नहीं होते। इसलिए पूरी किताब पाठ-पाठ पढ़ाने और रटवाने की कोशिश न की जाए; बल्कि ख़ुद समझ में आनेवाले ग़ैर-ज़रूरी या कम उपयोगी कुछ पाठों को हटाकर, उनकी जगह अलग से ज़रूरी सामग्री उपलब्ध कराई जाए और कुछ आसान पाठों का कुछ हिस्सा पढ़ाकर बाक़ी छात्र पर छोड़ दिया जाए।
- अभ्यासों और शिक्षण-विधियों से सम्बन्धित निर्देश आम तौर पर पाठ्यपुस्तकों की जान होती हैं। लेकिन बहुत कम शिक्षक उनसे पूरा फ़ायदा उठाते हैं और कुछ तो उन्हें बिलकुल नज़रअन्दाज़ कर देते हैं। यह सही नहीं है। उनसे पूरा फ़ायदा उठाना चाहिए और उन्हें मौखिक या लिखित रूप से हल कराने की पूरी कोशिश करनी चाहिए। पढ़ाते समय अपनी तरफ़ से भी प्रश्न और अभ्यास देकर बच्चों को अपनी बुद्धि को जाँचने-परखने का मौक़ा देना चाहिए।
- कोशिश की जाए कि कम से कम पाठ्यपुस्तकों से काम चल जाए।
- भूगोल, सामान्य विज्ञान और दूसरे ज्ञानपरक विषयों के शिक्षण में पाठ्यपुस्तकों के साथ अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण, अनुभव और प्रयोग पर पूरा ध्यान दिया जाए।

लाइब्रेरी और वाचनालय (Library and Reading-Room)

पाठ्यपुस्तकें चाहे कितनी ही स्तरीय और उपयोगी हों, बच्चों की जानकारियों में वृद्धि, शब्द भंडार में बढ़ोत्तरी, अध्ययन-क्षमता, किताब पढ़ने की अभिरुचि, विचारों की उच्चता, लक्ष्य के प्रति लगाव, विचार-अभिव्यक्ति की सामर्थ्य, दूसरों के विचार और दृष्टिकोण समझने की योग्यता और छुट्टियों के समयों के इस्तेमाल के लिए और ज़्यादा उपयुक्त किताबों तथा पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन ज़रूरी है।

खुद शिक्षक को भी अपनी शिक्षण-योग्यता बढ़ाने, अपनी जानकारियों को अपटूडेट रखने, व्याख्या और स्पष्टीकरण में मदद लेने और हवालों के लिए पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं की ज़रूरत पड़ती है। ज़ाहिर है छात्रों और शिक्षकों की इन ज़रूरतों को पूरा करने के लिए हर स्कूल/मदरसे की अपनी लाइब्रेरी होनी चाहिए। लाइब्रेरी में शिक्षक और हर उम्र, अभिरुचि और योग्यता के बच्चों के लिए उपयोगी और ज़रूरी किताबों का भंडार हो, जिसमें हर साल अपनी क्षमता के मुताबिक़ नई किताबों की वृद्धि होती रहे। लाइब्रेरी के साथ एक वाचनालय भी ज़रूरी है, जिसमें बच्चों और बड़ों की दिलचस्पी की अच्छी-अच्छी पत्र-पत्रिकाएँ रखी जाएँ। अगर साधन सीमित हों, तो किताबों और पत्र-पत्रिकाओं के मुहैया कराने में जनता से मदद भी ली जा सकती है। पढ़ने के शौक़ीन लोग जो समाचारपत्र और पत्रिकाएँ मंगवाते या किताबें ख़रीदते हैं, उनसे ये चीज़ें मदरसे के लिए उधार ली जा सकती हैं या उनमें से जो चीज़ें पढ़ने के बाद आम तौर पर बेकार हो जाती हैं और वे इधर-उधर डाल देते हैं, उन्हें स्कूल/मदरसा नियमित रूप से प्राप्त कर सकता है। कुछ घरों में पुरानी स्तरीय पुस्तकों का भंडार पड़ा-पड़ा दीमकों की नज़र हो जाता है या बच्चों की पढ़ी हुई किताबें मारी-मारी फिरती हैं; अगर सोचा जाए तो मुफ़्त या कम दामों में स्कूल/मदरसे के लिए हासिल की जा सकती हैं। समाचारपत्रों, पत्रिकाओं और पुस्तकों के प्रकाशक यूँ भी

स्कूलों और लाइब्रेरियों के लिए विशेष छूट देते हैं। इससे भी फ़ायदा उठाया जा सकता है। मजबूरी की स्थिति में अगर फ़ीस या फ़ंड की व्यवस्था करनी पड़े, तो भी लाइब्रेरी की ज़रूरत और उपयोगिता को ध्यान में रखकर उससे परहेज़ नहीं करना चाहिए।

पाठ्यसामग्री का चयन

छपने-छपाने की सुविधाओं और शिक्षा के विस्तार के बाद बुरी-भली हर तरह की किताबें छपतीं और लाभदायक तथा हानिकारक हर तरह के समाचारपत्र और पत्रिकाएँ छपती हैं। इसलिए उनके चयन में बहुत सावधानी की ज़रूरत है। स्कूल/मदरसे में वही चीज़ें आनी चाहिए जो पाक-साफ़, स्तरीय और उपयोगी हों। इनके चयन की ज़िम्मेदारी किसी एक व्यक्ति पर नहीं डालनी चाहिए, बल्कि पढ़ने-लिखने की अभिरुचि और चयन की योग्यता रखनेवाले विभिन्न शिक्षकों के मशवरे से होना चाहिए। चयन में अलग-अलग उम्र, अभिरुचि और योग्यता के छात्रों की दिलचस्पियाँ, ज़रूरत और अलग-अलग विषय नज़र के सामने रहने चाहिएँ। बड़े-बड़े प्रकाशकों की तरफ़ से हर साल पुस्तकों की विस्तृत सूची प्रकाशित होती है। चयन में इनसे बड़ी मदद मिलती है।

लाइब्रेरी में शिक्षाप्रद क़िस्से-कहानियाँ और साफ़-सुथरी कथाओं और कविताओं के संग्रह, ऐतिहासिक और सुधारपरक उपन्यास और नाटक, नबियों और मुस्लिम समुदाय के नेक बुज़ुर्गों के जीवन-चरित, महापुरुषों के कारनामे, खोजों और आविष्कारों की गाथाएँ, पर्यटकों के यात्रा-वृत्तान्त, इस्लामी ज्ञान, साहित्य, भूगोल, इतिहास, सामान्य विज्ञान, सामान्य ज्ञान, व्यापार और उद्योग धंधों वग़ैरह पर छोटी-बड़ी विभिन्न स्तरों की किताबें होनी चाहिएँ। शिक्षकों के लिए विभिन्न भाषाओं के शब्दकोश, सन्दर्भ-पुस्तकें, बाल-मनोविज्ञान और बाल-शिक्षा पर किताबें, इंसाइक्लोपीडिया इत्यादि मुहैया कराने की कोशिश करनी चाहिए।

सात-आठ साल की उम्र के बच्चे चूँकि रवानी के साथ पढ़ और समझ नहीं सकते, इसलिए उनके लिए चित्रों की किताबें या आसान ज़बान और मोटे अक्षरों में छपी हुई दिलचस्प, संक्षिप्त कहानियों और छोटे छन्दों में वर्णनात्मक कविताओं की ऐसी किताबें मुनासिब रहती हैं, जिनमें बहुत-से चित्र हों। चित्र यथासम्भव बड़ा, आकर्षक और सुन्दर रंगोंवाला होना चाहिए।

आठ-नौ साल से ग्यारह-बारह साल तक के बच्चों के लिए क़िस्से-कहानियों, खोजों और आविष्कारों, पर्यटन और शिकार इत्यादि से सम्बन्धि घटनाओं पर आधारित आसान, दिलचस्प और सचित्र कहानियाँ और यात्रा-वृत्तान्त इत्यादि उपयुक्त होते हैं।

बारह-तेरह साल से सत्रह-अठारह साल की उम्र के छात्र अभियान-कथाओं, महापुरुषों के कारनामों, उच्च चरित्र की महान हस्तियों की जीवनियाँ, पाक-साफ़ कहानियों, ऐतिहासिक और सुधारपरक उपन्यासों, जोशीली कविताओं और साहित्यिक अभिरुचि के पलने-बढ़ने के लिए साहित्य की पाक-साफ़ अमर कृतियों से पूरा फ़ायदा उठा सकते हैं। किताबों के चयन में इन सबकी अभिरुचियों का ध्यान रखना चाहिए।

ध्यान देने योग्य बातें

- लाइब्रेरी और वाचनालय (Library and Reading-Room) के लिए एक कमरा सुरक्षित होना चाहिए, जिसमें किताबों को सुरक्षित, क्रमबद्ध और सुन्दर ढंग से रखने के लिए अलमारियाँ होनी चाहिएँ और जिसकी दीवारों को कहावतों, सूक्तियों और सुन्दर पोस्टरों से सजाना चाहिए।
- किताबों के शौक़ीन किसी ऐसे शिक्षक को लाइब्रेरियन बनाना चाहिए, जो इस सम्बन्ध में पर्याप्त समय दे सके और किताबों को सुरक्षित, क्रमबद्ध और सुन्दर ढंग से रखना जानता हो।

- लाइब्रेरियन को चाहिए कि वह हर किताब के बारे जानकारी रखे कि वह कहाँ है, किस विषय से सम्बन्धित है और किनके लिए फ़ायदेमन्द है। किताबों के जारी करने के लिए हर कक्षा का दिन और समय निर्धारित कर दे। बच्चे जब किताब लेने आएँ, तो अच्छे अख़लाक़ से पेश आए और उनकी उम्र, योग्यता, पसन्द और ज़रूरत के मुताबिक़ उपयुक्त किताब की निशानदेही करे।
- बच्चों को बताया-सिखाया जाए कि वे लाइब्रेरी की किताबों को अमानत समझें, सुरक्षित रखें, गन्दा होने, मुड़ने और फटने से बचाएँ और निर्धारित अवधि के अन्दर वापस कर जाएँ।

  बच्चों में किताब पढ़ने की अभिरुचि पैदा करना क्लास टीचर की ज़िम्मेदारी है। अच्छा यह है कि हर कक्षा के लिए कुछ स्तरीय किताबों का चयन करके कक्षाओं में भी रखवाई जाएँ, ताकि उनकी मदद से क्लास टीचर्स छात्रों में बाहरी अध्ययन का शौक़ भी पैदा कर सकें और ज़रूरत और इच्छा के मुताबिक़ छात्रों को हर समय किताबें भी मिल सकें। क्लास टीचरों को चाहिए कि वे कक्षा में कभी-कभी अच्छी किताबों की चर्चा किया करें। उनके चुने हुए हिस्से पढ़कर सुनाएँ, उनके पढ़ने की ज़रूरत और अहमियत वाज़ेह करें और छात्रों को अपने साथ लाइब्रेरी ले जाकर किताबें देखने और मनपसन्द किताब हासिल करने में मदद और रहनुमाई करें। जो किताबें छात्रों को ज़्यादा पसन्द हों, उनकी कई प्रतियाँ होनी चाहिएँ, ताकि एक ही समय में कई बच्चे फ़ायदा उठा सकें। हर बच्चे ने शिक्षा-सत्र के दौरान में कितनी किताबें पढ़ीं, इसका रिकॉर्ड रखना और प्रतियोगिता की भावना पैदा करना भी अध्ययन करने का अच्छा प्रेरणा-स्रोत है।
- लाइब्रेरी से किताबें हासिल करने में हर मुमकिन सहूलत मुहैया करनी चाहिए। हाँ, सन्दर्भ-पुस्तकें, शब्दकोश या दुर्लभ और क़ीमती

किताबें किसी को घर ले जाने की इजाज़त नहीं देनी चाहिए।

- पत्र-पत्रिकाओं की फ़ाइल रखने की नियमित व्यवस्था करनी चाहिए, ताकि जब ज़रूरत हो, उनके उपयोगी लेखों से फ़ायदा उठाया जा सके।

परीक्षाएँ, जाँच और प्रगति

स्कूल/मदरसे की बुनियादी ज़िम्मेदारियों में से अहम ज़िम्मेदारी यह भी है कि समय-समय पर छात्रों की योग्यता की जाँच की जाए और उनकी प्रगति की रफ़्तार की जाँच-परख की जाती रहे, ताकि–

- शिक्षकों को अपनी कोशिशों के प्रभाव का अन्दाज़ा हो सके और वे ज़रूरत के मुताबिक़ समय-सारिणी, काम की रफ़्तार और शिक्षण-विधि में समुचित बदलाव कर सकें।
- छात्रों को अपनी मेहनत, ध्यान, योग्यता और क्षमता के सम्बन्ध में ठीक-ठीक राय क़ायम करने में मदद मिले।
- माँ-बाप को अपने बच्चों की प्रगति की गति का अन्दाज़ा होता रहे।
- संस्था के ज़िम्मेदारों को शिक्षकों के काम और उनकी कोशिशों के नतीजों का ज्ञान हो सके।
- छात्रों और शिक्षकों दोनों को मेहनत की प्रेरणा और पिछले कामों को दोहराने और जाँच का बराबर मौक़ा मिलता रहे।
- वर्गीकरण, प्रोन्नति देने और भविष्य में शिक्षा के बारे में उचित मार्गदर्शन हो सके।
- छात्रों का स्थान और हैसियत निर्धारित करने और भविष्य में उन्हें कोई ज़िम्मेदारी सौंपने के लिए समाज को आदर्श रूप में कोई कसौटी मुहैया हो सके।

परीक्षाएँ

जाँच-परख के लिए मुद्दतों से परीक्षा का तरीक़ा प्रचलित है। जैसा कि हम सब जानते हैं, परीक्षाओं में छात्रों को दूर-दूर बिठाकर उन्हें प्रश्नपत्र दे दिए जाते हैं। निर्धारित समय (आम तौर पर तीन घंटे) में उनसे उन प्रश्नों का उत्तर लिखवाया जाता है। इस दौरान छात्रों की अच्छी तरह निगरानी की जाती है। समय ख़त्म होने पर कॉपियाँ लेकर परीक्षक के हवाले कर दी जाती हैं। वह उन्हें जाँचकर नम्बर देता है। उन्हीं नम्बरों की बुनियाद पर कामयाबी या नाकामी का फ़ैसला कर लिया जाता है। ये परीक्षाएँ आम तौर पर दो तरह की होती हैं—

(1) आन्तरिक (2) बाहरी।

(1) आन्तरिक : वे परीक्षाएँ है जिनकी सारी व्यवस्था संस्था अपने तौर पर ख़ुद करती है। उनमें प्रश्नपत्र बनाने, कॉपियाँ जाँचने और कामयाबी और नाकामी का फ़ैसला करने का सारा अधिकार शिक्षकों को होता है। ये परीक्षाएँ आम तौर पर छमाही और सालाना होती हैं। लेकिन कुछ संस्थाओं में माहाना और तिमाही भी ली जाती हैं।

(2) बाहरी : वे विशेष परीक्षाएँ जो किसी परीक्षा-बोर्ड के द्वारा ली जाती हैं। उनमें प्रश्नपत्र बनाने, कॉपियाँ जाँचने और कामयाबी और नाकामी के फ़ैसले के सारे अधिकार बाहरी लोगों के हाथ में होते हैं।

परीक्षाओं के दोष

परीक्षाओं की प्रचलित व्यवस्था में कुछ ऐसी बुनियादी कमियाँ हैं, जिनकी वजह से शिक्षा-दीक्षा की पूरी व्यवस्था को बहुत ज़्यादा नुक़सान पहुँचता है और वे मक़सद भी पूरे नहीं होते, जिनके लिए ये परीक्षाएँ ली जाती हैं। उदाहरण के लिए—

- परीक्षाएँ ही शिक्षा का मक़सद बन गई हैं और शिक्षा-दीक्षा का बुनियादी मक़सद नज़रों से ओझल हो गया है। छात्रों और उनके

अभिभावकों, शिक्षक और संस्थाओं के ज़िम्मेदार सब की यही इच्छा और कोशिश होती है कि किसी तरह परीक्षा का परिणाम अच्छा रहे। इसलिए उन सारे कामों, गतिविधियों, विशेषताओं और गुणों को नज़रअन्दाज़ कर दिया जाता है, जिनका परीक्षा से सीधे-सीधे सम्बन्ध न हो, चाहे शिक्षा-दीक्षा की दृष्टि से उनकी कितनी ही अहमियत और उपयोगिता क्यों न हो। विभिन्न विषयों, क्रिया-कलापों और किताबों के उन्हीं हिस्सों पर ज़ोर दिया जाता है, जो परीक्षा की दृष्टि से ज़रूरी समझे जाते हैं। सिर्फ़ चुने हुए हिस्सों को पढ़ा जाता है। सारांशों और व्याख्याओं से काम चलाया जाता है। कामयाबी के लिए तरह-तरह के हथकंडे इस्तेमाल किए जाते हैं। परीक्षा से सम्बन्धित प्रश्नों का पता लगाने, धोखा देने, प्रश्नपत्र आउट करने, नक़ल करने, पोज़ीशन लाने के लिए प्रतिस्पर्धी को क्षति पहुँचाने, सिफ़ारिशें कराने, यहाँ तक कि कुछ स्थितियों में घूस देने से भी संकोच नहीं किया जाता।

- प्रचलित परीक्षा-विधि अत्यन्त अविश्वसनीय है। उससे छात्रों की योग्यता और प्रतिभा का ठीक-ठीक अन्दाज़ा हरगिज़ नहीं हो पाता है; क्योंकि—

(1) प्रश्न आम तौर पर ऐसे पूछे जाते हैं जिनका सम्बन्ध स्मरण और याददाश्त से होता है। इसलिए बेसोचे-समझे रटकर भी अच्छे नम्बर मिल सकते हैं। इस तरह दूसरी बौद्धिक योग्यताओं के बारे में कोई अन्दाज़ा नहीं हो पाता।

(2) जानकारी चाहे त्रुटिपूर्ण हों, विचार-अभिव्यक्ति, लेखन और लफ़्फ़ाज़ी पर अगर महारत हो, तो काफ़ी नम्बर मिल जाते हैं और अच्छी जानकारियों के बावजूद लेखन और विचार की अभिव्यक्ति पर महारत न होने की वजह से अच्छे नम्बर नहीं मिलते।

(3) नम्बर देने का कोई सर्वमान्य स्तर नहीं होता। सारी निर्भरता

परीक्षक के मिज़ाज, मूड और पसन्द पर है, जबकि उनका हाल यह है कि कोई नम्बर देने में बहुत कंजूस होता है, कोई बहुत उदार, कोई सख़्ती से कॉपियाँ जाँचता है, कोई नरमी से। अनुभव गवाह है कि एक ही कॉपी पर विभिन्न परीक्षकों के दिए हुए नम्बरों में कमो-बेश पचास प्रतिशत तक अन्तर रहा है। कॉपियाँ जाँचते समय परीक्षक ख़ुश और प्रसन्न रहा या छात्रों की कोई बात पसन्द आ गई तो अच्छे नम्बर मिल गए और इसके विपरीत स्थिति हुई हो, तो ख़ैर नहीं। नम्बरों पर इसका असर पड़कर रहेगा।

(4) जिन प्रश्नों के उत्तर छात्र ने तैयार किए थे, सौभाग्य से वही परीक्षा में आ गए तो चांदी है, नहीं तो सारा किया-धरा अकारथ।

(5) परीक्षा देते समय बच्चे की तन्दुरुस्ती ठीक रही, परीक्षा का हौवा सवार न हुआ, मूड ठीक रहा, ठीक समय पर सारी बातें क्रम से याद आ गईं तो अच्छे नम्बर मिल गए; नहीं तो सारी मेहनत पर पानी फिर गया।

(6) सीमित समय में परीक्षा ली जाती है। ज़ाहिर है इतने कम समय में योग्यता और प्रतिभा की ठीक जाँच मुमकिन ही नहीं है।

- प्रचलित परीक्षाओं से सिर्फ़ ज्ञान और कला से सम्बन्धित योग्यता का कुछ अन्दाज़ा होता है। वह भी त्रुटिपूर्ण और धुन्धला-सा। व्यक्तित्व के दूसरे सारे पहलुओं के बारे में इनसे कोई अन्दाज़ा नहीं होता।
- छात्र परीक्षा के समय में मेहनत करने, वह भी ज़्यादातर रटने के आदी बन जाते हैं। इसलिए जो कुछ याद करते हैं, परीक्षा के बाद ही भूल जाते हैं।
- कुछ छात्र परीक्षा के लिए इतनी जान-तोड़ मेहनत करते हैं कि हमेशा के लिए अपनी तन्दुरुस्ती बरबाद कर लेते हैं।

- परीक्षा का चक्कर छात्रों को बाहरी अध्ययन का मौक़ा ही नहीं देता। उनका सारा ध्यान पाठ्यपुस्तकों तक सीमित रहता है।
- बाहरी परीक्षाओं में परीक्षकगण आम तौर पर ऐसे लोग होते हैं, जो चाहे अपनी कला में माहिर हों, लेकिन बच्चों की शिक्षा का अनुभव नहीं रखते। इसलिए वे ठीक अन्दाज़ा नहीं कर पाते।

मतलब यह कि प्रचलित परीक्षाओं की सारी व्यवस्था बहुत ही त्रुटिपूर्ण है। मगर इसका यह मतलब हरगिज़ नहीं कि परीक्षाओं को सिरे से ख़त्म कर दिया जाए, बल्कि मतलब यह है कि उनको उपयोगी बनाने की पूरी कोशिश की जाए।

परीक्षाओं को लाभदायक बनाने के उपाय

परीक्षाओं को उद्देश्य हरगिज़ न बनने दिया जाए, बल्कि उन उद्देश्यों को प्राप्त करने का साधन बनाया जाए, जिनके लिए परीक्षाएँ ली जाती हैं—

- व्यक्तित्व के सारे पहलुओं की जाँच-परख की कोशिश की जाए।
- कक्षा और घर के काम को भी परीक्षाओं का अंग बनाया जाए और इनके लिए भी कुछ नम्बर निर्धारित किए जाएँ, ताकि साल भर काम की तरफ़ ध्यान रहे।
- परीक्षाओं को हौवा बनाने या उनके नाम से बच्चों को डराने के बजाय उसे स्कूल/मदरसे की नियमित गतिविधियों का एक अंग बनाया जाए।
- प्रश्न ऐसे चुने जाएँ जिनसे सिर्फ़ स्मरण-शक्ति और याद्दाश्त की ही नहीं, बल्कि सूझ-बूझ, तर्क-शक्ति, नतीजे निकालने और जानकारियों को काम में लाने की सलाहियत का भी अन्दाज़ा हो सके।

- प्रश्न पूरे विषय पर फैले हों, ताकि चुने हुए हिस्सों के अध्ययन की आदत न पड़े।

  कुछ नम्बर ज़बानी परीक्षाओं (Viva voce) के लिए भी निर्धारित किए जाएँ, ताकि बातचीत करने का ढंग, बोलने की सलाहियत और मौखिक रूप से विचार की अभिव्यक्ति का भी अन्दाज़ा हो सके।

- ऐसे उपाय अपनाए जाएँ, जिनसे परीक्षा क़िस्मत का खेल न रहे। सम्बन्धित शिक्षकों की रायें, रोज़ाना काम का रिकॉर्ड (प्रगति चार्ट) साप्ताहिक और मासिक जाँच, निर्धारित अवधि की परीक्षाओं के परिणाम। परीक्षा के समय शारीरिक और मानसिक स्थितियों को नज़र में रखा जाए।
- ज्ञानपरक विषयों के प्रश्नपत्र ऐसे बनाए जाएँ, जिनमें भाषा-ज्ञान का प्रदर्शन और लेखन के कम से कम मौक़े हों। उदाहरण के लिए ऐसे प्रश्न दिए जाएँ, जिनमें ख़ाली जगहें भरकर या ग़लत और सही का निशान करके अलग-अलग उत्तरों में से सही को चुनकर काम चल जाए और बहुत ज़्यादा लिखना न पड़े।
- परीक्षक ऐसे लोगों को बनाया जाए जिनमें ज़िम्मेदारी का एहसास, न्यायप्रियता और छात्रों के प्रति सहानुभूति हो और जो पढ़ाने-लिखाने का अनुभव रखते हों। ख़ासकर उस उम्र और सलाहियत के बच्चों को पढ़ाने-लिखाने का अनुभव, जिनके वे परीक्षक बनाए जा रहे हैं।
- हर प्रश्न के बारे में इत्मीनान कर लिया जाए कि प्रश्न छात्रों की समझ में ख़ूब अच्छी तरह आ जाएगा और वह उनकी उम्र और समझ और सलाहियत के मुताबिक़ है और शिक्षा के मूल उद्देश्य से भी पूर्णतः मेल खाता है।

- छोटे बच्चों की परीक्षा ज़्यादातर मौखिक हो और ऐसा आदमी परीक्षा ले, जिससे बच्चे अच्छी तरह परिचित हों या जो उनसे आसानी से जान-पहचान बना ले।
- परीक्षा यह जानने के लिए लेना चाहिए कि छात्रों को क्या-क्या आता है और उनकी सलाहियत और योग्यता क्या है, न कि यह देखने के लिए कि उन्हें क्या-क्या नहीं आता। ज़ाहिर है यह उसी स्थिति में मुमकिन है, जब हर रुझान और सलाहियत के छात्रों को ध्यान में रखकर प्रश्नपत्र बनाए जाएँ और चयन की काफ़ी आज़ादी दी जाए।
- प्रश्नपत्र में प्रश्न सिर्फ़ पाठ्यपुस्तकों तक सीमित न रहें, बल्कि पाठ्यपुस्तकों से बाहर के ऐसे प्रश्न भी दिए जाएँ, जिनसे छात्रों के सामान्य ज्ञान और उस विषय में उनकी सामान्य योग्यता का अन्दाज़ा लगाया जा सके।
- परीक्षाएँ अच्छे माहौल में लिए जाएँ, ताकि बच्चे हिम्मत और हौसले के साथ उत्तर दें। परीक्षाओं का नाम ही बच्चों को भयभीत कर देने के लिए काफ़ी होता है। अगर छात्र किसी वजह से हिम्मत हार बैठें, तो उत्तर क्या दे सकेंगे।
- फ़ेल होनेवाले छात्रों को निराशा और उदासी से बचाने की पूरी कोशिश की जाए और ध्यान लगाकर आइन्दा कामयाबी का यक़ीन पैदा कराया जाए।

परीक्षाओं के बारे में दूसरी ज़रूरी बातें

छात्रों के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का निरीक्षण और उनके विकास की गति की जाँच और प्रगति चार्ट पर परीक्षाफल का समय पर अंकन– ये सब काम तो बराबर होते रहने चाहिएँ। हाँ, नियमित परीक्षाएँ साल में दो बार काफ़ी हैं–

(1) छमाही परीक्षा शिक्षा-सत्र के मध्य में,

(2) सालाना परीक्षा शिक्षा-सत्र के अन्त में।

विषयों की अहमियत और उपयोगिता को ध्यान में रखकर हर विषय के नम्बर कक्षावार प्रस्तावित किए जा रहे हैं। इनमें से कम से कम 20 प्रतिशत नम्बर रोज़मर्रा के काम और माहाना जाँच इत्यादि के लिए निर्धारित होने चाहिएँ।

पहली और दूसरी कक्षाओं में उर्दू-हिन्दी इमले (लेखन) की नक़ल, ख़ाली जगहों में उपयुक्त अक्षर या शब्द भरने और लिखित हिसाब के अलावा बाक़ी चीज़ों की परीक्षा मौखिक या व्यावहारिक होनी चाहिए।

मौखिक परीक्षा में छात्रों के सामने स्पष्ट शब्दों में प्रश्न रख देने के बाद थोड़ी देर सोचने का मौक़ा देकर उत्तर प्राप्त करना चाहिए। छोटे बच्चे झिझक की वजह से जानते हुए भी ठीक उत्तर नहीं दे पाते, उनकी झिझक दूर करके और हिम्मत बंधाकर उत्तर प्राप्त करना चाहिए। मौखिक परीक्षाओं के प्रश्न छोटे, इबारत आसान और संक्षिप्त होने चाहिएँ।

तीसरी और चौथी कक्षाओं में उर्दू-लेख, इमला (लेखन) और नक़ल, हिन्दी इमला और नक़ल और लिखित हिसाब के सिवा सभी विषयों की परीक्षाएँ मौखिक या व्यावहारिक होनी चाहिए।

ज्ञानपरक विषयों की परीक्षा लिखित हो सकती है। शर्त यह है कि उत्तर बहुत छोटे लिखने हों और प्रश्न यथासम्भव ऐसा बनाया जाए, जिसमें लेख और कुछ दूसरी चीज़ लिखने की कम से कम ज़रूरत पेश आए।

पाँचवीं और उसके बाद की कक्षाओं में परीक्षाएँ लिखित होनी चाहिएँ। हाँ, नाज़रा और क़िरअत, हिफ़्ज़, ज़बानी हिसाब और विभिन्न भाषाओं में पढ़ने और बोलने की सलाहियत का अन्दाज़ा सिर्फ़ ज़बानी परीक्षा ही से हो सकता है। आर्ट-क्राफ़्ट की परीक्षा व्यावहारिक होगी।

नैतिकता और रहन-सहन कोई परीक्षा-सम्बन्धी विषय नहीं है, बल्कि इसके नम्बर रोज़मर्रा के व्यावहारिक जीवन के निरीक्षण के नतीजे में मिलेंगे। (विस्तृत विवरण आगे निरीक्षण के तहत देखें।)

पहली और दूसरी कक्षाओं के निर्धारित अंक

(1) इस्लामियात (इस्लामी शिक्षाएँ)			100
	(i) नैतिकता और सामाजिक ज्ञान	25	
	(ii) क़ुरआनी क़ायदे	25	
	(iii) वुज़ू, नमाज़ का व्यावहारिक ज्ञान और सूरतें और ज़िक्र ज़बानी	25	
	(iv) नबियों के हालात और हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) की जीवनी	25	
(2) उर्दू			100
	(i) पढ़ना	50	
	(ii) कहानियाँ, कविताएँ, मौखिक	20	
	(iii) नक़ल, इमला इत्यादि	30	
(3) गणित			100
	(i) लिखित	50	
	(ii) मौखिक	50	
(4) ज्ञानपरक विषय			50
	(i) भूगोल	25	
	(ii) सामान्य विज्ञान	25	
(5) आर्ट-क्राफ़्ट			50
कुल अंक			400

तीसरी और चौथी कक्षाओं के लिए निर्धारित अंक

(1) इस्लामियात (इस्लामी शिक्षाएँ)	(क) नैतिकता और सामाजिक अध्ययन (ख) कुरआन मजीद (ग) इस्लामी विधान और अक़ीदे (घ) पैग़म्बर (सल्ल॰), महापुरुषों की जीवनी	50 40 30 30	150
(2) उर्दू	(क) पाठ्यपुस्तक से (ख) रचना	50 50	100
(3) हिन्दी	(क) पाठ्यपुस्तक से (ख) रचना	25 25	50
(4) गणित	(क) लिखित (ख) मौखिक	75 25	100
(5) ज्ञानपरक विषय	(क) भूगोल (ख) सामान्य विज्ञान	25 25	50
(6) आर्ट-क्राफ़्ट			50
कुल अंक			500

पाँचवीं और छठी कक्षाओं के लिए निर्धारित अंक

(1) इस्लामियात (इस्लामी शिक्षाएँ)	(1) क़ुरआन मजीद (ii) फ़िक़ह व अक़ाइद (iii) पैगम्बरों और महापुरुषों की जीवनी (iv) नैतिक और सामाजिक अध्ययन	50 50 50 50	200
(2) उर्दू	(i) पाठ्यपुस्तक से (ii) रचना	50 50	100
(3) अरबी	(i) पाठ्यपुस्तक से (ii) रचना	25 25	50
(4) हिन्दी	(i) पाठ्यपुस्तक से (ii) रचना	25 25	50
(5) अंग्रेज़ी	(i) पाठ्यपुस्तक से (ii) रचना	25 25	50
(6) गणित	(i) लिखित (ii) मौखिक	75 25	100
(7) ज्ञानपरक विषय	(क) इतिहास और सभ्यता-संस्कृति (ख) भूगोल (ग) सामान्य विज्ञान	40 30 30	100
कुल योग			700

सातवीं और उसके बाद की कक्षाएँ

इन कक्षाओं में इस्लामी ज्ञान और अरबी भाषा मौलिक विषय होंगे। इन पर ज़्यादा समय और ध्यान दिया जाएगा। क़ुरआन और हदीस से सम्बन्धित पाठ्यसामग्री अरबी भाषा के तहत पढ़ाई जाएँगी। बाक़ी विषयों को गौण हैसियत प्राप्त होगी—

(1) इस्लामियात (इस्लामी शिक्षाएँ)			250
	(क) फ़िक़्ह व अक़ाइद	50	
	(ख) इस्लाम का इतिहास	50	
	(ग) पैग़म्बर (सल्ल.) आदि की जीवनी और शिक्षाएँ	50	
	(घ) नैतिकता और सामाजिक अध्ययन	100	
(2) अरबी			100
	(क) पाठ्यपुस्तक से	50	
	(ख) रचना और अनुवाद	50	
(3) उर्दू			100
	(क) गद्य, निबन्ध-लेखन सहित	50	
	(ख) पद्य हिन्दी सहित	50	
(4) अंग्रेज़ी			100
	(क) पाठ्यपुस्तक से	50	
	(ख) रचना और अनुवाद	50	
(5) गणित			100
	(क) सामान्य गणित	50	
	(ख) बीजगणित और ज्यामिति	50	
(6) ज्ञानपरक विषय			150
	(क) इतिहास और सभ्यता-संस्कृति	50	
	(ख) भूगोल	50	
	(ग) सामान्य विज्ञान	50	
(6) व्यावसायिक शिक्षा	केवल व्यावहारिक कामों में श्रेणी (Division)		I II III
कुल अंक			800

परीक्षाफल

(1) प्राथमिक कक्षाओं में 40 प्रतिशत औसत अंक पानेवाले छात्र पास गिने जाएँ, शर्त यह है कि किसी विषय में प्राप्त अंक 20 प्रतिशत से कम न हों। इसके बाद की कक्षाओं में पास होने के लिए हर विषय में 30 प्रतिशत अंक लाना ज़रूरी है।

(2) कुल औसत अंक 44 प्रतिशत तक नम्बर पानेवाले छात्र तृतीय श्रेणी (III Division), 45 से 59 प्रतिशत द्वितीय श्रेणी (II Division) और 60 प्रतिशत और उसके ऊपर प्रथम श्रेणी (I Division) में पास किए जाएँ।

(3) प्राथमिक कक्षाओं के जो छात्र क़ुरआन मजीद, नाज़रा, उर्दू या गणित में कमज़ोर हों, उन्हें उत्तीर्ण न किया जाए और बाद की कक्षाओं के जो छात्र इस्लामियात और अरबी में कमज़ोर हों, उन्हें आगे न बढ़ाया जाए।

(4) जो छात्र बीमारी या किसी विवशता के कारण परीक्षा में शामिल न हो सके हों, उन्हें दोबारा परीक्षा का अवसर दिया जाए।

(5) प्राथमिक कक्षाओं के वे बच्चे सालभर का रिकॉर्ड अच्छा हो और वे वार्षिक परीक्षा में किसी कारण कामयाब न हो सकें, उनका साल बरबाद न होने दिया जाए, बल्कि पिछले रिकॉर्ड के आधार पर पास कर दिया जाए। हाँ, कमज़ोर बच्चों को आगे बढ़ाने में बड़ी सावधानी बरतनी चाहिए।

अंकपत्र

परीक्षाफल दो तरह के फ़ार्मों पर तैयार किया जाता है। एक सभी कक्षाओं का एक साथ, जो ऑफ़िस में रिकॉर्ड के रूप में रहता है। दूसरा छात्रों का अलग-अलग जो उनके अभिभावकों को भेज दिया जाता है। उनके प्रगति-पत्रक पर लिखा जाता है। नमूने यहाँ पेश हैं—

परीक्षाफल : अर्द्धवार्षिक/वार्षिक/मास..................सन्................कक्षा..............स्कूल/मदरसा..................

			इस्लामियात					उर्दू			हिन्दी			दरी			अंग्रेज़ी			गणित			ज्ञानपरक विषय				हस्तकला						
क्रमांक	प्रवेशांक	छात्र का नाम	कुरआन मजीद	फ़िक़ह व अक़ाइद	पैग़म्बर की जीवनी व इतिहास	नैतिकता और समाज	कुल योग	प्रथम पत्र	द्वितीय पत्र	कुल योग	पाठ्यपुस्तक	अनुवाद और रचना	कुल योग	पाठ्यपुस्तक	अनुवाद और रचना	कुल योग	पाठ्यपुस्तक	अनुवाद और रचना	कुल योग	लिखित	मौखिक	कुल योग	इतिहास	भूगोल	सामान्य विज्ञान	कुल योग	आर्ट क्राफ्ट	कुल योग	प्रतिशत	परिणाम	श्रेणी	स्थान	अभियुक्ति
1																																	
2																																	
3																																	
4																																	
5																																	
6																																	
7																																	
8																																	
9																																	
10																																	

नामांकित छात्रों की संख्या...................... परीक्षा में बैठनेवाले छात्रों की संख्या...................... पास.............. प्रोन्नति........... फेल.......... I............ II............ III............

संचालक/प्रधानाध्यापक का हस्ताक्षर.................................

वर्ग-शिक्षक का हस्ताक्षर.................................

परीक्षाफल अर्द्धवार्षिक/वार्षिक/मास......................सन्.................

रोल नम्बर............छात्र का नाम............................कक्षा..............

क्र.	विषय	कुल अंक	प्राप्तांक	अंक प्रतिशत	अभियुक्ति
1	इस्लामियात• (क़ुरआन और हदीस, फ़िक़्ह और अक़ाइद, नबी सल्ल. की जीवनी और इस्लाम का इतिहास, नैतिकता और सामाजिक अध्ययन)				
2	उर्दू•				
3	अरबी (भाषा और साहित्य)•				
4	अंग्रेज़ी				
5	हिन्दी				
6	गणित• (गणित–मौखिक और लिखित, बीजगणित और ज्यामिति)				
7	ज्ञानप्रद विषय (इतिहास और संस्कृति, भूगोल, सामान्य विज्ञान इत्यादि)				
8	आर्ट-क्राफ़्ट				
योग					

परिणाम.................श्रेणी.................पोज़ीशन.................

हस्ताक्षर (वर्ग-शिक्षक)...............तिथि..............................

हस्ताक्षर (प्रधानाध्यापक या प्रबन्धक)..............................

अभिभावक का तिथि सहित हस्ताक्षर..................................

(नोट : चिह्नित विषयों पर अत्यधिक ध्यान दीजिए।)

निरीक्षण, जाँच और प्रगति-पत्रक

अच्छी शिक्षा-दीक्षा के लिए छात्रों के व्यक्तित्व के सभी पहलुओं पर बराबर नज़र रखनी चाहिए और समय-समय पर विस्तार से निरीक्षण करके छात्रों के प्रगति-पत्रक[1] पर लिखा जाना चाहिए, ताकि शिक्षक और अभिभावक बच्चे की स्थिति और प्रगति की रफ़्तार से अवगत रहें और ज़रूरत के मुताबिक़ स्थिति के सुधार की तरफ़ ध्यान दें।

(1) शारीरिक दशा का निरीक्षण

नामांकन के समय और हर शिक्षा-सत्र के शुरू में निम्नलिखित बातों का निरीक्षण करके प्रगति-पत्रक पर लिख लेना चाहिए—

(i) क़द, (ii) वज़न, (iii) दृष्टि, (iv) श्रवण (v) कोई रोग या संक्रामक रोग, (vi) सामान्य शारीरिक स्थिति, (vii) चेचक का टीका, (viii) आवश्यक निर्देश।

तन्दुरुस्ती की जाँच के लिए समय-समय पर अगर किसी डॉक्टर की सेवा हासिल हो सके, तो ज़्यादा बेहतर है।

कम से कम हर तीसरे महीने, सामान्य शारीरिक दशा, खेल की पाबन्दी, व्यायाम या शारीरिक परिश्रम की आदत और तन्दुरुस्ती की सुरक्षा के नियमों की पाबन्दी का जायज़ा लेकर प्रगति-प्रत्रक में लिख देना चाहिए।

(2) व्यावहारिक, नैतिक और सामाजिक स्थिति का निरीक्षण

शिक्षा-सत्र के शुरू में विस्तार से और हर तीसरे महीने संक्षिप्त रूप

[1] विस्तृत विवरण के लिए देखें – 'छात्रों का प्रगति-पत्रक' (तरक़्क़ी-चार्ट)'।

में अपने निरीक्षण और अभिभावकों की रिपोर्ट में निम्नलिखित बातों को लिख लिया जाए—

- **अच्छी आदतें और तौर-तरीक़े :** नमाज़ की पाबन्दी, सच बोलना, सामान्य शिष्टाचार इत्यादि।
- **बुरी आदतें :** झूठ, चोरी, बदतमीज़ी, सिगरेट पीना इत्यादि।
- **सफ़ाई और तौर-तरीक़े :** शरीर, कपड़े और पढ़ने-लिखने के सामान के सन्दर्भ में।
- **विभिन्न अवसरों के तौर-तरीक़ा का लिहाज़ :** मसजिद के आदाब, कक्षा के आदाब, इज्तिमाअ के आदाब, खाने-पीने, चलने-फिरने, मिलने-जुलने और बातचीत के आदाब।
- शिक्षक, माँ-बाप, भाई-बहन, कक्षा और स्कूल/मदरसे के साथियों और सहपाठियों के साथ बरताव।
- ज़िम्मेदारी का एहसास, मेहनत और लगन ख़ासकर हाज़िरी और समय की पाबन्दी, पढ़ने-लिखने और होमवर्क में दिलचस्पी, कक्षा की सफ़ाई, सजावट और घर/मदरसे के काम-काम में हाथ बटाने और पाठ्य सहगामी क्रियाओं और स्कूल/मदरसे के विभिन्न प्रोग्रामों में भाग लेने के बारे में।

(3) शैक्षिक स्थिति का निरीक्षण

सत्र के शुरू में ही निम्नलिखित बातों का जायज़ा हो और उन्हें लिख लिया जाए—

(i) सामान्य मानसिक स्थिति, (ii) विषय जिनमें अच्छा चलता है, (iii) विषय जिनमें कमज़ोर है, (iv) कमज़ोरियाँ दूर करने के लिए मशवरे।

फिर रोज़मर्रा के लिखित और मौखिक काम और जाँच के नतीजों की रौशनी में हर महीने की रिपोर्ट और छमाही और सालाना परीक्षाओं

के परीक्षाफलों को लिखा जाए।

बाहरी अध्ययन ख़ासकर लाइब्रेरी और वाचनालय से लाभ उठाने की भी तिमाही रिपोर्ट तैयार होनी चाहिए। इन जायज़ों के नतीजों से अभिभावकों को अवगत कराते रहना चाहिए, ताकि वे भी सहयोग कर सकें।

☆☆☆

अध्याय-30

व्यक्तिगत और सामूहिक शिक्षा

हमारे यहाँ कुछ मदरसे और स्कूल अब भी ऐसे हैं, जिनमें सिरे से वर्गीकरण (Classification) ही नहीं होता। हर बच्चे का पाठ अलग-अलग होता है। शिक्षक एक बच्चे को बुलाता है, उसका पिछला पाठ सुनता है। उसे नया पाठ देकर याद करने के लिए छोड़ देता है। इस तरह बारी-बारी सभी बच्चों को पाठ देता है।

कभी-कभी पाठ याद कराने या नया पाठ देने में उन छात्रों से भी मदद लेता है, जो अपेक्षाकृत तेज़ होते हैं और अपना पाठ जल्द याद कर लेते हैं या कक्षा, योग्यता और क्षमता में दूसरे बच्चों से आगे होते हैं। इस तरीक़े में जहाँ कुछ फ़ायदे हैं, उदाहरण के लिए—

हर बच्चे पर शिक्षक व्यक्तिगत रूप से ध्यान देता है।

हर बच्चे को अपनी स्वाभाविक गति से आगे बढ़ाने का मौक़ा मिलता है।

बच्चे अपने साथियों को याद कराने में सहयोग देते हैं।

दूसरों को पाठ पढ़ाने से बच्चों को अपना पाठ ख़ूब अच्छी तरह याद हो जाता है और योग्यता बढ़ जाती है। वहीं बहुत-सी हानियाँ होती हैं, उदाहरण के लिए—

एक समय में शिक्षक एक ही बच्चे पर ध्यान दे सकता है। इसलिए बाक़ी बच्चों का बहुत-सा समय बरबाद होता है।

दिन भर में मुश्किल से एक-दो विषय हो पाते हैं।

ख़ाली बैठने की वजह से बच्चे अक्सर शरारत करते हैं। उन्हें कंट्रोल में रखने के लिए शिक्षक को बहुत ज़्यादा सख़्ती करनी पड़ती है।

बच्चों के द्वारा पाठ दिलाने से शिक्षा बहुत ही घटिया होती है।

पढ़ाई के सिलसिले में जिन बच्चों से शिक्षक मदद लेते हैं, उनमें ज्ञान का घमंड और बड़प्पन की भावना पैदा हो जाती है और वे अपने साथियों को नीचा समझने और उनके साथ अनुचित व्यवहार करने लगते हैं इत्यादि।

मतलब यह कि अलग-अलग पाठ देने में शिक्षण-प्रशिक्षण दोनों बहुत अधिक प्रभावित होते हैं।

इसके विपरीत कक्षा में बांटकर पूरी कक्षा को एक साथ शिक्षा देने का आम रिवाज है। इससे बहुत-से फ़ायदे होते हैं—

वर्ग में बाँटकर शिक्षा देने के लाभ

छात्रों और शिक्षक दोनों का समय दूसरे फ़ायदेमन्द कामों के लिए बच जाता है।

एक ही शिक्षक बहुत-से बच्चों को शिक्षा दे सकता है, इसलिए कम ख़र्च में ज़्यादा काम हो जाता है।

शिक्षक पूरी कक्षा में एक साथ निगाह रख सकता है और सभी बच्चों को व्यस्त रख सकता है। इसलिए व्यवस्था ठीक रहती है और छात्रों पर सख़्ती करने की ज़रूरत कम ही पेश आती है।

विभिन्न छात्रों की एक जैसी समस्याएँ एक साथ हल हो जाती हैं। हर एक को अलग से समय देने की ज़रूरत नहीं पड़ती।

पूरी कक्षा को सबक़ याद कराने के लिए किसी पाठ का विभिन्न प्रकार से स्पष्टीकरण करना पड़ता है। इससे छात्र एक ही बात को तरह-तरह से पेश करने का ढंग सीखते हैं।

छात्रों को अनुकरण के लिए बहुत-से अच्छे नमूने मिलते हैं। सहपाठियों की संगति में बच्चों को ग़ैर-मामूली ख़ुशी हासिल होती है।

- सहयोग, हमदर्दी और दूसरे सामूहिक गुण परवान चढ़ते हैं।
- किताबों और शिक्षा-सामग्रियों की कमी महसूस नहीं होने पाती। दूसरे बच्चों से इस बारे में मदद मिल जाती है।
- छात्र एक-दूसरे की देखा-देखी पढ़ने-लिखने के कामों में दिलचस्पी लेते और दूसरों को शिक्षक से प्रभावित होता देखकर प्रभाव ग्रहण करते हैं और पूरी कक्षा का सामूहिक प्रभाव शिक्षक को और अधिक दिलचस्पी से काम करने का प्रेरक बनता है। इसलिए शिक्षक और छात्र दोनों को सामूहिक शिक्षण में ज़्यादा आनन्द आता है।
- प्रतिस्पर्धा और प्रतियोगिता के बहुत-से मौक़े मिलते हैं, जो छात्रों को ग़ैर-मामूली मेहनत, ध्यान और दिलचस्पी से काम करने पर आमादा करते हैं।

हानियाँ

कक्षावार शिक्षा से जहाँ बहुत-से लाभ हैं, वहीं उनमें कुछ बुनियादी कमियाँ और दोष भी हैं।

उदाहरण के लिए—

- वर्गीकृत शिक्षा इस मान्यता और ढंग पर दी जाती है कि कक्षा के सभी बच्चे एक समान योग्यता रखते हैं। (हालाँकि शरीर और बुद्धि, स्वभाव और प्रशिक्षण के लिहाज़ से आदमियों के बीच अन्तर और विशिष्टता स्वाभाविक है) इसलिए उनके व्यक्तिगत अन्तर को नज़रअन्दाज़ करके सबको एक ही लाठी से हाँका जाता है।
- वर्गीकृत शिक्षा से प्रतिभाशाली और मन्दबुद्धि दोनों तरह के बच्चों को नुक़सान होता है। तेज़ बच्चों को सुस्त रफ़्तारी पर मजबूर किया जाता है और सुस्त बच्चों को तेज़ रफ़्तारी पर। इसलिए

दोनों तरह के बच्चे अपनी फ़ितरी रफ़्तार से आगे बढ़ने का मौक़ा नहीं पाते।

- शिक्षण का काम औसत योग्यता के बच्चों को ध्यान में रखकर किया जाता है। इसलिए रफ़्तार आम तौर पर बहुत सुस्त रहती है और शिक्षक और छात्र दोनों काम की रफ़्तार की तरफ़ से संतुष्ट नहीं हो पाते।
- ग़ैर-हाज़िरी या बीमारी के कारण जो बच्चे पीछे रह जाते हैं उन पर व्यक्तिगत ध्यान नहीं दिया जा सकता। इसलिए कमी पूरी न होने की वजह से और ज़्यादा फिसड्डी हो जाते हैं। कभी-कभी यही कमी अच्छे-ख़ासे प्रतिभाशाली बच्चों में उचाटपन और शिक्षा से नफ़रत का कारण बन जाती है।
- शिक्षकों को छात्रों से निजी सम्पर्क बनाने का बहुत कम मौक़ा मिलता है। इसलिए उनकी शिक्षा-दीक्षा और प्रगति की रफ़्तार का न तो अच्छी तरह से अन्दाज़ा हो पाता है और न उनकी तरफ़ पूरी तरह ध्यान दिया जा सकता है।
- बुरे साथियों के बुरे प्रभाव ग्रहण करने की भी आशंका होती है।
- छात्रों को पाठों में अमली दिलचस्पी लेने और खुद करके सीखने के बहुत कम मौक़े मिलते हैं।
- सबसे बड़ी कमी यह है कि बच्चे के बजाय शिक्षा केन्द्र बन जाती है और सारा ध्यान ज़्यादा से ज़्यादा पढ़ा देने पर केन्द्रित हो जाता है। छात्र कितना लाभ उठा रहे हैं, इसपर कम ही ध्यान दिया जाता है।

हानियों से बचने के उपाय

वर्ग में बांटकर शिक्षा देने में बेशक हैं तो बहुत-सी कमियाँ, लेकिन विभिन्न कारणों से यही तरीक़ा अनिवार्य और पूरी दुनिया में लोकप्रिय

है। शिक्षा तो बहरहाल सामूहिक रूप में ही देनी होगी। हाँ, कोशिश यह होनी चाहिए कि उन हानियों से बच्चे सुरक्षित रहें, जिनकी ऊपर निशानदेही की गई है। इस बारे में कुछ उपाय नीचे बताए जा रहे हैं–

नामांकन और वर्गीकरण में इस बात की कठोरता से पाबन्दी की जाए कि एक दरजे में यथासम्भव एक ही उम्र और एक समान बौद्धिक, शारीरिक और ज्ञानात्मक स्तर अर्थात एक ही स्तर के बच्चे लिए जाएँ।

बच्चों के व्यक्तिगत अन्तर और ख़ूबियों को पूरी तरह ध्यान में रखा जाए और उनपर व्यक्तिगत ध्यान देने के लिए ज़रूर ही कुछ समय निकाला जाए।

छात्रों से व्यक्तिगत सम्पर्क बनाने के लिए उनसे व्यक्तिगत मुलाक़ातें की जाएँ और अनिवार्य बातों की तरफ़ ध्यान दिलाया जाए।

कक्षा और स्कूल/मदरसे के माहौल और पास-पड़ोस के वातावरण को साफ़-सुथरा और शुद्ध रखने की पूरी कोशिश की जाए और छात्रों के सामने अच्छे नमूने पेश किए जाएँ, ताकि बच्चे अच्छे असर क़बूल करें और बुरी संगति और बुरे प्रभावों से सुरक्षित रहें।

योग्यता की दृष्टि से कक्षा के बच्चों को विभिन्न टोलियों और ग्रूपों में बांट दिया जाए। हर टोली का एक देखभाल करनेवाला हो। बच्चों को टोलियों में मिल-जुलकर काम करने के ज़्यादा मौक़े दिए जाएँ और ज़रूरत के मुताबिक़ हर टोली की मदद की जाए।

ज़्यादा से ज़्यादा प्रश्न, अभ्यास, लिखित और व्यावहारिक काम देकर व्यक्तिगत प्रयासों और योग्यताओं का निरीक्षण करने के मौक़े मुहैया किए जाएँ।

व्यक्तिगत योग्यताएँ और अभिरुचि देखकर होमवर्क दिए जाएँ।

- कमज़ोर या पिछड़े हुए बच्चे व्यक्तिगत ध्यान के ज़्यादा हक़दार हैं। उन्हें साथ ले कर चलने की पूरी कोशिश की जाए। दूसरे बच्चों को लिखित या व्यावहारिक काम देकर कमज़ोरों पर विशेष ध्यान देने के लिए समय निकाला जाए। हर एक को बहरहाल उसकी स्वाभाविक गति से आगे बढ़ने का मौक़ा मिलना चाहिए।

☆☆☆

अध्याय-31

विभिन्न विषयों के बीच आपसी सम्बन्ध

स्कूल/मदरसों में विषयों का भार दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। हर विषय चूँकि ज़िन्दगी के किसी न किसी क्षेत्र से जुड़ा होता है, इसलिए किसी विषय की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। आम स्कूलों की तुलना में मदरसों में विषयों की संख्या और भी ज़्यादा हो जाती है; क्योंकि वहाँ दूसरे विषयों के साथ इस्लामी विषयों और उर्दू की शिक्षा भी अनिवार्य होती है। इसलिए प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों को निम्नलिखित विषय पढ़ने पड़ते हैं–

(1) इस्लाम से सम्बन्धित अनेक विषय, (2) उर्दू, (3) हिन्दी, (4) गणित, (5) सामाजिक विज्ञान (भूगोल, इतिहास, समाजशास्त्र), (6) सामान्य विज्ञान, (7) आर्ट क्राफ़्ट।

कहीं-कहीं अंग्रेज़ी, अरबी और फ़ारसी का ज्ञान भी प्राथमिक कक्षाओं में ही दे दिया जाता है। अब ज़रा ग़ौर कीजिए, एक छोटी उम्र का बच्चा और इतने सारे विषयों का भार– इस पर अतिरिक्त भार यह कि–

- हर विषय अलग-अलग पढ़ाया जाता है।
- उन विषयों का उपविभाजन करके हर विभाग के समय-सारिणी में अलग घंटे रखे जाते हैं। उदाहरण के लिए, इस्लामियात (Islamic Studies), नाज़रा, फ़िक़ह और अक़ीदे, पैग़म्बर और महापुरुषों की जीवनी इत्यादि। उर्दू में गद्य और पद्य, रचना और व्याकरण, इमला और नक़ल, सुलेखन इत्यादि। इसी तरह दूसरी भाषाएँ, सामाजिक विज्ञान, भूगोल, इतिहास, समाजशास्त्र, सामान्य विज्ञान, प्राकृतिक अध्ययन, तन्दुरुस्ती की हिफ़ाज़त इत्यादि।

इन उपविषयों को भी अलग-अलग पढ़ाया जाता है। इसलिए संख्या और ज़्यादा बढ़ जाती है।

हर विषय के सबक़ भी आम तौर से अलग-अलग पढ़ाए जाते हैं। एक विषय के विभिन्न पाठों में भी कोई सम्बन्ध नहीं होता।

कहीं-कहीं प्राथमिक कक्षाओं में भी एक ही कक्षा के विभिन्न विषय अलग-अलग शिक्षकों के सुपुर्द होते हैं। इसलिए विषयों का परस्पर अन्तर और ज़्यादा बढ़ जाता है।

मतलब यह है कि कुछ तो मजबूरी और कुछ हमारी नासमझी के कारण विषयों का भार बच्चों के लिए असहनीय हो जाता है। नतीजा यह होता है कि—

शुरू ही से विषयों के बोझ तले दबकर उनकी तन्दुरुस्ती ख़राब हो जाती है।

शारीरिक विकास रुक जाता है और बुद्धि कुंठित हो जाती है।

ज्ञान (Knowledge) को एक इकाई की हैसियत से पेश करने के बजाय अलग-अलग विषयों और विभागों में बाँटकर पेश करने से छात्र मानसिक उलझन में पड़ जाते हैं।

विभिन्न विषयों के परस्पर एक-दूसरे से और एक विषय के विभिन्न पाठों का आपस में गहरा सम्बन्ध होता है। अगर एक-दूसरे को आपस में जोड़कर करके पढ़ाया जाए, तो ख़ूब अच्छी तरह स्पष्टीकरण भी हो, आसानी से समझ में आए और छात्र दिलचस्पी भी लें, परन्तु अलग-अलग पढ़ाने के कारण बच्चे इन सुविधओं से वंचित कर दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए, पाठ्यपुस्तक में जो कुछ पढ़ाया जाए रचना, व्याकरण और लिखित काम उसी से जुड़े हों, तो बहुत आसानी होगी। लेकिन उन्हीं को अगर एक-दूसरे से अलग करके पढ़ाया जाए, तो बोझ बढ़ जाता है।

इसी लिए विषयों का बोझ कम करने और शिक्षण को प्रभावकारी बनाने के लिए ज़रूरी हैं कि विषयों को यथासम्भव एक-दूसरे जोड़कर पढ़ाया जाए और एक विषय के विभिन्न पाठों को परस्पर जोड़कर शिक्षा दी जाए। प्राथमिक कक्षाओं में क्लास टीचर सिस्टम प्रचलित किया जाए और एक कक्षा के ज़्यादातर विषय एक ही शिक्षक के हवाले किए जाएँ, ताकि वह विषयों और पाठों के बीच सम्बन्ध क़ायम कर सके।

अनेक विषयों के बीच आपसी सम्बन्ध के विभिन्न रूप

विषयों के बीच परस्पर सम्बन्ध के दो रूप हैं—

(1) परस्पर सम्बन्ध और (2) किसी विषय को केन्द्र मानकर शिक्षा देना।

- परस्पर-सम्बन्ध यानी विभिन्न विषयों को एक-दूसरे से और एक ही विषय के विभिन्न पाठों को आपस में जोड़कर पढ़ाया जाए।
- किसी विषय या आर्ट को केन्द्रीय हैसियत दे दी जाए और सारे ही विषय उससे सम्बद्ध करके पढ़ाए जाएँ।

किसी विषय को केन्द्र मानकर शिक्षा देने से बेशक सारी जानकारियाँ एक ही केन्द्र से सम्बन्धित और परस्पर सम्बद्ध रूप में मन में बिठाई जा सकती हैं। इसलिए मन चिन्तन और सोच की अव्यवस्था से सुरक्षित रहता है और ज़रूरत के समय अपनी सारी सम्बन्धित जानकारियों का इस्तेमाल कर सकता है। लेकिन पहले तो यह बड़ा मुश्किल काम है कि सभी विषयों के पाठ किसी एक विषय या कला से जोड़ कर दिए जाएँ। दूसरे केन्द्रीय विषय को तो ग़ैर-मामूली अहमियत प्राप्त हो जाती है और दूसरे विषयों की जानकारियाँ सतही और अधूरी रह जाती हैं। दीनी मदरसों (Religious Schools) के शिक्षक इस्लामियात (Islamic Studies) को केन्द्रीय हैसियत देकर अगर सभी या ज़्यादातर विषयों को इससे जोड़कर पढ़ाएँ, तो शिक्षा का उद्देश्य अपेक्षाकृत बहुत अच्छी तरह पूरा हो सकता है। लेकिन इसके लिए

जितनी योग्यता, क्षमता, तैयारी और जिस तरह की पाठ्यपुस्तकों की ज़रूरत है, उनके अभाव में इसका मशवरा समय से पहले की बात मालूम होती है। जहाँ तक विभिन्न विषयों को परस्पर सम्बद्ध करके पढ़ाने का सम्बन्ध है, वह आसान भी है और व्यावहारिक भी। इस तरफ़ विशेष ध्यान देना चाहिए, ताकि बच्चों का बोझ कुछ हलका हो।

विषयों के बीच आपसी सम्बन्ध

- हर विषय के पाठों का क्रम ऐसा बनाया जाए कि वे एक-दूसरे से जुड़े हुए हों। हर अगला पाठ पढ़ाते समय पिछले पाठों से उनका सम्बन्ध ख़ूब अच्छी तरह से मिलाया जाए।
- विषयों का उपविभाजन हरगिज़ न किया जाए, बल्कि हर विषय के विभिन्न पाठों और उपविभागों को आपस में सम्बन्ध जोड़कर पढ़ाया जाए। व्याकरण, रचना, पत्र-लेखन, निबन्ध-लेखन, इमला, नक़ल, सुलेखन इत्यादि से सम्बन्धित अभ्यास भाषा के उसी पाठ से सम्बन्धित हों, जो पाठ्यपुस्तक में बच्चे पढ़ रहे हों। इसी तरह सामान्य विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, आर्ट क्राफ़्ट और गणित इत्यादि को भी और अधिक उपविभागों में न बांटें, बल्कि यथासम्भव इनमें से हर ग्रूप को एक ही विषय बनाकर पढ़ाएँ।
- हर पाठ का बच्चों की ज़िन्दगी, उनके वैचारिक और सामाजिक माहौल और उनके पिछले अनुभवों, अवलोकनों और प्रत्यक्षीकरण से सम्बन्ध अवश्य स्थापित किया जाए।
- दो विभिन्न विषयों के जो पाठ भी आपस में सम्बद्ध हो सकते हों, उन्हें सम्बद्ध करके पढ़ाएँ। उदाहरण के लिए, क्राफ़्ट में जो कुछ बनवा रहे हों, आर्ट में उसी की सजवाट करवाएँ। इस्लामियात (Islamic Studies) में जो पाठ दे रहे हों, भूगोल में भी उन्हीं को जोड़कर अरब के बारे में बताएँ और उर्दू में कोई नात पढ़वाएँ।

☆☆☆

अध्याय-32

शिक्षण-विधियाँ

(Teaching Methods)

सीखने की शुरुआत करनेवालों को नई जानकारियाँ मुहैया कराने के दो तरीक़े हो सकते हैं–

- पहला यह कि हम छात्रों को कोई नियम-उपनियम या सिद्धान्त इत्यादि खुद बताएँ और छात्रों से यह उम्मीद रखें कि वे हमारे ज्ञान पर भरोसा करके उसे क़बूल कर लेंगे। हाँ, और ज़्यादा संतुष्टि के लिए प्रमाण के रूप में निर्धारित उदाहरण भी दे दें, ताकि उनकी बुनियाद पर वे इस नियम या सिद्धान्त की वास्तविकता को परख सकें।
- दूसरा यह कि हम छात्रों को अनुभव, निरीक्षण और पढ़ने-लिखने के मौक़े मुहैया करें, ताकि वे खुद घटनाओं और वास्तविकताओं से परिचित हों और फिर उनका विश्लेषण करके किसी ख़ास नतीजे पर पहुँचें।

पहली स्थिति में वास्तविकता तक छात्र अप्रत्यक्ष रूप से पहुँचते हैं, दूसरी स्थिति में प्रत्यक्ष रूप से। दोनों तरीक़े बहरहाल अपना-अपना मक़ाम रखते हैं और शिक्षक को पढ़ाने-लिखाने में इन दोनों से काम लेना पड़ता है। लेकिन चूँकि पहली स्थिति में छात्रों को वास्तविकता तक पहुँचने के लिए किसी ख़ास मेहनत की ज़रूरत नहीं पड़ती। वे निष्क्रिय श्रोता होते हैं और उनकी हैसियत गौण होती है और उनका ज्ञान दूसरों द्वारा दिया गया होता है और मुफ़्त हाथ आता है। इसलिए आम तौर पर एक कान से सुना और दूसरे से उड़ा दिया जाता है। इसके विपरीत दूसरी

स्थिति में उन्हें व्यावहारिक दिलचस्पी लेनी और वास्तविकता तक पहुँचने के लिए काफ़ी मेहनत करनी पड़ती है। इसलिए उनकी हैसियत सक्रिय व्यक्तियों की होती और शिक्षण में उनके इरादों और कोशिशों को ग़ैर-मामूली दख़ल होता है। इस तरह वे जो नियम और सिद्धान्त विधिवत् रूप से ग्रहण करते हैं, वे उनके पसीने की कमाई होती है, जिसे वे बहरहाल अच्छी तरह दिमाग़ में सुरक्षित रखते हैं। शिक्षण की यह दूसरी विधि बच्चों के लिए ज़्यादा फ़ायदेमन्द होती है।

निगमन शिक्षण-विधि (Deductive Teaching Method)

शिक्षण का वह तरीक़ा जिसके कारण छात्र विभिन्न घटनाओं, तथ्यों या उदाहरणों का विश्लेषण करके सीधे तौर पर किसी नतीजे पर पहुँचते और कोई नियम या सिद्धान्त ग्रहण करते हैं, निगमन शिक्षण-विधि कहलाती है। उदाहरण के लिए दादी अम्मा मर गईं, नाना जी चल बसे, कल हामिद मर गया, आज महमूदा चल बसीं, लोग मरते रहते हैं, मनुष्य मरणशील और नाशवान है।

इस विधि में शिक्षक एक विशेष क्रम से छात्रों को विशिष्ट घटनाओं और मिसालों के अनुभव, अवलोकन, प्रत्यक्षीकरण और अध्ययन का अवसर उपलब्ध करता है। शिक्षक के मार्गदर्शन में छात्र उन उदाहरणों का विश्लेषण और आपस में तुलना करके उनके बीच समानता या असमानता तलाश करते हैं और इस तरह किसी तथ्य तक पहुँचते या कोई सामान्य नियम, उपनियम या सिद्धान्त ग्रहण करते हैं। उदाहरण के लिए, छात्र 3 को 5 बार जोड़ते (3+3+3+3+3=15) और 3 का 5 बार पहाड़ा (3×5=15) पढ़ते हैं, तो दोनों स्थितियों में 15 उत्तर आता है। यही प्रक्रिया कई संख्याओं पर करते हैं। 8 को 4 बार जोड़ते (8+8+8+8=32) या 8 का पहाड़ा 4 बार (8×4=32) पढ़ते हैं, तो दोनों स्थितियों में उत्तर 32 आता है, इत्यादि। इस तरह के विभिन्न

उदाहरणों से इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि–

'जोड़ का आसान तरीक़ा गुणा है।'

- या कई त्रिभुजों के तीनों कोणों को काटकर क्रमशः पास-पास रखते हैं– △

  या इनको नापकर जोड़ते हैं △ तो पता चलता है कि हर बार योगफल-180 डिग्री (दो समकोण) होता है। अब वे यह नियम ग्रहण करते हैं–

  "त्रिभुज के तीनों कोणों का योगफल दो समकोण (180 डिग्री) के बराबर होता है।"

- इसी तरह धातु का एक गोला लेते हैं, जो एक घेरा या छेद से आसानी से गुज़र जाता है। उसे गरम करते हैं। अब वह नहीं गुज़रता। यही क्रिया विभिन्न धातुओं के गोलों पर करते हैं। हर बार प्राप्त परिणाम एक ही होता है। आख़िर वे इस नतीजे पर पहुँचते हैं–

  "चीज़ें गरमी पाकर फैलती हैं।"

लेकिन जब वे गोले ठंडे हो जाते हैं, तो फिर घेरे से आसानी से गुज़र जाते हैं। इससे नतीजा यह निकलता है कि–

"चीज़ें ठंड पाकर सिकुड़ती हैं।"

इस विधि के गुण

- ज्ञान प्राप्त करने की यह उपयुक्त और तर्कसंगत विधि है। शिक्षक विशिष्ट उदाहरण या घटनाएँ विशेष क्रम से पेश कर देता है। छात्र उनका विश्लेषण करके नतीजा निकाल लेते हैं।
- छात्र पाठ में व्यावहारिक दिलचस्पी लेते और तन-मन से आकृष्ट और लगे रहते हैं।

छात्र को सोच-विचार, तर्क-वितर्क करने और फ़ैसला करने का पूरा मौक़ा मिलता है।

खुद करके सीखने के सारे लाभ प्राप्त होते हैं। ज्ञान की दृढ़ता, ज्ञान को व्यवहार में लाने की विधि, सफलता की खुशी, समस्याओं से खुद निपटने की योग्यता, प्राकृतिक अपेक्षाओं और स्वाभाविक इच्छाओं की पूर्ति इत्यादि होती हैं।

अपने कठिन और अथक प्रयास से वास्तविकता तक पहुँचने का उन्हें तरीक़ा आता है और प्रतिदिन घटनेवाली घटनाओं से नियम या सिद्धान्त ग्रहण करने की तरफ़ ध्यान होता और धीरे-धीरे योग्यता पैदा हो जाती है।

छात्रों के अन्दर आत्मविश्वास पैदा होता है और वे शिक्षक पर बहुत ज़्यादा निर्भर रहने के आदी नहीं बनते।

खोज और तलाश करने की योग्यता उभरती है।

मानव-जाति ने पूरी जानकारियाँ इसी तरह प्राप्त की हैं। खुद देखा-परखा और प्रयोग से अनुभव प्राप्त किया है। हर बार कुछ खोया, कुछ पाया है। इसलिए ज्ञान के प्राप्त करने की यहीं स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक विधि है।

दोष

इस तरीक़े को अपनाने में कुछ हानियों की भी आशंकाएँ होती हैं। छात्रों को इनसे बचाए रखने की कोशिश करनी चाहिए। उदाहरण के लिए—

कभी-कभी मारे खुशी के जल्दबाज़ी में छात्र ग़लत नतीजे निकाल लेते हैं। विभिन्न पहलू उनके सामने नहीं आ पाते।

कुछ ख़ास घटनाओं या मिसालों से वे कोई नियम बना लेते हैं। हालाँकि दूसरी बहुत-सी मिसालों पर वह नियम या सिद्धान्त लागू

नहीं होता।

उदाहरण के लिए, बच्चा देखता है कि जो लोग अच्छे कपड़े पहनकर आते हैं या खाते-पीते लोग होते हैं, उनकी ज़्यादा आवभगत होती है। अपने इन सीमित निरीक्षणों और अवलोकनों के आधार पर बच्चा यह नतीजा निकाल लेता है कि दौलत और शान-शौकतवाले कपड़े मान-सम्मान का आधार हैं। हालाँकि सूद खानेवालों, घूस लेनेवालों और हराम साधनों से दौलत समेटनेवालों या फ़ैशनेबल जेबकतरों को कोई इज़्ज़त की निगाह से नहीं देखता। इसलिए छात्रों को जल्दबाज़ी से रोकना चाहिए और हिदायत के साथ मौक़ा भी उपलब्ध करना चाहिए कि वे जो नतीजा निकालें या नियम बनाएँ, उसको दूसरी मिसालों और घटनाओं पर लागू करके उसकी विशुद्धता की अच्छी तरह जाँच कर लिया करें। जल्दबाज़ी में सिर्फ़ कुछ मिसालों पर विश्वास करके नियम न बनाया करें।

आगमन शिक्षण-विधि (Inductive Teaching Method)

यह शिक्षण-विधि निगमन शिक्षण-विधि की उलट है। इसमें शिक्षक खुद छात्रों को कोई सामान्य सिद्धान्त, नियम या उपनियम बता देता है। फिर विशेष उदाहरणों से उसका स्पष्टीकरण कर देता है। छात्र शिक्षक के भरोसे उसे स्वीकार कर लेते हैं। और ज़्यादा पुष्टि के लिए बाद में वे कुछ और मिसालों पर इस नियम को लागू करने का मौक़ा देता है। उदाहरण के लिए, व्याकरण में शिक्षक ने संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, क्रिया विशेषण या विशेषण की परिभाषा बता दी। मिसालों से स्पष्ट कर दिया। छात्रों ने शिक्षक के ज्ञान पर भरोसा करके उन्हें मान लिया। एक पैराग्राफ़ देकर छात्रों से कहा गया कि वे इसमें से संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण इत्यादि की निशानदेही करें। अगर छात्र ठीक निशानदेही कर देते हैं, तो पाठ सफल है। इसी तरह गणित में कोई गुर या नियम बताकर मिसालों से स्पष्ट कर दिया गया। अब छात्र इसी नियम को इस्तेमाल करके और

अधिक प्रश्न हल करते हैं। उदाहरण के लिए, गुणा करना हो तो पहाड़े पढ़ें। घटाव में ऊपर की इकाई का अंक कम हो तो दहाई से उधार लें, इत्यादि। छात्र अगर इन्हें इस्तेमाल कर ले जाते हैं, तो शिक्षण सफल माना जाता है।

दोष

इस विधि में बहुत-सी कमियाँ हैं। उदाहरण के लिए—

- छात्रों की हैसियत निष्क्रिय श्रोता की होती है। इसलिए वे पाठ में व्यावहारिक दिलचस्पी नहीं लेते।
- वास्तविकता तक चूँकि सीधे-सीधे अपनी अनथक मेहनत और कोशिश से छात्रों की पहुँच नहीं होती, इसलिए उनका ज्ञान पक्का और विश्वसनीय नहीं होता। उसे आवश्यकता के समय व्यवहार में लाने और बरतने की योग्यता भी छात्रों में पैदा नहीं होती।
- शिक्षण-कार्यों का अधिकतर हिस्सा नियमों, उपनियमों और सिद्धान्तों के रटने तक सीमित होकर रह जाता है, जो देर तक सुरक्षित भी नहीं रहता, क्योंकि यह उनका अपना कमाया हुआ नहीं होता।
- यह तरीक़ा बच्चों को 'खुद करके सीखने' और उसके संयुक्त लाभों से वंचित कर देता है।
- ज्ञान प्राप्त करने की यह स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक विधि नहीं है। लोग ज़िन्दगी में ठोस सच्चाइयों से दो-चार होते हैं, अमूर्त विचारों से नहीं। अमूर्त निष्कर्ष या विचार तो उन ठोस सच्चाइयों के आधार पर ग्रहण किए जाते हैं।

गुण

इस विधि में कुछ गुण भी हैं। उदाहरण के लिए—

- बड़े अपने ज्ञान और अनुभवों को, जो वे बड़ी मेहनत से और बहुत

कुछ खोकर प्राप्त करते हैं, थोड़े ही समय में बच्चों को दे देते हैं। इसलिए बच्चों का समय उन चीज़ों को ख़ुद करके सीखने पर बरबाद नहीं होता, जिनपर बड़े अपना बहुत-सा समय, शक्ति और पैसा ख़र्च कर चुके हैं।

- शिक्षक का काम बहुत हलका हो जाता है। वह एक नियम या सिद्धान्त बता देता है। छात्र उसे याद करके उसकी मदद से विभिन्न समस्याओं को हल करते रहते हैं।
- सारी चीज़ें ख़ुद करके सीखी नहीं जा सकतीं। न किसी के पास इतना समय है, न शक्ति। इसलिए मजबूरन इसी विधि (Method) से प्राप्त की जा सकती हैं।

बहरहाल, छोटे बच्चों को पढ़ाने-लिखाने में आगमन शिक्षण-विधि अधिक लाभदायक और प्रभावकारी है। यथासम्भव इसी विधि को इस्तेमाल करना चाहिए। यह अलग बात है कि कोई मजबूरी हो। उदाहरण के लिए, समय कम हो, स्वयं प्रयोग और प्रत्यक्षीकरण में विभिन्न तरह की हानियों की आशंका हो या ऐसा करना किसी तरह ठीक और उचित न मालूम होता हो।

हाँ, बड़े छात्रों के विचार चूँकि अपेक्षाकृत स्पष्ट होते हैं, उनके अन्दर तर्क-वितर्क की शक्ति भी किसी हद तक मज़बूत होती है, इसलिए उन्हें आगमन शिक्षण-विधि से कम समय में ज़्यादा जानकारियाँ उपलब्ध कराई जा सकती हैं और उनके लिए यह विधि अधिक लाभदायक है। लेकिन अभ्यास और पुनरावृति का बहरहाल उन्हें पर्याप्त समय मिलना चाहिए; नहीं तो इस तरह हासिल किया हुआ ज्ञान वे अधिक दिनों तक सुरक्षित न रख सकेंगे और इसके बरतने में भी तरह-तरह की व्यावहारिक कठिनाइयाँ पेश आएँगी।

तुलना

निगमन-विधि (Deductive Method)	आगमन-विधि (Inductive Method)
1. विशिष्ट घटनाओं और किसी ख़ास उदाहरणों पर पहले विचार किया जाता है और उनसे परिभाषाएँ, नियम और सिद्धान्त निकाले जाते हैं। इस विधि में विशेष से सामान्य की तरफ़ तथा स्थूल से सूक्ष्म की तरफ़ अग्रसर होते हैं।	1. परिभाषाएँ, नियम और सिद्धान्त पहले बता दिए जाते हैं। फिर विशिष्ट घटनाओं या एकाकी उदाहरणों पर उन्हें लागू किया जाता है। इस विधि में सामान्य से विशेष की तरफ़ तथा सूक्ष्म से स्थूल की तरफ़ अग्रसर होते हैं।
2. इससे नई जानकारियाँ प्राप्त होती हैं।	2. इससे पिछली जानकारियाँ मज़बूत होती हैं।
3. यह आविष्कार और शोध की तरफ़ मार्गदर्शन करता है।	3. इससे दूसरों की जानकारियाँ बढ़ती होती हैं।
4. यह बहुत सुस्त चाल की विधि है; क्योंकि बच्चे ख़ुद धीरे-धीरे प्रयोग और प्रत्यक्षीकरण करके किसी परिणाम पर पहुँचते हैं।	4. इस तरीक़े से काम की गति तेज़ होती है; क्योंकि बच्चे को ख़ुद अनुभव और प्रयोग या प्रत्यक्षीकरण करना नहीं पड़ता; बल्कि बड़ों के ज्ञान और अनुभव से काम चल जाता है।
5. विभिन्न बौद्धिक योग्यताओं और क्षमताओं, जैसे सोच-विचार, तर्क-वितर्क, निर्णय-शक्ति इत्यादि का प्रशिक्षण होता है।	5. अधिकतर स्मरण-शक्ति से काम लेना पड़ता है। दिमाग़ की दूसरी शक्तियों को काम में लाने का कम ही अवसर मिलता है।
6. बच्चों में आमविश्वास पैदा होता है।	6. शिक्षकों पर निर्भर रहने की आदत पड़ती है।

7. इसमें विचारों का रुख़ बुलन्दी की तरफ़ होता है और विशिष्ट घटनाओं से नियम ग्रहण की चिन्ता होती है।	7. विचारों का रुख़ पस्ती की तरफ़ होता है और पूर्ण से विशेष घटनाओं की तरफ़ आना पड़ता है।
8. ख़ुद करके सीखने का मौक़ा मिलता है। इसलिए ज्ञान पक्का और उपयोगी और ज़रूरत के मुताबिक़ बरता जा सकता है।	8. दूसरों के बताने पर भरोसा करना पड़ता है। इसलिए इस ज्ञान पर पूरा यक़ीन भी नहीं जमता और इस्तेमाल में लाने का तरीक़ा भी नहीं आता।
9. इससे प्रशिक्षण अधिक और जानकारियाँ कम होती हैं।	9. इससे जानकारियाँ अधिक और प्रशिक्षण कम होता है।
10. यह विधि बच्चों के लिए उपयुक्त है।	10. यह विधि बड़ों के लिए उपयुक्त है।

शोध-विधि (Research Method)

"आग जला देती है" यह एक सामान्य सच्चाई है, जिसका ज्ञान हमें प्रत्यक्षीकरण और अनुभव से बचपन में ही हो जाता है। अगर एक नन्हें बच्चे से कहा जाए कि 'बेटा! आग जला दिया करती है। इसमें हाथ मत डालना, नहीं तो जल जाओगे और बहुत तकलीफ़ होगी', तो हो सकता हम पर भरोसे के कारण वह इस सच्चाई को मान ले और किसी हद तक आग से बचने लगे, मगर यक़ीन उस समय होगा जब वह देख ले कि अम्मा खाना पकाने में जल गईं और उन्हें बहुत तकलीफ़ हुई और पक्का यक़ीन तो उसी समय हो सकता है, जब वह जलने के कटु अनुभव से ख़ुद दो-चार हो जाए। फिर तो दूध का जला मट्ठा भी फूँक-फूककर पिएगा।

बच्चों की यह फ़ितरत होती है कि वे दूसरों के बताए पर कम ही विश्वास करते हैं। वे ख़ुद प्रत्यक्षीकरण और अनुभव करके किसी नतीजे पर पहुँचना चाहते हैं और इसी स्थिति में उनका ज्ञान पक्का और यक़ीन पूरा होता है। इसी लिए शिक्षण में इस बात पर ज़ोर दिया जाता है कि बच्चों को सब कुछ ख़ुद बताने के बजाय उन्हें करके सीखने और अपनी अथक मेहनत से वास्तविकता तक पहुँचने के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े दिए जाएँ। शोध-शिक्षण-विधि भी असल में इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए बनाई गई है। इससे छात्रों में शोध और खोज की अभिरुचि पलती-बढ़ती है और इस तरह जो ज्ञान प्राप्त करते हैं, वह पक्का होता है।

इस विधि में बच्चे की हैसियत एक शोधार्थी या खोज करनेवाले की होती है और शिक्षक एक सलाहकार, सहयोगी और मार्गदर्शक की भूमिका निभाता है। छात्रों की जिज्ञासा को जगाकर करके और ज़रूरी चीज़ें मुहैया करा कर उन्हें ज़्यादा से ज़्यादा आज़ादी दे दी जाती है कि वे अपने तौर पर सच्चाइयों का पता लगाएँ। इस तरह शिक्षक उनकी जिज्ञासा को जगाता और ज़रूरी मदद करता रहता है। उपयुक्त प्रश्नों और संकेतों के द्वारा और कभी-कभी सीधे-सीधे कुछ बतलाकर वास्तविकता तक पहुँचने में छात्रों का पूरा मार्गदर्शन करता रहता है। इस तरह बच्चे शिक्षक की मदद से तथ्यों और सच्चाइयों का ख़ुद पता लगाते हैं। विज्ञान, गणित और स्थानीय भूगोल पढ़ाने में इस विधि (Method) से बहुत काम लिया जा सकता है।

गुण

इस शिक्षण-विधि में बहुत-से गुण हैं—

- छात्रों को चूँकि ख़ुद अनुभव और अवलोकन का मौक़ा मिलता है, इसलिए वे पाठ में व्यावहारिक रूप से दिलचस्पी लेते हैं।

- इस तरीक़े से हासिल किया हुआ ज्ञान पक्का होता है और ज़िन्दगी भर नहीं भूलता। ऐसे ज्ञान पर पूरा यक़ीन और भरोसा भी होता है और ज़रूरत पर ठीक-ठीक बरता भी जा सकता है।
- इससे छात्रों में शोध और खोज का शौक़ पैदा होता है। वे अपनी मदद आप करना सीखते हैं और स्कूल/मदरसे के अतिरिक्त समय में भी नई-नई बातों का अध्ययन, अवलोकन और अनुभव करते रहते हैं।
- करके सीखने और अपनी कोशिशों में कामयाब होने से जो ख़ुशी होती है, वह ज़्यादा जी-तोड़ मेहनत और प्रयास के लिए प्रेरक का काम देती है।
- इससे सोच-विचार की क्षमता, तर्क-शक्ति और निर्णय-शक्ति का विकास होता है।

लेकिन इस तरीक़े को इस्तेमाल करने का हरगिज़ यह मतलब नहीं कि बच्चों को अपनी तरफ़ से कुछ बताया ही न जाए, बल्कि सब कुछ उन्हें अपने तौर पर अनुभव और अवलोकन करके सीखने दिया जाए; जैसा कि कुछ अतिवादी कहते हैं। यह तो बहुत ही अनुचित और मूर्खतापूर्ण बात होगी कि बच्चों को वे सारी ग़लतियाँ दोहराने दी जाएँ, जिन्हें करके पिछले समय में लोग बहुत ही ख़राब नतीजे भुगत चुके हैं। इस तरह वे अतीत के अनुभवों से वंचित हो जाएँगे और पिछले ज्ञान और कला-कौशलों से उनका रिश्ता कट जाएगा और वे सारी ज़िन्दगी इन मामूली, न मिलनेवाले या ख़तरनाक तथ्यों ही के प्रयोग, अनुभव और प्रत्यक्षीकरण में बरबाद कर देंगे, जिनके बारे में वे आसानी से बहुत ही थोड़ी अवधि में जानकारियाँ हासिल कर सकते हैं। इसका मतलब सिर्फ़ यह है कि बच्चों को सब कुछ अपनी तरफ़ से न बता दिया जाए, बल्कि यथासम्भव उन्हें ख़ुद करके सीखने के मौक़े दिए जाएँ। हाँ, जहाँ काम बिगड़ते या समय बरबाद होते देखें, वहाँ ज़रूर मार्गदर्शन करें और ऐसे

अनुभवों, प्रयोगों और प्रत्यक्षीकरण में कुछ ज़्यादा ढील दिया करें, जिनसे किसी ध्यान देने योग्य हानि की आशंका न हो।

किंडर गार्टेन शिक्षण-विधि

'किंडर गार्टेन' का मतलब है 'बच्चों का बाग़' यानी वह बाग़ जिसमें बच्चों का विकास होता है। यह वास्तव में नन्हें बच्चों के (तीन-चार साल से छह-सात साल तक की उम्र के) उन स्कूलों का आदर्शवादी और सुधारपरक नाम है, जो जर्मन शिक्षाविद् फ्रोबेल के बताए हुए प्रारूप के मुताबिक़ चलाए जाते हैं। इन स्कूलों में बच्चे की हैसियत पौधे की और शिक्षक की हैसियत माली की होती है। शिक्षक का यह काम होता है कि इन बच्चों को अपना विकास करने के लिए माली की तरह उपयुक्त परिस्थितियाँ पैदा कर दे और ज़रूरी सामान मुहैया करके उन पौधों को अपनी आन्तरिक प्रेरणा से परवान चढ़ने का मौक़ा दे।

इस शिक्षण-विधि का जन्मदाता फ्रोबेल 1783 ई. में पैदा हुआ। सौतेली माँ के बुरे बरताव की वजह से वह घर से निकल जाता और जंगलों में मारा-मारा फिरता। प्राथमिक शिक्षा की कोई ख़ास व्यवस्था न हो सकी। बाद में उसने अपनी मेहनत से शिक्षण-विधि में महारत प्राप्त की। 1837 ई. में उसने छोटे बच्चों के लिए 'किंडर गार्टेन' नाम का एक स्कूल खोला। छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा को प्रभावी और उपयोगी बनाने के सन्दर्भ में उसका यह काम एक क्रान्तिकारी क़दम था। इससे पहले छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा की आधी-अधूरी व्यवस्था पर कुढ़नेवाले तो बहुत-से हुए, लेकिन एक सोचे-समझे प्लान के तहत अमली क़दम उसी ने उठाया। 1852 ई. में उसकी मृत्यु हुई। वह ख़ुदा के वुजूद को माननेवाला और धर्म-विधान का प्रेमी था। उसके नज़दीक शिक्षा का उद्देश्य—

"खरी, निश्छल, बेऐब और पाक-साफ़ ज़िन्दगी बसर करने के क़ाबिल बनाना है।"

और चूँकि यह मक़सद पाकीज़ा मज़हबी ज़िन्दगी ही से हासिल हो सकता है, इसलिए वह शिक्षा की बुनियाद मज़हब या धर्म पर रखना ज़रूरी समझता है। उसके नज़दीक शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि लोग अपने आपको पहचान सकें और उनके अन्दर 'अनेकता में एकता' की भावना उभरे। उसके पेश किए हुए सिद्धान्त ये हैं–

- सामूहिक संस्थाओं के ही द्वारा व्यक्तित्व का समुचित विकास हो सकता है। इसलिए बचपन से ही बच्चों के अन्दर मिल-जुलकर ज़िन्दगी गुज़ारने की ज़रूरत की भावना जगाना और प्रशिक्षण के द्वारा अच्छे आचरण और सामूहिक गुण पैदा करना चाहिए।
- जिस तरह बीज में पेड़ बनने की पूरी क्षमता मौजूद होती है, सिर्फ़ अनुकूल परिस्थितियाँ और ज़रूरी सहायता मिलनी चाहिए। इसी तरह बच्चे में भी परवान चढ़ने की पूरी क्षमता मौजूद होती है। इसलिए उसके अन्दर की क्षमता को उजागर करने और उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं (मानसिक, शारीरिक, व्यावहारिक, नैतिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक) को सर्वांगपूर्ण रूप में परवान चढ़ने में मदद करनी चाहिए। वह अपनी आन्तरिक प्रेरणा से खुद फलेगा-फूलेगा।
- शिक्षा का सबसे प्रभावी माध्यम बच्चों का खुद काम करना है। वे खुद करके ज़्यादा बेहतर रूप से सीख सकते हैं। इसलिए उनकी नैसर्गिक और सहज-स्वाभाविक क्रियाओं, सक्रियताओं, गतिविधियों और व्यस्तताओं के द्वारा उन्हें शिक्षा देनी चाहिए।
- बच्चों के विकास के लिए खेल अनिवार्य है। इसलिए खेल-खेल में शिक्षा देनी चाहिए।
- स्कूल का वातावरण ऐसा होना चाहिए कि बच्चे आज़ादी और खुशी महसूस करें और विभिन्न माध्यमों (उदाहरण के लिए, शैक्षिक गतिविधियों, गीतों और नक़ल के खेलों) से अपने विचारों

और भावनाओं का खुलकर प्रदर्शन कर सकें। बाहरी दबाव बिलकुल नहीं होना चाहिए, बल्कि धीरे-धीरे खुद लगन और निरन्तरता पैदा करने की कोशिश होनी चाहिए।

- शिक्षा बच्चे की प्रकृति और ज़रूरत का ध्यान रखकर दी जानी चाहिए और इस सन्दर्भ में बच्चे की हार्दिक मदद हासिल करनी चाहिए।

निर्धारित पाठ्यक्रम और शिक्षण-विधि आदि

छोटे बच्चों के लिए लिखने-पढ़ने या गणित इत्यादि का कोई विधिवत् पाठ्यक्रम तो प्रस्तावित नहीं किया जा सकता; क्योंकि छह साल की उम्र से पहले बच्चा मानसिक और शारीरिक रूप से इस लायक़ होता ही नहीं कि विधिवत् पढ़ाई-लिखाई का बोझ उठा सके। इसलिए फ्रोबेल ने छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा के लिए सात उपहार और बीस गतिविधियाँ प्रस्तावित की हैं। ये सब खेल-खिलौने हैं, जिनको बच्चे अपने तौर पर इस्तेमाल करते हैं। उपहार तो बच्चों के मानसिक प्रशिक्षण में मदद देते हैं और गतिविधियाँ विभिन्न तरह की महारतें और कुशलताएँ प्राप्त करने में मददगार होती हैं।

- **पहला उपहार :** विभिन्न रंगों की छह लकड़ियों या ऊन के गेन्दों पर आधारित होता है, जिन्हें बच्चे मनचाहे ढंग से लुढ़काते और उनके द्वारा रंग, आकृति, आकार, हरकत, सख़्ती, नरमी इत्यादि का ज्ञान प्राप्त करते हैं।
- **दूसरा उपहार :** गोल, घन और बेलन की शक्ल की लकड़ी के खिलौनों पर आधारित होता है, जिनसे विभिन्न रंग-रूप की चीज़ों के बीच अन्तर और समानता का अन्दाज़ा होता है।
- **तीसरा उपहार :** लकड़ी का एक बड़ा घन होता है, जिसके आठ टुकड़े होते हैं। इन टुकड़ों को क्रम से सजाकर बच्चे मेज़, चौकी,

बेंच, सीढ़ी इत्यादि बनाते हैं। इनके द्वारा गिनती गिनने और जोड़ने-घटाने की भी आरम्भिक संकल्पना पैदा होती है।

- **चौथा उपहार :** बच्चों की रचनात्मक क्षमताएँ उभारने के लिए आठ चौकोर टुकड़ों पर आधारित एक घन होता है। तीसरे उपहार के अंगों से उसकी तुलना कराई जाती है और उनको सजाकर बहुत-सी चीज़ें बनवाई जाती हैं और डिज़ाइनें तैयार कराई जाती हैं।
- **पाँचवाँ उपहार :** 27 छोटे घनों पर आधारित होता है। उनको सजाने से तरह-तरह की डिज़ाइनें और इमारतें बनती हैं। तीसरे उपहार के टुकड़ों से उसके अंग मिलते-जुलते हैं। यह अपेक्षाकृत पेचीदा होता है और छोटे बच्चों को नहीं दिया जाता।
- **छठा उपहार :** इसमें 18 बड़े, 9 छोटे चौकोर टुकड़े होते हैं। चौथे तोहफ़े के टुकड़ों से इनकी तुलना की जाती है और इनको क्रमबद्ध ढंग से सजाकर गुड़िए का घर, स्कूल/मदरसे, खेत इत्यादि बनाए जाते और तरह-तरह की डिज़ाइनें तैयार की जाती हैं।
- **सातवाँ उपहार :** ऊपर के छह उपहार ठोस पदार्थों के बारे में संकल्पना बनाने के लिए होते हैं। सातवाँ उपहार दो ऐसे छोटे सन्दूक़ों पर आधारित होता है, जिनमें ज्यामिति की आकृतियों के बहुत-से टुकड़े भरे होते हैं। उनकी मदद से ज्यामिति की आकृतियाँ पहचानी जाती हैं।
- इनके अलावा तार के छल्ले, डोर, पेंसिलें, रंगीन काग़ज़, दफ़्ती के टुकड़े, चॉक, झुनझुने और दूसरे बहुत-से खिलौने होते हैं।
- फ्रोबेल के नज़दीक शिक्षक की नज़र के सामने बच्चों के लिए निम्नलिखित विषय और गतिविधियाँ होनी चाहिएँ—

1. धर्म और धार्मिक ट्रेनिंग (Training)।
2. **प्रकृति का अध्ययन :** बाग़बानी के द्वारा और जानवर पालकर।

3. **गिनती गिनना :** मूल वस्तु की मदद से और शुरुआती जोड़ और घटाव की संकल्पना।

4. **भाषा सिखाना :** क़िस्से-कहानियों और गीतों, कविताओं इत्यादि की मदद से।

5. **हस्त-कला :** रचनात्मक योग्यताएँ उभारने के लिए विभिन्न तरह के अभ्यास।

6. **शारीरिक प्रशिक्षण :** खेल और सन्तुलित गतिविधियों के द्वारा शारीरिक प्रशिक्षण।

- **रोचक शिक्षण-विधि :** शिक्षण-विधि ऐसी अपनानी चाहिए कि बच्चे खेल-खेल में और क़िस्से-कहानियों, गीतों, कविताओं इत्यादि की मदद से बहुत कुछ सीख लें। पढ़ाने-लिखाने के पारम्परिक तरीक़े इस उम्र में हरगिज़ न इस्तेमाल किए जाएँ।

गुण

- इस तरीक़े से छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा का काम बहुत ही दिलचस्प, प्रभावकारी और लाभदायक बन जाता है। फ्रोबेल पहला व्यक्ति है, जिसने छोटे बच्चों की शिक्षा की तरफ़ विशेष ध्यान दिलाया और प्रभावकारी शिक्षा का दिलचस्प अमली ख़ाका (प्रारूप) पेश किया।
- स्कूल/मदरसे का वातावरण घर जैसा होता है। इसलिए बच्चे अजनबीपन महसूस नहीं करते। ख़ुशी-ख़ुशी स्कूल/मदरसे जाते और दिन गुज़ारते हैं। उनके अन्दर सहयोग, सहानुभूति और ज़िम्मेदारी की पहचान इत्यादि जैसी सामूहिक ख़ूबियाँ परवान चढ़ाने में मदद मिलती है।
- बच्चों को ख़ुद करके सीखने और व्यावहारिक प्रशिक्षण हासिल करने के बहुत ज़्यादा मौक़े मिलते हैं।

बिना बोझ महसूस किए हुए खेल-खेल में बच्चे पूरी दिलचस्पी, ध्यान और लगन से बहुत-सी बातें सीख लेते हैं।

नक़ल (अनुकरण) के खेलों के द्वारा वे रोज़मर्रा ज़िन्दगी के तरह-तरह के काम, तौर-तरीक़े, आदाब, सलीक़े इत्यादि से व्यावहारिक रूप से अवगत हो जाते हैं।

उपहारों, खेलों, दिलचस्प गतिविधियों और क्रिया-कलापों की मदद से यह विधि बच्चों के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं के अनुरूप सिद्ध होती है।

दोष

इस तरीक़े में जहाँ बहुत-से गुण हैं, वहीं कुछ दोष भी हैं। उदाहरण के लिए—

शिक्षा के ख़र्च बहुत बढ़ जाते हैं, इसलिए सिर्फ़ धनी लोगों ही के बच्चे लाभ उठा सकते हैं।

छोटे बच्चों को खेल में जो आज़ादी मिलनी चाहिए, खेलों में भी शिक्षा का उद्देश्य हावी होने की वजह से वह हासिल नहीं होती।

छोटे बच्चों को खेल-खेल में शिक्षा देने की बहरहाल बड़ी अहमियत है और बहुत-सी बातें इसी तरह सिखानी चाहिएँ, लेकिन स्कूल/मदरसे पर हर समय खेल के मैदान की-सी स्थिति पैदा कर देना भी ठीक नहीं।

इससे तो शिक्षा-दीक्षा का बुनियादी मक़सद ही मारा जाता है। खेल तो वे बहरहाल हर जगह खेल सकते हैं। फिर स्कूल/मदरसे की क्या ज़रूरत?

सामूहिकता पर इतना ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है कि बच्चों की निजी ज़िन्दगी प्रभावित होने लगती है।

छोटे बच्चों में इतना ज़्यादा सामूहिक भावना पैदा कराना समय से पहले और उनके आज़ादी को पसन्द करनेवाले मन पर एक तरह का ज़ुल्म है।

- खेलों और उपहारों की मदद से बेशक बहुत-सी बातें सिखाई जा सकती हैं। लेकिन जिन नैतिक और आध्यात्मिक ख़ूबियों को परवान चढ़ाने की फ्रोबेल उम्मीद रखता और वकालत करता है, वे काल्पनिक हैं और अच्छी उम्मीद (सदाशा) से ज़्यादा उनकी कोई हैसियत नहीं।

बहरहाल कुल मिलाकर फ्रोबेल ने छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में, खेल, रचनात्मक क्रिया-कलापों और उनकी नैसर्गिक अभिरुचियों का ध्यान रखने की तरफ़ विशेष ध्यान दिलाकर बच्चों की बड़ी सेवा की है। प्राथमिक कक्षाओं में इस तरफ़ पूरा ध्यान देना चाहिए।

मॉण्टेसरी शिक्षण-विधि

इस शिक्षण-विधि की जन्मदात्री इटली की एक महिला डॉ॰ मेरिया मॉण्टेसरी (Maria Montessory) है। वह 1870 ई॰ में पैदा हुई। डॉक्टरी पास करके एक अस्पताल में छोटे बच्चों का इलाज करने लगी। उसे विकलांग और असहाय बच्चों से ग़ैर-मामूली हमदर्दी थी। इसी हमदर्दी ने उससे तीन से सात साल की उम्र के बच्चों के लिए एक शिक्षा-स्कीम आविष्कार कराई। वह भी फ्रोबेल की तरह किताबी ज्ञान के बजाय खेलों के द्वारा शिक्षा देने की हामी थी। यह स्कीम वास्तव में किंडर गार्टेन ही का एक बदला हुआ रूप है। दोनों में नाममात्र का ही अन्तर है।

मॉण्टेसरी की स्कीम के मुताबिक़ हमारे देश में भी बहुत-से स्कूल चल रहे हैं। वह हमारे देश के दौरे पर भी आई थी। 1952 ई॰ में उसकी मृत्यु हो गई। यह स्कीम अब 12 साल तक फैला दी गई है।

बुनियादी सिद्धान्त

मॉण्टेसरी का शिक्षा-सिद्धान्त निम्नलिखित तथ्यों पर निर्भर है—

बच्चे को पूरी आज़ादी दी जाए। इसके बिना आन्तरिक योग्यताओं और गुणों का विकास सम्भव नहीं।

व्यक्तित्व के सभी पहलुओं की तरफ़ सामान्य रूप से और शारीरिक और ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण की तरफ़ विशेष रूप से ध्यान दिया जाए।

बच्चों को खुद करके सीखने के मौक़े दिए जाएँ।

ज्ञानेन्द्रियों की उपयुक्त ट्रेनिंग की जाए, ख़ासकर छोटे बच्चों की स्पर्श या संवेदन-शक्ति की; क्योंकि उम्र की शुरुआत में यही बुनियादी ज्ञानेन्द्री होती है। ज्ञानेन्द्रियाँ ही ज्ञान के माध्यम हैं और बाहरी दुनिया के बारे में जितनी जानकारियाँ भी हमारे दिमाग़ तक पहुँचती हैं, वे इन्हीं रास्तों से जाती हैं। इसलिए ज्ञानेन्द्रियों का जितना अच्छा प्रशिक्षण होगा, उतना ही स्पष्ट जानकारियाँ, मज़बूत और स्थायी ज्ञान होगा। अगर ज्ञानेनिन्द्रयाँ दोषपूर्ण हों, तो जानकारियाँ भी दोषपूर्ण ही हासिल होंगी।

बच्चों को अपनी मदद आप करने के लायक़ बनाया जाए। (मॉण्टेसरी स्कूलों में इसकी पूरी व्यवस्था की जाती है। बच्चे खुद सफ़ाई करते, हाथ-मुँह धोते, नहाते, अपना सामान क्रम से रखते, शिक्षण-सामग्री और कुर्सियाँ खुद उठाते-धरते, अपने कपड़े खुद बदल लेते और अपने कामों के लिए किसी के मुहताज नहीं रहते और ये सब काम किसी बाहरी दबाव से नहीं, बल्कि आज़ादी के वातावरण में कराए जाते हैं।)

बच्चों को शारीरिक दण्ड हरगिज़ न दिया जाए।

खेल-खेल में शिक्षा दी जाए।

- नैतिक प्रशिक्षण किया जाए, लेकिन इस बारे में सख़्ती हरगिज़ न बरती जाए, बल्कि ख़ुश-ख़ुश और आज़ाद रखकर आत्मसंयमी **(Self-Confident)** बनाने की कोशिश की जाए।

मॉण्टेसरी स्कूल भवन

स्कूल की इमारत आम तौर पर हवादार और ख़ुली जगहों पर साफ़-सुथरी और सजी-सजाई होती है। क़रीब ही छायादार पेड़ और सेहन में फूल-पौधे लगे होते हैं। कमरे और दीवारें सुन्दर रंगोंवाली तस्वीरों इत्यादि से सजी-सजाई रहती हैं। नहाने-धोने और खाने-पीने के लिए अलग-अलग कमरे होते हैं। बीच में एक बड़ा हाल होता है, जिसे विशेष रूप से सजाया जाता है। इसमें छोटी-छोटी कुर्सियाँ पड़ी होती हैं, जो इतनी हलकी होती हैं कि बच्चे ख़ुद उठाकर इधर-उधर ले जा सकते हैं। कमरों में छोटे-छोटे ब्लैकबोर्ड होते हैं, जिनपर बच्चे अपनी पसन्द की तस्वीरें बना सकते हैं।

अलमारियों पर इतनी ऊँचाई पर शिक्षण-सामग्री क्रम से लगाए जाते हैं कि बच्चे आसानी से वहाँ तक पहुँच सकते हैं। एक कमरा उनके मनोरंजन के लिए ख़ास होता है। उसे विशेष रूप से सजाया जाता है और बच्चों की दिलचस्पी के उसमें तरह-तरह के सामान रखे जाते हैं। वहाँ बच्चे आज़ादी से बातचीत कर सकते हैं, हँस-बोल और गा-बजा सकते हैं। आम तौर पर शिक्षिकाओं से काम लिया जाता है।

शिक्षिका वहीं आकर बच्चों को क़िस्से-कहानियाँ सुनाती और बच्चों का दिल बहलाती है। इस कमरे में सोफ़े और गद्देदार स्टूल भी होते हैं, जिनपर बच्चे आज़ादी से लेट-बैठ सकते हैं। खाने, सोने, खेलने इत्यादि के सिलसिले में हर तरह की आसानियाँ मुहैया कराई जाती हैं। बच्चे स्कूल/मदरसे को बिलकुल अपना घर समझते हैं।

शिक्षण-सामग्री और उपकरण

मॉण्टेसरी स्कूल में शिक्षण-सामग्री और उपकरण की बहुत ज़्यादा ज़रूरत पड़ती है। वहाँ लकड़ी के तरह-तरह के टुकड़े और खिलौने इस्तेमाल किए जाते हैं। सामान की एक संक्षिप्त सूची प्रस्तुत जाती है–

1. लकड़ी के तरह-तरह के रंगीन टुकड़े जो गोल, तिकोने, चौकोर, लम्बे चौकोर और बेलन की शक्ल के होते हैं।
2. विभिन्न भार की टिकियाँ।
3. कार्डों के सेट (जिनकी मदद से अक्षर, शब्द और गिनतियाँ वग़ैरह सिखाई जाती हैं।)
4. तरह-तरह की घंटियाँ इत्यादि।

इन उपकरणों और सामानों के द्वारा बच्चों की ज्ञानेन्द्रियों का प्रशिक्षण किया जाता है और उन्हें चिकने, खुर्दरे, मुलायम, कठोर, गर्म, सर्द, भारी, हलके इत्यादि का अनुभव कराया जाता है। विभिन्न रंगों और आकृतियों की पहचान कराई जाती है। तरह-तरह की आवाज़ों में फ़र्क़ करना सिखाया जाता है।

मॉण्टेसरी का ध्यान पहले लिखना-पढ़ना सिखाने की तरफ़ नहीं था, लेकिन बाद में ये चीज़ें भी शामिल कर ली गईं। इसलिए अब इस स्कीम में छोटे बच्चों को दिलचस्प अन्दाज़ और शिक्षा-सामग्री की मदद से पढ़ना-लिखना, बोलना और गिनना इत्यादि भी सिखाया जाता है। बाग़बानी और रोज़मर्रा के व्यावहारिक कामों के द्वारा व्यावहारिक प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

गुण

इस शिक्षण-विधि में बहुत-से गुण हैं–

- छात्रों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जाता है।
- छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा के लिए यह स्कीम प्रयोग और अनुभव

से लाभदायक और प्रभावी साबित हुई है।

ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण पर बहुत ज़्यादा ध्यान दिया जाता है।

शारीरिक, व्यावहारिक और नैतिक प्रशिक्षण का भी समुचित प्रबन्ध होता है।

बच्चे स्कूल/मदरसे में घर का-सा माहौल महसूस करते हैं और पूरी आज़ादी से दिन भर विभिन्न गतिविधियों में व्यस्त रहते हैं।

बच्चों में आत्मविश्वास पैदा होता है और वे शुरू ही से अपनी मदद आप करना सीखते हैं।

रचनात्मक योग्यताओं के विकास का समुचित प्रबन्ध होता है।

'खेल-खेल में शिक्षा' और 'करके सीखने' की बहुत-सी ख़ूबियाँ इसमें में भी पाई जाती हैं।

दोष

- यह शिक्षण-विधि बहुत ही महंगी और ज़्यादातर लोगों के लिए इसके ख़र्चे वहन करने के लायक़ नहीं हैं।

  बच्चों को खेल के वास्तविक आनन्द से किसी हद तक वंचित होना पड़ता है; क्योंकि शैक्षिक लक्ष्य सर्वोपरि होने के कारण खेल भी उनके लिए काम बन जाते हैं।

  बच्चों पर ज़िम्मेदारियों का बोझ समय से पहले लाद दिया जाता है।

  कल्पना-शक्ति के प्रशिक्षण की तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया जाता है।

  व्यक्तिगत विकास पर इतना ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है कि सामूहिक गुण उपेक्षित हो जाते हैं और बच्चों में आम तौर पर ख़ुदग़र्ज़ी पैदा होती है।

फिर भी छोटे बच्चों की शिक्षा को दिलचस्प, आसान और प्रभावी बनाने और उनकी ज्ञानेन्द्रियों का समुचित प्रशिक्षण करने के सन्दर्भ में मॉण्टेसरी की सेवा को नज़रअन्दाज़ नहीं किया जा सकता।

शिक्षण-प्रशिक्षण में शिक्षा-सामग्री और उपकरणों की ग़ैर-मामूली ज़रूरत का एहसास सबसे ज़्यादा उसी ने दिलाया और ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण की तरफ़ सबसे पहले उसी ने पूरे ज़ोरदार ढंग से ध्यान आकृष्ट किया।

किंडर गार्टेन और मॉण्टेसरी शिक्षण-विधि में तुलना

समानताएँ

(1) दोनों में छोटे बच्चों (3-7 साल) की शिक्षा का विस्तृत व्यावहारिक प्रारूप पेश किया गया है।

(2) बच्चों के अन्दर की सलाहियतों को उजागर करने पर दोनों में बहुत ज़्यादा ध्यान दिया गया है।

(3) शिक्षण-प्रशिक्षण में शिक्षा-सामग्री से मदद लेने पर दोनों में बहुत ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है।

(4) आज़ादी और ख़ुशी के माहौल में शिक्षा देने में दोनों में पूरा ध्यान दिया जाता है।

(5) ख़ुद करके सीखने और खेल-खेल में शिक्षा देने पर दोनों में ज़ोर दिया जाता है।

(6) स्कूल/मदरसे का माहौल दिलचस्प और ख़ुशगवार और घर जैसे माहौल का अनुभव कराने की तरफ़ दोनों में ध्यान दिया जाता है।

असमानताएँ

किंडर गार्टेन	मॉण्टेसरी स्कीम
1. सामूहिक गुण पैदा करने पर ज़ोर दिया जाता है।	1. व्यक्तिगत विकास की तरफ़ ज़्यादा ध्यान दिया जाता है।
2. आधार दार्शनिक हैं; क्योंकि फ्रोबेल दार्शनिक था।	2. आधार वैज्ञानिक हैं; क्योंकि मॉण्टेसरी डॉक्टर थी।
3. सामूहिक रूप से शिक्षा दी जाती है।	3. सामूहिक शिक्षा की प्रतिक्रिया में ज़्यादातर व्यक्तिगत रूप से शिक्षा दी जाती है।
4. ज्ञानेन्द्रियों का प्रशिक्षण उपहारों और खिलौनों की मदद से किया जाता है।	4. ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण के लिए शिक्षा-सामग्री और उपकरणों से काम लिया जाता है।
5. बिना उपकरणों के भी शिक्षा दी जा सकती है।	5. बिना सामान और उपकरणों के शिक्षा नहीं दी जा सकती, इसलिए इसे अपनाने में आम तौर पर कठिनाइयाँ पेश आती हैं।
6. हस्तकलाओं और खेल पर ज़ोर दिया जाता है।	6. व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित कामों पर ध्यान दिया जाता है।

योजना-विधि (Project Method)

योजना ऐसी स्कीम या प्रारूप को कहते हैं, जो बड़े पैमाने पर शुरू होनेवाले किसी काम के बारे में पहले से तैयार कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए, भाखरा-नंगल प्रोजेक्ट।

शिक्षाओं की शब्दावली में प्रोजेक्ट ऐसी समाधान-योग्य समस्या को कहते हैं, जिसमें व्यावहारिक काम पाया जाए और जिसकी पूर्ति उसके प्राकृतिक संकल्प और माहौल में हो। उदाहरण के लिए, ईद के दिन बच्चों द्वारा मिल-जुलकर ईद मनाना, बीमारियों से बचने के लिए नालियाँ साफ़ करना।

योजना-विधि का श्रेय अमेरिका जाता है। इसकी शुरुआत 1889 ई॰ में अमेरिका के रिचर्डसन ने की। कल्पेट्रिक ने इसमें आंशिक सुधार और संशोधन किया और स्टीवेंस ने 1921 ई॰ में इसको पूर्णता तक पहुँचाया। यह स्कीम आरंभिक कक्षाओं के छात्रों के लिए है।

योजना-विधि को व्यावहारिक रूप कैसे दिया जाता है?-

इस प्रक्रिया के निम्नलिखित चरण होते हैं—

1. **विशिष्ट परिस्थिति उत्पन्न करना :** सबसे पहले शिक्षक किसी विषय पर बातचीत या वाद-विवाद के द्वारा बच्चों के सामने विशेष परिस्थिति उपस्थित करता है। उदाहरण के लिए, छुट्टियाँ कहाँ और किस तरह गुज़ारें; कोई त्योहार या उत्सव किस तरह मनाएँ; सैर-सपाटे के मौक़े किस तरह निकालें; आबादी को बीमारियों से सुरक्षित रखने, बेबस और असहायों की मदद करने, लोगों को नमाज़ का पाबन्द बनाने, निर्धन छात्रों की मदद करने के लिए क्या उपाय करें, वगैरह।

(2) **समुचित प्रोजेक्ट का चयन :** परिस्थिति सामने आने पर छात्र वाद-संवाद और आपसी विचार-विमर्श करके प्रोजेक्ट का चयन करते हैं। चयन में पूरी आज़ादी दी जाती है; ताकि बच्चों की अपनी अभिरुचि, इच्छा और इरादा शामिल हो और वे पूरी लगन से काम करें। चयन के कारण हर एक से लिखवा लिए जाते हैं।

(3) **पूरा करने का संकल्प :** चयन के बाद प्रोजेक्ट को ख़ूब अच्छी तरह पूर्णता तक पहुँचाने का छात्रों से वचन लिया जाता है।

(4) **प्रारूप तैयार करना :** प्रोजेक्ट को व्यावहारिक रूप देने के लिए अब पूरा प्रारूप तैयार किया जाता है। यह काम शिक्षक के मार्गदर्शन में खुद छात्र अंजाम देते हैं। छात्रों से सुझाव माँगे जाते हैं। हर एक को व्यावहारिक रूप से दिलचस्पी लेने पर उभारा जाता है। सुझावों पर सोच-विचार होता है और पूरा प्रारूप तैयार करके लिख लिया जाता है।

(5) **व्यावहारिक रूप देना :** प्रोजेक्ट का यह सबसे बड़ा हिस्सा होता है। इसमें तरह-तरह की गतिविधियाँ और क्रिया-कलाप होते हैं। उदाहरण के लिए, जानकारियाँ उपलब्ध करना, लिखना-पढ़ना, विभिन्न स्थानों का भ्रमण, मानचित्रों और किताबों का अध्ययन, विभिन्न लोगों से पत्राचार, बाज़ार से भाव मालूम करना, ख़र्च का अनुमान लगाना और पूरे प्रोजेक्ट को पूर्णता तक पहुँचाना, प्रारूप तैयार हो जाने के बाद छात्रों को व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से तरह-तरह की ज़िम्मेदारियाँ सौंप दी जाती हैं।

शिक्षक अपनी देख-रेख में पूरे प्रोजेक्ट को व्यावहारिक रूप प्रदान करता है। आवश्यकता के मुताबिक़ प्रारूप में बदलाव की पूरी गुंजाइश रखी जाती है। हर बच्चे को अमली तौर पर दिलचस्पी लेने और प्रोजेक्ट में हाथ बँटाने के लिए प्रेरित किया और इसका मौक़ा दिया जाता है। कोशिश की जाती है कि यथासम्भव बच्चों को खुद करने के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े मिलें।

(6) **जाँच-परख :** काम के पूरा होने के बाद पूरे काम की जाँच-परख की जाती है। इस जाँच-परख से छात्रों को अपनी ग़लतियाँ और कोताहियाँ मालूम करने में आसानी होती है। इस तरह वे भविष्य में सतर्क हो जाते हैं।

(7) **रिकॉर्ड रखना :** छात्र एक कॉपी में पूरे प्रोजेक्ट का रिकॉर्ड लिख लेते हैं। उदाहरण के लिए, क्या बहसें हुईं; क्या सुझाव आए; किस तरह

और क्या प्रारूप बना; कैसे व्यावहारिक रूप दिया गया; कौन-सी किताबें पढ़ी गईं; किस तरह काम बांटे गए; किनसे मदद ली गई, इत्यादि।

गुण

प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों के लिए यह तरीक़ा विभिन्न हैसियतों से बहुत लाभदायक और प्रभावकारी है; क्योंकि—

- मनोविज्ञान के नियमों के बिलकुल मुताबिक़ है। बच्चों के सामने प्रोजेक्ट का पूरा लक्ष्य और स्पष्ट उद्‌देश्य होता है। वे ख़ुद करके उसे पूर्णता तक पहुँचाते हैं। उन्हें काम का पूरा मौक़ा मिलता है। शिक्षा-कार्य में उनके इरादे को दख़ल होता है। इसलिए वे पूरे ध्यान, लगन और दिलचस्पी से काम करते हैं।
- ज्ञान का ज़िन्दगी से गहरा सम्बन्ध होता है और सारी जानकारियाँ मन में सुव्यवस्थित और सुगठित शक्ल में आती हैं।
- शिक्षण में बच्चों को निष्क्रिय श्रोता के बजाय सक्रिय कार्यकर्ता की हैसियत हासिल होती है।
- विकास की गति का बच्चों को ख़ुद भी अन्दाज़ा होता है और दूसरे भी आसानी से उसकी सलाहियतों का अन्दाज़ा लगा सकते हैं।
- बच्चों को अपनी राय की अहमियत और क़ीमत मालूम होती है।
- ज्ञान और कला के सीखने में तीव्रता, कुशलता और मज़बूती आती है।
- काल्पनिक के बजाय बच्चे व्यावहारिक मनुष्य बनते हैं।
- ज़िम्मेदारियाँ उठाने का प्रशिक्षण होता और बच्चों में आत्मविश्वास पैदा होता है।
- जम कर मेहनत करने और काम को पूर्णता तक पहुँचाने की आदत पड़ती है।

सामूहिक प्रोजेक्ट बनाने और मिल-जुलकर काम करने का अनुभव होता है।

स्मरण-शक्ति पर ज़ोर कम पड़ता है और बौद्धिक और रचनात्मक शक्तियों का विकास होता है।

- पढ़ने का शौक़ और समस्याओं को ख़ुद हल करने की भावना पैदा होती है।

दोष

बच्चे जो कुछ सीखते हैं, उसके अभ्यास और पुनरावृत्ति का उन्हें मौक़ा नहीं मिलता।

बहुत-सी जानकारियाँ सामयिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित होती हैं, जिसका कोई स्थायी महत्त्व नहीं होता।

हाथ से किया जानेवाला काम और बहुत ज़्यादा ज्ञान से सम्बन्धित काम बहुत कम हो पाता है।

शिक्षा-सामग्री अव्यवस्थित होती है। निर्धारित पाठ्यक्रम उलट जाता है।

पाठ्यक्रम के कुछ हिस्सों पर बहुत ज़्यादा समय लग जाता है और कुछ हिस्से नज़रअन्दाज़ हो जाते हैं।

उपयुक्त पाठ्यपुस्तक की तैयारी और योग्य शिक्षक मिलने में बड़ी कठिनाइयाँ सामने आती हैं।

लेकिन इसका यह मतलब कभी भी नहीं कि इस तरीक़े से फ़ायदा न उठाया जाए। अगर कभी-कभी छुट्टियों इत्यादि में या हर रोज़ कुछ घंटे इस तरीक़े से पढ़ाई हो, बाक़ी सामान्य तरीक़े से पाठ्यक्रम को पूरा कराया जाए, तो बेशक बच्चों के लिए बहुत फ़ायदेमन्द होगा। स्कूल/मदरसे के उत्सवों, कार्यक्रमों, संस्था और आसपास की सफ़ाई-सुथराई, शैक्षिक पर्यटन इत्यादि के सन्दर्भ में इस तरीक़े पर ज़रूर अमल

होना चाहिए। इससे छात्र दिलचस्पी से काम करेंगे और उन्हें काफ़ी फ़ायदा पहुँचेगा।

डाल्टन प्लान

सामूहिक शिक्षा की कमियों और दोषों पर ऊपर चर्चा की जा चुकी है। इन कमियों को दूर करने लिए नए दौर में बहुत-सी कोशिशें हुई हैं। उनमें डाल्टन प्लान सबसे महत्त्वपूर्ण है। इसकी जन्मदात्री अमेरिका की सुश्री पार्क हर्स्ट है, जिसने 1920 ई॰ में डाल्टन के हाईस्कूल में इसका प्रयोग किया। यह तरीक़ा माध्यमिक कक्षाओं के छात्रों के लिए बहुत फ़ायदेमन्द है। सबसे बड़ी बात यह है कि—

प्रचलित सामूहिक व्यवस्था में आंशिक परिवर्तन और मामूली ख़र्च से काम चलाया जा सकता है।

पाठ्यक्रम में किसी परिवर्तन की ज़रूरत नहीं पड़ती।

छात्रों को उनकी स्वाभाविक गति से आगे बढ़ाने में मदद मिलती और उनका निजत्व (individuality) बना रहता है।

शिक्षा-विधि भी बहुत ही सादा और आसान है।

प्लान का परिचय

इस स्कीम में—

शिक्षकों को साल भर का काम विषयवार इस अन्दाज़ से क्रमबद्ध करना पड़ता है कि हर विषय का विस्तृत विवरण और उस विषय में उन्हें क्या करना है, छात्रों को इसका अन्दज़ा हो जाता है।

साल भर के काम को एक-एक महीने के सत्र में बाँट दिया जाता है।

सामान्य नियम बताकर छात्रों से निर्धारित अवधि में काम को पूरा करने का वचन लिया जाता है।

- सत्र के दौरान काम में कठिनाइयों और परेशानियों को दूर करने में

सामूहिक और व्यक्तिगत मदद दी जाती है।

- एक सत्र में जितना काम निर्धारित किया जाता है, उसके पूरा होने पर दूसरा काम दिया जाता है।
- छात्रों की मदद के लिए विषयवार शिक्षक और लाइब्रेरियाँ होती हैं। किताबें, चार्ट्स, शिक्षा-सामग्री इत्यादि बहुत ज़्यादा होते हैं, ताकि पूरी कक्षा एक ही समय में फ़ायदा उठा सके।
- प्रतिदिन आधा समय छात्र व्यक्तिगत रूप से या ग्रूप में अपनी मर्ज़ी से शिक्षा-सम्बन्धी काम करते हैं। बाक़ी आधा समय सामूहिक समस्याओं और कठिनाइयों को दूर करने और नया नियम सिखाने के लिए निर्धारित होता है।
- 'वर्ग' या कक्षा को 'कॉन्फ्रेंस' के नाम से याद किया जाता है। छात्रों को कॉन्फ्रेंस के सदस्य, कक्षा को 'कर्मभूमि' कहते हैं। काम को सुपुर्दगी या समर्पण, काम को पूरा करने के वादे को 'समझौता' का नाम दिया जाता है और काम पूरा होने की अवधि को 'सत्र' का।
- एक काम ख़त्म करके बच्चे दूसरा काम ले सकते हैं। शर्त यह है कि शिक्षक संतुष्ट हो।
- बच्चे अलग-अलग काम करें या मिल-जुलकर, यह उनकी मर्ज़ी पर निर्भर करता है।
- काम और प्रगति की रफ़्तार मालूम करने के लिए शिक्षकों और छात्रों दोनों के पास चार्ट होता है। छात्रों के पास एक चार्ट विषयवार होता है, दूसरा सामूहिक।

गुण

इस प्लान को अपनाने से निम्नलिखित फ़ायदों की उम्मीद होती है—

- हर छात्र अपनी गति से आगे बढ़ता है। इसलिए प्रतिभाशाली और मन्दबुद्धि दोनों को फ़ायदा पहुँचता है।
- ज़िम्मेदारी लेने और उसे पूरी करने का समझौता या वचनबद्धता की वजह से मन्दगति के छात्र भी कड़ी मेहनत करके अपना काम पूरा करते हैं।
- छात्र सिर्फ़ शिक्षकों ही पर भरोसा नहीं करते, बल्कि किताबों, चार्टों, पोस्टरों इत्यादि से अपने तौर पर भी फ़ायदा उठाने की उनमें योग्यता पैदा होती है।
- शोध और खोज का शौक़ परवान चढ़ता है।
- समझौते की वजह से छात्र ध्यान और दिलचस्पी से काम करता है; क्योंकि इस तरीक़े पर शिक्षा में ख़ुद उसका इरादा शामिल हो जाता है।
- छात्रों की भूमिका निष्क्रिय नहीं, बल्कि सक्रिय होती है। वे गौण या निष्क्रिय श्रोता नहीं बनते, बल्कि ख़ुद करके सीखते हैं।
- शिक्षक और छात्र दोनों को प्रगति की गति का सही अन्दाज़ा होता है।
- प्रत्येक विषय को आवश्यकता के मुताबिक़ समय मिलता है, इसलिए कमज़ोर विषयों पर पर्याप्त ध्यान देकर कमज़ोरी दूर कराई जा सकती है।
- बिना बाहरी दबाव के अपनी ज़िम्मेदारियाँ पूरी करने का प्रशिक्षण होता है।
- बच्चे को आज़ादी होती है कि वह जब और जितना चाहे पढ़े। होमवर्क की ज़रूरत नहीं पड़ती।
- प्रबन्ध-व्यवस्था की समस्या ज़्यादा परेशान करनेवाली नहीं रह जाती; क्योंकि हर छात्र अपने-अपने काम में लगा रहता है।

बच्चा महसूस करता है कि उसपर विश्वास किया जा रहा है। इसलिए वह इस विश्वास को टूटने नहीं देता। उसे घंटा बजते ही काम छोड़ने या नए काम पर लगने या समय-सारिणी की पाबन्दी करने पर मजबूर नहीं किया जाता।

सीमित समय में परीक्षाओं के द्वारा जायज़ा लेने की तुलना में ग्राफ़ और हर रोज़ के काम के विवरण के द्वारा प्रगति की रफ़्तार का सही अन्दाज़ा करने में ज़्यादा आसानी होती है।

दोष

इस स्कीम के अपनाने में कुछ कठिनाइयाँ और कमियाँ भी होती हैं। जैसे—

ऐसी सन्दर्भ पुस्तकें जिनसे छोटी उम्र के छात्र अपने तौर पर फ़ायदा उठा सकें, बहुत कम; बल्कि नहीं मिलती हैं।

ज़्यादातर शिक्षक नई स्कीमों पर प्रयोग करना नहीं चाहते। उन्हें छात्रों की आज़ादी खलती है। इसलिए वे इस तरीक़े को अपनाने को तैयार नहीं होते।

बहुत बड़ी लाइब्रेरी और बहुत ज़्यादा शिक्षा-सामग्री की ज़रूरत पेश आती है, जो कुछ ही संस्थाएँ मुहैया करा सकती हैं।

समुचित काम प्रस्तावित और निर्धारित करने के लिए अच्छी योग्यता और क्षमता, शोध-अभिरुचि और पर्याप्त अनुभव की ज़रूरत होती है, जिनका ज़्यादातर शिक्षकों में अभाव होता है।

बहुत-से विषयों और गतिविधियों की शिक्षा सामूहिक रूप से उपयुक्त होती है। उदाहरण के लिए कविता, मौखिक पाठ, पाठ्यसहगामी क्रियाएँ या गतिविधियाँ, ड्रिल इत्यादि।

कुछ बच्चे आज़ादी पाकर काम ही नहीं करते।

इन कमियों के बावजूद स्कीम से फ़ायदा उठाने के लिए छात्रों से

कुछ काम इस अन्दाज़ से भी लेना चाहिए। प्रत्येक पाठ को पढ़ा चुकने के बाद व्यक्तिगत रूप से करने के लिए कुछ लिखित या व्यावहारिक काम दिया जाना चाहिए। ख़ाका (प्रारूप) बनवाकर और हवाले बताकर निबन्ध लिखने या भाषण तैयार करने पर बच्चों को तैयार करना चाहिए। इस तरह वे किताबों से अपने तौर पर भी फ़ायदा उठाना सीखेंगे।

☆☆☆

अध्याय-33

वर्धा (बेसिक) स्कीम

इस स्कीम के प्रेरक गांधी जी थे। उन्होंने अपनी पत्रिका 'हरिजन' (1937) ई. में राष्ट्रीय बुनियादी शिक्षा का एक प्रारूप पेश किया, जिसका सारांश यह था कि "शिक्षा किसी कला-कौशल की सहायता से मातृभाषा में और आत्मनिर्भर बनाने के लिए होनी चाहिए।" कांग्रेस उस समय सात प्रान्तों में सत्ता में थी। उन प्रान्तों के शिक्षा-मंत्रियों ने 22 और 23 अक्टूबर 1937 ई. को वर्धा में गांधी जी की अध्यक्षता में आयोजित अपनी कॉन्फ्रेंस में कुछ बुनियादी सिद्धान्त तय किए और डॉक्टर ज़ाकिर हुसैन ख़ान की अध्यक्षता में एक कमेटी बना दी गई, जिसने स्कीम का विस्तृत प्रारूप तैयार किया। मंत्रियों के द्वारा तय किए गए बुनियादी नियम ये थे—

- सात से चौदह साल की उम्र तक सभी बच्चों के लिए मुफ़्त अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाए।
- शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।
- किसी बुनियादी कला-कौशल या पेशे को केन्द्रीय हैसियत देकर शिक्षा दी जाए और दूसरे सारे विषय यथासम्भव उससे जोड़कर पढ़ाए जाएँ।
- शिक्षा आत्मनिर्भर बनानेवाली हो (यानी शिक्षा के दौरान बुनियादी कला-कौशलों या पेशेगत प्रशिक्षण के अन्तर्गत बच्चों की मेहनत से जो आमदनी हो, उससे शिक्षा के ख़र्च पूरे हो जाएँ; यहाँ तक कि शिक्षकों के वेतन भी निकल आएँ और सात साल की शिक्षा पूरी होने के बाद छात्र अपने पैरों पर खड़े हो सकें और अपनी रोज़ी खुद कमाने के योग्य हो जाएँ)।
- अहिंसा की भावना का संचार हो।

कमेटी ने विस्तृत स्कीम में इन बातों को नज़र के सामने रखने के साथ निम्नलिखित पहलुओं पर भी ध्यान दिया–

- शिक्षा के द्वारा ऐसे सुयोग्य नागरिकों का निर्माण किया जाएं, जो समाज पर बोझ बनने के बजाय अपनी मेहनत से उसकी सेवा कर सकें और जिनको नागरिकता के अधिकार और कर्तव्य का ध्यान हो।
- शिक्षा बच्चों की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से जुड़ी हुई हो। हर नई बात कला-कौशलों या पेशेगत प्रशिक्षण प्राकृतिक और सामाजिक माहौल से सम्बद्ध करके पेश की जाए।
- बच्चों की शिक्षा (सात साल से पहले) अभिभावकों और निजी संस्थाओं के विवेक पर छोड़ दी जाए। हाँ, सरकार बच्चों के कुछ मॉडल स्कूल क़ायम करे।
- शिक्षा का स्तर सात वर्ष में अंग्रेज़ी ख़त्म करके हाईस्कूल के बराबर हो।
- छात्रों द्वारा तैयार की हुई चीज़ों की ख़रीद-बिक्री सरकार के ज़िम्मे हो।
- सैद्धान्तिक के बजाय व्यावहारिक पहलू पर अधिक से अधिक ध्यान हो।
- इस स्कीम को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिए योग्य शिक्षक तैयार किए जाएँ। ट्रेनिंग का कोर्स दो तरह का हो– एक जुनियर और दूसरा सीनियर।
- परीक्षाओं की वर्तमान प्रणाली ख़त्म करके प्रगति चार्ट रखे जाएँ और नए तरीक़े से टेस्ट (Test) लिए जाएँ।
- एक शिक्षा-बोर्ड हो, जो पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि और जाँच की उपयोगी विधि इत्यादि पर प्रयोग करे। वर्तमान निरीक्षक की जगह ऐसे सुपरवाइज़र नियुक्त किए जाएँ, जो शिक्षा का शौक़ रखते हों और शिक्षकों का समय पर ही मार्गदर्शन कर सकें।

इसे बेसिक (बुनियादी) स्कीम इसलिए कहा जाता है, क्योंकि–

- इतनी शिक्षा तो हर नागरिक की बुनियादी ज़रूरत है, जिससे बहरहाल उसे धर्म और सम्प्रदाय के भेदभाव के बिना सजा-सँवरा होना चाहिए।
- इसमें बुनियादी कला-कौशलों या पेशेगत प्रशिक्षणों से जोड़कर शिक्षा देने की व्यवस्था की गई है।
- छात्रों की बुनियादी ज़रूरतों और दिलचस्पियों का इसमें ध्यान रखा गया है।

निर्धारित पाठ्यक्रम और समय-सारिणी (Time-Table)

सात वर्षीय निर्धारित पाठ्यक्रम निम्नलिखित विषयों और क्रिया-कलापों पर आधारित है–

(1) बुनियादी कला-कौशल (कताई, बुनाई, बाग़बानी, दफ़्ती या चमड़े का काम इत्यादि);

(2) मातृभाषा;

(3) गणित;

(4) सामाजिक विज्ञान (इतिहास, भूगोल और सांस्कृतिक ज्ञान);

(5) सामान्य विज्ञान (प्रकृति विज्ञान, स्वास्थ्य-सुरक्षा, शरीर-रचना विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, प्राणी विज्ञान, रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान इत्यादि का आरंभिक ज्ञान);

(6) आर्ट (पेंटिंग और ड्राइंग);

(7) संगीत-कला (गीत-संगीत);

(8) हिन्दुस्तानी (उत्तरी भारत में बोली जानेवाली आसान भाषा, जो नागरी लिपि में हिन्दी और फ़ारसी लिपि में उर्दू कहलाती है)।

पाठ्यक्रम के कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- अंग्रेज़ी को पाठ्यक्रम से बिलकुल निकाल दिया गया है।

- 'हिन्दुस्तानी भाषा' को देश की राष्ट्रभाषा[2] मान लिया गया है और पाँचवीं और छठी कक्षाओं में उन्हें उन इलाक़ों में भी अनिवार्य कर दिया गया है, जहाँ दूसरी भाषाएँ बोली जाती हैं।
- 11 साल तक सह-शिक्षा और लड़के-लड़कियों के लिए एक ही पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया है। हाँ, अन्तिम दो कक्षाओं में लड़कों के लिए सामान्य विज्ञान और लड़कियों के लिए गृह-विज्ञान रखा गया है।
- धार्मिक शिक्षा के लिए कोई गुंजाइश नहीं रखी गई है। हाँ, इस बात की तरफ़ ध्यान दिलाया गया है कि शिक्षक सारे धर्मों की 'साझा हक़ीक़तों' की झलक अपनी अमली ज़िन्दगी में पैदा करें; ताकि छात्र उनका अनुकरण कर सकें और किताबों के बजाय अपने व्यवहार और आचरण से इसकी शिक्षा दें।

समय-सारिणी

प्रस्तावित समय-सारिणी यह है–

क्रमांक	विषय	घंटे	मिनट	प्रतिदिन
(1)	बुनियादी कला-कौशल तथा पेशागत प्रशिक्षण	3	20	प्रतिदिन
(2)	गणित, ड्राइंग, म्यूज़िक	–	40	प्रतिदिन
(3)	मातृभाषा	–	40	प्रतिदिन
(4)	विज्ञान और सामान्य विज्ञान	–	30	प्रतिदिन
(5)	शारीरिक प्रशिक्षण	–	10	प्रतिदिन
(6)	मध्यावकाश	–	10	प्रतिदिन
	योग	5	30	प्रतिदिन

[2] अब राष्ट्रभाषा 'हिन्दी' है।

बेसिक स्कीम में परिवर्तन

विभिन्न चरणों से गुज़रने के बाद बुनियादी स्कीम में निम्नलिखित बदलाव आ चुके हैं–

बाल-शिक्षा को भी स्कीम में शामिल कर लिया गया है। 6 से 14 साल तक (वर्ग 8 तक) शिक्षा होती है। 5 साल के बच्चों को भी पहली कक्षा में दाख़िल किया जा सकता है। यह अवधि दो चरणों में बाँटी गई है।

पहली कक्षा से पाँचवीं कक्षा तक, जुनियर बेसिक स्कूल और छठी कक्षा से आठवीं कक्षा तक सीनियर बेसिक स्कूल।

शिक्षा की व्यवस्था सरकार अपने ख़र्च से चलाती है। आत्मनिर्भरता की शर्त हटा दी गई है।

छठी कक्षा से अंग्रेज़ी के लिए गुंजाइश निकाली गई है।

'हिन्दुस्तानी' भाषा अनिवार्य नहीं रही है।

प्राथमिक कक्षाओं में एक से अधिक कला-कौशलों की व्यवस्था की गई है और सीनियर बेसिक में किसी एक कला-कौशल में विशेष महारत हासिल करने की गुंजाइश दी गई है।

विशेषताएँ

इस स्कीम के समर्थक इसमें निम्नलिखित गुणों का उल्लेख करते हैं–

बच्चों को ख़ुद करके सीखने के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े मिलते हैं। इसलिए शिक्षा में वे पूरी दिलचस्पी लेते हैं और जो कुछ सीखते हैं, उसे ज़िन्दगी में बरत भी सकते हैं और उनकी जानकारियाँ ठोस और स्थायी होती हैं।

सैद्धान्तिक आदमी बनने के बजाय व्यावहारिक आदमी बनते हैं और हाथ से काम करने में वे कोई संकोच महसूस नहीं करते।

इससे बेकारी और बेरोज़गारी की समस्या दूर हो जाती है।

इससे सामूहिक और नागरिक गुणों का विकास होता है और मिल-जुलकर काम करने की योग्यता पैदा होती है।

दिल और दिमाग़, आँख और हाथ सबका एक साथ और संतुलित प्रशिक्षण होता है। कोई पहलू नज़रअन्दाज़ नहीं होता।

छात्रों को इस लायक़ बनाती है कि वे अपने पैत्रिक पेशे या किसी और फ़ायदेमन्द काम के द्वारा राष्ट्रीय सम्पत्ति में बढ़ोत्तरी कर सकें।

देश के औद्योगिक विकास में सहायक है।

- मातृभाषा के द्वारा शिक्षा दी जाती है। इसलिए शिक्षा अधिक प्रभावकारी होती है।

शहरी और ग्रामीण शिक्षा में समानता पैदा होती है। बुनियादी शिक्षा की हद तक पूरे देश में एक ही शिक्षा-व्यवस्था अमल में आती है।

हाथ के कामों (हस्त-कला) की अहमियत और मूल्य का अन्दाज़ा होता है।

बच्चों के मनोविज्ञान, शिक्षा-सिद्धान्त और जातीय और राष्ट्रीय उमंगों के बिलकुल मुताबिक़ है, इत्यादि।

समालोचना

यह स्कीम अब यद्यपि आंशिक परिवर्तन के साथ पूरे देश में प्रचलित हो चुकी है और हर प्रान्त में प्राथमिक शिक्षा की हद तक इसे क़बूल करके इसको अमली जामा पहनाना शुरू कर दिया है। लेकिन हमेशा से यह कटु आलोचना का निशाना रही है और इतने परिवर्तन के बावजूद इसपर अब भी तरह-तरह के आक्षेप किए जाते हैं। उदाहरण के लिए—

- बच्चे को केन्द्रीय स्थान देने के बजाय इसमें कला-कौशलों को केन्द्रीय हैसियत दी गई है।

धार्मिक शिक्षा को पाठ्यपुस्तक से बाहर करके धर्म और नैतिकता से नई पीढ़ियों का रिश्ता काट दिया गया है।

विधिवत रूप से धार्मिक शिक्षा की तो गुंजाइश नहीं रखी गई है, लेकिन कल्चर के नाम से एक ही सम्प्रदाय के अक़ीदों (धार्मिक आस्थाओं) को सब पर थोपने की कोशिश की जाती है।

- बुनियादी स्कीम का यह पहलू व्यवहार में लाने योग्य नहीं है कि प्राथमिक शिक्षा आत्मनिर्भर बनानेवाली हो। अगर इसपर अमल किया जाए, तो छात्रों का सारा समय शिक्षकों के लिए रोटी पैदा करने पर ख़र्च हो जाएगा। बच्चों पर इस तरह का भार डालना भी सही नहीं है।

भारतीय संविधान ने 14 साल की उम्र तक मुफ़्त अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था को राज्य की ज़िम्मेदारी ठहराया है। इस धारा की मौजूदगी में यह अंश यों भी निरर्थक है।

इस स्कीम की वजह से बच्चों के द्वारा कच्चे मालों की बहुत अधिक बरबादी होती है।

स्कूल/मदरसे कारख़ानों में परिवर्तित हो गए हैं; क्योंकि पेशेगत कलाओं को ही ग़ैर-मामूली अहमियत हासिल है और स्कूल/मदरसों की कामयाबी इन्हीं से नापी जाती है। इसलिए अमली पहलू बहुत ज़्यादा नज़रअन्दाज़ हो गया है।

इसको बहुत सुन्दर और अच्छे ढंग से चलाने के लिए योग्य शिक्षक और उपयुक्त पाठ्यपुस्तकें मुहैया कराना बहुत कठिन होगा।

बच्चों के व्यक्तिगत अन्तर को इस स्कीम में भी नज़रअन्दाज़ करके सबके लिए एक ही पाठ्यक्रम प्रस्तावित किया गया है।

उद्योग-धंधों को ग़ैर-मामूली अहमियत देकर भौतिकता की चाट लगा दी गई है और सांस्कृतिक विकास, नैतिकता और आध्यात्मिकता को नज़रअन्दाज़ कर दिया गया है।

- मशीन के इस दौर में घरेलू उद्योगों-धंधों या छोटे धंधों को इतनी अहमियत देना औद्योगिक विकास में बाधक हो सकता है और दुनिया की विकसित क़ौमों के कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने में हम नाकाम रहेंगे।
- सर्वधर्म-समभाव (वहदते-अद्‌यान) और अहिंसा को आस्था और पंथ के रूप में अनिवार्य बुनियादी शिक्षा की आत्मा कहना विचार और आत्मा की आज़ादी के अधिकार के ख़िलाफ़ है।

☆☆☆

अध्याय-34

विविध समस्याएँ

शिक्षण-संस्थाओं को अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करने के दौरान अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण समस्याएँ इस प्रकार हैं–

हाज़िरी की समस्या

यह एक बुनियादी समस्या है, जिससे लगभग सभी शिक्षण-संस्थाओं को दो-चार होना पड़ता है। ग़ैर-सरकारी प्राथमिक स्कूलों/मदरसों को तो यह समस्या और अधिक परेशान करती है। हाज़िरी और समय की पाबन्दी के मामले में शिक्षक और छात्रों, दोनों से कोताहियाँ होती हैं, जिनका शिक्षण-प्रशिक्षण पर बुरा प्रभाव पड़ता है। शिक्षकों की अनुपस्थिति या समय पर न आने से शिक्षा का नुक़सान तो होता ही है, कक्षा और स्कूलों/मदरसों की व्यवस्था भी बुरी तरह प्रभावित होती है। बच्चे कक्षा में मार-पीट, लड़ाई-झगड़े और शोर-ग़ुल करने के आदी हो जाते हैं। कक्षा और स्कूल/मदरसों के वातावरण से संजीदगी (गम्भीरता) विदा हो जाती है। झगड़े निमटाने के लिए काफ़ी समय ख़र्च करने, अनुशासन-व्यवस्था क़ायम करने के लिए डंडा इस्तेमाल करने की ज़रूर पेश आने लगती है। कपड़े फटते, किताब-कॉपियाँ फटतीं और सामान बरबाद होता है। बच्चे की ग़ैर-हाज़िरी से जहाँ सिर्फ़ एक बच्चे का नुक़सान होता है, वहाँ एक शिक्षक की ग़ैर-हाज़िरी, देर से पहुँचने के नतीजे में तीस-चालीस छात्रों की एक पूरी कक्षा का नुक़सान होता है। इस्लामी शिक्षण-संस्थाओं (दीनी इदारों) के शिक्षकों और छात्रों की तरफ़ से इस सम्बन्ध में कोताहियाँ हैरतनाक भी हैं और अफ़सोसनाक भी; क्योंकि जिस इस्लामी समुदाय के लोगों पर प्रतिदिन पाँच वक़्त की नमाज़ें

समय की पाबन्दी के साथ फ़र्ज़ हैं, जिसके माननेवालों को सात साल की उम्र से नमाज़ की पाबन्दी की तरफ़ ध्यान दिलाया जाता है; जो लोग समय को अल्लाह की अमानत समझते और इस बात पर ईमान रखते हैं कि एक-एक पल का अल्लाह को हिसाब देना होगा, उनको तो समय की पाबन्दी के मामले में सारी दुनिया के सामने बेहतरीन नमूना पेश करना चाहिए। किसी शरई कारण के बिना ग़ैर-हाज़िरी या विलम्ब से उपस्थिति इनके लिए तो किसी हाल में जायज़ नहीं। ऐसी स्थिति किसी बुनियादी कमी का पता देती है, जिसे दूर करने की बहरहाल कोशिश होनी चाहिए।

शिक्षकों की ग़ैर-हाज़िरी के आम तौर से निम्नलिखित कारण होते हैं—

1. बीमारी या सेहत की ख़राबी;
2. अचानक आ पड़नेवाली आवश्यकता के कारण घरेलू व्यस्तता;
3. सगे-सम्बन्धियों के यहाँ होनेवाले विभिन्न कार्यक्रमों में शामिल होना या हाथ बँटाना;
4. सुस्ती, काहिली या ज़िम्मेदारी के एहसास और कर्तव्यपालन की भावना का अभाव,
5. संस्था के मामलों और नियमों की पाबन्दी की तरफ़ से लापरवाही।

जहाँ पहले और दूसरे बिन्दुओं का सम्बन्ध है, बेशक ये उचित कारण हैं। इस तरह की अनुपस्थितियाँ प्रत्येक शिक्षण-संस्था में होती ही हैं। हाँ, शिक्षकों में ऐसी भावना होनी चाहिए कि वे स्कूल/मदरसों में अपनी हाज़िरी को प्राथमिकता दें और मामूली बीमारी या ऐसी हंगामी ज़रूरत को, जिसे नज़रअन्दाज़ किया जा सकता हो, ग़ैर-हाज़िरी का बहाना बनाने से परहेज़ करें।

रहा विभिन्न उत्सवों या कार्यक्रमों का मामला तो इसके लिए तारीख़ें बहुत पहले से तय की जाती हैं और स्कूल/मदरसों में छोटी-बड़ी

बहुत-सी छुट्टियाँ होती रहती हैं। उन्हें आसानी से छुट्टियों पर टाला जा सकता है। ग़ैर-हाज़िरी के लिए बहरहाल यह उचित कारण नहीं है।

रहे आख़िरी दोनों कारण तो ये असल में बहुत ही बुनियादी ख़राबियों का पता देते हैं। इस तरह की कोताहियों को तो हरगिज़ बरदाश्त नहीं करना चाहिए, जिन शिक्षकों में ये ख़राबियाँ पाई जाती हों, वे बहुत अधिक सुधार और प्रशिक्षण के मुहताज हैं। अगर ध्यान दिलाने के बावजूद नहीं सुधरते, तो संस्था के हित में उन्हें संस्था से निकाल देना चाहिए। छात्रों की ग़ैर-हाज़िरी के विभिन्न कारण होते हैं—

- **बीमारी :** आम तौर पर छोटे बच्चे बार-बार बीमार पड़ते और ग़ैर-हाज़िरियाँ करते हैं, जिससे शिक्षा बहुत प्रभावित होती है।

  घरेलू व्यस्तता : ख़ास तौर पर घर के लोगों की बीमारी, मेहमानों की आमद, दुकान इत्यादि के कामों में हाथ बँटाने की ज़रूरत, लड़कियों को घरेलू काम-काज में आम तौर पर हाथ बँटाना पड़ता है।

  माँ-बाप या अभिभावकों की लापरवाही : माँ-बाप या अभिभावकों का ध्यान न देना और अपने बच्चों की शिक्षा की तरफ़ से लापरवाही।

  रास्ते की बाधाएँ : घर से स्कूल/मदरसे की दूरी और रास्ते में भटकानेवाले क्रिया-कलापों के अवसर मिलना।

  प्रतिकूल मौसम : मौसम की ख़राबी, बारिश या कड़ाके की सर्दी इत्यादि।

  घर का काम पूरा न होना : घर पर दिया हुआ काम (Home-work) को पूरा न कर सकना।

  विभिन्न प्रकार के प्रोग्राम और उत्सव : घर, रिश्ते-नाते या मुहल्ले, पड़ोस में किसी उत्सव या कार्यक्रम का होना।

  अभद्र व्यवहार : छात्रों या शिक्षकों का अभद्र व्यवहार इत्यादि।

हाज़िरी का पाबन्द बनाने के उपाय

छात्रों, शिक्षकों और अभिभावकों को हाज़िरी और समय की पाबन्दी की अहमियत पूरी तरह ज़ेहन में बिठा दी जाए। छात्रों और शिक्षकों की ख़िलाफ़वर्ज़ी पर तुरन्त पकड़ की जाए।

संस्था के ज़िम्मेदार, हाज़िरी और समय की पाबन्दी के सम्बन्ध में ख़ुद उत्तम नमूना पेश करें।

निर्धारित समय पर पाबन्दी से घंटी बजाने की व्यवस्था की जाए। यह घंटी छात्रों को चौकन्ना करने के लिए हो। शिक्षकों को घंटी से पहले पहुँचने का पाबन्द बनाया जाए।

छात्रों और शिक्षकों दोनों की हाज़िरी के लिए विधिवत रूप से रजिस्टर रखे जाएँ। शिक्षक अपने हाज़िरी-रजिस्टर पर दस्तख़त के साथ आने का समय भी लिखा करें।

प्रत्येक कक्षा की हाज़िरी से पहले सामूहिक हाज़िरी का नियमित रूप से एहतिमाम किया जाए, जिसमें सभी छात्रों और शिक्षकों की हाज़िरी अनिवार्य हो। छात्रों को कक्षा और क़द के लिहाज़ से खड़ा किया जाए। यहाँ रजिस्टर से हाज़िरी लेने की ज़रूरत नहीं। वर्ग-शिक्षकों का एक सरसरी जायज़ा ले लेना काफ़ी है। सुस्ती या लापरवाही बरतने और हाज़िरी में देर से आनेवालों के सुधार के लिए यह बहुत ही प्रभावकारी तरीक़ा है। हर एक सामूहिक दवाब को महसूस करता और कोताही पर बिना टोके शर्मिन्दा होता है और भविष्य में सतर्कता बरतता है।

दरख़ास्त या आवेदन-पत्र के द्वारा छुट्टी लेने का पाबन्द बनाया जाए और बिना दरख़ास्त या इजाज़त के ग़ैर-हाज़िर होने या देर से आने पर कड़ा नोटिस लिया जाए।

हाज़िरी का रिकॉर्ड क़ायम करनेवाले छात्रों का हौसला बढ़ाया जाए, उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए नम्बर, प्रमाणपत्र, शिल्ड या पुरस्कार भी

दिए जा सकते हैं। इसी तरह बिना किसी उचित कारण के ग़ैर-हाज़िरी पर पूछताछ, जुर्माना और परीक्षाओं में बैठने या प्रोन्नति पाने से वंचित भी किया जा सकता है।

समय-समय पर छात्रों की चिकित्सा-जाँच कराई जाए, ताकि उनकी तन्दुरुस्ती की तरफ़ माँ-बाप का ध्यान समय रहते आकृष्ट किया जा सके।

भगोड़े बच्चे

कुछ बच्चे सिरे से ही शिक्षा से भागने लगते हैं। ये बहुत बड़ी महरूमी और बदनसीबी है। शिक्षा से भागने के आम तौर पर निम्नलिखित कारण होते हैं—

- शिक्षकों की कड़ाई, उपेक्षा या दुर्व्यवहार : अगर शिक्षक दयालु हो और बच्चों के व्यक्तित्व का सम्मान करे, तो बच्चे शिक्षा के रास्ते की विभिन्न कठिनाइयाँ ख़ुशी-ख़ुशी झेल लेते हैं। लेकिन शिक्षकों का व्यवहार अच्छा न हो, तो वे मुश्किल से ही टिकेंगे।
- बच्चे के सामने शिक्षक या शिक्षण-संस्थान की बुराई।
- स्कूल/मदरसे का अरुचिकर माहौल, जिसमें बच्चों को खेल-कूद, रचनात्मक कार्य और शैक्षिक सैर-सपाटे के मौक़े न मिलते हों।
- सहपाठी छात्रों का अनुचित बरताव, मारना-पीटना, चिढ़ाना, ताने देना, अपमानित करना इत्यादि, चाहे यह बरताव शारीरिक और नैतिक ऐब की वजह से हो या माँ-बाप की ग़रीबी या साधन की कमी की वजह से।
- घर या मुहल्ले, पड़ोस में ऐसे साथियों की मौजूदगी जो खेल-कूद, गप्पें लड़ाने और घूमने-फिरने और मनोरंजन में लगे रहते हों।
- बीमारी या लम्बे समय की ग़ैर-हाज़िरी की वजह से कक्षा में अपने मक़ाम से गिर जाना।

- मानसिक या शारीरिक कमज़ोरी के कारण कक्षा में न चल सकना।
- बच्चे की शिक्षा-दीक्षा की तरफ़ से माँ-बाप की लापरवाही।
- प्रतिभाशाली बच्चों को उनकी रफ़्तार के मुताबिक़ कक्षा में काम न मिलना।
- लापरवाही या घर की व्यस्तता के कारण होमवर्क (घर का काम) पूरा करने या पढ़े हुए पाठ को देखने में कोताही।

सही कारणों का पता लगाकर स्थिति में सुधार करने की पूरी कोशिश करनी चाहिए। ख़ुदा न करे, अगर कोई बच्चा शिक्षकों या शिक्षण-संस्थाओं की कोताहियों के कारण धार्मिक (इस्लामी) शिक्षा-दीक्षा से भागने लगा, तो कितना बड़ा वबाल होगा।

फिसड्डीपन (Backwardness)

हर कक्षा में कुछ बच्चे ऐसे होते हैं, जो कक्षा के साथ नहीं चल सकते। वे फिसड्डी या पिछड़े कहलाते हैं।

यूँ तो लगभग हर बच्चा सामयिक रूप से किसी न किसी विषय में पिछड़ेपन (Backwardness) का सबूत देता है। यह स्वाभाविक है। इसपर किसी ख़ास चिन्ता की ज़रूरत नहीं। यह चीज़ थोड़े-से ध्यान से जल्द या देर से अपने-आप दूर हो जाती है। यह अलग बात है कि बच्चा अपने शिक्षकों, साथियों या अपने घर के सदस्यों के ताने, अपमान और अनुचित बरताव या किसी और वजह से हीनता और निराशा का शिकार हो जाए, जिससे बहरहाल बच्चों को बचाए रखने की पूरी कोशिश होनी चाहिए। हाँ, कुछ बच्चे सचमुच मन्दबुद्धि और बुद्धिहीन होते हैं और जानकारीवाले विषयों में उनका दिमाग़ साधारण बच्चों की तरह तीव्र गति से काम ही नहीं कर सकता और कुछ बौद्धिक दृष्टि से अच्छे-ख़ासे होने के बावजूद किसी-किसी विषय में पिछड़ जाते हैं। ये बच्चे हमारे ग़ैर-मामूली ध्यान देने के पात्र हैं।

बुद्धिहीन और मन्दबुद्धि बच्चों का फिसड्डीपन तो ख़ैर उनकी मानसिक दुर्बलता और समझने-बूझने की शक्ति की कमी के कारण होता है। उन्हें तो उनकी अपनी गति ही से चलाना उचित होगा, जिसके लिए पाठ्यक्रम, पाठ्य-विधि और समय-सारिणी सब में रिआयत रखनी होगी। रहे वे फिसड्डी बच्चे जो मानसिक रूप से तो नॉर्मल हैं, लेकिन कुछ कारणों से फिसड्डी हो गए हैं, तो पहले उन कारणों का पता लगाना होगा, जो उनके फिसड्डीपन का कारण बने हैं और इसी के लिहाज़ से कारण को दूर करने के उपाय करने होंगे।

फिसड्डीपन के कारण (Causes of Backwaedness)

फिसड्डीपन के आम तौर पर निम्नलिखित कारण होते हैं—

- बच्चों का पाबन्दी से स्कूल न जाना : ग़ैर-हाज़िरी, देर हाज़िरी या घंटों से खिसक जाने की आदत, चाहे उसके कारण कुछ ही क्यों न हों।
- शिक्षकों का अनुचित व्यवहार : पढ़ाने-लिखाने का दोषपूर्ण तरीक़ा और शिक्षा-सामग्री की कमी के कारण किसी विषय से बच्चे का विमुख या निराश हो जाना।
- बच्चों की उम्र और बौद्धिक योग्यताओं का लिहाज़ किए बिना उनसे बहुत ज़्यादा आशाएँ कर लेना और उनकी ताक़त से ज़्यादा उनपर बोझ लाद देना या किसी विषय की बाक़ायदा पढ़ाई शुरू करने में जल्दबाज़ी करना या समय बचाने के लिए योग्यता से ऊँची कक्षा में नामांकन कराना।
- प्रोन्नति देने में बहुत जल्दी या बहुत देर करना।
- स्थानान्तरण या अस्थिरता या किसी और कारण से एक स्कूल/मदरसे में जमकर शिक्षा दिलाने के बजाय जल्द-जल्द स्कूल/मदरसा बदलना।
- स्कूल/मदरसे और घर के बीच ताल-मेल और सहयोग की कमी।

कक्षा या स्कूल/मदरसे का अरुचिकर माहौल, जिससे स्कूल/मदरसे में जी ही न लगता हो।

- घर की प्रतिकूल परिस्थितियाँ : उदाहरण के लिए, माँ-बाप के आपसी रिश्ते में तनाव, बीमारी, अशिक्षा, परेशानी, ग़रीबी, बेकारी, साधनों के न होने या कम होने के कारण उनका बच्चों की शिक्षा-दीक्षा पर ध्यान न दे पाना या उनके साथ उचित रवैया न अपना सकना।
- बुरी संगति के कारण बच्चे का शिक्षा के बजाय दूसरी गतिविधियों में अपनी बुद्धि और शक्ति ख़र्च करना।
- बच्चे के कान या आँख का दोषपूर्ण होना।

फिसड्डीपन का इलाज (Remedies of Backwardness)

फिसड्डीपन एक ऐसी ख़तरनाक बीमारी है, जिसका अगर समय पर इलाज न किया जाए, तो बच्चे इल्म से कोरे रह जाते हैं और उनका भविष्य अन्धकारमय हो जाता है। माता-पिता और शिक्षकों की कोताहियों के कारण कभी-कभार अच्छे-भले बच्चे भी इस घातक बीमारी का शिकार होकर धीरे-धीरे अपने को तबाह कर लेते हैं।

बच्चों का अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टि से निरीक्षण करते रहना चाहिए और फिसड्डीपन के लक्षण उभरते ही सही कारण का पता लगाकर उन्हें समय पर ही दूर करने की कोशिश करनी चाहिए। अगर घर या स्कूल/मदरसे का माहौल ख़राब है, तो उसे ठीक करने की कोशिश करनी चाहिए। देखने या सुनने में दोष है, तो उसका इलाज कराना चाहिए। बहरहाल, जो कारण भी हो उसे दूर करने में जल्दी होनी चाहिए, तो उम्मीद है कि समय पर ही काम बन जाएगा। लेकिन अगर यह रोग किसी हद तक पुराना हो गया, तो निम्नलिखित उपाय अपनाए जाएँ—

- फिसड्डी बच्चों का एक अलग ग्रूप बनाकर उन्हें उनकी गति से चलाने के लिए अलग व्यवस्था की जाए। अगर उनकी कक्षा ही

अलग हो सके, तो ज़्यादा बेहतर होगा वरना दूसरे बच्चों के मुक़ाबले में उनपर ज़्यादा ध्यान दिया जाए और यथासम्भव व्यक्तिगत रूप से मदद करके उन्हें साथ ले चलने का प्रयास का किया जाए।

- उनको पाठ दोहराने और अभ्यास करने का ज़्यादा मौक़ा दिया जाए और स्कूल के अतिरिक्त समयों में भी उनपर कुछ समय ख़र्च किया जाए।
- उनको ऐसे अभ्यास दिए जाएँ, जिनको वे मामूली मेहनत से हल कर सकें। इस तरह उनका उत्साह भी बढ़ेगा और वे ज़्यादा दिलचस्पी और ध्यान से काम करने लगेंगे।
- पाठों को समझाने के लिए ज़्यादा से ज़्यादा शैक्षिक और सहायक सामग्री, नक़्शे, मॉडल, चार्ट इत्यादि इस्तेमाल किए जाएँ और 'करके सीखने' के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े उपलब्ध कराए जाएँ।

  पाठ्य सहगामी गतिविधियों और क्रिया-कलापों (Co-Curriculum Activities) आर्ट, क्राफ्ट और दूसरे कामों में ऐसे बच्चे अपेक्षाकृत ज़्यादा दिलचस्पी और महारत का सबूत देते हैं। इनमें उन्हें बढ़ाकर उनके अन्दर आत्मविश्वास पैदा कराया जाए, ताकि हीन भावना और निराशा दूर हो। इसी तरह धीरे-धीरे उनका पढ़ाई से भागना कम हो जाएगा।

  बेहतर हो अगर ऐसे विषय किसी दूसरे शिक्षक के हवाले कर दिए जाएँ, जो अधिक प्रेम और सहानुभूति से पढ़ा सके।
- ऐसे बच्चों को जो कुछ पढ़ाया-सिखाया जाए, उसकी ज़रूरत और फ़ायदे उनपर अच्छी तरह स्पष्ट कर दिए जाएँ।

फिसड्डी बच्चे बहरहाल हमारे ध्यान के ज़्यादा हक़दार हैं। उन्हें मायूसी और नाकामी से बचाने के हर सम्भव उपाय किए जाएँ और

अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश की जाए कि फिसड्डीपन का कारण हमारा उपेक्षापूर्ण व्यवहार न होने पाए।

थकान (Fatigue)

देर तक लिखने-पढ़ने या कोई बौद्धिक-शारीरिक काम करने से शरीर में थकावट के लक्षण प्रकट हो जाते हैं और आख़िरकार न दिमाग़ ठीक काम करता है और न शरीर में काम की शक्ति बाक़ी रहती है। यह थकान असल में एक तरह की चेतावनी है कि ताज़ा दम हुए बिना और काम न किया जाए वरना शरीर को नुक़सान पहुँचेगा।

थकान के कारण (Causes of Fatigue)

काम करने में ऊर्जा ख़र्च होती है। यह ऊर्जा शरीर ही के कुछ तत्त्वों के जलने से प्राप्त होती है। इन तत्त्वों को जलाकर उन्हें ऊर्जा में बदलने का काम ख़ून में मिली हुई ऑक्सीजन अंजाम देती है। अतः जब हम देर तक काम करते हैं तो—

- ऊर्जा में बदलनेवाले तत्त्व ज़ल जाते हैं।
- ख़ून में मिली हुई ऑक्सीजन की मात्रा घट जाती है और अधिक ऊर्जा पैदा करने के लिए ज़रूरत के मुताबिक़ ऑक्सीजन नहीं मिलती।
- जला हुआ शेष दूषित तत्त्व ख़ून में मिलकर पूरे शरीर में फैल जाता है। अतः शरीर के साथ दिमाग़ भी प्रभावित होता है और जोड़-जोड़ में, जहाँ दूषित तत्त्व रुकता है, दर्द होने लगता है। स्पष्ट है जब तक उनका निवारण न हो जाए और अधिक काम करना बहुत ही हानिकारक हो सकता है। लेकिन इसका यह हरगिज़ मतलब नहीं कि थकान के डर से ज़्यादा मेहनत न ली जाए।

थकान की बड़ी अहमियत है। बच्चे जब ख़ूब मेहनत करते हैं, तो

भूख भी खूब लगती है। खाना अच्छी तरह हज़म होता है। गहरी नींद आती है और शरीर की जो कोशिकाएँ बनती हैं, वह अधिक शक्तिशाली होती हैं और पलने-बढ़ने में मदद देती हैं।

थकान के प्रकार (Kinds of Fatigue)

थकान दो तरह की होती है—(1) मानसिक और (2) शारीरिक।

बौद्धिक काम करने से दिमाग़ थकता और मानसिक थकान (Mental Fatigue) हो जाती है और शारीरिक काम करने या खेलने-कूदने से शरीर थकता और शारीरिक थकावट (Physical Fatigue) हो जाती है। शारीरिक या मानसिक किसी एक तरह की थकान के भी बहुत बढ़ जाने से दूसरी तरह की थकान अपने-आप हो जाती है। शरीर थककर चूर-चूर हो जाए, तो दिमाग़ भी काम ठीक नहीं करता।

मानसिक थकान के भी दो प्रकार हैं– (1) वास्तविक थकान, (2) कृत्रिम थकान या विमुखता और उकताहट।

कृत्रिम थकावट के कारण भी काम में मन नहीं लगता और ऐसा महसूस होता है कि थकान हो गई है। ऐसी स्थिति में अगर किसी तरह दिलचस्पी पैदा कर दी जाए, तो और ज़्यादा काम हो सकता है।

थकान के लक्षण (Symtoms of Fatigue)

जब निम्नलिखित लक्षण प्रकट होने लगें तो समझना चाहिए कि बच्चे थक गए हैं और अब थकान को दूर करने के उचित उपाय किए जाने चाहिएँ—

शारीरिक थकान के लक्षण (Symptoms of bodily Fatigue)

- शरीर में ढीलापन, चुस्ती और हरकत में कमी।
- चेहरे में फीकापन, कुम्हलाहट।

- जोड़ों में दर्द होना, बार-बार अंगड़ाई लेना या जम्हाई आना या ऊँघना।
- अनचाही हरकतों का होना।
- सर लटक जाना, रीढ़ की हड्डी का झुक जाना, निगाहों का न जमना या खड़े होने में सहारा लेने की कोशिश करना।

मानसिक थकान के लक्षण (Symptoms of Mental Fatigue)

- ध्यान का बार-बार भकटना।
- याद्दाश्त में कमी आ जाना।
- प्रश्न हल करने या उत्तर देने में बार-बार ग़लतियाँ करना।
- समझाने पर बात समझ में न आना।
- चिन्तन-मनन और याद्दाश्त में कमी।
- बार-बार झुंझलाना या आवाज़ पर चौंक पड़ना इत्यादि।

जल्द थका देनेवाली परिस्थितियाँ

कार्य-कलाप पर उन परिस्थितियों का ग़ैर-मामूली असर पड़ता है, जिनमें कोई काम अंजाम दिया जा रहा हो। मौसम सुहाना और माहौल पूरा शान्त हो, काम दिलचस्प और तबीअत काम पर आमादा हो तो काम भी बहुत ही लगन और ध्यान से होता है और देर तक थकान भी महसूस नहीं होती। इसके विपरीत निम्नलिखित परिस्थितियों में बच्चे जल्द थक जाते और ध्यान, लगन और दिलचस्पी से काम करने के बजाय उकताहट और विमुखता का प्रदर्शन करने लगते हैं–

- कड़ा मौसम, कड़ाके की सर्दी, तीव्र गर्मी, तेज़ धूप, उमस, कोहरा और धुंध इत्यादि।
- मद्धिम रौशनी या साफ़ और खुली हवा की कमी।

- बहुत ज़्यादा या निरन्तर शोर-शराबा और डाँट-फटकार या सज़ा।
- ख़राब तन्दुरुस्ती, पौष्टिक भोजन न मिलना, अच्छे लिबास का न होना, बैठने की तकलीफ़देह जगह और कमरे का ठीक न होना।
- नैसर्गिक इच्छाओं या मूल प्रवृत्तियों की आवश्यकताओं का पूरा न होना।
- आमादा किए बिना पाठ शुरू करा देना या पाठ का मुश्किल, ग़ैर-दिलचस्प और समझने लायक़ न होना।
- एक ही तरह का काम एक ही अन्दाज़ या हाव-भाव में करते रहना; क्योंकि इस तरह शरीर के एक हिस्से के अंग ऊर्जा निकालते-निकालते जल्द थक जाते हैं।

इन कारणों को दूर करने के जिस हद तक उपाय किए जाएँगे, काम के अच्छे नतीजे (Performance) में उतनी ही वृद्धि होगी।

थकान का इलाज (Remedies of Fatigue)

बच्चे अगर वास्तव में थक जाएँ, तो उन्हें सुस्ताने के लिए कुछ छुट्टी मिलनी चाहिए और खाने के लिए ऐसा भोजन देना चाहिए, जिसमें मीठी चीज़ शामिल हो। इससे बच्चे ताज़ा दम होकर काम के लायक़ हो जाएँगे। लेकिन थकान बहुत ज़्यादा हो, तो मामूली आराम से काम नहीं चलता, बल्कि पूरा आराम और गहरी नींद भी ज़रूरी है; क्योंकि इसी तरह ऊर्जा पैदा करनेवाली जली हुई कोशिकाओं की जगह नई कोशिकाएँ तैयार हो सकेंगी।

चाय और कॉफ़ी इत्यादि से थोड़े समय के लिए ताक़त तो महसूस होने लगती है, लेकिन थकान का यह असल इलाज नहीं है, बल्कि इनका पीना और इनके सहारे देर तक काम करना, बच्चों तो क्या बड़ों के लिए भी बहुत ही नुक़सानदेह है।

इनके बजाय बच्चों के लिए भीगा हुआ चना या गुड़ और अगर गुंजाइश हो तो दूध, दही, फल इत्यादि का इस्तेमाल थकान को दूर करने में बहुत मददगार होता है। हाँ, अगर थकान मामूली हो या केवल उकताहट की वजह से बच्चे थकान ज़ाहिर करते हों, तो निम्नलिखित उपाय अपनाए जाएँ–

- विभिन्न उपायों से पाठ को दिलचस्प और समझने लायक़ बनाने की कोशिश की जाए।
- आमादगी, ख़ुशदिली, हिम्मत और हौसले के माहौल में बच्चों से काम लिया जाए।
- काम में परिवर्तन कर दिया जाए यानी मानसिक के बाद शारीरिक, मौखिक के बाद अमली, पढ़ाई की जगह लिखाई इत्यादि।
- विभिन्न उपायों से धीरे-धीरे बच्चों को देर तक जमकर काम करने का आदी बनाया जाए। बच्चों का ध्यान जल्द-जल्द भटकता रहता है और शुरू में एक चीज़ पर ज़्यादा देर तक जम नहीं पाते, लेकिन जब मेहनत के आदी हो जाते हैं, तो फिर देर तक थकान महसूस नहीं करते।

समय-सारिणी में थकान को ध्यान में रखना

टाइम-टेबुल बनाते समय थकान के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए–

- छोटे बच्चे बड़ों के मुक़ाबले में जल्द थक जाते हैं और थोड़ी-थोड़ी देर में उकताहट और बेज़ारी महसूस करने लगते हैं। इसलिए प्राथमिक कक्षाओं में घंटे गर्मियों में 30 और जाड़ों में 35 मिनट से ज़्यादा लम्बे न रखे जाएँ।
- गर्मियों में सुबह का स्कूल रखा जाए और दोपहर तक पढ़ाने का

काम ख़त्म कर दिया जाए। हाँ, सर्दियों में नियमानुसार दस बजे से चार बजे के बीच ही पढ़ाई मुनासिब रहेगी।

- शुरू के समय में बच्चे ताज़ा दम होते हैं। इसलिए कठिन विषय, जैसे गणित, भाषा इत्यादि पहली मीटिंग ही में रखे जाएँ। पहले घंटे में थकान तो नहीं होती, लेकिन बच्चों का ध्यान भटकता रहता है और आख़िरी घंटे में थकान प्रभावी होने लगती है। इसलिए बीच के घंटे ही कठिन विषयों के लिए निर्धारित होने चाहिएँ।

  अवकाश के बाद बच्चे किसी हद तक फिर ताज़ा दम हो जाते हैं। इसलिए दूसरी मीटिंग के बीच के घंटों में अपेक्षाकृत कम मुश्किल विषय रखे जा सकते हैं। जैसे सामाजिक विज्ञान, सामान्य विज्ञान इत्यादि। बाक़ी घंटों में आसान और दिलचस्प विषय या व्यावहारिक या लेखन कार्य रखे जाएँ। उदाहरण के लिए, इस्लामियात (क़ुरआन, हदीस, इस्लामी इतिहास आदि), आर्ट-क्राफ़्ट, श्रुतिलेखन, नक़ल, लेख लिखना आदि।

- विभिन्न घंटों में विषयों का क्रम ऐसा रखा जाए कि काम का रूप बदल जाए और एक ही तरह के विषय निरन्तर न पढ़ने पाएँ। उदाहरण के लिए, मौखिक कार्य के बाद लेखन-कार्य, मानसिक कार्य के बाद शारीरिक कार्य और सैद्धान्तिक काम के बाद व्यावहारिक काम हों। इस तरह थकान कम होगी ।

- कुछ समय के लिए छुट्टी थकान को कम करते हैं। इसलिए एक तिहाई शिक्षण-कार्य के बाद 10 मिनट का एक छोटा-सा अवकाश और दो तिहाई काम हो चुकने पर एक लम्बा अवकाश दिया जाए। छोटे बच्चों को अगर हर घंटे के बाद दो-चार मिनट मिल जाएँ, तो मुनासिब होगा। पहलू बदल लेने और थोड़ी देर उछल-कूद, दौड़-भाग कर लेने से ख़ून में मिला हुआ दूषित पदार्थ ख़ून के संचार के कारण

निकल जाता है और लम्बी सांस लेने से ऑक्सीजन की कमी भी पूरी हो जाती है।

- थकान और ध्यान में उतार-चढ़ाव जिस तरह हर रोज़ होता है, उसी तरह हफ़्तावार और सालाना भी होता है। हफ़्तावार छुट्टी के बाद जब बच्चे पहले दिन आते हैं तो छुट्टी की वजह से ताज़ा दम तो ज़रूर होते हैं, मगर छुट्टी की दिलचस्पियों के कारण पढ़ने-लिखने की तरफ़ ध्यान नहीं होता और अक्सर बच्चों को तो स्कूल आने पर ही तबीअत पर ज़बरदस्ती करनी पड़ती है। इसलिए पहले दिन पढ़ाने-लिखाने का काम हल्का-फुल्का और दिलचस्प होना चाहिए। हफ़्ते के बीच के दिनों में ध्यान और लगन में भी बढ़ोत्तरी हो जाती है और थकान भी ज़्यादा नहीं होती।

  हाँ, आख़िरी दिन थकान के बढ़ जाने की वजह से ध्यान भी भटकने लगता है और मेहनतवाले कामों में दिल नहीं लगता। इसलिए आख़िरी दिन भी हल्के-फुल्के और दिलचस्प काम होने चाहिएँ। उदाहरण के लिए, काम को दोहराना और छात्रों की गोष्ठी, स्कूल का कोई कार्यक्रम, पिकनिक, शैक्षणिक सैर-सपाटा, जनसेवा या सफ़ाई इत्यादि से सम्बन्धित काम।

  यही हाल शिक्षा-सत्र शुरू होने पर होता है। छुट्टियों में बच्चों पर शिक्षा का बोझ नहीं रहता। इसलिए शुरू में जब आते हैं, तो शरीर में ऊर्जा तो ख़ूब होती है, मगर लिखने-पढ़ने की तरफ़ ध्यान नहीं होता। इसलिए शुरू में कुछ दिनों हल्के-फुल्के काम देने चाहिएँ और पिछले काम की आवश्यक पुनरावृत्ति कराने के बाद नया काम शुरू करना चाहिए। फिर कुछ महीने ख़ूब मेहनत लेकर पुनरावृत्ति और छमाही[3] जाँच होनी चाहिए। इस दौरान भी अल्प अवकाशों की तरह कभी-कभार छुट्टियाँ मिलनी चाहिएँ या पिकनिक और घुमाने-फिराने

---

[3] अब तो सेमेस्टर-प्रणाली के अन्तर्गत साल में तीन-चार बार भी परीक्षाएँ ली जाने लगी हैं।—अनुवादक

ले जाना चाहिए और छमाही परीक्षा के बाद भी लम्बी छुट्टी की तरह एक-दो हफ़्ते की छुट्टी मिलनी चाहिए। इसी तरह दूसरे सत्र में काम करके लम्बी छुट्टी देनी चाहिए।

छुट्टियों के मामले में कुछ शिक्षण-संस्थाएँ कंजूस और ज़्यादातर बहुत ज़्यादा उदार होती हैं। दोनों बातें ग़लत हैं। छुट्टियों में कंजूसी भी सही नहीं है, न बहुत ज़्यादा छुट्टियाँ मुनासिब हैं। छुट्टियों का विभिन्न कारणों से बहुत अधिक महत्त्व है। मगर संतुलन को ध्यान में रखना चाहिए।

समय-सारिणी (Time-Table)

ज़रूरत और फ़ायदे

बच्चों की शिक्षा-दीक्षा की बहुत कुछ निर्भरता अच्छी समय-सारिणी पर है, क्योंकि इसकी वजह से—

- शिक्षा-दीक्षा का काम अच्छी तरह और क्रमवार होता है।
- समय बरबाद नहीं होता। सीमित समय में काफ़ी काम हो जाता है।
- हर ज़रूरी विषय और काम को मुनासिब वक़्त मिल जाता है और कोई भी नज़रअन्दाज़ नहीं होता।
- शिक्षकों की योग्यताओं के लिहाज़ से काम का बँटवारा होता है। अतः उनकी योग्यताओं से ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठाया जाता है।
- काम सन्तुलित होता है; क्योंकि इसकी वजह से शिक्षकों की रुचि और रुझान पर ज़रूरी रोक लग जाती है, वरना अगर पूरा वक़्त उनकी ख़ुद की समझ या विवेक पर छोड़ दिया जाए, तो ज़्यादातर शिक्षक अपनी रुचि और दिलचस्पी के विषय पर ही ज़्यादा वक़्त ख़र्च करेंगे और बहुत-से पहलू नज़रअन्दाज़ हो जाएँगे।
- समय की पाबन्दी, इसकी अहमियत का एहसास, मेहनत और लगन

और एक निश्चित क्रम से काम करने का सलीक़ा आता है।

- छात्र हर समय पढ़ने-लिखने के काम में लगे रहते हैं। इसलिए अनुशासन और सुव्यवस्था बनी रहती है। व्यस्त रहने के कारण शरारतों का मौक़ा नहीं मिलता। इसलिए सज़ा की भी कम ही नौबत आती है।

  छात्रों और शिक्षकों को मालूम रहता है कि किस घंटे में क्या करना है। इसलिए ज़रूरी तैयारी पहले ही से करने का मौक़ा मिल जाता है।

- प्रधानाध्यापक और संस्था के दूसरे ज़िम्मेदारों को हर समय इस बात की जानकारी हो सकती है कि कोई शिक्षक या किसी कक्षा के छात्र कहाँ और किस काम में लगे होंगे।

ध्यान देने योग्य बातें

प्रत्येक शिक्षण-संस्था में बहरहाल कोई न कोई समय-सारिणी होती ही है, जिसके मुताबिक़ उस संस्था में पढ़ाने-लिखाने का काम अंजाम दिया जाता है। लेकिन उनमें स्तरीय शायद ही कोई होती हैं, अगर होती भी हैं तो उनपर पूरी तरह अमल मुश्किल से ही होता है; क्योंकि–

- बहुत कम स्कूलों/मदरसों में ज़रूरतों और सलाहियतों की दृष्टि से स्टाफ़ पूरा होता है।
- ज़्यादतर स्कूलों/मदरसों में शिक्षकों के तबादले, इस्तीफ़े, निष्कासन, लम्बी छुट्टियाँ, नियुक्तियाँ इत्यादि शिक्षा-सत्र के दौरान भी चलती रहती हैं।
- समय-सारिणी बनाते समय जानकारी न होने या ध्यान न देने के कारण वे सभी काम नज़र के सामने नहीं रहते, जिनपर ध्यान देना ज़रूरी है।

इन रुकावटों को यथासम्भव कम करना चाहिए और ध्यान देने योग्य निम्नलिखित बिन्दुओं को सामने रखकर जिस हद तक सम्भव हो स्तरीय समय-सारिणी बनाना और उसके मुताबिक़ अमल होना चाहिए, ताकि पढ़ाई-लिखाई का काम अधिक से अधिक प्रभावकारी हो सके।

- सबसे पहले विषयों और कामों की सूची तैयार की जाए, फिर उनकी ताक़त और क़ीमत, महत्त्व और उपयोगिता, मुश्किल-आसान, दिलस्प या नीरस होने के दृष्टि से उनका वर्गीकरण कर लिया जाए। उदाहरण के लिए, इस्लामियात (इस्लामी विषय) सबसे अहम और बुनियादी विषय है। सभी विषयों और कामों में इसी की बुनियादी भावना काम करती रहेगी। खुद यह विषय भी बहुत विस्तृत और व्यापक है, क्योंकि इसमें क़ुरआन पाक का सही-सही नाज़रा पढ़ना और कुछ हिस्से याद करना, फ़िक़्ह (इस्लामी-विधान) और अक़ीदों और अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) और दूसरे नबियों और इस्लामी महापुरुषों की जीवनियाँ, नैतिकता और समाज इत्यादि से सम्बन्धित ज़रूरी जानकारियाँ और उचित प्रशिक्षण शामिल हैं। इसलिए इसमें सबसे ज़्यादा समय और ध्यान देना होगा।

  इसके बाद मातृभाषा और गणित का नम्बर है। प्राथमिक कक्षाओं में अगर इन दोनों विषयों में अच्छी योग्यता पैदा कर दी जाए, तो शेष विषय बहुत आसान हो जाते हैं। इसलिए इन दोनों को अपेक्षाकृत ज़्यादा समय मिलना चाहिए।

  शिक्षकों की संख्या, उनकी योग्यता और क्षमता, उनके अनुभव और उनकी पसन्द के विषयों और कामों का लिहाज़ किया जाए। शिक्षकों में काम का बंटवारा करते समय इसकी चिन्ता होनी चाहिए कि उनकी सलाहियतों से छात्रों को ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा पहुँच सके। यथासम्भव उनके मशवरे से काम का बँटवारा किया जाए, ताकि वे

पूरी आमादगी और ख़ुशदिली से अपने काम अंजाम दें।

प्राथमिक कक्षाओं में कक्षावार और बाद की कक्षाओं में विषयवार काम का बँटवारा उचित होता है। शुरू की दो-तीन कक्षाएँ बच्चों से फ़ितरी लगाव रखनेवाले अच्छे अनुभवी और मज़बूत इरादेवाले शिक्षकों के सुपुर्द होने चाहिएँ। प्राइमरी कक्षाओं के शिक्षकों में इतनी सलाहियत होनी ही चाहिए कि वे एक ही कक्षा के ज़्यादातर विषय पढ़ा सकें। थोड़ी-सी कोशिश के बाद हर शिक्षक इतनी सलाहियत हासिल कर सकता है।

कक्षा बहुत बड़ी नहीं होनी चाहिए वरना छात्रों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान नहीं दिया जा सकेगा और न समुचित शिक्षा-दीक्षा हो सकेगी। प्राथमिक कक्षाओं में 25-30 छात्रों से ज़्यादा नहीं होना चाहिए। शिक्षक संख्या में कम से कम इतने हों, जितनी कक्षाएँ हैं, ताकि एक शिक्षक को एक समय में एक ही कक्षा लेनी पड़े।

मजबूरी की हालत में अगर दो कक्षाएँ एक ही शिक्षक के सुपुर्द करनी पड़ें तो वही दो कक्षाएँ मिलाई जाएँ, जिनकी उम्रों और योग्यताओं में कम से कम अन्तर हो, ताकि साथ ले चलने में कठिनाई न हो, लेकिन दो प्राथमिक कक्षाओं के साथ शिक्षण-कार्य में दूसरी कक्षाओं को मिलाना किसी तरह उचित नहीं; क्योंकि वे हर समय ध्यान और लगन चाहते हैं।

- **थकान[4] और ध्यान पर नज़र :** स्कूल/मदरसा शुरू होते समय बच्चों में थकान तो नहीं होती, लेकिन ध्यान इधर-उधर भटकता रहता है। इसलिए फ़ौरन बाक़ायदा पढ़ाई-लिखाई फ़ायदेमन्द नहीं होगी। उचित यह है कि शुरू में कमो-बेश 30 मिनट निम्नलिखित ज़रूरी कामों पर लगाए जाएँ—

[4] थकान और ध्यान पर अलग से चर्चा की गई है। एक नज़र देख लें।

सबसे पहले तैयारी की घंटी बजाई जाए, ताकि सब बच्चे चौकन्ने हो जाएँ और अपनी गतिविधियों और व्यस्तताओं को कम कर दें। पाँच मिनट बाद दूसरी घंटी पर क़द के लिहाज़ से कक्षावार सभी छात्र स्कूल/मदरसे के प्रांगण में खड़े हो जाएँ। सभी शिक्षक भी मौजूद हों। एक शिक्षक 10 मिनट हल्की पी. टी. या ड्रिल कराएँ। फिर वर्ग-शिक्षक अपने-अपने वर्ग के बच्चों के शरीर और वस्त्र की सफ़ाई इत्यादि का जायज़ा लें। उसके बाद हम्द या तराना (प्रार्थना) सामूहिक रूप से ऊँची आवाज़ से पढ़ाएँ। आख़िर में ज़रूरी हिदायतें या एलान इत्यादि के बाद कक्षावार पंक्ति में शान्तिपूर्वक कक्षाओं में छात्रों को भेज दिया जाए, जहाँ क्लास-टीचर उनकी हाज़िरी लेकर बाक़ायदा पढ़ाई-लिखाई का काम शुरू करें। इस तरह यह ज़रूरी काम भी पूरे हो जाएँगे और ध्यान के भटकने की समस्या भी हल हो जाएगी।

प्राइमरी कक्षाओं के बच्चों का ध्यान जल्द-जल्द भटकता है और वे जल्द थक भी जाते हैं। इसलिए पीरियड (घंटे) गर्मियों में 30 और सर्दियों में 35 मिनट से ज़्यादा लम्बे नहीं होने चाहिएँ। पहले तीन पीरियड में बच्चे ताज़ा दम होते हैं। इनमें महत्त्वपूर्ण विषय जैसे इस्लामियात, उर्दू और हिसाब रखना चाहिए। फिर थोड़ी अवधि के लिए अवकाश देकर बच्चों को ताज़ा दम होने का मौक़ा देना चाहिए। इसके बाद दो पीरियड पढ़ाकर लम्बा अन्तराल देना चाहिए, ताकि बच्चे कुछ खा-पी सकें और ज़ुहर की नमाज़ पढ़ लें। इसके बाद ताज़ा दम होकर कुछ और काम कर लें—

- **परिवर्तन का ध्यान :** काम में एकरूपता से उकताहट भी पैदा होती है और जल्द थकान भी महसूस होने लगती है। इसलिए छात्र और शिक्षक दोनों की दृष्टि से काम के रूप में बदलाव होना चाहिए। एक शिक्षक के एक ही कक्षा में लगातर दो-तीन पीरियड से ज़्यादा न रखे जाएँ और न एक ही विषय या एक ही तरह के विषय

और काम रखे जाएँ, बल्कि पढ़ाने के काम के साथ और मौखिक और व्यावहारिक काम और मुश्किल के बाद आसान[5] विषय रखा जाए।

बच्चों को जगह और पहलू बदलने का मौक़ा भी मिलना चाहिए। एक ही अन्दाज़ से देर तक बैठने से जोड़ों में दर्द होता और थकान महसूस होने लगती है। आर्ट क्राफ़्ट, नाज़रा, क़िरअत इत्यादि के लिए अगर कमरे निर्धारित हों, तो विभिन्न कक्षाओं के बच्चों को अपनी कक्षा छोड़कर वहाँ जाना होगा और उनमें चुस्ती, फ़ुर्ती और ख़ुशी पैदा होगी।

इस तरह स्वाभाविक रूप से अध्ययन, ड्रिल और व्यावहारिक काम के लिए मैदान में जाने में भी आनन्द का अनुभव होगा।

- **शिक्षकों के ख़ाली घंटे :** कोशिश करनी चाहिए कि हर शिक्षक का प्रतिदिन कम से कम एक पीरियड ख़ाली हो। इससे कई फ़ायदे होंगे–

(1) किसी शिक्षक के आकस्मिक अवकाश (Casual Leave) के मौक़े पर ख़ाली घंटों में शिक्षकों से काम लिया जाएगा। इस तरह छात्रों का हरज भी नहीं होगा और वे अव्यवस्था से भी सुरक्षित रहेंगे।

(2) बच्चों के लेखन-कार्य की जाँच और उनसे सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के रिकॉर्ड तैयार करने का शिक्षकों को मौक़ा मिलेगा। अगर स्टाफ़ कम हों तो व्यावहारिक काम, खेल, आर्ट क्राफ़्ट इत्यादि में दो-दो कक्षाओं को एक साथ मिलाकर एक शिक्षक की निगरानी में दे दिया जाए और पहली और दूसरी कक्षाओं को आख़िरी घंटे में छुट्टी देकर, साथ ही प्रधानाध्यापक को कुछ पीरियड देकर

---

[5] मुश्किल और आसान की दृष्टि से विषयों का क्रम यह है–गणित, अन्य भाषा, इस्लामियात (इस्लामी विषय), मातृभाषा, सामान्य विज्ञान, इतिहास, भूगोल, लेखन-कार्य, आर्ट।

शिक्षकों के घंटे ख़ाली करने की कोशिश की जाए।

- **शोर-गुल का ध्यान :** बेहतर तो यही है कि विभिन्न कक्षाओं के लिए कमरे अलग-अलग हों, ताकि आवाज़ों के टकराने की आशंका न रहे, लेकिन अगर मजबूरी हो तो घंटों का क्रम इस ढंग से होना चाहिए कि वे सभी विषय जिनमें शिक्षकों को ऊँची आवाज़ से बोलना पड़ता है, विभिन्न कक्षाओं में एक ही पीरियड में न पड़ने पाएँ।

  उदाहरण के लिए, नाज़रा, क़िरअत, उर्दू पाठ, इतिहास, भूगोल इत्यादि वरना शोर भी ज़्यादा होगा और आवाज़ के टकराने से ध्यान भटकेगा। ऐसी स्थिति में एक कक्षा में आवाज़ से पढ़ाई हो रही हो तो दूसरे में हिसाब, ड्राइंग या लेखन-कार्य होना चाहिए।

- **पुनरावृत्ति और जाँच :** पढ़ाए हुए पाठों को दोहराने के लिए सप्ताह का आख़िरी दिन होना चाहिए; क्योंकि आख़िरी दिन तक थकान बढ़ जाती है और नए पाठ के लिए ज़ेहन तैयार नहीं रहता और जाँच हमेशा सप्ताह के पहले दिन रखना चाहिए, ताकि साप्ताहिक छुट्टी में बच्चों को तैयारी का मौक़ा मिल जाए।

- **समय-सारिणी :** समय-सारिणी ऐसी होनी चाहिए कि शिक्षकों और छात्रों को आसानी से याद हो जाए, ताकि प्रतिदिन हर घंटे में उसे देखने की ज़रूरत पेश न आए।

  जो विषय जिस घंटे में पहले दिन रखा जाए, कोशिश की जाए कि वह विषय सप्ताह भर उसी घंटे में पड़े। अगर किसी विषय के प्रतिदिन घंटे न हों, बल्कि सप्ताह में सिर्फ़ दो या तीन घंटे हों। उदाहरण के लिए, भूगोल और विज्ञान इत्यादि तो उन्हें लगातार दो-तीन दिन नहीं रख देना चाहिए, वरना दोबारा उनकी बारी में

अन्तराल लम्बा हो जाएगा, जिससे भूल जाने की आशंका रहेगी।

इस तरह के विषय एक-एक या दो-दो दिन के अन्तराल पर रखे जाएँ।

- शिक्षण-संस्थाओं की अपनी दिनचर्या और अपने नियम होते हैं और शिक्षकों तथा छात्रों को चाहिए कि वे अपने मामलों को बहरहाल उनके अधीन कर दें।

  फिर भी समय-सारिणी बनाते समय कोशिश होनी चाहिए कि ज़्यादातर लोगों को उसकी पाबन्दी में आसानी और सहूलत हो और नाश्ते, खाने, नमाज़, खेल, पाठ्य सहगामी क्रियाओं (Co-Gurriculum Activities) और आराम इत्यादि के समुचित अवसर मिल सकें।

  यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि क़ुरआन पाक की पढ़ाई जहाँ तक सम्भव हो पहले घंटे में या लम्बे अन्तराल में रखी जाए, ताकि बच्चे क़ुरआन बावुज़ू पढ़ने के आदी हो सकें और उन्हें वुज़ू में कठिनाई न हो।

- बाल-गोष्ठी, शैक्षिक भ्रमण और पिकनिक : इनके लिए भी सप्ताह का आख़िरी दिन उचित होगा। इज्तिमा के लिए घंटे पाँच-पाँच मिनट कम कर दिए जाएँ और आख़िरी घंटा ख़त्म करके कमों-बेश डेढ़ घंटे का प्रोग्राम रख दिया जाए, जिसमें बच्चे भाषण, कविताएँ, कहानियाँ, लतीफ़े इत्यादि पेश करें।

  इसी तरह बाहर ले जाने के लिए भी यही दिन उपयुक्त है; क्योंकि इसके बाद आराम के लिए छुट्टी मिल जाएगी।

- अपनी संस्था की स्थिति को ध्यान में रखना : किसी दूसरी शिक्षण-संस्था की समय-सारिणी चाहे कितनी ही अच्छी और स्तरीय क्यों न हो, उसकी हू-ब-हू नक़ल किसी दूसरी संस्था के

लिए फ़ायदेमन्द नहीं हो सकती।

हर संस्था को अपनी परिस्थिति, आवश्यकताओं और अपने शिक्षकों की संख्या, उनकी योग्यता, बिल्डिंग में गुंजाइश इत्यादि को ध्यान में रखकर अपनी समय-सारिणी ख़ुद बनानी चाहिए।

- **समय-सारिणी तीन होनी चाहिएँ–**

(1) पूरी संस्था की सामूहिक, जिसकी एक प्रति प्रधानाचार्य के पास और दूसरी नोटिस बोर्ड पर चिपकाई जानी चाहिए। यह समय-सारिणी इतनी स्पष्ट होनी चाहिए कि देखनेवाला आसानी से अन्दाज़ा लगा सके कि किस कक्षा और किस घंटे में कौन-से शिक्षक क्या विषय पढ़ा रहे हैं और किस कक्षा का वर्ग-शिक्षक कौन है और शिक्षण-संस्था में क्या काम होता है।

(2) **कक्षाएँ और विस्तृत समय-सारिणी :** हर कक्षा के वर्ग-शिक्षक सामूहिक समय-सारिणी में से अपनी कक्षा का अंश नक़ल करके कक्षा में लगा दें और छात्रों को नोट करा दें। पढ़ाए हुए पाठ को देखना, होमवर्क देने और पाठ्यसहगामी क्रियाओं का प्रोग्राम भी इसमें दर्ज होना चाहिए।

(3) **शिक्षकों के काम का विवरण :** इसमें यह दिखाया जाए कि हर शिक्षक सप्ताह भर विभिन्न घंटों में किस-किस कक्षा में क्या-क्या विषय पढ़ाता है और कौन-कौन-से घंटे ख़ाली रहते हैं। यह भी प्रधानाध्यापक के ऑफ़िस में होना चाहिए।

हर शिक्षक को अपने से सम्बद्ध हिस्सा अपनी डायरी में नक़ल कर लेना चाहिए। उनके नमूने अगले पन्ने पर दिए जाते हैं–

ली मीटिंग)—9:55 समय-सारिणी स्कूल मदरसा एक जुलाई सन्........से घंटी की तैयारी (दूसरी मीटिंग)—1:45

क	10:10-10:15	10:15-10:20	पहली घंटी 10:20—10:50	दूसरी घंटी 10:50—11:20	तीसरी घंटी 11:20—11:50	चौथी घंटी 11:20—12:20	पाँचवीं घंटी 12:20—12:50	12:50-1:45	1:45-1:50	छठी घंटी 01:50—2:20	सातवीं घंटी 2:20—2:50	आठवीं घंटी 2:50 —3:20
ा सहायक	सामूहिक हाज़िरी	कक्षावार हाज़िरी	क़ुरआन मजीद अब्दुल वहाब	गणित क़ादिर अली	गणित क़ादिर अली	उर्दू अब्दुल वहाब	उर्दू अब्दुल वहाब	भोजन और ज़ुहर की नमाज़ के लिए अवकाश	दूसरी हाज़िरी	आर्ट/क्राफ्ट अ. ग़फ़्फ़ार	भूगोल/विज्ञान अब्दुल वहाब	वुज़ू व नमाज़ अमली क़ादिर अली
अली सहा.			क़ुरआन मजीद क़ादिर अली	उर्दू अ. वहाब	उर्दू अ. वहाब	गणित क़ादिर अली	गणित क़ादिर अली			आर्ट/क्राफ्ट क़ादिर अली	भूगोल/विज्ञान क़ादिर अली	वुज़ू व नमाज़ अमली क़ादिर अली
ग़फ़्फ़ार			क़ुरआन मजीद अब्दुल ग़फ़्फ़ार	गणित अमीन	गणित/उर्दू अमीन/ ग़फ़्फ़ार	उर्दू अ. ग़फ़्फ़ार	आर्ट/क्राफ्ट अ. ग़फ़्फ़ार			हिन्दी मु. अमीन	भूगोल/विज्ञान क़ादिर अली	इस्लामियात अ. मजीद
न शिक्षक			क़ुरआन मजीद मु. अमीन	उर्दू अब्दुल ग़फ़्फ़ार	उर्दू/गणित ग़फ़्फ़ार, मु. अमीन	गणित मु. अमीन	हिन्दी मु. अमीन			इस्लामियात अ. मजीद	भूगोल/विज्ञान मु. अमीन	आर्ट/क्राफ्ट अ. ग़फ़्फ़ार
मजीद ख़ाँ			क़ुरआन मजीद अ. मजीद	गणित अ. मजीद	गणित/उर्दू अ. मजीद	उर्दू अ. मजीद	इस्लामियात अ. मजीद			भूगोल/विज्ञान अब्दुल वहाब	हिन्दी अ. मजीद	आर्ट/क्राफ्ट अ. ग़फ़्फ़ार
												अ. वहाब मु. अमीन

समय-सारिणी

घंटी की तैयारी—9:55 वर्ग—III स्कूल/मदरसा............... 1 जुलाई सन्...............

दिन	10:00-10:15	10:15-10:20	I 10:20-10:50	II 10:50-11:50	III 11:50-12:20	IV 12:20-12:50	V 12:50-1:20	1:20-1:45	1:45-1:50	VI 1:50-2:20	VII 2:20-2:50	VIII 2:50-3:20	IX 3:20-3:50	व्यक्तिगत मुलाकात	अभियुक्ति
शनिवार			नाज़रा अ. गफ्फार	गणित लिखित मु. अमीन	गणित मौखिक मु. अमीन	उर्दू पढ़ना अ. गफ्फार	आर्ट अ. गफ्फार			हिन्दी पढ़ना मु. अमीन	भूगोल अब्दुल गफ्फार	फ़िक़ह और अक़ाइद अब्दुल मजीद	बाग़बानी मु. अमीन		
रविवार	सामूहिक उपस्थिति	कक्षावार उपस्थिति	नाज़रा "	"	उर्दू नकल अ. गफ्फार	"	क्राफ्ट "	भोजन व नमाज़ के लिए अवकाश	दूसरी उपस्थिति	"	सामान्य विज्ञान "	"	खेल या पी. टी. "		
सोमवार			हिफ़्ज़ "	"	गणित मौखिक मु. अमीन	"	आर्ट "			हिन्दी लिखना "	भूगोल "	नबी की जीवनी और पैग़ाम "	बाग़बानी "		
मंगलवार			नाज़रा "	"	उर्दू रचना अ. गफ्फार	"	क्राफ्ट "			हिन्दी पढ़ना "	सामान्य विज्ञान "	फ़िक़ह और अक़ाइद "	खेल या पी. टी. "		
बुधवार			नाज़रा "	"	गणित मौखिक मु. अमीन	"	आर्ट "			"	भूगोल सामान्य विज्ञान "	"	बाग़बानी "		
बृहस्पतिवार			दोहराना "	"	उर्दू इमला अब्दुल गफ्फार	"	क्राफ्ट "			हिन्दी लिखना "		नबी की जीवनी और पैग़ाम "	साप्ताहिक इज्तिमा		
एक जुलाई सन्													अब्दुल गफ्फार क्लास टीचर		

रजिस्टर और अन्य रिकॉर्ड

प्रत्येक व्यवस्थित शिक्षण-संस्था को विभिन्न प्रकार के रजिस्टर और फ़ाइलें रखनी पड़ती हैं। इनमें शिक्षण-संस्था से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के रिकॉर्ड सुरक्षित रहते हैं। इनका रखना विभिन्न कारणों से अत्यन्त आवश्यक है–

ज़रूरत और अहमियत

- इनके द्वारा शिक्षण-संस्था की प्रगति की गति का अन्दाज़ा हो सकता है।
- शिक्षक और छात्रों इत्यादि के बारे में जानकारी हासिल हो सकती है।
- शिक्षण-संस्था की ज़रूरतों का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है।
- शिक्षण-संस्था के आय-व्यय के बारे में जानकारी हासिल हो सकती है।
- शिक्षण-संस्था के पदाधिकारियों, शिक्षकों और बच्चों के अभिभावकों को छात्रों की हाज़िरी, परीक्षाफल, प्रगति की गति इत्यादि का अन्दाज़ा हो सकता है।
- शिक्षण-संस्था के बारे में ज़िम्मेदारों के मन्तव्य, आदेश और निर्देश इत्यादि की जानकारी मिल सकती है।
- शिक्षण-संस्था के कल्याण और उसकी प्रगति के बारे में सोच-विचार करने और भविष्य के लिए योजना बनाने में मदद मिल सकती है। छात्रों की सन्तुलित शिक्षा-दीक्षा, प्रगति और वर्गीकरण में आसानी होती है।

ध्यान देने योग्य बातें

रजिस्टर और फ़ाइलें इत्यादि रखने के बारे में निम्नलिखित बातें नज़र के सामने रहनी चाहिएँ–

ऐसे उपाय अपनाए जाएँ, जिनसे ऑफ़िस के क़ाम कम से कम करना पड़े।

वही रिकॉर्ड रखे जाएँ, जो वास्तव में बहुत ज़रूरी हों, जिनके बिना काम चल सकता हो, उनपर समय और शक्ति बरबाद करना सही नहीं। कुछ शिक्षण-संस्थाएँ अपने शिक्षकों का समय अकारण ऐसे रिकॉर्ड रखवाने पर बरबाद कराती हैं, दिखावे के सिवा जिनका कोई लाभ नहीं होता। वही समय अगर कमज़ोर छात्रों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देने पर ख़र्च किया जाए, तो कहीं ज़्यादा फ़ायदेमन्द हो सकता है।

- बहुत सावधानीपूर्वक रिकॉर्ड रखे जाएँ। शुद्धता के साथ आवश्यक जानकारियों को लिखने का पूरा प्रबन्ध और प्रयास किया जाए, ताकि जानकारियाँ अधूरी न रहें और उनपर पूरा भरोसा किया जा सके।
- रिकॉर्ड रखने के पीछे शिक्षकों का इतना समय न ख़र्च किया जाए कि पढ़ाई-लिखाई से सम्बन्धित उनके ज़रूरी काम प्रभावित हो जाएँ। बेहतर हो कि इस तरह के कामों के लिए प्रतिदिन दो-एक पीरियड ख़ाली रखे जाएँ और मासिक रिकॉर्ड रखने और रजिस्टर इत्यादि पूरे करने के लिए महीने के अन्तिम दिन को दूसरी मीटिंग में छात्रों को छुट्टी दे दी जाए।
- हर काम के लिए यथासम्भव अलग-अलग फ़ाइलें और रजिस्टर रखे जाएँ। इस तरह ज़रूरत के समय पर आसानी से जानकारियाँ हासिल हो सकती हैं।
- ज़रूरी चीज़ समय पर लिख दिए जाएँ, ताकि रिकॉर्ड पूर्ण रहा करें। इसमें देरी न की जाए, वरना ऐसे अधूरे रिकॉर्ड से उनके रखने का उद्देश्य ही ख़त्म हो जाएगा।
- हर शिक्षण-संस्था को निम्नलिखित रजिस्टर रखने चाहिएँ—

(1) दाख़िल[1]-ख़ारिज रजिस्टर

यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण रजिस्टर है। इसमें नामांकन करानेवाले प्रत्येक छात्र के बारे में विस्तृत जानकारी होती है। उदाहरण के लिए, नामांकन क्रमांक, छात्र का नाम, जन्म-तिथि, माँ-बाप का नाम पूरा पता सहित, अभिभावक का नाम पूरा पता सहित (अगर बाप के अलावा हों), धर्म या पंथ, बाप या अभिभावक के रोज़गार का साधन, कक्षा जिसमें दाख़िल हुआ है, हर कक्षा से प्रोन्नति की तारीख़ें, स्कूल/मदरसा छोड़ने की तारीख़ कारण सहित, चाल-चलन इत्यादि।

इस रजिस्टर के सभी विवरण समय पर और बहुत सावधानी से लिखे जाने चाहिएँ।

(2) छात्र-हाज़िरी रजिस्टर

यह दूसरा महत्त्वपूर्ण रजिस्टर है। स्कूल/मदरसे में अगर छात्रों की संख्या बहुत कम हो तब तो ख़ैर एक ही रजिस्टर से काम चलाया जा सकता है वरना हर कक्षा का अलग रजिस्टर होना चाहिए। हाज़िरी रजिस्टर रखने और पाबन्दी से हाज़िरी लेने की ज़िम्मेदारी वर्ग-शिक्षक की है। हाज़िरी समय पर ही होनी चाहिए। ग़ैर-हाज़िरी या देर हाज़िरी पर छात्रों से पूछगछ करनी चाहिए और उन्हें अभिभावकों की पुष्टि, आवेदन भेजकर छुट्टी लेने का पाबन्द बनाना चाहिए। कुछ स्कूलों/मदरसों में मासिक शुल्क (Monthly Fees) के विवरण भी इसी रजिस्टर में होते हैं। ये बातें बहुत ही सावधानी से लिखे जानी चाहिएँ और प्रतिदिन या फ़ीस के दिन जो रक़म जमा हो, उसे तुरन्त ख़ज़ांची के पास जमा कर देना चाहिए। प्रत्येक महीने के अन्त में प्रत्येक छात्र के पूरे महीने की हाज़िरी के हिसाब और पिछली हाज़िरी को मिलाकर पूरा हिसाब और फ़ीस का

---

[1] नामांकन-निर्गमन रजिस्टर, हाज़िरी रजिस्टर और छात्रों का प्रगति-पत्रक मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली से मँगवा सकते हैं।

पूर्ण विवरण तैयार करके प्रधानाध्यापक से हस्ताक्षर करा लेना चाहिए। प्रतिदिन हाज़िरी के बाद भी हाज़िर छात्रों की संख्या लिखकर हस्ताक्षर नीचे कर देना चाहिए।

(3) शिक्षक-हाज़िरी रजिस्टर

यह भी बहुत ही ज़रूरी रजिस्टर है। अगर शिक्षकों की संख्या कम हो तो रजिस्टर के बजाय एक मामूली कॉपी से यह काम लिया जा सकता है। यह रजिस्टर स्टाफ़ रूम में होना चाहिए। शिक्षकों को हाज़िरी की घंटी से कम से कम पाँच मिनट पहले पहुँचकर पाबन्दी से इसमें अपने नाम के सामने हस्ताक्षर करके आने का (और अगर ज़रूरत महसूस हो तो जाने का भी) समय नोट कर देना चाहिए। इस रजिस्टर में छुट्टियों का विवरण और हर शिक्षक की छुट्टी की स्थिति दर्ज होनी चाहिए। शिक्षकों को पाबन्द बनाना चाहिए कि वे लिखित आवेदनों के द्वारा छुट्टी लिया करें, जिसकी मंज़ूरी संस्था के व्यवस्थापक या जो भी इसके इंचार्ज हो उससे पहले ही हासिल कर लेनी चाहिए, यह अलग बात है कि कोई हंगामी ज़रूरत पेश आ जाए और ऐसा करना मुमकिन न हो। ऐसा हरगिज़ नहीं सोचना चाहिए कि छुट्टियों के अधिकार को हर हाल में इस्तेमाल ही करना है, बल्कि इसे ऐसी छूट समझना चाहिए, जो मजबूरी की हालत में क़बूल किया जाए। महीने के आख़िर में पूरे महीने की हर तरह की छुट्टियों का हिसाब नोट कर दिया जाए। साथ ही सत्र के शुरू से अब तक जिस तरह की छुट्टी ली गई हो, उसका भी अलग-अलग विवरण दे दिया जाए। उदाहरण के लिए, आकस्मिक अवकाश, बीमारी की छुट्टी इत्यादि। स्वीकृत या अस्वीकृत आवेदन सावधानीपूर्वक ऑफ़िस में सुरक्षित रहने चाहिएँ।

(4) भुगतान-रजिस्टर

हर संस्था में एक भुगतान-रजिस्टर भी होना चाहिए, जिसमें

शिक्षण-संस्था के सभी कर्मचारियों के नाम, पद, वेतन, भत्ते, कटौतियाँ इत्यादि दर्ज होने चाहिएँ और वेतन देते समय हर कर्मचारी से उसपर हस्ताक्षर लेने चाहिएँ। स्टाफ़ अगर कम हो तो रजिस्टर के बजाय एक मामूली कॉपी से काम चल सकता है।

(5) आय-व्यय-रजिस्टर (कैश बुक)

शिक्षण-संस्था में हर रोज़ जो लेन-देन भी हो उसको पाबन्दी से इस रजिस्टर में लिखा जाना चाहिए— फ़ीस, अनुदान, चन्दे इत्यादि आय के ख़ाने में और वेतन, छात्रवृत्तियाँ, ख़रीदी गई चीज़ों की क़ीमतें इत्यादि ख़र्च के ख़ाने में। जो आमदनी भी हो वह रसीदों के द्वारा होनी चाहिए और जो ख़र्च भी हो उसकी रसीदें और वाउचर सुरक्षित होने चाहिएँ। हिसाब-किताब निहायत साफ़ रखना चाहिए, ताकि किसी को किसी तरह के शक की गुंजाइश न रहे।

आमदनियाँ ख़ज़ांची के पास जल्द से जल्द जमा कर दी जाया करें। अपने पास बिलकुल न रखने चाहिएँ।

(6) स्टॉक रजिस्टर

एक स्टॉक रजिस्टर भी ज़रूरी है जिसमें स्कूल/मदरसे की मौजूद सामानों को लिखा जाता हो। स्कूल/मदरसे के लिए जब भी कोई स्थायी स्वरूप की कोई चीज़ ख़रीदी या कहीं से हासिल की जाए, उसे स्टॉक रजिस्टर में उसी समय दर्ज कर देना चाहिए। उदाहरण के लिए, मेज़, कुर्सियाँ, अलमारियाँ, लोटे, ब्लैकबोर्ड, खेल का सामान, सन्दूक़ इत्यादि। चीज़ों के नाम और तादाद के साथ ख़रीदने की तारीख़ और क़ीमत भी लिखी जानी चाहिए।

स्कूल/मदरसे की पूरी सम्पत्ति की देखभाल, सुरक्षा और स्टॉक रजिस्टर की समय-समय पर जाँच होनी चाहिए। जो चीज़ें टूट-फूट जाएँ

या कम हो जाएँ, संस्था के किसी ज़िम्मेदार की जानकारी और आदेश से उन्हें निकाल दिया जाना चाहिए या उनका बदल मुहैया कर देना चाहिए।

(7) निरीक्षण रजिस्टर

हर स्कूल/मदरसे में एक निरीक्षण रजिस्टर भी होना चाहिए, जिसमें संस्था के ज़िम्मेदार और सक्षम व्यक्तियों की अभियुक्तियाँ, हिदायतें और मशवरे दर्ज हुआ करें।

(8) लाइब्रेरी रजिस्टर

स्कूल/मदरसे की लाइब्रेरी का भी एक रजिस्टर होना चाहिए, जिसमें क्रमांक, किताब का नाम, लेखक, ख़रीदने की तारीख़, क़ीमत इत्यादि दर्ज होनी चाहिए। अगर लाइब्रेरी बड़ी हो, तो एक रजिस्टर ऐसा होना चाहिए जिसमें सभी किताबों का नाम विषयवार लिखा गया हो। उदाहरण के लिए, क़ुरआन की तफ़सीरें (भाष्य), हदीसें, फ़िक़्ह, इस्लामी इतिहास, उर्दू साहित्य, गणित, इतिहास, भूगोल के तहत, इससे अपनी रुचि और ज़रूरत की किताब आसानी से तलाश की जा सकती है।

(9) आदेश-निर्देश रजिस्टर

एक रजिस्टर ऐसा भी होना चाहिए, जिसमें प्रधानाध्यापक या संस्था के ज़िम्मेदार की तरफ़ से समय-समय पर दिए जानेवाले निर्देश, आदेश, सूचनाएँ (Notice) इत्यादि दर्ज की जाएँ। हर आदेश पर सम्बन्धित व्यक्तियों के हस्ताक्षर करा लेने चाहिएँ।

नोटिस अगर छात्रों से सम्बन्धित हो, तो जिस कक्षा में जो शिक्षक सुनाए वह हस्ताक्षर के नीचे कक्षा का नाम भी लिख दे।

(10) पत्राचार रजिस्टर

शिक्षण-संस्था में हासिल होनेवाले या शिक्षण-संस्था की तरफ़ से दूसरों को लिखे जानेवाले पत्रों के बारे में ज़रूरी याद्दाश्त के लिए एक

रजिस्टर होना चाहिए, जिसमें पत्र भेजने या आने की तारीख़, पानेवाले (Addressee) या भेजनेवाले (प्रेषक) या लिखनेवाले का नाम और संक्षेप में चिट्ठी का विषय लिखा जाना चाहिए, ताकि समय पर हवाला दिया जा सके। इन रजिस्टरों के अलावा शिक्षण-संस्था के हर स्टाफ़ की एक फ़ाइल होनी चाहिए, जिससे उसके बारे में ज़रूरी काग़ज़ और जानकारियाँ सुरक्षित रहें। मिसाल के तौर, नियुक्ति का आदेश, शर्तें, शैक्षिक योग्यता, ग्रेड, कारकर्दगी की रिपोर्ट, प्रोन्नति और अवनति, विशेष अवकाश इत्यादि। इसके अलावा हर शिक्षक के पास डायरी होनी चाहिए, जिसमें समय पर ही ज़रूरी बातें दर्ज हों और प्रधानाध्यापक उनकी जाँच कर लिया करे।

डायरी में सम्बन्धित विषय का संक्षिप्त और पूर्ण पाठ्यक्रम, पूरे साल के शिक्षण की रूप-रेखा, शिक्षण-विधि के बारे में संक्षिप्त नोट इत्यादि दर्ज होना चाहिए।

पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ (Co-Curriculum Activities)

माता-पिता और शिक्षकों की यही इच्छा होती है कि बच्चे लिखने-पढ़ने में तेज़ हों और मेहनत से किताबी ज्ञान प्राप्त करें। निस्संदेह उनकी यह इच्छा जाइज़ है और इसे प्राप्त करने की पूरी कोशिश भी होनी चाहिए, लेकिन अकेले किताबी ज्ञान से शिक्षा के बहुमुखी उद्देश्य हरगिज़ पूरे नहीं हो सकते। इसलिए विभिन्न प्रकार की ऐसी गतिविधियों और कार्य-कलापों का भी प्रबन्ध करना होगा, जिनमें व्यावहारिक रूप से भाग लेकर छात्र अपने व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को उजागर कर सकें। इन्हीं को पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ (Co-Curriculum Activities) कहते हैं। इनकी महत्ता और उपयोगिता पाठ्यक्रम पर आधारित शिक्षा से किसी तरह कम नहीं है। इसलिए आजकल स्कूलों/मदरसों में इनपर बहुत ज़्यादा ध्यान दिया जा रहा है।

कार्य-कलाप और गतिविधियाँ

स्कूलों/मदरसों में अगर निम्नलिखित गतिविधियाँ और कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ और बच्चों को उनमें व्यावहारिक रूप से हिस्सा लेने के पूरे मौक़े मिलें, तो उनके प्रशिक्षण में बड़ी मदद मिल सकती है—

- **बाल-गोष्ठियाँ आयोजित करना :** हर बृहस्पतिवार (Thursday) या शनिवार (Saturday) को घंटे का समय कम करके इनके लिए समय निकाला जाए। महीने में तीन बाल-गोष्ठियाँ तो वर्ग-शिक्षक की देख-रेख में कक्षावार हों; पहली गोष्ठी व्यवस्था और प्रशिक्षण के लिए, जिसमें कक्षा की सफ़ाई, सजावट, व्यवस्था, छात्रों के हित और कल्याण इत्यादि से सम्बन्धित मनूसूबे बनाए जाएँ और छात्रों में व्यक्तिगत और सामूहिक हैसियत से ज़िम्मेदारियों का बँटवारा किया जाए।

  दूसरी गोष्ठी में बच्चे भाषण, लेखन, कहानियाँ, कविताएँ, चुटकुले, लतीफ़े इत्यादि पेश करने का अभ्यास करें। कोशिश की जाए कि कक्षा का हर बच्चा एक बार कुछ न कुछ ज़रूर पेश करे।

  अन्तिम गोष्ठी पूरे स्कूल/मदरसे का हर महीने हो, जिसमें सभी बच्चे शामिल हों और हर कक्षा के प्रतिनिधि प्रोग्राम में व्यावहारिक रूप से हिस्सा लें। इन गोष्ठियों में शुरू से लेकर प्रोग्राम को अन्तिम चरण तक पहुँचाने का सारा काम शिक्षकों की देख-रेख और मार्गदर्शन में खुद छात्र और उनकी टोलियाँ अंजाम दें। अध्यक्ष, सचिव इत्यादि बच्चे ही हों और उन्हीं के नेतृत्व में प्रोग्राम चलाया जाए।
- स्कूल/मदरसों के समारोह, अभिभावकों की बैठकें, मेहमानों की देख-भाल, पुरस्कार-वितरण-समारोह, शिक्षा-सप्ताह इत्यादि के विभिन्न प्रोग्रामों और इन्तिज़ामों में व्यावहारिक रूप से हिस्सा लेने के मौक़े मुहैया कराना।

- छात्रों की विभिन्न प्रकार की समितियों का गठन, जिनके ज़िम्मे निम्नलिखित काम हों और जिन्हें वे शिक्षकों के मार्गदर्शन में अच्छी तरह अंजाम दें—

(1) सामान्य स्वास्थ्य और सफ़ाई-सुथराई की देख-भाल, खेल, पी॰ टी॰ और विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताओं का आयोजन।

(2) पिकनिक, शैक्षिक भ्रमण, हस्तलिखित पत्रिका, वाचनालय, नए, कमज़ोर, असहाय और निर्धन छात्रों की मदद, बच्चों की दुकान, खाने की सामूहिक व्यवस्था।

(3) प्रदर्शन और स्कूल/मदरसे के संग्रहालय (Museum) के लिए दुर्लभ चीज़ें जमा करना और सामान तैयार करना, मेज़बानी, रोगियों को देखने जाना और उनकी सेवा-सुश्रूषा करना इत्यादि।

(4) छात्रों को विभिन्न सामाजिक शिष्टाचार और तौर-तरीक़े सीखने, नियमों की पाबन्दी करने, शरारतों और बुराइयों से बचाने, नमाज़ की पाबन्दी करने में मदद।

महत्त्व और उपयोगिता

इन क्रिया-कलापों और गतिविधियों का बड़ा महत्त्व है। इनके द्वारा—

- बच्चों के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का समान रूप से विकास होगा।
- किताबों में जो कुछ पढ़ते हैं, उसको ज़िन्दगी में बरतने के मौक़े मिलेंगे और वे किताबी कीड़ा बनने के बजाय व्यवहार-कुशल आदमी बनेंगे।
- ज़िम्मेदारी का एहसास, नियम-क़ानून की पाबन्दी, लगन, मदद, त्याग, सेवा इत्यादि के सामूहिक गुण और रचनात्मक ख़ूबी पैदा करने में मदद मिलेगी।
- फ़ुरसत के समय को दिलचस्प, फ़ायदेमन्द और सामूहिक हित के कामों और क्रिया-कलापों में इस्तेमाल करने की ट्रेनिंग होगी।

स्कूल/मदरसे, घर और समाज के बीच जो खाई पैदा हो गई है, उसे पाटने में मदद मिलेगी।

बच्चों की विशेष और स्वाभाविक योग्यताओं को बढ़ाने और विकसित करने के अवसर मिलेंगे।

- हर स्वभाव, प्रवृत्ति और योग्यतावाला बच्चा स्कूल/मदरसे के सन्तुलित जीवन में दिलचस्पी लेने लगेगा और वह शिक्षा से भागने से बचा रहेगा।

मगर ये लाभ उसी समय हो सकते हैं जब—

हर बच्चे को उसकी योग्यता के मुताबिक़ व्यावहारिक रूप से भाग लेने का मौक़ा मिले। कोई बच्चा वंचित न रह जाए। सुस्त, शर्मीले और कम हिम्मत बच्चों को भी भाग लेने पर उभारा जाए।

हर प्रोग्राम उद्देश्यपूर्ण, लाभप्रद और संस्था के मूल उद्देश्य से मेल खाता हो और बच्चे के व्यक्तित्व के किसी न किसी पहलू के प्रशिक्षण से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध रखता हो।

छात्रों की दिलचस्पियों, इच्छाओं और उमंगों का यथासम्भव ध्यान रखा जाए, ताकि वे पूरे उत्साह और लगन से हिस्सा लें।

उचित सीमाओं में आज़ादी दी जाए। ज़ोर-ज़बरदस्ती, दबाव और अनुचित हस्तक्षेप से परहेज़ किया जाए।

संस्था की गुंजाइश और क्षमता, शिक्षकों की योग्यता और क्षमता को देखते हुए विभिन्न प्रकार की और ज़्यादा से ज़्यादा कार्य-कलापों की व्यवस्था की जाए, ताकि हर बच्चा अपनी दिलचस्पी और पसन्द के काम में हिस्सा ले सके।

प्रोग्राम ऐसे बनाए जाएँ कि एक बच्चा एक से अधिक गतिविधियों में हिस्सा ले सके।

कुछ बच्चे विभिन्न गतिविधियों और कामों पर ऐसे छा जाते हैं कि दूसरों को आगे बढ़ने का मौक़ा नहीं मिलता और ख़ुद उनका भी बहुत ज़्यादा

समय, ध्यान और प्रतिभा उन कामों की नज़र हो जाती है। वे पाठ्यक्रम के कामों को नज़रअन्दाज़ करने लगते हैं। ऐसा न होने दिया जाए। उनके व्यक्तित्व के सन्तुलित विकास पर ध्यान दिया जाए।

- कोशिश की जाए कि पाठ्यक्रम-सम्बन्धी कार्य और पाठ्यसहगामी क्रियाएँ एक-दूसरे की सहायक हों और दोनों में समानता और सन्तुलन रहे। एक तरह की गतिविधियों की वजह से दूसरी तरह की गतिविधियाँ प्रभावित न होने पाएँ।
- ऐसे प्रोग्राम न बनाए जाएँ, जिनमें ख़र्च ज़्यादा हो और छात्रों के अभिभावकों की जेब पर भार ज़्यादा पड़े।
- निगरानी और रहनुमाई की पूरी व्यवस्था की जाए, ताकि बच्चों की योग्यताएँ और क्षमताएँ ग़लत रुख़ पर न पड़ने पाएँ और उनमें उच्च गुणों के बजाय बुराइयाँ न परवान चढ़ने लगें।

बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में घर और स्कूल का योगदान

बच्चों की शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्थित संस्था स्कूल/मदरसा है। स्कूल/मदरसे में योग्य शिक्षकों की एक टोली इस काम को बहुत अच्छी तरह अंजाम देने पर नियुक्त होती है। देहाती इलाक़ों में समाज-सुधार के केन्द्र भी यही स्कूल/मदरसे गिने जाते हैं। इसलिए यह ठीक ही है कि इनसे बड़ी आशाएँ लगी रहती हैं। मदरसे में दाख़िल करने के बाद माँ-बाप अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा की तरफ़ से निश्चिन्त हो जाते हैं। उन्हें इत्मीनान हो जाता है कि अब यह काम मदरसा ख़ुद अंजाम देगा। शिक्षक भी माँ-बाप के फ़ुरसत की कमी या अशिक्षा के कारण उन्हें मजबूर समझते और उनकी मदद हासिल करने की पूरी कोशिश नहीं करते।

इस प्रकार शिक्षा-दीक्षा का पूरा भार, मिल-जुलकर ही उठाया जा सकता है, लेकिन अकेले स्कूल/मदरसे पर आ पड़ता है, जिसे वह सीमित

समय में किसी तरह नहीं उठा पाता और वे आशाएँ पूरी नहीं होतीं, जो आम तौर पर स्कूल/मदरसे से बाँध ली जाती हैं। इसलिए अपनी ज़िम्मेदारी को पूरी तरह निभाने के लिए ज़रूरी है कि शिक्षक बच्चों के माँ-बाप ख़ासकर उनकी माँओं की मदद हासिल करने की पूरी कोशिश करें।

अभिभावकों का सहयोग प्राप्त करने के लिए ज़रूरी है कि शिक्षक व्यवहार-कुशल और मिलनसार हों। सम्पर्क बनाने के लिए समय निकालें। खुशदिली से मिलें और इज़्ज़त से पेश आएँ—

- उनकी आपत्तियों, शिकायतों या मशवरे खुशी-खुशी सुनें।
- उनके बच्चों की शिक्षा-दीक्षा और भलाई व बेहतरी में पूरी दिलचस्पी लें।
- उनके बच्चों की प्रगति की गति आदि से बराबर उन्हें बाख़बर रखें।
- शिक्षा-दीक्षा से सम्बन्धित उनकी ज़िम्मेदारियों को अच्छे शब्दों में याद दिलाते रहें।
- मदरसे के विभिन्न कार्यक्रमों में उन्हें शामिल होने के लिए आमंत्रित करें और प्रोग्राम में जहाँ तक मुमकिन हो उनकी दिलचस्पियों का ध्यान रखें।
- समय-समय पर अभिभावकों की मीटिंगें बुलाएँ।

अभिभावकों की मीटिंगें

हर शिक्षा-सत्र में कम से कम दो बार अभिभावकों की मीटिंगें बुलाई जाएँ। पहली, शिक्षा-सत्र के शुरू में दाख़िलों के बाद और दूसरी साल के बीच में शिक्षा-सप्ताह इत्यादि के मौक़े पर।

पहली मीटिंग का प्रोग्राम कुछ इस तरह होना चाहिए—

1. सबसे पहले दिलचस्प और ख़ूबसूरत अन्दाज़ में संक्षेप में संस्था का मूल उद्देश्य, पॉलिसी और प्रोग्राम समझाया जाए।

2. फिर बच्चों की शिक्षा-दीक्षा और स्कूल/मदरसे के विकास और कल्याण के सिलसिले में उनके सहयोग की ज़रूरत और अहमियत बताई जाए।

3. फिर सहयोग के निम्नलिखित रूपों की तरफ़ ध्यान आकृष्ट कराया जाए—

(क) घरेलू माहौल को शिक्षा-दीक्षा के लिए अनुकूल बनाना और घर तथा स्कूल/मदरसे की ज़िन्दगी में अन्तर कम करने की कोशिश करना।

(ख) शिक्षण-संस्था के नियम-क़ानूनों और हिदायतों पर अमल करना।

(ग) बच्चों को हाज़िरी का पाबन्द बनाने, पढ़े हुए पाठ को दोहराने और होमवर्क पूरा करने की व्यवस्था करना।

(घ) बच्चे की ट्रेनिंग के सिलसिले में स्कूल/मदरसे के प्रोग्रामों पर फ़ुरसत के समय अमल करना।

(ङ) बुरी संगति से बचाने का हर मुमकिन कोशिश करना।

(च) पाठ्यसहगामी क्रियाओं से फ़ायदा उठाने में मदद करना।

(छ) नमाज़ की पाबन्दी, अच्छी आदतें, अच्छे तौर-तरीक़े और घर के काम-काज में हाथ बँटाने के लिए बच्चों को बराबर उभारते रहना।

(ज) बच्चे के सामने शिक्षण-संस्था की आलोचना न होने देना।

(झ) संस्था की भलाई, बेहतरी और तरक़्क़ी के लिए मशवरे देते और व्यावहारिक रूप से सहयोग करते रहना।

4. आख़िर में बच्चों की शिक्षा-दीक्षा और स्कूल/मदरसे के विकास और कल्याण के बारे में अभिभावकों से मशवरे माँगे जाएँ और उनपर ठंडे दिल से सोच-विचार किया जाए।

दूसरी मीटिंग में स्कूल/मदरसे और घर के विभिन्न प्रोग्राम और बच्चों के काम दिखाए जाएँ और उस मदद का ठंडे दिल से जायज़ा लिया जाए, जो स्कूल/मदरसे और घर ने एक-दूसरे के साथ किया है। ध्यान

देने योग्य बातों की तरफ़ और ज़्यादा ध्यान दिलाया जाए।

मीटिंगों की अहमियत और उपयोगिता

अगर यह काम अच्छे तरीक़े से अंजाम दिया, तो निम्नलिखित लाभ प्राप्त हो सकते हैं–

- बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में अभिभावकों का पूरा सहयोग प्राप्त होगा।
- स्कूल/मदरसे के हित और उद्देश्य से हमदर्दी और दिलचस्पी पैदा होगी।
- घर और मदरसे के माहौल में अनुकूलता पैदा होगी।
- बच्चों के साथ उनके घरों के सुधार में भी मदद मिलेगी।
- स्कूल/मदरसा अपने कामों को ज़्यादा अच्छे ढंग से अंजाम दे सकेगा।
- शिक्षण-संस्था का भला चाहनेवाले लोगों का क्षेत्र बहुत व्यापक हो जाएगा, जिससे स्कूल/मदरसे के विकास और इसकी लोकप्रियता में काफ़ी मदद मिलेगी।
- अभिभावकों की ग़लतफ़हमियाँ दूर होंगी और वे अपनी ज़िम्मेदारी को महसूस करने लगेंगे।
- कोशिश की जाए कि अभिभावकों की मीटिंगों से ये लाभ बहरहाल प्राप्त हों।

शिक्षा-सप्ताह या वार्षिक समारोह

- हर स्कूल/मदरसे को साल में एक बड़ा समारोह ज़रूर आयोजित करना चाहिए। इससे बहुत-से फ़ायदे होंगे।
- शिक्षण-संस्था की सेवाओं से लोग परिचित होंगे और उसकी अहमियत और उपयोगिता का उन्हें अन्दाज़ा लगाने का मौक़ा मिलेगा।
- जनसामान्य (Public) में पैठ बनाने और प्रभाव जमाने का साधन

हाथ आएगा। लोगों की मदद और हमदर्दी हासिल करने के लिए राहें खुलेंगी और शिक्षण-संस्था के विस्तार और विकास से दिलचस्पी लेनेवाले लोगों का क्षेत्र बढ़ता जाएगा।

- छात्रों के व्यावहारिक प्रशिक्षण के काफ़ी मौक़े मिलेंगे और संस्था से उनकी सामान्य दिलचस्पी में बढ़ोत्तरी होगी।
- बच्चों की समुचित शिक्षा-दीक्षा का लोगों में एहसास पैदा होगा और धार्मिक शिक्षा (दीनी तालीम) के प्रचार-प्रसार में मदद मिलेगी।
- समाज-सुधार और लोगों में धार्मिक भावना उत्पन्न करने का मौक़ा मिलेगा।

कार्यक्रम

इस वार्षिक समारोह का प्रोग्राम निम्नलिखित विषयों पर आधारित हो सकता है। अपनी परिस्थिति की वजह से अगर शिक्षण-संस्था प्रभावी और सफल प्रोग्राम न चला सके, तो आसपास की कुछ शिक्षण-संस्थाओं के साथ मिलकर बारी-बारी से प्रत्येक संस्था में यह काम अंजाम दिया जाना चाहिए—

- धर्म की अपेक्षाओं और धार्मिक शिक्षा के महत्त्व आदि पर योग्य और सक्षम लोगों के भाषणों का आयोजन करना; भाषण संक्षिप्त, सारगर्भित और गम्भीर और प्रभावी होने चाहिए और एक प्रोग्राम में दो से अधिक भाषण न हों।
- शैक्षिक प्रदर्शनी, जिसमें छात्रों और शिक्षकों द्वारा तैयार की गई चीज़ें, उनके द्वारा मुहैया कराई गई दुर्लभ चीज़ें, शिक्षा-दीक्षा से सम्बन्धित पोस्टर, धार्मिक ज्ञान के चार्ट, विभिन्न विषयों की पढ़ाई में इस्तेमाल होनेवाली सहायक सामग्री और उपकरण, सेहत, सफ़ाई और सामान्य ज्ञान से सम्बन्धित चित्र, ख़ाके और मॉडल इत्यादि क्रमवार और सुन्दर ढंग से सजाए जाएँ और इत्मीनान से दिखाने और अच्छी तरह

समझाने का प्रबन्ध किया जाए। प्रदर्शनी सुरक्षित जगह में हो। एक तरफ़ से आने और पूरी प्रदर्शनी देखकर दूसरी तरफ़ से निकलने का रास्ता दिया जाए। रास्ते के किनारे बाड़ लगा दी जाए, ताकि देखनेवाले चीज़ों को हाथ न लगा सकें। अगर रौशनी की पर्याप्त व्यवस्था हो सके, तो प्रदर्शनी रात में ज़्यादा अच्छी लगती है।

- खेल-प्रतियोगिताएँ और पी. टी., फ़र्स्ट एड, कुश्ती, लाठी इत्यादि के प्रदर्शन; खेलों में फ़ुटबॉल, वॉलीबाल, कबड्डी, रस्साकशी, लम्बी और ऊँची कूद, छोटे बच्चों की कुर्सी दौड़, नारंगी दौड़, जलेबी दौड़, चमचा दौड़, रूमाल झपट, अन्दर-बाहर, तीन टाँग की दौड़ इत्यादि में सबको बड़ा आनन्द आता है।
- अंत्याक्षरी, भाषण, सुलेखन और निबन्ध-लेखन इत्यादि की प्रतियोगिताएँ।
- साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन या बच्चों का नक़ली मुशायरा या कवि-सम्मेलन, जिसमें बच्चे मशहूर शायरों या कवियों की दिलचस्प और शिक्षाप्रद कविताएँ सुन्दर ढंग से पेश करें।
- बच्चों की तरफ़ से आम सभा, जिसमें बच्चे लोगों के सामने संक्षिप्त भाषण, लेख, चुटकुले, लतीफ़े, प्रभावकारी कविताएँ, शिक्षाप्रद कहानियाँ इत्यादि विभिन्न भाषाओं में पेश करें।
- पुरस्कार-वितरण-समारोह, विभिन्न प्रतियोगिताओं में सफल होनेवाले, अपना प्रोग्राम कुशलतापूर्वक प्रस्तुत करनेवाले, परीक्षाओं में पोज़ीशन लानेवाले और प्रदर्शनी के लिए अच्छा सामान तैयार करनेवाले बच्चों को पुरस्कार दिए जाएँ। पुरस्कारों में उपयोगी, दिलस्प और समझने लायक़ किताबें, लिखने-पढ़ने का सामान, सर्टिफ़िकेट, शैक्षिक खिलौने देने चाहिएँ। पुरस्कार बहरहाल पुरस्कार है। इसका क़ीमती होना ज़रूरी नहीं है।

ध्यान देने योग्य बातें

इस समारोह को लाभप्रद, प्रभावी और सफल बनाने के लिए ज़रूरी है कि—

- समारोह सुहाने मौसम में रखा जाए और ज़रूरी प्रोग्राम ऐसे समय में रखे जाएँ, जब ज़्यादातर लोग फ़ुरसत में हों और आसानी से शामिल हो सकें। उदाहरण के लिए, आम सभा, साहित्यिक गोष्ठी, बच्चों का मुशायरा, प्रदर्शनी इत्यादि रात में और विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताएँ दिन में। अगर मौसम इजाज़त दे तो छमाही और वार्षिक परीक्षा के बाद रखना ज़्यादा बेहतर होता है। पढ़ाई-लिखाई का ज़्यादा हरज नहीं होता और तैयारी का ख़ूब मौक़ा मिलता है।
- सविस्तार प्रोग्राम का अच्छी तरह प्रचार-प्रसार हो।
- शिक्षण-संस्था को स्थानीय पार्टीबन्दियों से अलग-थलग रखा जाए, ताकि प्रत्येक व्यक्ति समारोह में शामिल हो सके।
- भाषणों आदि में छोटे-मोटे मतभेदों को छेड़ने से बचा जाए, ताकि ग़लतफ़हमी फैलने का या फैलाने का मौक़ा न मिले। सुधार-सम्बन्धी प्रोग्राम भी आम क़िस्म और सबकी पसन्द का हो। बच्चों से बड़ों पर कोई आलोचना हरगिज़ न कराई जाए।
- वही प्रोग्राम पेश किए जाएँ, जिनकी अच्छी तरह तैयारी और ख़ूब अभ्यास कर लिया गया हो।
- छोटों, बड़ों, औरतों, मर्दों सबकी दिलचस्पियों का ध्यान रखा जाए।
- निमंत्रणपत्रों के बाँटने में बहुत उदार हृदयता से काम लिया जाए।
- कोशिश की जाए कि हर छात्र अपनी उम्र और योग्यता के हिसाब से किसी न किसी प्रोग्राम में हिस्सा ज़रूर ले।
- सारे काम अपनी देखभाल में यथासम्भव छात्रों से कराए जाएँ, ताकि उन्हें हर तरह के कामों का व्यावहारिक अनुभव हो।

- प्रोग्राम में शामिल लोगों का मान-सम्मान किया जाए और उन्हें हर सम्भव सुविधा पहुँचाई जाए।

छात्रावास (बोर्डिंग हाउस)

माँ-बाप अपनी फ़ुरसत की कमी या शिक्षा-दीक्षा की कला से अनभिज्ञ होने के कारण अपने बच्चों की तरफ़ पूरा ध्यान नहीं दे पाते। इधर औद्योगिक क्रान्ति ने पारिवारिक व्यवस्था को बहुत कुछ तहस-नहस कर दिया है। समाज दिन-प्रतिदिन उपभोक्तावाद, नास्तिकता और अधार्मिकता का शिकार होता जा रहा है।

धर्म और नैतिकता की पकड़ ढीली पड़ चुकी है। माहौल आम तौर पर गन्दे और तरह-तरह की बुराइयों का अखाड़ा बन गए हैं। ऐसी हालत में ज़रूरी मालूम होता है कि स्कूल/मदरसे यथासम्भव आवासीय हों या कम से कम ऐसी व्यवस्था की जाए कि बच्चे अपना अधिकतर समय शिक्षकों के साथ और उनकी देख-रेख में गुज़ार सकें, ताकि उनकी उचित देखभाल, पालन-पोषण और शिक्षा-दीक्षा हो सके। वे बुरी संगति से सुरक्षित रहें और उन्हें स्वतंत्र अध्ययन, पाठ्यसहगामी गतिविधियों के लिए भी पर्याप्त समय मिल सके।

छात्रावास में रहने के लाभ

- छात्रावास में रहने से छात्रों में आत्मविश्वास पैदा होता है। वे बहुत जल्द अपनी मदद आप करना सीख लेते हैं और हर काम में बड़ों के मुहताज नहीं रहते।
- विभिन्न स्वभाव, प्रवृत्ति, सामाजिक स्तर के बच्चों के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने और विनम्रतापूर्वक अभाव के साथ निर्वाह करने का तरीक़ा सीख लेते हैं।
- अच्छी आदतें अपनाने, तौर-तरीक़े, सदाचार और सामाजिक शिष्टाचार सीखने और चरित्र-निर्माण के लिए उन्हें अनुकरण के योग्य नमूने

और उचित मौक़े मिलते हैं।

- जीवन में एक नियमबद्धता पैदा हो जाती है। भावनाओं पर नियंत्रण करने और नियम-उपनियमों की पाबन्दी करने की आदत पड़ती है।

टोलियों में मिल-जुलकर काम करने, दूसरों के काम आने, मुहब्बत, हमदर्दी, त्याग और बलिदान का प्रदर्शन करने या बीमारों की देखभाल और सेवा करने, मेज़बानी, दूसरों की सेवा, आज्ञापालन और नेतृत्व करने के काफ़ी मौक़े मिलते हैं।

उदार हृदयता, जानकारी में बढ़ोत्तरी, उमंग और उत्साह में बुलन्दी पैदा होती है।

सबसे बड़ी बात यह है कि ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए साफ़-सुथरा माहौल और अच्छे साथियों का साथ मिलता है, जिसके ज़िन्दगी पर बहुत दूरगामी प्रभाव पड़ते हैं और जिसकी याद ज़िन्दगी भर ताज़ा रहती है।

ध्यान देने योग्य बातें

हॉस्टल की ज़िन्दगी से आशानुकूल लाभ प्राप्त करने के लिए यथासम्भव निम्नलिखित बातें नज़र के सामने रहनी चाहिएँ--

हॉस्टल आबादी से अलग-थलग, स्कूल/मदरसे के क़रीब शान्त और खुले माहौल में हो।

रिहाइशी कमरे हवादार, रौशन और इतने बड़े हों कि दस से पन्द्रह बच्चे एक साथ एक ही कमरे में रह सकें।

कमरे ज़रूरी सामान से सजे-सँवरे हों और बच्चों के निजी सामान की सुरक्षा, सफ़ाई, क्रमवार और सुन्दर ढंग से रखने की पूरी व्यवस्था हो।

इमारत यथासम्भव संस्था की अपनी हो और स्वास्थ्य-सुरक्षा के

नियमों और हॉस्टल की ज़रूरतों को ध्यान में रखकर बनाई गई हो। किराया की इमारतें आम तौर पर हॉस्टल के लिए उचित नहीं होतीं।

- छात्रावास की देख-रेख करनेवाला ऐसे व्यक्ति को बनाया जाए, जो प्यार, मुहब्बत, हमदर्दी और सहानुभूति में माँ-बाप का समुचित बदल हो। माँ-बाप ही की तरह बच्चों की मदद और उनका मार्गदर्शन कर सके, ताकि बच्चों का मन लगे और वे बहुत ज़्यादा अपना घर न याद करें।

  बच्चों को अनुशासन और कंट्रोल में रखने, उनकी ट्रेनिंग और लालन-पालन करने और उनकी समस्याओं को सुलझाने की भी सलाहियत रखता हो। छात्रावास ही के एक हिस्से में इमारत से सटे देख-रेख करनेवाले का भी आवास होना चाहिए।

- देख-रेख करनेवाले को निम्नलिखित बातों की विशेष रूप से देख-भाल करनी चाहिए—

  (1) स्वास्थ्य और सफ़ाई, (2) खाना और नाश्ता, (3) अध्ययन-मनन, (4) खेल-कूद, (5) फ़ुरसत के समय की गतिविधियाँ, (6) चाल-चलन और आपसी सम्बन्ध, (7) नमाज़ की पाबन्दी, (8) सामाजिक शिष्टाचार का लिहाज़, (9) ज़िम्मेदारियों को पूरा करने में लगन और अच्छे तौर-तरीक़े, (10) सामान की सुरक्षा और सुव्यवस्थित ढंग से रखना।

- छात्रावास में बच्चों की संख्या अगर बहुत थोड़ी हो, तो निगरानी का काम किसी ऐसे योग्य शिक्षक के सुपुर्द किया जा सकता है, जो पढ़ाने-लिखाने के साथ इस काम पर ज़्यादा से ज़्यादा समय और ध्यान लगा सकते हों, वरना यही होना चाहिए कि देख-भाल करनेवाला पूरे समय के लिए हो और उसके सुपुर्द स्कूल/मदरसे में

पढ़ाने-लिखाने का काम या दूसरी ज़िम्मेदारियाँ न हों, ताकि वह छात्रों की शिक्षा-दीक्षा पर पूरा ध्यान दे सके।

- सफ़ाई-सुथराई, ख़ासकर बच्चों के पोशाक, बिस्तर, रहने के कमरों, रसोईघर, खाने के कमरे, पेशाबख़ाने, पाख़ाने, ग़ुस्लख़ाने, नालियों, आँगन, बरामदे इत्यादि की सफ़ाई की तरफ़ ग़ैर-मामूली ध्यान दिया जाए। फ़िनाइल, डी॰ डी॰ टी॰ और चूना छिड़कने, कभी-कभी कमरों को धुलाने, गन्धक और लुबान सुलगाने इत्यादि का भी इन्तिज़ाम किया जाए।
- समय-समय पर बच्चों की चिकित्सा-जाँच कराई जाए। संक्रामक रोग से बचाव के लिए टीके और इंजेक्शन लगवाए जाएँ। मामूली चिकित्सा-सहायता का छात्रावास ही में इन्तिज़ाम किया जाए। बीमार बच्चों के लिए अलग कमरा ख़ास कर दिया जाए।
- छोटे और बड़े बच्चों को अलग रखा जाए। एक कमरे में यथासम्भव एक ही उम्र और एक ही कक्षा के बच्चे रखे जाएँ। बड़े लड़कों को दाख़िल करते समय उनके चाल-चलन की तरफ़ से इत्मीनान कर लिया जाए और ज़्यादा बिगड़े हुए बच्चों को बोर्डिंग में हरगिज़ न लिया जाए वरना एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देगी।
- हर कमरे के लिए एक मॉनीटर होना चाहिए, जो कमरे की सफ़ाई-सुथराई, सामान की सुरक्षा और साज-सज्जा, कमरे में सुव्यवस्था के सिलसिले में बोर्डिंग के निगराँ की मदद कर सके।
- छात्रों के अनेक ग्रूप बनाकर हर ग्रूप को बारी-बारी अपने मॉनीटरों या कप्तानों की निगरानी में छात्रावास की सफ़ाई, खाना खिलाने, बीमार छात्रों की देखभाल, पढ़े हुए पाठ को दोबारा देखने, होमवर्क करने और वाचनालय (रीडिंग रूम) से फ़ायदा उठाने का इन्तिज़ाम करने, नियमित रूप से जमाअत के साथ नमाज़ क़ायम करने,

मेहमानों की सेवा और नए छात्रों की मदद, खेल, रसोईघर की देखभाल इत्यादि की ज़िम्मेदारियाँ सम्भालने का मौक़ा दिया जाए।

- छात्रावास का एक टाइम-टेबुल (समय-सारिणी) बना दिया जाए और विभिन्न क्रिया-कलापों और गतिविधियों के सिलसिले में संक्षिप्त नियम बनाकर उनकी पाबन्दी कराई जाए। विभिन्न अवसरों के शिष्टाचार सिखाए जाएँ।
- समय पर साफ़-सुथरा, सादा और पौष्टिक भोजन की व्यवस्था की जाए। संस्था अपनी ही निगरानी में खाने-पीने का इन्तिज़ाम करे। ठेके पर न दिया जाए वरना उचित व्यवस्था हरगिज़ न हो सकेगी। बच्चों की तन्दुरुस्ती और उनके इत्मीनान के लिए खाने-पीने की उचित व्यवस्था की तरफ़ बहुत अधिक ध्यान देने की ज़रूरत है।
- बच्चों को कड़ी मेहनत और सादा ज़िन्दगी और हर तरह का काम धीरे-धीरे ख़ुद कर लेने का आदी बनाना चाहिए। इसके लिए व्यक्तिगत और सामूहिक ज़िम्मेदारियाँ सुपुर्द की जाएँ और उनपर अमल के लिए उन्हें उभारा जाए।
- फ़ुरसत के समय के लिए मुनासिब काम, उचित सीमाओं में बच्चों की दिलचस्पियों का लिहाज़ और खेल-कूद और मनोरंजन की पूरी व्यवस्था होनी चाहिए। इस तरफ़ से लापरवाही तरह-तरह की ख़राबियों का कारण हो सकती है। बच्चों का दिल लगने के लिए भी ये चीज़ें ज़रूरी हैं वरना छात्रावास को बच्चे जेलख़ाना समझने लगते हैं।
- बच्चों की आदतों और चाल-चलन पर अच्छी तरह नज़र रखी जाए वरना छात्रावास की ज़िन्दगी में जहाँ बहुत-से लाभ हैं, वहीं चाल-चलन के बिगड़ने, आवारागर्दी करने, चोरी, फ़िज़ुलख़र्ची, हीन भावना, दूसरे बच्चों की ईर्ष्या, लापरवाही इत्यादि की बहुत ज़्यादा

आशंकाएँ होती हैं। बच्चों के जेबख़र्च का पैसा निगराँ के पास रहे, लेकिन उनकी ज़रूरत पर उन्हें आसानी से मिल सके।

- अच्छी आदतें डलवाने, तौर-तरीक़े और शिष्टाचार सिखाने के लिए विभिन्न प्रकार के सप्ताह मनाए जाएँ। लड़कों की साप्ताहिक प्रशिक्षण-सम्बन्धी गोष्ठी करके उन्हें ज़रूरी कामों की तरफ़ बराबर ध्यान दिलाया जाए और साफ़-साफ़ वे सभी बातें समझाई जाएँ, जो छात्रावास के जीवन में अपेक्षित हैं और उनकी पाबन्दी के लिए उनसे शपथ लिया जाए। कभी-कभी छात्रों से व्यक्तिगत मुलाक़ातें करके उनकी मदद और रहनुमाई की जाए।
- बोर्डिंग में बच्चों के बारे में निम्नलिखित बातें लिखी जानी चाहिएँ—

  (अ) हर बच्चे का नाम, कमरा नम्बर, माँ-बाप का नाम, जन्म-तिथि, घर का पूरा पता, दाख़िले की तारीख़।

  (ब) हर बच्चे के सामान की पूरी सूची, जिसमें बढ़ोत्तरी और कमी इत्यादि की बातें नियमित रूप से लिखी जाती रहें। कपड़े, बिस्तर और दूसरे सामानों पर बच्चे का नाम लिखा होना चाहिए, ताकि पहचानने में कठिनाई न हो।

  (स) हिसाब-किताब और ख़र्चों का विवरण।
- पाबन्दी से बच्चों की हाज़िरी ली जाए और अनुमति लिए बिना बोर्डिंग से बाहर न जाने दिया जाए और न रात गुज़ारने दी जाए। सोते समय भी एक बार बच्चों का जायज़ा ज़रूर ले लिया जाए।
- बच्चों के साथी-संगी, नाते-रिश्तेदार या दूसरे मेहमानों और असम्बद्ध लोगों को बच्चों के साथ बोर्डिंग में रहने की अनुमति न दी जाए, बल्कि उनके लिए अलग से व्यवस्था की जाए वरना तरह-तरह के बिगाड़ों की आशंका रहती है।

☆☆☆

अध्याय-35

पाठ और शिक्षण-विधियाँ

(Lessons and Teaching-Methods)

पाठ की सफलता तीन बातों पर निर्भर करती है—

- शिक्षक का मेहनत से पाठ तैयार करना।
- कक्षा में पाठ को सुन्दर ढंग से प्रस्तुत करना।
- छात्रों का पाठ की तरफ़ पूरा ध्यान देना।

पाठों की तैयारी

पढ़ाने से पहले पाठ को अच्छी तरह तैयार कर लेना चाहिए। तैयारी के बिना पाठ पढ़ाना शिक्षक की शान के प्रतिकूल और ज्ञान का अपमान है। जो लोग ऐसी ग़लती कर बैठते हैं, वे पाठ का हक़ भी अदा नहीं कर पाते और कभी-कभी उनको बड़ी शर्मिन्दगी उठानी पड़ती है।

तैयारी का महत्त्व

तैयारी के बिना कभी पाठ सफल और प्रभावी हो नहीं सकता, पाठ चाहे सरल हो या जटिल और कक्षा चाहे ऊँची हो या नीची, तैयारी बहरहाल ज़रूरी है; क्योंकि—

- पाठ तैयार कर लेने से शिक्षक के अन्दर आत्मविश्वास पैदा होता है।
- वह छात्रों के सामने अपनी बात पूरी दृढ़ता, आत्मविश्वास और प्रभावकारी ढंग से रखता है।

- शिक्षण की सर्वोत्तम विधि अपनाता है। इसलिए छात्रों को पर्याप्त लाभ पहुँचता है।
- छात्रों को बहुत अच्छी तरह सन्तुष्ट कर सकता है।

कुछ पुराने और अनुभवी शिक्षक इस घमंड में बिना तैयारी के पाठ पढ़ाना शुरू कर देते हैं कि यह पाठ तो हमारा पहले का पढ़ाया हुआ है। इसकी तैयारी की अब क्या ज़रूरत है? लेकिन यह उनकी भयंकर भूल है। अनुभव बेशक सफल शिक्षण में बड़ा सहायक होता है, लेकिन तैयारी से बिलकुल लापरवाही नहीं कर सकता; क्योंकि हर साल कक्षा में जो नए छात्र आते हैं उनकी योग्यता पिछले वर्षों के पुराने छात्रों से अलग होती है। इसलिए कभी-कभार पाठ का पूरा ढाँचा बदल देना पड़ता है। पिछली शिक्षण-विधि (Teaching Method) भी काम नहीं देती। भूमिका और अनुकूल प्रश्न बिलकुल नए सोचने पड़ते हैं।

इसके अलावा यह आशा भी नहीं की जा सकती है कि शिक्षक को हर समय आवश्यक पाठ्यसामग्री उपलब्ध रहेगी। हो सकता है कि पाठ का कुछ हिस्सा ज़ेहन से निकल गया हो; फिर तो कक्षा के सामने बड़ी सुबकी होगी। इसलिए तैयारी बहरहाल शिक्षक के लिए अनिवार्य है।

पाठ की तैयारी में ध्यान रखने योग्य बातें

- सबसे पहले यह देखा जाए कि किस कक्षा और किस घंटे में क्या सबक़ पढ़ाना है; कितने समय में सबक़ पूरा करना है; जिन बच्चों को पढ़ाना है उनकी उम्र, योग्यता और दिलचस्पियाँ क्या हैं? इस सबक़ के बारे में वे पहले से क्या जानते हैं? जो कुछ पढ़ाना है उसकी विषय-वस्तु पर शिक्षक को कहाँ तक महारत हासिल है? जो कमी हो, वह पूरी कर ली जाए।
- आवश्यक सामग्री जमा कर लेने के बाद उसे दो-तीन तर्कसंगत हिस्सों में बाँटकर पूरे का एक शीर्षक और हिस्सों के उपशीर्षक बना

लिए जाएँ और फिर हर हिस्से की प्रस्तुति के तरीक़े सोच लिए जाएँ। पाठ के लिए छात्रों के ज़ेहन को तैयार करने के लिए समुचित भूमिका सोच ली जाए और पिछली योग्यता जाँचने के लिए कुछ प्रश्न बना लिए जाएँ।

- हर हिस्से के बाद या पाठ के अन्त में जो प्रश्न करने हों, वे भी बना लिए जाएँ।
- छात्रों की कठिनाइयों और उलझनों का पहले ही अन्दाज़ा लगा लिया जाए और उन्हें दूर करने के उपाय सोच लिए जाएँ।
- पाठ को अच्छी तरह मन में बिठाने के लिए आवश्यक शैक्षिक और सहायक सामान, मानचित्र, चार्ट इत्यादि तैयार या हासिल कर लिए जाएँ।
- छात्रों को नोट करवाने के लिए या ब्लैकबोर्ड पर लिखने के लिए पाठ का सार-संक्षेप लिख लिया जाए।
- पाठ से सम्बन्धित होमवर्क या और कोई काम भी पहले से सोच कर रखा जाए।
- छात्रों से जो प्रश्न हल कराने हों, वे पहले ही से हल कर लिए जाएँ। उनके सामने विज्ञान का प्रयोग (Experiment) जो किसी विषय से सम्बन्धित हो, जिसका व्यावहारिक प्रदर्शन करना हो, पहले ही उसका अभ्यास कर लिया जाए, ताकि ग़लती की सम्भावना न रहे।
- नए शिक्षक को चाहिए कि संक्षेप में लिखित पाठ-संकेत तैयार कर लिया करें। अनुभवी शिक्षकों को भी संक्षिप्त नोट ज़रूर ले लेना चाहिए।

पाठ-संकेत

- पाठ-संकेत यथासम्भव लिखित हों और उनमें निम्नलिखित शीर्षकों के

तहत जानकारियाँ दर्ज होनी चाहिएँ—

(1) दिनांक, (2) कक्षा, (3) औसत उम्र, (4) घंटा और समय, (5) विषय, (6) शीर्षक और उपशीर्षक, (7) सामान्य उद्देश्य, (8) पिछले पाठ से सम्बन्ध, (9) आवश्यक सामग्री की क्रमवार सूची, (10) पिछली योग्यता, (11) भूमिका, (12) विषय-वस्तु की प्रस्तुति शिक्षण-विधि सहित, (13) अभ्यास और दोहराने के प्रश्न, (14) ब्लैकबोर्ड का सार-संक्षेप, (15) करने के लिए काम देना (कक्षा और घर के लिए)।

- हर पाठ के दो उद्देश्य होते हैं— (1) सामान्य उद्देश्य, (2) विशिष्ट उद्देश्य। पाठ-संकेत में दोनों का उल्लेख होना चाहिए।
- बच्चों की पिछली योग्यता ही पर नया पाठ निर्भर करता है। इसलिए संक्षेप में इसका भी उल्लेख होना चाहिए। इससे अन्दाज़ा होता है कि नए पाठ को आपने किस हद तक उससे जोड़कर पढ़ाया है।
- भूमिका संक्षिप्त, लेकिन ज़ोरदार हो और उसमें पिछली बातों से दोबारा अवगत होने के लिए और पाठ के स्पष्टीकरण के लिए कुछ प्रश्न लिखे गए हों।
- जो सामग्री पेश करना है, संक्षेप में और क्रमशः वह भी दर्ज किया जाए और उसके पढ़ाने का तरीक़ा भी।
- वे प्रश्न भी हर हिस्से के अन्त में दर्ज किए जाएँ, जो उस हिस्से पर छात्रों से पूछने हैं।
- अन्त में अभ्यास या पुनरावृत्ति-सम्बन्धी दो-तीन प्रश्न भी दर्ज किए जाएँ, जो सम्पूर्ण पाठ पर आधारित हों।
- पढ़ाने के दौराने ब्लैकबोर्ड पर जो कुछ लिखना या बनाना है, वह भी लिख दिया जाए।

आख़िर में घर पर करने या कक्षा ही में पूरा कर लेने के जो काम देने हों, वे भी नोट कर दिए जाएँ।

पाठ की तैयारी के लिए अनिवार्य शर्तें

उपर्युक्त काम उस समय बहुत अच्छी तरह अंजाम पा सकता है, जब—

शिक्षक को जो पाठ (Lesson) पढ़ाना है, उसकी विषय-वस्तु (Content) पर उसे महारत या जो कला सिखानी है, उसमें उसे ज़रूरी महारत हासिल हो।

छात्रों से उसका गहरा सम्पर्क हो, ताकि वह उनकी पिछली योग्यता, उनकी सहज योग्यताओं, उनकी मनोवैज्ञानिक रुझान और उनके निजी गुणों से अच्छी तरह परिचित हो।

विभिन्न शिक्षण-विधियों का उसे ज्ञान हो।

शिक्षा के मूल उद्देश्य और हर विषय के महत्त्व से अच्छी तरह अवगत हो।

समुचित प्रश्न बनाने का उसे तरीक़ा आता हो।

पाठ्यसहायक सामग्री और शैक्षिक सामान बनाने की योग्यता या उपलब्ध कराने के साधन हों।

पाठ तैयार करने की ज़रूरत और उपयोगिता का एहसास हो और इसके लिए समय निकालने की काशिश हो।

पाठों के प्रकार

पाठ आम तौर पर तीन तरह के होते हैं—

(1) **ज्ञानपरक :** जिनका उद्देश्य बच्चों के ज्ञान में वृद्धि करना होता है। उदाहरण के लिए, फ़िक्ह (इस्लामी धर्म-विधान), पैग़म्बर की जीवनी,

इतिहास, भूगोल, विज्ञान इत्यादि के पाठ।

(2) **पेशेगत या कला-कौशल, महारत प्रदान करनेवाले :** जिनका उद्देश्य किसी कला में महारत पैदा करना होता है। उदाहरण के लिए, आर्ट क्राफ़्ट, सिलाई-बुनाई, सुलेखन इत्यादि के पाठ।

(3) **आलोचनात्मक या विश्लेषनात्मक :** जिनका उद्देश्य सुन्दरता-असुन्दरता, भलाई-बुराई की परख पैदा करने या सुरुचि और सद्भावना को परवान चढ़ाना होता है। उदाहरण के लिए, इस्लामियात (इस्लामी विषय), साहित्य, क़िरअत, कविता-पाठ इत्यादि के पाठ। इन पाठों की भी और दो क़िस्में होती हैं—

(1) नया पाठ (2) अभ्यास या पुनरावृत्ति-सम्बन्धी पाठ।

- **नया पाठ :** वह है जिसके द्वारा कोई नया सिद्धान्त, नियम-उपनियम मन में बिठाना हो। उदाहरण के लिए, गणित या व्याकरण के नियम-उपनियम या कुछ नई जानकारियाँ मुहैया कराई गई हों और इतिहास, भूगोल, विज्ञान इत्यादि के सम्बन्धी नई जानकारियाँ प्रदान की गई हों।
- **अभ्यास या पुनरावृत्ति-सम्बन्धी पाठ :** इसका उद्देश्य पहले से बताए हुए किसी नियम का अभ्यास कराना या पिछली जानकारियों को दोहराना होता है।

ज्ञानपरक पाठों की शिक्षण-विधि

ज्ञानपरक विषयों के पाठों को अच्छी तरह मन में बिठाने के लिए हर पाठ में निम्नलिखित पाँच उपाय अपनाने ज़रूरी हैं—

(1) भूमिका, (2) पाठ-प्रस्तुति, (3) व्याख्या और तुलना, (4) सामान्यीकरण या सामान्य नियम अपनाना (5) प्रयोग या अभ्यास।

(1) **भूमिका :** हर पाठ के लिए एक समुचित भूमिका ज़रूरी है। इसका

उद्देश्य वास्तव में बच्चों के मन को नए पाठ के लिए तैयार करना होता है। भूमिका अत्यन्त संक्षिप्त, लेकिन जानदार होनी चाहिए, ताकि समय भी कम लगे और नई जानकारियाँ प्राप्त करने के लिए बच्चे उत्सुक और जिज्ञासु भी हों और उनका मन पूरी तरह तैयार हो जाए। विषय के सम्बन्ध में संक्षिप्त बातचीत, कोई छोटी-सी कहानी, आकर्षक चित्र या मॉडल, पिछले ज्ञान को जाँचने और पिछले पाठों से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए कुछ प्रासंगिक प्रश्न, अच्छी भूमिका बना सकते हैं।

भूमिका के प्रश्न इतने आसान हों कि हर बच्चा आसानी से उत्तर दे सके। प्रश्न सुखद माहौल में पूछे जाएँ, ताकि सभी बच्चे खुलकर अपने विचार प्रकट कर सकें। एक-दूसरे से जुड़े हों, ताकि विचारों में प्रवाह बना रहे। अन्तिम प्रश्न ऐसा हो कि पाठ का उद्देश्य और लक्ष्य बच्चों पर स्पष्ट हो जाए और उनका मन नई जानकारियों की ज़रूरत महसूस करने लगे।

(2) **पाठ-प्रस्तुति :** छात्रों को नए पाठ के लिए पूरी तरह तैयार कर लेने के बाद मूल पाठ प्रस्तुत किया जाए। पूरा पाठ एक साथ ही नहीं, बल्कि दो-तीन समुचित हिस्सों में बाँटकर प्रस्तुत किया जाए। क्रमशः एक-एक हिस्सा लिया जाए, बीच-बीच में और हर हिस्से के ख़त्म होने पर कुछ प्रश्न किए जाएँ। हर हिस्से का अन्तिम प्रश्न ऐसा हो कि अगले हिस्से की सामग्री की तरफ़ मन को मोड़ दे। पाठ का सार-संक्षेप (Summery) ब्लैकबोर्ड पर नोट करते जाएँ। अन्त में पूरे पाठ पर कुछ प्रश्न करके उन हिस्सों को आपस में जोड़ दिया जाए। हिस्सों का क्रम ऐसा हो कि पहले आसान और सहज, फिर क्रमशः कठिन और पेचीदा जानकारियाँ सामने आएँ। इस तरह पूरा पाठ आसानी से समझ में आ जाएगा।

(3) **व्याख्या और तुलना :** पाठ का जो हिस्सा पेश किया जाए, उसे ख़ूब

अच्छी तरह स्पष्ट करने के लिए बच्चों की पिछली योग्यता से इसका सम्बन्ध जोड़ा जाए। नई जानकारियों से मिलती-जुलती या उसके विपरीत जो बातें पहले से बच्चों की जानकारी, अवलोकन या अनुभव में आ चुकी हों, उनसे नई जानकारियों की तुलना कराई जाए, उदाहरण दिए जाएँ और अधिक स्पष्टीकरण के लिए चित्र, मानचित्र और चार्ट इत्यादि इस्तेमाल किए जाएँ या प्रयोग करके दिखलाया जाए। इस तरह नई जानकारियाँ बहुत अच्छी तरह मन में बैठ सकेंगी।

(4) **निष्कर्ष और सामान्यीकरण :** पूरा पाठ सुन्दर ढंग से प्रस्तुत और ख़ूब अच्छी तरह स्पष्ट कर देने के बाद समुचित प्रश्नों के द्वारा और नियम, उपनियम, सिद्धान्त या निष्कर्ष निकलवाना चाहिए, जिसके लिए पाठ पढ़ाया गया हो। उदाहरण के लिए, गणित का कोई नियम, विज्ञान का कोई सिद्धान्त इत्यादि। निष्कर्ष निकालने में ज़रूरत के मुताबिक़ बच्चों की मदद की जाए और अगर वे बिलकुल असफल रहें, तो पाठ फिर से समझाया जाए। निष्कर्ष ब्लैकबोर्ड पर लिखकर छात्रों को भी नोट करा दिया जाए।

(5) **प्रयोग या अभ्यास :** बच्चों ने जो कुछ सीखा है, उसकी जाँच-परख करने, उसे इस्तेमाल में लाने और उसका अभ्यास करने का मौक़ा मिलना चाहिए। इसके लिए अन्त में कुछ मौखिक प्रश्न किए जाएँ या कोई लिखित और व्यावहारिक काम दिया जाए। इससे अन्दाज़ा हो सकेगा कि बच्चों ने क्या कुछ सीखा और शिक्षक पाठ में कहाँ तक सफल हुआ और इस्तेमाल में लाने के बाद वह चीज़ बच्चों को ख़ूब अच्छी तरह याद हो जाएगी। उदाहरण के लिए, गणित का कोई नियम सिखा देने या विज्ञान का कोई सिद्धानत समझा देने के बाद उसपर दो-तीन प्रश्न दिए जाएँ, जो उस सिद्धान्त या नियम की मदद से हल हो सकें। अगर बच्चे हल कर ले जाते हैं, तो पाठ सफल है।

इस्तेमाल में लाने या अभ्यास करने से बच्चों को वह नियम ख़ूब अच्छी तरह याद हो जाएगा।

ये हैं वे पाँच नियम, जिन्हें ध्यान में रखकर पाठ पढ़ाना लाभदायक और प्रभावी होता है। इनका सार-संक्षेप एक बार फिर देख लीजिए—

(1) समुचित भूमिका के द्वारा छात्रों को नए पाठ के लिए तैयार करना।

(2) रोचक और मनमोहक रूप से नई सामग्री को पेश करना।

(3) व्याख्या और विश्लेषण के द्वारा पाठ को स्पष्ट करना और छात्रों के पिछले ज्ञान, अनुभव और प्रत्यक्षीकरण से नई पाठ्यसामग्री की तुलना करना और रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से नए पाठ का सम्बन्ध जोड़कर उनके लिए समझने योग्य बनाना।

(4) पूरे पाठ का निचोड़ संक्षेप में, सामान्य नियम और फिर पूरी विषय-वस्तु को छात्रों के सामने लाना।

(5) इस नियम को छात्रों द्वारा लागू करवाकर या प्रयोग में लाने का अवसर देकर सन्तुष्ट होना।

बेशक मनोविज्ञान, बुद्धि और अनुभव की रौशनी में ये पाँचों विधियाँ बहुत ही लाभदायक और प्रभावी साबित होती हैं, लेकिन इनपर सबसे बड़ी आपत्ति यह है कि इस विधि में छात्रों को ख़ुद करके सीखने का बहुत कम अवसर मिलता है। आम तौर पर उनकी हैसियत निष्क्रिय श्रोता की-सी होती है। इसलिए वे पाठ में व्यावहारिक रूप से दिलचस्पी कम लेते हैं। अगर कुछ ज्ञानप्रद पाठ (ख़ासकर गणित, सामान्य विज्ञान, भूगोल इत्यादि) में इनके बजाय निम्नलिखित पाँच विधियों को काम में लाया जाए, तो अधिक लाभदायक और प्रभावी सिद्ध होंगी—

(1) नए पाठ के बारे में छात्रों के सामने हल करने के लिए कोई समस्या रख देना कि वे सोच-विचार करने में लग जाएँ और उसे हल करने में अपना ज़ोर लगा दें।

(2) इसके हल के लिए छात्रों से उपाय पूछना।

(3) विभिन्न उपायों को जाँचना-परखना और कुछ को इस्तेमाल करके हल करने की कोशिश करना।

(4) उचित मार्गदर्शन करके सही हल पर पहुँचना।

(5) इस हल की पुष्टि के लिए और अधिक प्रयोग और अवलोकन करना।

इस तरह बच्चे पूरी तरह व्यावहारिक रूप से दिलचस्पी लेंगे और उनका ज्ञान अधिक पक्का होगा और इससे सृजन, चिन्तन-मनन, तर्क और निर्णय-शक्ति के विकास का अवसर मिलेगा।

गणित का तो प्रत्येक प्रश्न ही समाधान की अपेक्षा रखता है। सामान्य विज्ञान और भूगोल में भी इस विधि से ज़्यादा से ज़्यादा काम लिया जा सकता है।

कला-कौशल-सम्बन्धी पाठ की शिक्षण-विधि

आर्ट क्राफ़्ट, सुलेखन या दूसरे कला-कौशल सम्बन्धी पाठों में निम्नलिखित बातों पर ध्यान दें–

- छात्रों को इस कला को सीखने की वास्तविक आवश्यकता का एहसास करा दिया जाए, ताकि सीखने की प्रबल इच्छा, उत्सुकता और सक्रियता पैदा हो।
- उनको जो कुछ सिखाना हो, वह न तो इतना मुश्किल हो कि बच्चों में निराशा और विमुखता पैदा हो और न इतना लम्बा हो कि वे उकता जाएँ।
- बच्चों के काम में शुद्धता और स्वच्छता की बस उतनी ही उम्मीद की जाए, जो वे साधारण प्रयास से प्राप्त कर सकते हों। स्पष्ट रहे, बहुत दिनों की लगातार मेहनत और अभ्यास के बाद ही

कलाओं में महारत पैदा होती है और बच्चों से यूँ भी सूक्ष्म काम की उम्मीद समय से पहले की बात है। कला-कौशल सम्बन्धी पाठों के चरण ये हैं—

(1) **भूमिका या प्रेरणा :** बच्चों के सामने कोई नमूना पेश करके उसकी नक़ल के लिए तत्पर किया जाए। उनके अन्दर ऐसी भावना पैदा कर दी जाए कि वे महारत हासिल करने की ज़रूरत महसूस करने लगें। उदाहरण के लिए, ईद के मौक़े पर नाते-रिश्तेदारों को भेजने के लिए अपने हाथ से ईद-कार्ड और लिफ़ाफ़ा बनाने की ज़रूरत, अपनी किताबों की जिल्द बनाने और उसे सजाने की ज़रूरत इत्यादि।

(2) **प्रस्तुति :** पहले से तैयार किसी मॉडल या नमूने का अच्छी तरह अवलोकन कराया जाए और उसके एक-एक हिस्से के आकार और आकृति इत्यादि ख़ूब अच्छी तरह ज़ेहन में बिठा दी जाए या उसका विस्तृत ड्राइंग ब्लैकबोर्ड की सहायता से समझा दिया जाए और ज़रूरत हो, तो पूरा नमूना बच्चों के सामने तैयार करके दिखाया जाए। नमूने को पूरी कक्षा में गश्त करा दिया जाए, ताकि हर बच्चा अपने हाथ में लेकर क़रीब से देख ले।

(3) **नियम और सिद्धान्त :** संक्षेप में वे नियम और सिद्धान्त इत्यादि समझा दिए जाएँ, जिनसे नमूना तैयार करने में मदद मिलेगी।

(4) **व्यावहारिक काम :** ज़रूरी सामान मुहैया करके छात्रों को काम पर लगाया जाए। बच्चे जब व्यावहारिक काम में लगे हुए हों, तो शिक्षक को चाहिए कि वह पूरी कक्षा में टहल-घूम कर देखता रहे कि—

- छात्रों की सीटें ठीक हैं। आँख और कॉपी इत्यादि के बीच की दूरी उचित है। कमर सीधी है।
- क़लम, ब्रुश और दूसरी चीज़ों की पकड़ सही है।
- सामान उचित ढंग से इस्तेमाल किया जा रहा है।

- काम सही-सही और सफ़ाई के साथ अंजाम पा रहा है।
- किस-किस को व्यक्तिगत सहायता की ज़रूरत है और जहाँ जिस तरह की मदद की ज़रूरत हो, तत्काल पूरी कर दी जाए। स्पष्ट रहे निगरानी और व्यक्तिगत मदद जितना ध्यान से होगा, छात्रों को महारत हासिल करने में उतनी ही आसानी होगी। काम सही-सही और सफ़ाई से होगा और सामान बरबाद नहीं होगा। निगरानी की तरफ़ से लापरवाही तरह-तरह के नुक़सानों का कारण बनती है।

(5) **करने का काम देना :** सीखी हुई कला को काम में लाने के लिए कोई ऐसा दिलचस्प काम दिया जाए, जिससे और अधिक अभ्यास हो। उदाहरण के लिए, डिज़ाइन या सिनरी (प्राकृतिक मनोरम दृश्य) बनाने का तरीक़ा सिखाने के बाद कोई अभिलेख (कतबा) लिखकर लटकाने के लिए कहना।

आलोचनात्मक या व्याख्यात्मक पाठ

इनमें श्रेष्ठ साहित्यिक रचनाओं, नीति-कथाओं, प्रभावकारी कविताओं और शिक्षाप्रद घटनाओं इत्यादि पर आधारित वे पाठ आते हैं, जो बच्चों का भावनात्मक और नैतिक प्रशिक्षण करने, उनके अन्दर सुरुचि और अच्छे रुझान पैदा करने और उनकी कल्पनाओं, सोचों और उद्देश्यों को आदर्श बनाने में मददगार होते हैं। इस तरह के पाठ की सफलता के लिए ज़रूरी है कि—

- शिक्षक खुद एक संवेदनशील, सहानुभूतिपूर्ण और उपकारी हृदय रखता हो।
- भलाई-बुराई में अन्तर करना जानता हो।
- दूसरों को प्रभावित करने की योग्यता रखता हो।

- बच्चों की उम्र, रुचि और स्तर के मुताबिक़ पाठ्यसामग्री मुहैया कर सके।

इस तरह के पाठों को पढ़ाने में निम्नलिखित क़दम उठाने होंगे–

(1) **अनुकूल वातावरण** : उचित भूमिका के द्वारा पाठ के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया जाए। वातावरण जितना शान्तिपूर्ण और अनुकूल होगा और छात्र ध्यान के भटकने से जितना अधिक सुरक्षित होंगे, इस तरह के पाठों से उतना ही अधिक प्रभावित होंगे।

(2) **पाठ-प्रस्तुति** : पाठ अगर बड़ा हो, तो दो-तीन हिस्सों में बाँटकर प्रस्तुत करके, नहीं तो एक साथ पेश करके छात्रों पर अपेक्षित प्रभाव पैदा करने की कोशिश की जाए।

(3) **तुलना और समानता, व्याख्या और विश्लेषण** : इनके द्वारा छात्रों के लिए पाठ को बोधगम्य बनाया जाए।

(4) **प्रश्न पूछना** : प्रश्न पूछकर छात्रों को ख़ुद पढ़ने और सोचने-समझने का अवसर दिया जाए।

(5) समुचित प्रश्नों के द्वारा विचारों और भावनाओं को प्रकट कराने और विश्लेषण, निष्कर्ष और टिप्पणी कराके सही नतीजे पर पहुँचने में मदद की जाए।

पुनरावृत्ति या अभ्यासवाले पाठों को पढ़ाने की विधि

इस तरह के पाठों में सिर्फ़ तीन प्रकार की प्रक्रिया अपनाई जाती हैं–

(1) **भूमिका** : सिखाए हुए नियम और सिद्धान्तों से सम्बन्धित दो-तीन ऐसे प्रश्न किए जाएँ, जिनके उत्तर मौखिक रूप से दे सकें।

(2) **अभ्यास** : पुनरावृत्ति या अभ्यास के लिए दो-तीन ऐसे प्रश्न दिए जाएँ, जो पढ़े हुए नियमों की मदद से हल हो सकते हों; लेकिन जिन

समस्याओं को हल करने के लिए चिन्तन-मनन और मेहनत की ज़रूरत हो, बच्चे जब प्रश्नों को हल करने लगें तो शिक्षक को चाहिए कि वह कक्षा में टहल-घूमकर निगरानी करे और ज़रूरत के मुताबिक़ मदद करे। कमज़ोर छात्रों पर ख़ास ध्यान दे और प्रतिभाशाली छात्र अगर जल्द ही प्रश्न हल कर लें तो उन्हें और काम दे दिया जाए, ताकि वे काम में लगे रहें और दूसरों के कामों में बाधक न बनें।

अगर कई बच्चे हल करने में असफल हों, तो ब्लैकबोर्ड पर ख़ुद हल करके या उन छात्रों से हल कराकर दिमाग़ में बिठा दिया जाए, जिनका हल सही हो।

(३) **करने के काम** : अन्त में पढ़े हुए नियमों और सिद्धान्तों से सम्बन्धित कुछ ऐसे काम दे दिए जाएँ, जिन्हें मामूली ध्यान से ही बच्चे अपने तौर पर पूरा कर सकें। ये काम कक्षा में भी कराए जा सकते हैं और घर से करके लाने के लिए भी दिए जा सकते हैं।

☆☆☆

अध्याय-36

विभिन्न विषयों की शिक्षण-विधि

शिक्षण और शिक्षण-विधि पर सैद्धान्तिक चर्चा के बाद आवश्यक प्रतीत होता है कि प्रमुख विषयों की शिक्षण-विधियों पर संक्षेप में कुछ आवश्यक जानकारियाँ मुहैया करा दी जाएँ।

इस्लामियात (Islamic Studies)

यह विषय इस्लामी शिक्षा-व्यवस्था की जान है। सभी विषयों और शैक्षिक गतिविधियों के लिए प्राण-वायु की हैसियत रखता है। इसलिए पूरी शिक्षण-संस्था को सामूहिक रूप से और हर शिक्षक को अपने तौर पर सभी विषयों और पाठ्यसहगामी गतिविधियों में इस विषय को केन्द्र-बिन्दु बना देना चाहिए और शिक्षण-संस्था को अपने कामों और शिक्षकों को अपनी कथनी और करनी और आचार-व्यवहार से इसकी सच्ची गवाही पेश करनी चाहिए।

शिक्षण-संस्था, छात्रावास और आसपास के माहौल में ऐसा वातावरण बनाना और उसे बनाए रखने की कोशिश करनी चाहिए, जिससे इस्लामी मूल्यों को स्थायित्व और वर्चस्व प्राप्त हो और छात्रों को चेतन और अचेतन रूप से अनुकरण के लिए उत्तम आदर्श मिल सकें। अच्छी आदतें डलवाने और अच्छे तौर-तरीक़े अपनाने और नापसन्दीदा तौर-तरीक़ों को छुड़वाने का पूरा प्रयास होना चाहिए और इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि माहौल में अच्छाइयों और भलाइयों को बढ़ावा मिले और बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकने का प्रयास हो।

प्राथमिक कक्षाओं में इस्लामियात (इस्लामी विषयों) में निम्नलिखित पाठ्यसामग्री और शैक्षिक गतिविधियाँ शामिल होंगी—

- क़ुरआन मजीद, नाज़रा, सही उच्चारण के साथ पूरा क़ुरआन पाक पढ़ना, चुनी हुई सूरतें और रुकू याद करना।
- संक्षेप में पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की जीवनी, नबियों (अलैहि॰), सहाबियों (रज़ि॰) और इस्लाम के महापुरुषों के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं और ऐतिहासिक, नैतिक गाथाएँ, अक़ीदों और इबादतों के बारे में आवश्यक जानकारियाँ।
- नैतिक और सामाजिक प्रशिक्षण।
- वुज़ू, नमाज़, रोज़े का व्यावहारिक प्रशिक्षण।

उनकी शिक्षा में यह उद्देश्य नज़र के सामने होगा कि बच्चों की कथनी और करनी, ज्ञान और आचरण और आस्था (अक़ीदे) और विचार इस्लाम की शिक्षा के मुताबिक़ हों। अल्लाह की ख़ुशी हासिल करने, उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ निजी, पारिवारिक और सामूहिक ज़िन्दगी गुज़ारने का तौर-तरीक़ा आए और इससे जुड़ी ज़िम्मेदारियों को अंजाम देने का व्यावहारिक प्रशिक्षण हो। हासिल किए हुए ज्ञान पर ख़ुद अमल और दूसरों तक पहुँचाने का प्रयास हो।

शिक्षण-विधियों के बारे में निर्देश

- आम क़ुरआनी क़ायदों से शुरुआत न की जाए, क्योंकि ये क़ायदे बच्चों के लिए आम तौर पर नीरस होते हैं। वर्णमाला के सभी अक्षरों की पहचान, अक्षरों को जोड़ना-मिलाना और बड़े-बड़े अक्षरों में लिखी हुई आसान और रवां इबारतें पढ़ाने के नए तरीक़े अपनाए जाएँ। शब्द और वाक्य उर्दू के हों, ताकि बच्चों के लिए समझने के लायक़ रहें।
- वर्णमाला-चार्ट, मुन्नी किताब, क़ायदा-ए-नस्ख़ (मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली) से शुरुआत कराई जाए। इनमें दिए हुए निर्देशों का ध्यान रखा जाए और ब्लैकबोर्ड का इस्तेमाल हो, तो

बच्चे बहुत आसानी और दिलचस्पी से उर्दू भी पढ़ने लगते हैं और अरबी अक्षरों से भी ख़ूब अच्छी तरह परिचित हो जाते हैं और शुरू ही से उर्दू के लिए अलग और क़ुरआन मजीद के लिए अलग दो क़ायदों का भार नहीं पड़ता।

- अक्षरों और शब्दों को पढ़ने में उच्चारण की शुद्धता का शुरू ही से पूरा ध्यान रखा जाए।
- दूसरे साल 'यस्सरनल-क़ुरआन' या इस ढंग पर लिखे हुए किसी और दिलचस्प क़ायदे की मदद से वे अहम क़ायदे भी ब्लैकबोर्ड की मदद से मन में बिठा दिए जाएँ, जो रवानी से नाज़रा पढ़ने के लिए ज़रूरी हैं। सभी क़ायदे और नियम इसी मरहले पर बता देने ज़रूरी नहीं हैं। अब 'पारह् अम्-म' शुरू कराया जाए और कुछ ख़ास क़ायदे, लिपि (रस्मुलख़त), विराम-चिह्न इत्यादि प्रवाह के साथ पढ़ाते समय ज़रूरत और मौक़े के मुताबिक़ बताए जाएँ।
- शिक्षक को सही उच्चारण और दिलचस्प अन्दाज़ से पढ़ने का ख़ुद नमूना पेश करना चाहिए और बच्चों से भी सामूहिक और व्यक्तिगत रूप से इसी तरह अदा करवाना चाहिए। वर्तनी पर ज़्यादा ज़ोर देने से रवानी जाती रहती है। इसलिए जहाँ बच्चे ग़लती करें, सिर्फ़ वहीं रोककर हिज्जे कराई जाए।
- क़ुरआन मजीद के एहतिराम के बारे में शुरू ही से ध्यान दिलाया जाए और ख़ुद अनुकरण के लायक़ नमूना पेश किया जाए।
- क़ुरआन मजीद की शिक्षा के दौरान कक्षा का माहौल बहुत ही सुहाना रखा जाए। प्रेम, स्नेह और सहानुभूति के साथ पेश आया जाए। सख़्ती, डाँट-फटकार इत्यादि से बिलकुल परहेज़ किया जाए, ताकि इस किताब के साथ अच्छी भावना जुड़ सकें।
- धार्मिक शिक्षा के सन्दर्भ में एक क्रम से अल्लाह तआला की हस्ती

और उसके गुणों की स्पष्ट धारणा मन में बिठाई जाए। उसके एहसानों का उल्लेख किया जाए। उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीक़ा समझाया जाए और इस सम्बन्ध में आप (सल्ल॰), सहाबा किराम (रज़ि॰) और इस्लामी समुदाय के महापुरुषों के आदर्श आचरणों और गुणों के बारे में बताया जाए।

- इबादतों और मामलों या नैतिकता और समाज के बारे में मौखिक रूप से भाषण देने या जड़तापूर्ण सिद्धान्त समझाने के बजाय उन्हें अमली तौर पर बरतने के तरीक़े सिखाए जाएँ। ऐतिहासिक, नैतिक कहानियों का सहारा लिया जाए और आदर्श व्यवहार और आचरण के पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराए जाएँ।

  शरीर और वस्त्रों को पाक-साफ़ करने और ग़ुस्ल या वुज़ू करने और नमाज़ पढ़ने का पूरा तरीक़ा अमली तौर पर सिखाया जाए। उनके हिस्सों को फ़र्ज़ों, वाजिबात, सुन्नत और मुस्तहबात इत्यादि में बाँटकर उनकी लम्बी सूची रटने पर बच्चों को मजबूर न किया जाए वरना छात्रों पर समय से पहले ग़ैर-मामूली भार भी पड़ेगा और उदासीनता और उचाटपन भी पैदा होगा। ये लम्बी सूचियाँ आम तौर पर बच्चों को इस विषय से दूर और उदासीन कर देती हैं। पूरा तरीक़ा अमली तौर से बताने से वे आसानी से ख़ूब अच्छी तरह सीख लेंगे और ठीक-ठीक अंजाम देंगे।

  नमाज़ के ज़िक्र और दुआएँ इत्यादि याद कराने के लिए प्राथमिक स्तर की दो-तीन कक्षाओं में छात्रों से पूरी नमाज़ ऊँची आवाज़ से जमाअत के साथ किसी ऐसे बच्चे की इमामत में अदा कराई जाया करे, जिसे सबसे ज़्यादा याद हो और शिक्षक नमाज़ के दुरुस्त अरकान (अंगों) और उच्चारण की शुद्धता का ध्यान रखे।

- शिक्षण-संस्था में संजीदा धार्मिक माहौल बनाने के लिए निम्नलिखित

उपाय अपनाए जाएँ—

(1) विभिन्न अवसरों के इस्लामी शिष्टाचार और आचार-व्यवहार के नियम समझाकर उनकी पाबन्दी कराई जाए।

(2) नमाज़ और मसजिद को प्रशिक्षण का माध्यम बनाया जाए। संजीदगी का माहौल, सामूहिकता का भाव, अनुशासन, विनम्रता और शिष्टाचार की भावना पैदा करने में इनसे बड़ी मदद मिलेगी।

(3) सामूहिक हाज़िरी में बुलन्द आवाज़ से ऐसी हम्द और नअत का एहतिमाम किया जाए, जिनकी बह्र (छन्द) संगीतमय, आसान शब्द और शेअर समझने लायक़ हों। एक ही हम्द या नअत लगातार न पढ़ी जाए।

(4) इज्तिमा (धार्मिक सभा) और धार्मिक समारोहों का आयोजन किया जाए। इनके द्वारा धार्मिक ज्ञान में वृद्धि होगी और दीन (इस्लाम धर्म) से भावनात्मक लगाव पैदा करने में बड़ी मदद मिलेगी।

(5) क़ुरआन मजीद की आयतें, हदीसें, सुनहरे कथन या लोकोक्तियाँ, धर्म-सम्बन्धी पोस्टर्स इत्यादि ख़ूबसूरती के साथ जगह-जगह चिपकाए गए हों, जिनकी भाषा आसान और मनमोहक हो और मोटे अक्षरों में लिखे हुए हों और ख़ूबसूरत, दिलकश अन्दाज़ में और आकर्षक हों।

(6) परिचर्चाएँ कराई जाएँ या विशेष भाषण के कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।

(7) धार्मिक पुस्तकों, समाचारपत्रों और पत्रिकाओं का प्रबन्ध किया जाए।

(8) धार्मिक और धर्म के प्रचार-सम्बन्धी जलसों में शामिल होने के मौक़े दिए जाएँ।

(9) भलाई के कामों और जनसेवा के कार्यक्रम बनाए जाएँ और उनपर अमल कराया जाए।

(10) भलाइयों को बढ़ावा देने और बुराइयों को दूर करने के लिए विभिन्न प्रकार के सप्ताहों का आयोजन किया जाए।

मातृभाषा (उर्दू)

मदरसे के छात्रों की मातृभाषा होने के कारण उर्दू को पाठ्यक्रम में ग़ैर-मामूली अहमियत हासिल है। अपनी बात समझाने और दूसरों की समझने का फ़ितरी और सबसे अधिक प्रभावशाली माध्यम है। हमारे अधिकतर ज्ञान का भंडार, साहित्य और धर्म-सम्बन्धी सामग्री इसी भाषा में है।

दूसरी भाषाओं की तुलना में क़ुरआन और सुन्नत से फ़ायदा उठाने में भी यही भाषा ज़्यादा मददगार होती है; क्योंकि लिपि, बहुत-से शब्द, शब्द-क्रम, पद, मुहावरे और लोकोक्तियाँ, धार्मिक गाथाएँ, विचार और भावनाएँ, प्रतीक और परम्पराएँ इत्यादि से इसी के द्वारा छात्र बहुत हद तक परिचित हो जाते हैं।

अपनी मातृभाषा और उसके साहित्य से छात्र को फ़ितरी तौर पर जो गहरा लगाव है और होगा, वह किसी और भाषा से हरगिज़ नहीं हो सकता। मातृभाषा होने की वजह से सभी विषयों के लिए यही शिक्षा का माध्यम भी होती है। इसलिए इसी में महारत हासिल करने पर दूसरे सभी विषयों की प्रगति निर्भर करती है।

इसके शिक्षण में निम्नलिखित उद्देश्यों पर नज़र होनी चाहिए—

- छात्रों को मौखिक और लिखित विचार और भावनाओं क अभिव्यक्ति पर महारत हासिल हो। दूसरों के विचार और उनर्क भावनाएँ, चाहे मौखिक हों या लिखित छात्र, आसानी से समझ सवें और उनके शब्द-भंडर में वृद्धि हो।
- मातृभाषा की शिक्षा में बोलने, पढ़ने और लिखने तीनों में बराब योग्यता पैदा करना शामिल है। भाषा-शिक्षण अधूरा होगा, अग

इनमें से किसी एक की तरफ़ से भी लापरवाही बरती गई या किसी एक पहलू को भी नज़रअन्दाज़ किया गया।

बोलना सिखाने का तरीक़ा

भाषा का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग यही है। विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए हर आदमी को सबसे ज़्यादा इसी माध्यम से काम लेना पड़ता है। इसलिए इसके सिखाने की तरफ़ बहुत ज़्यादा ध्यान देना चाहिए। हमारे मदरसों में आम तौर पर इस तरफ़ से बहुत लापरवाही बरती जाती है।

सिर्फ़ पढ़ना-लिखना सिखा देने ही को पर्याप्त समझा जाता है; हालाँकि सबसे पहले और सबसे ज़्यादा इसी पहलू पर ध्यान देना चाहिए। इस बारे में निम्नलिखित बिन्दु नज़र के सामने रहें—

- बच्चों को इतना हिला-मिला लिया जाए कि वे बेझिझक अपने विचारों को प्रकट कर सकें।
- उनके माँ-बाप, भाई-बहन, मुहल्ला-पड़ोस, घरेलू ज़िन्दगी, इसके पसन्दीदा खेल-खिलौने, भोजन, वस्त्र, घरेलू और पालतू जानवरों के बारे में बातचीत की जाए, तो वे बहुत जल्द घुल-मिल जाते हैं। लेकिन इनके बारे में बहुत विस्तार में न जाएँ, बल्कि सिर्फ़ उन पहलुओं पर बातचीत की जाए, जिनसे बच्चे को लगाव और दिलचस्पी हो।
- अपनी जगह खड़े होकर, कक्षा के सामने आकर, भीड़ के सामने खड़े होकर कुछ कहने पर उभारा जाए। उदाहरण के लिए, किसी प्रश्न का संक्षेप में उत्तर देना, प्रश्न करना, कोई एलान करना या पैग़ाम पहुँचाना, कविता, क़िरअत, रटे हुए कुछ वाक्य सुनाना, जानवरों की बोलियों और हरकतों की नक़ल इत्यादि, झेंप और झिझक दूर करने में मददगार होती हैं।

- पाठ्यक्रम से सम्बन्धित विभिन्न क्रिया-कलाप और पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ, ख़ासकर आर्ट क्राफ़्ट, वुज़ू, नमाज़, कहानियाँ और खेल इत्यादि बातचीत के बहुत-से मौक़े मुहैया कराते हैं। इनसे फ़ायदा उठाया जाए।
- बच्चों से बातचीत में इस बात का ध्यान रहे कि बातचीत अधिक से अधिक अनौपचारिक और स्वाभाविक हो। अन्दाज़ दिलकश, उम्दा और ख़ुशगवार हो। साफ़-साफ़ और सही-सही बोलने, पूरा उत्तर देने और बातचीत करने के उचित ढंग की तरफ़ ध्यान दिलाया जाए।
- बातचीत के दौरान बच्चों की ग़लतियों का सुधार किया जाए, लेकिन हीन भावना न पैदा होने दिया जाए। बेहतर हो कि ग़लत शब्द, वाक्य या बोलने के अन्दाज़ के सुधार के लिए ख़ुद सही-सही अदा करके कहलवाया जाए।

फिर आसपास की चीज़ों, जानवरों, रोज़मर्रा की घटनाओं और देखी-सुनी बातों इत्यादि पर आधारित, सिलसिलेवार बातचीत की जाए। इससे लेख आदि लिखने में भी मदद मिलेगी।

आख़िर में कहानियाँ, वार्तालाप, लतीफ़े, संक्षिप्त संयुक्त वाक्य रटकर भाषण के रूप सभा या गोष्ठी में पेश करने का अभ्यास कराया जाए। अन्दाज़ किताब पढ़ने का नहीं, भाषण का हो।

पढ़ना सिखाने की विधि

हिज्जे लगाकर पढ़ने के बजाय, जो आज आम तौर पर प्रचलित है, बिना हिज्जे लगाए पढ़ना शुरू कराया जाए। विस्तृत हिदायतों के लिए 'मुन्नी किताब' और 'क़ायदा-ए-नसख़' देखें और उनसे मदद लें। गद्य और पद्य (नज़्म व नस्र) पढ़ाने के लिए 'हमारी किताब' के सेट में दी हुई हिदायतों और अभ्यासों से फ़ायदा उठाएँ।

प्राथमिक कक्षाओं में व्याकरण अलग से न पढ़ाया जाए, बल्कि

बोलने या लिखने में जो ग़लतियाँ हों, उनके सुधार के सन्दर्भ में शुद्ध भाषा बोलने या लिखने के जिस नियम का उल्लंघन हुआ हो, उसको बता दिया जाए।

लिखना सिखाने की विधि

- शुरुआत ड्राइंग से कराई जाए। सरल रेखाओं, चतुर्भुज, त्रिकोण, वृत्त में आंशिक परिवर्तन करके चित्र या रंगीन कामों के द्वारा पकड़, माँसपेशियों पर नियंत्रण और आँख, दिमाग़, हाथ से एक साथ ही काम लेने के अभ्यास कराएँ। यह काम रंगीन चॉक से सिलेट पर या ब्लैकबोर्ड और काली तख़्ती पर शुरू कराया जाए।
- फिर धीरे-धीरे अक्षरों और शब्दों की ड्राइंग की तरफ़ लाएँ। जितना पढ़ाएँ, शुरू में उसकी नक़ल भी कराएँ। इस तरह हिज्जे और इमला (श्रुतिलेख) में भी मदद मिलेगी और पाठ याद भी हो जाएगा। लिखते समय क़लम की पकड़ और बैठने के सही तरीक़े का पूरा ध्यान रखें। फिर कॉपी पर पेंसिल से अभ्यास कराएँ। इमला सिर्फ़ उन हिस्सों का हो, जिनका वे काफ़ी अभ्यास कर चुके हों, ताकि ग़लतियाँ कम से कम हों। शुरू में सिर्फ़ साफ़ और स्पष्ट लिखने पर ज़ोर दें। बाद में सही और सुन्दर अक्षरों में लिखने पर।

  'बिस्मिल्लाह' कहकर शुरू करने, पर्याप्त हाशिया छोड़ने, डैश लगाने, साफ़-सुथरा लिखने इत्यादि का ध्यान रखवाएँ। उंगलियाँ स्याही से भरने या इधर-उधर स्याही छिड़कने, दीवारों या कॉपियों, किताबों पर बिना ज़रूरत के लिखने की शुरू ही से रोकने की कोशिश की जाए।

रचना-कर्म की शिक्षण-विधि

- सम्बन्धित विषय पर लिखने से पहले मौखिक रूप से अभिव्यक्ति और वाद-विवाद का पर्याप्त अवसर दिया जाए। शीर्षक और विषय के चयन में बच्चों की दिलचस्पी का लिहाज़ रखा जाए।

आरम्भ में सिर्फ़ उन विषयों और शीर्षकों पर रचना-कार्य कराया जाए, जिनसे सम्बन्धित अनुभव और अवलोकन के बहुत सारे मौक़े मिले हों और जिन विषयों के बारे में स्पष्ट विचार बन चुके हों।

रचना-कार्य के मिसाली नमूने भी दिखाए जाएँ।

रचनात्मक काम उचित मात्रा में और पर्याप्त अन्तराल से दिया जाए।

लिखी गई रचना में रवानी और विचार की अभिव्यक्ति में सुव्यवस्था और क्रम का ध्यान रखवाया जाए।

संक्षिप्त और शीर्षक से ही सम्बन्धित बातें लिखने की तरफ़ ध्यान दिलाया जाए।

प्राथमिक कक्षाओं में ख़ाली जगहों को भरना, शब्दों को इस्तेमाल करके वाक्य बनाना, उचित शब्दों का चुनाव इत्यादि के अभ्यास हों। फिर दिए हुए शीर्षकों पर कुछ सुगठित वाक्य लिखना सिखाएँ और धीरे-धीरे सुगठित रचनाएँ। लम्बी रचना की बच्चों से आशा न रखी जाए।

लिखने के कामों का तुरन्त सुधार किया जाए, लेकिन सभी ग़लतियों का एक साथ सुधार न किया जाए; बल्कि क्रमानुसार ग़लतियाँ ठीक कराई जाएँ। बड़ी ग़लतियाँ पहले ली जाएँ और मामूली बाद में।

ग़लतियाँ ज़्यादा हों, तो दोबारा लिखवाया जाए। परिमाण या मात्रा (Quantity) से अधिक दशा (Quality) पर बल दिया जाए।

अच्छी रचना पर नम्बर के साथ उचित रिमार्क भी दिए जाएँ। हर रचना पर कुछ ज़रूरी हिदायतें दी जाएँ।

पत्र-लेखन

पत्र लिखने का भी अभ्यास कराया जाए। छात्रों को हिदायत कीजिए कि 'बिस्मिल्लाह' से शुरू करें और ऊपर 'बिस्मिहि सुब्हा-नहु'

लिख दिया करें। ऊपर दाईं तरफ़ संक्षेप में पता, बाईं तरफ़ तारीख़ डालें। संक्षेप में यथोचित सम्बोधन करें। सम्बोधन के साथ ही 'सलाम मस्नून' या 'अस्सलामुअलैकुम' लिखें।

नए पैरे से अपनी बात लिखें। अन्त में पत्र पानेवाले (मक्तूबअलैह) से अपना सम्बन्ध प्रकट करनेवाले शब्दों के साथ अपना नाम लिख दिया करें। गुस्सा की हालत में पत्र न लिखें। पत्रों के उत्तर ज़रूर दें। संक्षिप्त पत्र लिखा करें। हर पत्र पर अपना नाम-पता ज़रूर लिख दिया करें। मुसीबत में हमदर्दी और ख़ुशी में मुबारकबाद का पत्र लिखें।

इजाज़त के बिना दूसरों के पत्र न पढ़ें। नाम-पता सुन्दर और सुपाठ्य अक्षरों में लिखा करें। रवाना करने से पहले दोबारा पढ़ लें।[2] उन लोगों से पत्र के उत्तर पाने के लिए उत्तरी कार्ड भेज दिया करें, जिनसे आपका सम्बन्ध न हो। डाक में डालने के लिए कोई व्यक्ति चिट्ठी दे, तो ज़रूर डाल दिया करें।

गणित

हमारी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में गणित की बहुत अहमियत है। कोई आदमी चाहे किसी पेशे से सम्बन्ध रखता हो, गणित के बिना उसका काम नहीं चल सकता। चीज़ों की ख़रीद-बिक्री, उश्र और ज़कात, लेन-देन, विरासत और हिस्से-बँटवारे सबमें इसकी ज़रूरत पड़ती है। इस्लामियात (Islamic Studies) और मातृभाषा के बाद पाठ्यक्रम का सबसे महत्त्वपूर्ण विषय यही है।

दूसरे विषयों की कमज़ोरियाँ तो मामूली रूप से ध्यान देने पर बाद में भी दूर हो सकती हैं, लेकिन पढ़ने-लिखने या हिसाब में अगर कुछ

---

2. डाक द्वारा चिट्ठी-पत्री भेजने का चलन अब कम होता जा रहा है और एसएमएस, ई-मेल आदि भेजने का चलन दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। इसका कारण यह है कि एसएमएस, ई-मेल आदि कुछ ही पलों में दुनिया भर में कहीं भी पहुँच जाते हैं। ये चिट्ठी के ही नवीनतम रूप हैं। इसलिए इन्हें भेजते समय चिट्ठी लिखने के आवश्यक नियमों को ध्यान में ज़रूर रखना चाहिए। —अनुवादक

बुनियादी ख़ामियाँ रह जाएँ तो इनकी कमियों को दूर करना मुश्किल है, बल्कि इनकी मौजूदगी में आगे बढ़ना भी मुश्किल हो जाता है। उदाहरण के लिए, गिनतियों के लिखने-पढ़ने पर अगर महारत न हो तो जोड़ना-घटाना नहीं सिखाया जा सकता।

चारों विभिन्न नियमों (जोड़, घटाव, गुणा और भाग) पर अगर ख़ूब अच्छी तरह महारत प्राप्त न हो, तो बाद के नियम हरगिज़ नहीं सिखाए जा सकते। इसलिए शुरू ही से इसकी विधिवत रूप से पढ़ाई और बुनियाद मज़बूत करने की फ़िक्र और कोशिश होनी चाहिए।

ध्यान देने योग्य बातें

- प्राथमिक कक्षाओं में गणित पढ़ाने का उद्देश्य वास्तव में दैनिक जीवन और विभिन्न विषयों तथा क्रिया-कलापों में पेश आनेवाली गणित से सम्बन्धित समस्याओं को समझने और शुद्धता और शीघ्रता के साथ उन्हें हल कर लेने की छात्रों में योग्यता पैदा करानी है। इसलिए आँकड़े और समस्याएँ इत्यादि बच्चों के दैनिक जीवन से ही जुड़ी होनी चाहिएँ।
- बच्चों को ऐसी सूरते-हाल से दो-चार करने की कोशिश करें कि गणित का जो नियम या सिद्धान्त उन्हें सिखाने जा रहे हैं, उसकी उपयोगिता और लाभ ख़ुद बच्चे भी ख़ूब अच्छी तरह महसूस करने लगें। इससे दिलचस्पी भी पैदा होगी और वे पूरे ध्यान से उसे समझने और याद रखने की कोशिश करेंगे।
- अंकों की संकल्पना मन में बिठाने या गिनती, जोड़, घटाव इत्यादि सिखाने में मूर्त से अमूर्त और पास से दूर की तरफ़ चलें यानी बॉल, फ़्रेम, गोलियों, इमली के बीज, उंगलियों, प्रयोग की वस्तुओं, खिलौनों इत्यादि की मदद से समझाएँ, फिर केवल अंकों के द्वारा अभ्यास कराएँ।

- नए-नए नियम और सिद्धान्त सिखाने में जल्दबाज़ी से काम न लें, जब तक कि नियम पर ख़ूब अच्छी तरह महारत हासिल न हो, दूसरा हरगिज़ न शुरू कराएँ।
- हर नियम का बार-बार अभ्यास कराएँ। दोहराने ही से शुद्धता और शीघ्रता के साथ प्रश्नों को हल करने की योग्यता पैदा होती है। गणित बहुत अभ्यास चाहता है। पर्याप्त अभ्यास के बिना हिसाब नहीं आता। हाँ, विमुखता और उकताहट से सुरक्षित रखने के लिए जिज्ञासा, सक्रियता और तत्परता का पूरा ध्यान रखें। एक बैठक में दोहराने के लिए बहुत कम समय लिया करें।
- शुद्धता और सफ़ाई के साथ संख्या को लिखने के लिए शुरू ही से ध्यान दें। दो या दो से अधिक अंकों की संख्या में हर अंक के स्थानीय मान की संकल्पना ख़ूब अच्छी तरह स्पष्ट की जाती रहे। उदाहरण के लिए, 27 में दो दहाइयाँ और सात इकाइयाँ हैं। लिखने में भी दो या दो से अधिक अंकों की संख्या बाएँ से दाएँ लिखाएँ। उदाहरण के लिए, 27 लिखना हो तो पहले 2, फिर 7 लिखने की आदत डलवाएँ।
- प्राथमिक कक्षाओं में विभिन्न उदाहरण देकर नियम निकलवाएँ। नियम ख़ूब अच्छी तरह याद होने के बाद भी अभ्यास के पर्याप्त अवसर दें।
- धीरे-धीरे इतना अभ्यास कराएँ कि जोड़ने, घटाने या पहाड़े पढ़ने में बच्चे एक बार में अपेक्षित उत्तर दे सकें। उन्हें पूरा न गिनना पड़े। उदाहरण के लिए, सात और पाँच बारह और आठ सत्ते छप्पन इत्यादि, न कि उंगलियों की मदद से आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह; आठ एकम आठ से आठ सत्ते छप्पन आदि तक गिनना।
- गुणावाले पहाड़े या गुर (नियम) इत्यादि याद कराने से पहले यह

ज़रूर समझा दिया करें कि ऐसा क्यों होता है।

- अभ्यासों में इतनी बड़ी संख्या हरगिज़ न लें, ज़िन्दगी में जिनकी शायद ही कभी ज़रूरत पेश आती है या छोटी उम्र में जिनकी कल्पना भी असम्भव है। जैसा कि आम तौर पर प्रचलित रहा है कि प्राथमिक कक्षाओं में महासंख तक के अभ्यास होते थे।
- एक ही तथ्य को कई तरीक़ों से ज़ेहन में बिठाएँ। उदाहरण के लिए, तीन, दो मिलकर पाँच — 5 से 3 बक़द्र 2 कम है अर्थात् 5 से 2 कम है 3, या 3 से 5 बक़द्र 2 ज़्यादा है या 5×3=3×5 या 5+3=3+5।
- प्रश्न देकर हल करा लेने ही पर बस न करें, बल्कि सही हल की जाँच का तरीक़ा भी सिखाएँ और छात्रों से जाँच करा लिया करें। कभी-कभी खुद छात्रों से भी प्रश्न बनाने को कहें।
- लिखित के साथ मौखिक प्रश्न हल कराने पर भी विशेष ध्यान दें। रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में आम लोगों को हिसाब-किताब की ऐसी समस्याओं का कम ही सामना करना पड़ता है, जिनके लिए उन्हें कागज़-क़लम लेकर बैठना पड़े। आम तौर पर ज़बानी काम चलाना पड़ता है। इसलिए मसले को आम तौर पर ज़बानी हल कर लेने की अच्छी योग्यता पैदा कर दें।

  मौखिक प्रश्नों का अभ्यास लिखित प्रश्नों को भी शुद्धता और शीघ्रता के साथ हल करने और शाब्दिक प्रश्न समझने में बहुत मददगार होता है। हर पाठ के शुरुआती कुछ मिनट मौखिक प्रश्नों ही के लिए ख़ास रखें और कभी-कभी इसके लिए पूरे घंटे लिए जाएँ। आरम्भिक कक्षाओं में तो मौखिक प्रश्नों पर लगभग आधा समय लगाना चाहिए।
- इबारती प्रश्नों में भाषा आसान और समझने लायक़ रखें, ताकि बच्चे

थोड़ी-सी कोशिश से ही हल कर सकें। पेचीदगी और जटिलता क्रमवार लाई जाए।

गिनती सिखाना

- स्कूल/मदरसे में आने से पहले बच्चों को सीमित गिनतियाँ अक्रमबद्ध रूप में याद होती हैं। वे आम तौर पर चीज़ों की मात्रा से अन्दाज़ा करते हैं। किसी चीज़ के बारे में कम या ज़्यादा की सोच होती है और इसी पर वे सन्तुष्ट होते हैं।
- गिनती की शुरुआत उन चीज़ों से की जाए, जिन्हें बच्चे छू सकें या इधर-उधर कर सकें। उदाहरण के लिए, इमली के बीज, गोलियाँ इत्यादि।
- गिनती की कविताओं से भी मदद ली जाए। उदाहरण के लिए—

  'एक, दो, तीन क़ायम करो दीन

  तीन, दो, एक बन जाओ नेक' इत्यादि ।
- पहले पाँच तक, फिर दस तक सीधा और उलटा गिनाकर लिखना सिखाएँ। निश्चित क्रम से आगे बढ़ें। क्रम से लिखवाने के बाद बिना क्रम के भी ख़ूब अभ्यास कराएँ।

चार एकाकी नियम

गिनतियाँ सिखाने के साथ-साथ धीरे-धीरे जोड़-घटाव की भी जानकारी दें और इतना अभ्यास कराएँ कि चीज़ों की मदद के बिना भी गिनने लगें। उदाहरण के लिए, तीन से दो एक कम है और दो से तीन एक ज़्यादा।

- जोड़-घटाव में उंगलियों से गिनने का काम लिया जाए, लेकिन कुछ समय बाद इस आदत को छुड़वा दें।

- तीलियों के बंडल से या दियासलाई के ख़ाली डब्बों में इमली के दस-दस बीजों से दहाई की संकल्पना मन में बिठाएँ और एक-एक की वृद्धि से अगली संख्या सिखाएँ। बॉल फ्रेम की मदद से भी इकाई, दहाई की भी संकल्पना कराई जाए और उनको संख्याओं में प्रकट करने का तरीक़ा सिखाया जाए।
- बीच तक गिनतियाँ सिखाने के बाद जोड़े-जोड़े रखकर दो के गुणावाले पहाड़े भी बता दें और विभिन्न उदाहरणों से समझा दें कि जोड़ का आसान तरीक़ा पहाड़े से मदद लेना है।
- दस या कम चीज़ें लेकर (2, 2), (3, 3), (4, 4) की ढेरियाँ लगाकर या इतने बच्चों में बाँटकर भाग की संकल्ना मन में बिठाएँ। लेकिन संख्याएँ ऐसी हों, जिनका पूरा-पूरा भाग हो सके।
- पहले साल में इस तरह 50 तक गिनती, 5 तक गुणावाले पहाड़े, इसी के अन्दर जोड़-घटाव के प्रश्नों का ख़ूब अभ्यास कराएँ। जोड़ के प्रश्नों में दहाई हासिल ले सकते हैं, लेकिन घटाव के प्रश्नों में दहाई से उधार न लेना पड़े। जोड़ के 20 के अन्दर और बाक़ी के 10 के अन्दर के टेबुल बनाकर याद करा दें।

  उदाहरण के लिए, एक एक दो, एक दो तीन, एक तीन चार इत्यादि या एक में से एक गए कुछ नहीं, दो में से एक गए एक इत्यादि।
- चारों एकाकी नियम (जोड़, घटाव, गुणा और भाग) दूसरे साल में अच्छी तरह सिखा दें। लेकिन अभ्यास का सिलसिला आगे भी जारी रहे।

भिन्नों की संकल्पना

- फल, कागज़ के गोल-चौकोर टुकड़े, छड़ियाँ इत्यादि काटकर एक बटा दो, एक बटा चार, एक पूर्णांक एक बटा दो, तीन बटा चार की

संल्कपना आसानी के साथ समझाई जा सकती है। धीरे-धीरे दस तक इनके भिन्नवाले पहाड़े भी बनवाकर याद कराएँ।

- कागज़ पर चौकोर आकृति बनाकर $\frac{1}{2}$, $\frac{1}{4}$, $\frac{1}{8}$ ख़ानों में बाँटें और फिर उन्हें ख़ानों की मदद से (1) $\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=\frac{3}{4}$; (2) $\frac{1}{2}+\frac{2}{4}=\frac{4}{8}$ (3) $\frac{1}{2}$ का $\frac{1}{2}=\frac{1}{4}$;(4) $\frac{1}{2}\div 2=\frac{1}{4}$ इत्यादि की संकल्पना समझाएँ।

भूगोल

अल्लाह पूरी कायनात (ब्रह्माण्ड) का बनानेवाला, रोज़ी देनेवला और मालिक है। उसने अपने असीम साम्राज्य के एक छोटे-से हिस्से ज़मीन पर आदमी को अपना प्रतिनिधि (ख़लीफ़ा) बनाया है। इसी की मिट्टी से आदमी को बनाया गया है। इसपर आदमी सारी ज़िन्दगी रहता-बसता है। इसके साधनों-संसाधनों से फ़ायदा उठाता है। तरह-तरह से इनका मनचाहा उपयोग और उपभोग करता है और मरने के बाद इसी में दफ्न होता है।

कहने का मतलब यह है कि प्रतिनिधि की हैसियत से यही ज़मीन आदमी की कर्मभूमि है। इसलिए इसके बारे में जानकारियाँ रखना हर आदमी के लिए ज़रूरी है।

भूगोल वह विज्ञान है, जिसके द्वारा पूरी धरती के बारे में जानकारी मिलती है। ख़ासकर किसी ख़ास माहौल (वातावरण) में आदमी के रहन-सहन की जानकारी। आदमी के रहन-सहन पर उसके प्राकृतिक वातावरण, पृथ्वी की बनावट, जलवायु, वनस्पति, पैदावार, जीव-जन्तु भी असर डालते हैं।— भूगोल से इनके बारे में भी जानकारी हासिल होती है।

विभिन्न ज्ञान-विज्ञान और कला-कौशलों की मदद से आदमी ने अपने माहौल में तरह-तरह के बदलाव करके इसे अपने लिए अनुकूल

बनाया है। आदमी के रहन-सहन पर उसके माहौल और माहौल पर उसकी कोशिशों के प्रभाव का ज्ञान भूगोल ही के द्वारा होता है। इसलिए भूगोल की पढ़ाई ज़रूरी है।

प्राथमिक कक्षाओं में क्रमशः स्थानीय, ज़िला-स्तरीय और प्रादेशिक और देश के भूगोल की संक्षिप्त जानकारी, दुनिया के विभिन्न परिवेश में रहनेवाले बच्चों की शक्ल-सूरत, पहनावा, रहन-सहन इत्यादि के बारे में जानकारी और सैर-सपाटा करनेवालों, यात्रा-वृत्तान्तों (सफ़रनामों) और अभियानों के द्वारा दुनिया का संक्षिप्त ज्ञान पाठ्यक्रम में शामिल होता है।

शिक्षण-विधि

- परिवेश की भौगोलिक परिस्थितियाँ और पृथ्वी पर सक्रिय प्राकृतिक कारकों और वातावरण को अनुकूल बनाने के सन्दर्भ में मानवीय संघर्षों और प्रयासों का ज्ञान प्रदान करने के लिए कभी-कभी बाहर ले जाकर नदी, नालों, खेत-खलिहानों, बाज़ार, मंडियों, मिलों-कारख़ानों इत्यादि का अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण कराएँ।
- संकल्पनाओं को स्पष्ट करने के लिए चित्रों, चार्ट्स, ग्लोब और मानचित्र, बॉलों की कश्तियों पर दृश्य, मॉडल और अगर उपलब्ध हो सकें, तो व्यूमास्टर और मैजिक लैनटर्न से मदद लें।
- दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों के बच्चों के बारे में जानकारी भौगोलिक कहानियों के द्वारा उपलब्ध कराएँ।
- यात्रा-वृत्तान्तों और समुद्री, स्थलीय, अन्तरिक्ष-यात्राओं और पर्वतारोहण से सम्बन्धित अभियानों का उल्लेख क़िस्से-कहानियों के अन्दाज़ से करें।
- आपबीती के अन्दाज़ में विभिन्न कृत्रिम वस्तुओं, प्राकृतिक दृश्य, नदी, पहाड़, ज़मीन इत्यादि से सम्बन्धित आवश्यक जानकारी उपलब्ध

कराएँ। अन्त में क्षेत्रीय आधार पर पूरी दुनिया के बारे में संक्षेप में जानकारी प्रदान करें।

- विभिन्न खनिज पदार्थों, अनाजों, बीजों और विभिन्न पैदावार के नमूने और देश-देश के टिकट जमा करने-करवाने का प्रबन्ध करें।
- कमरे को भौगोलिक चित्रों, दृश्यों, चार्ट्स, मानचित्रों इत्यादि से सजाएँ और ज़रूरत के मुताबिक़ उनसे मदद लें।

सामान्य विज्ञान

इस विषय में – (1) स्वास्थ्य-सुरक्षा, (2) शरीर के अंगों के कार्य, (3) प्रकृति का अध्ययन, (4) चिकित्साशास्त्र, (5) भू-विज्ञान, (6) अन्तरिक्ष-विज्ञान, (7) रसायनशास्त्र इत्यादि की वे ज़रूरी जानकारियाँ शामिल हैं, जो बच्चों को अपने शरीर, प्राकृतिक परिवेश, प्राकृतिक दृश्य, अच्छी आदतों और सावधानी के उपायों के बारे में, बहरहाल, होनी चाहिएँ।

उद्देश्य

इस विषय के शिक्षण में निम्नलिखित उद्देश्य नज़र के सामने होने चाहिएँ–

(1) प्राकृतिक परिवेश में बिखरी हुई निशानियों का अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण कराकर दुनिया को बनानेवाले की हस्ती और उसके गुणों की क्रमशः स्पष्ट धारणा को छात्रों के मन-मस्तिष्क में पूरी मज़बूती से बिठाना।

(2) परिवेश के जीव-जन्तुओं, वनस्पतियों, प्राकृतिक पदार्थों, प्राकृतिक दृश्यों और सौन्दर्य के अवलोकन और प्रत्यक्षीरकण की आदत डलवाना, इनके बारे में ज़रूरी जानकारी मुहैया कराना। प्रकृति की कारीगरियों के निर्धारित किए हुए उन नियमों और सिद्धान्तों से

छात्रों को परिचित कराना, जो उनके पीछे काम करते हैं, ताकि वे अन्धविश्वास और मूर्खतापूर्ण अक़ीदों से बचे रहें।

(3) शरीर की बनावट, अंगों के कार्य, स्वास्थ्य-सुरक्षा के नियम, प्राथमिक चिकित्सा-सहायता और सतर्कता के उपायों से छात्रों को परिचित कराना।

(4) सम्पूर्ण विश्व के रचयिता द्वारा प्रदत्त असीम भंडारों के महत्त्व और मूल्य समझने और उनको इस्तेमाल करके मानव-जाति को लाभ-हानि पहुँचाने की मनुष्यों की कोशिश की संक्षिप्त जाँच-परख करने के योग्य बनाना।

(5) छात्रों की नैसर्गिक जिज्ञासा को उभारना और उसको शान्त करने के अवसर उपलब्ध करना, ताकि वे विभिन्न चीज़ों के बारे में क्या, क्यों, कैसे इत्यादि से परिचित हो सकें।

शिक्षण-विधि

- सामान्य विज्ञान के पाठों में यथासम्भव प्रत्यक्षीकरण और प्रयोग या खुद करके किसी नतीजे पर पहुँचने के ज़्यादा से ज़्यादा मौक़े दिए जाएँ। मौखिक रूप से पाठ पढ़ा देने पर बस न किया जाए।
- जिन चीज़ों का प्रत्यक्षीकरण या प्रयोग सम्भव न हो, उनके मॉडल, चार्ट्स, चित्र इत्यादि उपलब्ध कराए जाएँ, ताकि संकल्पनाएँ स्पष्ट बनें। अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण के लिए छात्रों को कभी-कभी बाहर खेतों, बाग़ों, तालाबों की सैर के लिए ले जाएँ और प्रत्यक्षीकरण-योग्य पहलुओं पर ध्यान दिलाएँ।
- शरीर की बनावट, अंगों के कार्य, स्वास्थ्य-सुरक्षा के नियम ख़ूब अच्छी तरह ज़ेहन में बिठाने के बाद अच्छी आदतों का पाबन्द बनने, सतर्कता के उपायों पर चलने और प्राथमिक चिकित्सा के बारे में छात्रों का व्यावहारिक प्रशिक्षण करें।

- हर स्कूल/मदरसे को अपना कम से कम एक छोटा-सा संग्रहालय (Museum) बनाना चाहिए, जिसमें धीरे-धीरे छात्रों की मदद से सीप, घोंघे, चिड़ियों के पंख, फूल-पत्तियाँ, तरह-तरह के बीज, धातुओं के टुकड़े या जानवरों के ढाँचे, चीज़ों के मॉडल, पोस्टर्स, चित्र इत्यादि उपलब्ध कराकर ख़ूब अच्छे ढंग से सजाए जाएँ।

  संग्रहालय यानी अजायबघर के लिए अलग से कोई कमरा हो सके, तो अच्छा है वरना कक्षा ही के ताक़ों, अलमारियों इत्यादि में ये चीज़ें क्रमवार रखी जाएँ, ताकि अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण में आसानी हो।

- अगर सम्भव हो तो हर स्कूल/मदरसे का एक छोटा-सा फूलवारी होना चाहिए, जिसमें तरह-तरह के फूल-पौधे लगे हों और पालतू जानवरों और परिन्दों के रखने की भी व्यवस्था हो।— उनकी देख-भाल का ज़्यादातर काम ख़ुद छात्रों से लिया जाए।

- प्रयोग के लिए सस्ते और ज़रूरी उपकरण भी मुहैया कराने की कोशिश की जाए।

☆☆☆

अध्याय-37

शिक्षण-प्रशिक्षण और इस्लामी शिक्षाशास्त्री

नीचे इस्लामी शिक्षाशास्त्रियों और विचारकों के द्वारा प्रस्तुत किए ग शिक्षा-सिद्धान्त और शिक्षा-सम्बन्धी विचार संक्षेप में पेश किए रे रहे हैं—

- ज्ञान पैग़म्बरों की धरोहर है और धन-दौलत विधर्मियों, फ़िरऔन अं क़ारून वग़ैरह की। —हज़रत अबू-बक्र (रज़ि
- दुनिया की चाहत रखनेवाले को ज्ञान देना डाकू के हाथ तलव बेचना है। —हज़रत उमर (रज़ि.
- व्यर्थ है वह ज्ञान जिसपर अमल न किया जाए। —हज़रत उसमान (रज़ि
- सज्जनता बुद्धि और शिष्टाचार में है, न कि धन और वंश में। —हज़रत अली (रज़ि
- मैंने पूछनेवाली ज़बान और सोचनेवाले दिलो-दिमाग़ से ज्ञान प्रा किया है। —हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि
- जब मैं कोई बात समझ लेता और उसकी बारीकी और तत्त्वदर्शि (हिकमत) से परिचित हो जाता, तो 'अल-हम्दुलिल्लाह' (स प्रशंसाएँ अल्लाह ही के लिए हैं) कहता; क्योंकि मेरे ज्ञान में वृद्धि गई। —इमाम अबू-हनीफ़ा (रह
- अकेले में नसीहत करना और समझाना सज्जनता का प्रमाण उ सुधार की ज़मानत है। —इमाम शाफ़ई (रह
- मैंने ज्ञान इस तरह हासिल किया कि (ज्ञान हासिल करने के मा में) दूसरों से फ़ायदा उठाने में बाज़ नहीं रहा और दूसरों को फ़ाय

पहुँचाने में कभी नहीं झिझका।   —इमाम अबू-यूसुफ़ (रह०)

- हमारा यह काम (ज्ञान के काम में लगे रहना) बचपन से मौत तक है। जो आदमी इसको एक घड़ी भर भी छोड़ना चाहे उसको वह घड़ी ही छोड़ दे (यानी मर जाए तो बेहतर है)।   —इमाम मुहम्मद (रह०)
- ख़ुदा की क़सम! मुझको खाने के समय ज्ञान के कामों के छूट जाने पर अफ़सोस होता है; क्योंकि फ़ुरसत का समय बहुत प्यारी चीज़ है। —इमाम राज़ी (रह०)
- शिक्षक पढ़ाई की शुरुआत करनेवालों को छोटी-छोटी, आसान और ऐसी किताबें पढ़ने को कहते थे, जिनमें वे बातें होती थीं, जिनकी आदमी को अक्सर ज़रूरत पड़ती रहती है।

  —इमाम शरफ़ुद्दीन उक़ैली (रह०)
- पाठ की संख्या या मात्रा शुरू में इतनी होनी चाहिए, जो सिर्फ़ दो बार कह लेने से याद हो जाए।   —इमाम ज़रंजी (रह०)

माम ग़ज़ाली (रह०)

- बच्चे की शिक्षा-दीक्षा एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है। वह माँ-बाप के पास अमानत है। उसका दिल एक मूल्यवान रत्न है; उत्तम, सादा, प्रत्येक चिह्न और रूप से रहित, प्रत्येक छाप के योग्य है। जिस तरफ़ मोड़ना चाहो, उसी तरफ़ झुकने के योग्य होता है।

  मिसाल के तौर पर, अगर भलाई की शिक्षा पाए और इसका आदी बनाया जाए, तो बड़ा होकर भी ऐसा ही रहेगा और लोक-परलोक दोनों की भलाई और कामयाबी हासिल करेगा और इस सवाब में माँ-बाप, शिक्षक और संरक्षक, सब शामिल रहेंगे और अगर बुरे कामों का आदी बनेगा और जानवरों की तरह बेलगाम और आज़ाद छोड़ दिया जाएगा, तो तबाह और बरबाद हो जाएगा और उसका वबाल उसके अभिभावकों पर होगा।

● बच्चा जब कोई अच्छा और सराहनीय काम करे, तो उसको कुछ इनाम देना चाहिए, ताकि वह ख़ुश हो और लोगों के सामने उसकी प्रशंसा करनी चाहिए और अगर कभी कोई ग़लती हो जाए, तो उसे नज़रअन्दाज़ करना चाहिए और उसका परदा नहीं खोलना चाहिए, ख़ास कर ऐसी हालत में जब ख़ुद बच्चा इस काम को छिपाए और उसे छिपाए रखने की कोशिश करे; क्योंकि अगर उसको मालूम हो जाएगा कि उसका भांडा फूट जाने से कुछ न हुआ, तो आगे भी बुराइयों पर दुस्साहसी हो जाएगा और भेद खुलने की परवाह न रहेगी।

दोबारा ग़लती हो जाए, तो अकेले में उसपर ग़ुस्सा करना चाहिए और सख़्ती के साथ कहना चाहिए कि ख़बरदार भविष्य में ऐसा मत करना। अगर फिर करोगे, तो सबके समाने अपमानित किए जाओगे।

● बच्चे को हर समय डाँटना-फटकारना नहीं चाहिए; क्योंकि वह डाँट-फटकार का आदी और ढीठ हो जाता है और बुरी हरकतें खुल्लम-खुल्ला करने लगता है और नसीहत का कोई असर नहीं लेता।

● बच्चे को मदरसे में भेजकर क़ुरआन, हदीस और नेक बुज़ुर्गों के वाक़िआत सुनाने चाहिएँ, ताकि नेक बुज़ुर्गों की मुहब्बत उसके दिल में पैदा हो।

● मजलिसों और सभाओं में बैठने-उठने और वहाँ से जाने के तौर-तरीक़े सिखाने चाहिएँ। बहुत ज़्यादा बोलने से मना करन चाहिए।

● इसका आदी बनाना चाहिए कि सबसे पहले न बोले। दूसरा आदमी कोई बात कहे, तो ध्यान से सुने। अपने बड़े का उठकर आदर क और उसके लिए जगह ख़ाली कर दे।

● स्कूल/मदरसे से आने के बाद बच्चे को अच्छे खेल का मौक़ा देना

चाहिए, स्कूल/मदरसों की मेहनत और थकान से राहत मिले, लेकिन खेल ऐसा न हो जो थकाकर चूर-चूर कर दे। अगर खेल से वंचित कर दिया जाए और हमेशा पढ़ने-लिखने में लगाए रखा जाए, तो बच्चे का दिल मर जाता है। उसकी प्रतिभा कुंठित हो जाती है। ज़िन्दगी दूभर हो जाती है, यहाँ तक कि वह शिक्षा से बचने और छुटकारा पाने का उपाय सोचने लगता है।

- यह भी ज़रूरी है कि उसे माँ-बाप, शिक्षक और अभिभावकों की आज्ञा का पालन करने का आदी बनाया जाए और उन लोगों का मान-सम्मान करना सिखाया जाए, जो उम्र में उससे बड़े हों, चाहे वे अपने हों या पराये।
- कहने का मतलब यह है कि बच्चे का प्रशिक्षण शुरू में बहुत ज़रूरी है; क्योंकि बचपन में उसके दिल का जौहर हर तरह की सलाहियत रखता है। भलाई और बुराई दोनों सीख सकता है और इसका इख़्तियार माँ-बाप को है, जिस तरह चाहें, आसानी से झुक सकता है।
- अगर एक डॉक्टर सभी बीमारियों का एक ही नुस्ख़ा लिखे और एक ही दवा से इलाज करे, तो अक्सर की मौत का कारण होगा। बिलकुल यही हाल शिक्षक और संरक्षक का है। अगर वे अपने प्रशिक्षण में आए हुए लड़कों को एक ही लाठी से हाँकेगा, तो उन्हें बरबाद कर देगा। उनके दिलों पर मौत तारी कर देगा।

शिक्षक और अभिभावक का कर्तव्य है कि प्रशिक्षण प्राप्त करनेवाले लड़कों में से हर एक की परिस्थिति, दशा, उम्र और अभिरुचि के मुताबिक़ उनके लिए रास्ता निर्धारित करे और उनके लिए वही अभ्यास और काम सुनिश्चित करे, जिसे वे करने की योग्यता रखते हों।

अहनफ़-बिन-क़ैस का हज़रत अमीर मुआविया (रज़ि॰) को सदुपदेश

"बच्चे हमारे आधार-स्तम्भ हैं, जिनसे हमारी पीठ सहारा लेती है। वे हमारे दिलों के स्वादिष्ट फल हैं। वे हमारी आँखों की ठंडक हैं। उन्हीं को लेकर हम दुश्मनों पर हमला करते हैं। वही हमारे बाद हमारी जगह लेते हैं। इसलिए तुझे चाहिए कि बच्चों के लिए नर्म और मुलायम ज़मीन बन जा। अगर वे तुझसे माँगें, तो उन्हें दे। वे तेरी प्रसन्नता चाहते हैं, तो उनसे खुश रह, उन्हें अपनी मुहब्बत से वंचित न रख, वरना वे तेरी निकटता से भड़केंगे, तेरी ज़िन्दगी से खटकेंगे और तेरी मौत की कामना करेंगे।"

इब्ने-ख़ल्दून (रह॰)

"शिक्षा के दौरान छात्रों को मारना-पीटना अनुचित है; विशेषकर छोटी उम्र के बच्चों पर तो बिलकुल सख़्ती नहीं करनी चाहिए। जो व्यक्ति बच्चों पर सख़्ती करता है, वह उनके दिल की खुशी छीन लेता है। उन्हें निकम्मा और नाकारा बना देता है। उन्हें झूठा और दुष्ट बना देता है (उनके अन्दर छल-कपट और पाखंड के रोगाणु पलने लगते हैं), वे ऐसी बातें प्रकट करने लगते हैं, जो उनके दिल के विपरीत होती हैं; क्योंकि अगर ऐसा न करें, तो क्रोध और यातना का शिकार बनें। वे छल-कपट के आदी बन जाते हैं; क्योंकि इसके बिना काम नहीं चल सकता; फिर यही आदतें और तौर-तरीक़े उनके आचरण और चरित्र के अंग बन जाते हैं।"

इसलिए शिक्षक को चाहिए कि अपने शिष्य पर और बाप अपने बेटे पर क्रोध और बल-प्रयोग का प्रदर्शन न करें और न अत्याचार और दमन के बल पर शिक्षा-दीक्षा दें।

मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह॰)

- इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं कि इस समय धार्मिक ज्ञान देनेवाले मदरसों का वुजूद मुसलमानों के लिए ऐसी बड़ी नेमत और वरदान है कि इससे किसी बड़ी चीज़ की कल्पना नहीं की जा सकती। दुनिया में अगर इस समय इस्लाम के बाक़ी रहने का साधन है, तो ये मदरसे ही हैं, लेकिन साथ ही इन-मदरसों में ऐसी चीज़ें पाई जाती हैं, जिनका सुधार बहुत ज़रूरी है और यह सुधार न होने से विद्वानों का समूह निन्दा और भर्त्सना का निशाना भी बनता है और इन मदरसों को क़ायम करने का खुद जो उद्‌देश्य और लक्ष्य है यानी धर्म के मुताबिक़ कर्म, वह भी कमज़ोर हो जाता है और लोग धार्मिक ज्ञान से भयभीत हो जाते हैं और भागने लगते हैं; तो इस तरह ज्ञान का यह केन्द्र मानो ख़ुदा की राह से रोकने का कारण बन जाता है।
- अब तक तरीक़ा यह रहा है कि पहले छात्र किताब पढ़ता और शिक्षक मतलब बयान कर देता है। अगर किसी को कोई शक हुआ और पूछ लिया वरना आगे चल पड़े। यह तरीक़ा प्राथमिक स्तर और माध्यमिक स्तर के छात्रों के लिए भी लाभदायक नहीं है। इसमें सुधार की ज़रूरत है कि खुद छात्रों की योग्यता से काम लिया जाए। ज़रूरत के बिना उनकी मदद न की जाए। खुद उन्हीं से अर्थ बताने को कहा जाए और हर नियम और समस्या का अत्यधिक अभ्यास कराया जाए।
- मदरसों में यह व्यवस्था होनी ज़रूरी है कि दस-दस, बीस-बीस लड़कों में एक बड़ी प्रौढ़ आयु का नियंत्रक नियुक्त किया जाए, जो इन बातों का पूरा ध्यान रखे कि किसी बड़े छात्र से छोटे छात्र को नहीं मिलने दे। निगराँ (नियंत्रक) से अलग होकर आपस में बातें न करें। उनके नाम जो चिट्ठी-पत्री आए, वह भी देखकर दे। उनके सिर मुंडाता रहे। पान न खाने दे। लिबास सादा हो।

नमाज़ और जमाअत में उनकी हाज़िरी की फ़िक्र रखे। मनोरंजन के लिए या किसी ज़रूरत से बाज़ार इत्यादि जाएँ, तो उनके साथ रहे।

अल्लामा इक़बाल

मक्सूद हो गर तर्बियते-लाले-बदख़्शाँ
बेसूद है भटके हुए ख़ुरशीद का परतौ
सीरते-फ़रज़न्दहा अज़ उम्महात
जौहरे-सिद्क़ो-सफ़ा अज़ उम्महात
शिकायत है मुझे या रब, ख़ुदाबन्दाने-मक्तब से
सबक़ शाहीं बच्चों को दे रहे हैं ख़ाकबाज़ी का
शैख़े-मक्तब है इक इमारतगर
जिसकी सनअत है रूहे-इनसानी
मदरसा अक़्ल को आज़ाद तो करता है मगर
छोड़ जाता है ख़यालात को बेरब्तो-निज़ाम
अज़ रमूर जुज़्वो-कुल आगह बूद
दर जहाँ क़ायम बि-अमरिल्लाह बूद
मदरसे ने तिरी आँखों से छुपाया जिनको
ख़लवते-कोह व बियाबाँ में वो असरार हैं फ़ाश
हम समझते थे कि लाएगी फ़राग़त तालीम
क्या ख़बर थी कि चला आएगा इल्हाद भी साथ
तुझे किताब से मुमकिन नहीं फ़राग़ कि तू
किताबख़्वाँ है मगर साहिबे-किताब नहीं
तहज़ीबे-फ़िरंगी है अगर मर्ग़े-उमूमत
है हज़रते-इनसाँ के लिए उसका समर मौत
जिस इल्म की तासीर से ज़न होती है नाज़न
कहते हैं इसी इल्म को अरबाबे-नज़र मौत

बेगाना रहे दीं से अगर मदरसए-ज़न
है इश्क़ो-मुहब्बत के लिए इल्मो-हुनर मौत
वो इल्म कमबसरी जिसमें हमकिनार नहीं
तजल्लियाते-कलीमो-मुशाहिदाते-हकीम
पाठ फिर पढ़ सदाक़त का, शुजाअत का, अदालत का
लिया जाएगा तुझसे काम दुनिया की इमामत का।

मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह०)

- नेतृत्व (इमामत) का दामन हमेशा ज्ञान से जुड़ा रहेगा। आदमी को आदमी होने के कारण धरती की ख़िलाफ़त (प्रतिनिधित्व और सत्ताधिकार) मिली ही ज्ञान के कारण है। उसको कान, आँख और दिल तीन चीज़ें ऐसी दी गई हैं, जो धरती के दूसरे जानदारों को या तो नहीं दी गईं या मनुष्यों की तुलना में उनकी शक्तियाँ बहुत कम रखी गई हैं। इसलिए वह इस बात के योग्य हुआ कि खुदा द्वारा पैदा किए हुए दूसरे जानदारों पर दुनिया को बनानेवाले का प्रतिनिधि बनाया जाए।

  अब खुद आदमियों में से जो वर्ग या गरोह ज्ञान के मामले में दूसरे वर्गों और गरोहों से आगे बढ़ जाएगा, वह उसी तरह उन सबका इमाम (Leader) बनेगा, जिस तरह इनसान आदमी होने की हैसियत से धरती के दूसरे प्राणियों पर इसी चीज़ के कारण प्रतिनिधि और सत्ताधिकारी बनने के योग्य बना है।

- कान का मतलब दूसरों द्वारा उपलब्ध कराई कई जानकानियाँ हासिल करना है। आँख का मतलब स्वयं चीज़ों का अवलोकन और प्रत्यक्षीकरण करके जानकारी हासिल करना है और दिल का मतलब इन दोनों ज्ञानेन्द्रियों द्वारा हासिल की हुई जानकारियों को जमा करके किसी निष्कर्ष पर पहुँचना है। ये ही तीन चीज़ें मिलकर वह ज्ञान

बनता है, जिसकी योग्यता और क्षमता मनुष्य को दी गई है। जो लोग इन तीनों शक्तियों से कम काम लेते हैं, तो वे पिछड़े और पराधीन रहते हैं। उन्हें किसी का अधीनस्थ और आज्ञाकारी बनकर रहना पड़ता है। उनका काम पीछे चलना होता है, इनके विपरीत जो इन तीनों से ज़्यादा काम लेते हैं, वे ऊँचे और प्रभावी होते हैं, आज्ञा देनेवाले और शासक बनते हैं। नेतृत्व और पेशवाई ऐसे ही लोगों के हिस्से में आती है।

- जो गरोह विचार के मैदान में इमाम बनता है और सृष्टि की प्राकृतिक शक्तियों को अपने ज्ञान से वश में करके उनसे काम लेता है, उसकी इमामत (नेतृत्व) सिर्फ़ विचारों की दुनिया तक ही सीमित नहीं रहती, बल्कि ज़िन्दगी के हर मैदान पर छा जाती है। धरती पर उसका अधिकार होता है। रोज़ी की कुंजियाँ उसके क़ब्ज़े में होती हैं। शासक-प्रशासक के अधिकार उसे हासिल होते हैं। इसलिए इनसान की सामूहिक ज़िन्दगी का सारा कारोबार उस ढंग और उस नक़्शे पर चलने लगता है, जिसपर वह गरोह अपनी मानसिकता और अपने दृष्टिकोण के मुताबिक़ उसे चलाना चाहता है।

  अब यह स्पष्ट है कि अगर वह गरोह जिसको यह वर्चस्व दुनिया और इसके मामलों पर प्राप्त है, ख़ुदा से फिरा हुआ हो, तो उसके सत्ताधिकार में रहते हुए कोई ऐसा गरोह पनप नहीं सकता, जो ख़ुदा की तरफ़ पलटना चाहता हो।

- इमामत (नेतृत्व) की क्रान्ति के लिए शिक्षा-क्रान्ति अनिवार्य है।
- ईश्वर को न माननेवालों के नेतृत्व (इमामत) में रहकर ईश्वरवादी और ईश-भक्ति का पंथ जीवित नहीं रह सकता। इसलिए जो कोई इस पंथ पर आस्था और विश्वास रखता हो, उसकी विशुद्ध आस्था और ईमान की माँग यह है कि इस नेतृत्व को मिटाने और ईश्वरवादी नेतृत्व को दुनिया में क़ायम करने के लिए तैयार हो जाए।

- जो शिक्षा-व्यवस्था केवल पुराने सुने हुए ज्ञान की हद तक सीमित है, उसमें बिलकुल ही यह शक्ति नहीं कि नेतृत्व में इतनी बड़ी क्रान्ति उत्पन्न करने के लिए आपको तैयार कर सके।
- जो शिक्षा-प्रणाली सभी विषयों को इसी क्रम और इसी दृष्टिकोण से लेती है, जो ख़ुदा को नहीं माननेवाले-पहचाननेवाले सत्ताधिकारियों और प्रतिनिधियों का सिलसिला और उनका दृष्टिकोण है और जो इस सांस्कृतिक मशीन का कल-पुर्ज़ा बनने के लिए इनसानों को तैयार करता है, जो पथभ्रष्ट सत्ताधिकारियों और प्रतिनिधियों ने बनाई है, वह असूल में धर्मच्यूत होने का सिद्ध नुस्ख़ा है।
- शिक्षा-सुधार की यह रणनीति कि इस्लामी विषयों के साथ नए विषयों का जोड़ लगाया जाए। यह भी नेतृत्व और प्रतिनिधित्व (इमामत) में क्रान्ति पैदा करने के लिए आपको तैयार नहीं कर सकता; क्योंकि दर्शनशास्त्र, विज्ञान, इतिहास, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र और दूसरे विषय जो इस समय तक व्यवस्थित और संकलित रूप में आपको मिलते हैं, वे सबके सब नास्तिक लोगों की सोच और शोध के परिणाम हैं और उनको जमा करने और लिखने में इस गरोह का दृष्टिकोण इस तरह घुला-मिला हुआ है कि घटनाओं की हक़ीक़त को दृष्टिकोणों, अन्धविश्वासों, पूर्वाग्रहों, पक्षपातों और रुझानों और प्रवृत्तियों से अलग छाँट लेना और ख़ुदापरस्ती के दृष्टिकोण से ख़ुद जमा करके और लिख-लिखाकर दूसरे दृष्टिकोणों को क़ायम करना न तो हर छात्र के बस की बात है, न हर शिक्षक के बस की बात।

आदर्श शिक्षा-सिद्धान्त की विशेषताएँ

- धार्मिक और भौतिक विषयों की अपनी-अपनी अलग पहचान को मिटाकर दोनों को एक जान कर दिया जाए।

- विभिन्न विषयों को भौतिक और धार्मिक दो अलग-अलग क़िस्मों में बाँटना वास्तव में धर्म और दुनिया को अलग-अलग मानने की कल्पना पर आधारित है और यह सोच बुनियादी तौर पर ग़ैर-इस्लामी है। इस्लाम जिस चीज़ को दीन (धर्म) कहता है, वह दुनिया से अलग कोई चीज़ नहीं है, बल्कि दुनिया को इस दृष्टि से देखना कि यह अल्लाह की सल्तनत है और अपने आपको यह समझना कि हम अल्लाह की प्रजा हैं और दुनिया की ज़िन्दगी में हर तरह से वह रवैया अपनाना, जो अल्लाह की ख़ुशी और उसकी हिदायत के मुताबिक़ हो, इस चीज़ का नाम दीन है। धर्म की इस धारणा की माँग यह है कि सारे सांसारिक या भौतिक ज्ञान अल्लाह के आदेशों के अनुसार बना दिए जाएँ।
- शुरुआती मरहलों में तो कोई दूसरा दृष्टिकोण छात्रों के सामने आने ही नहीं देना चाहिए। हाँ, बाद के मरहलों में सारे विषय और ज्ञान के विभिन्न रूप उनके सामने इस तरह आने चाहिएँ कि ज्ञान का क्रम, हक़ीक़त (वस्तुस्थिति) की व्याख्या और स्पष्टीकरण और घटनाओं का वर्णन तो बिलकुल इस्लामी दृष्टिकोण से हो और इसके विरोधी सारे दृष्टिकोण भी पूरी समालोचना और विश्लेषण के साथ इस हैसियत से उनके सामने रख दिए जाएँ कि ये ईश-प्रकोपवालों के और भटके हुए लोगों के दृष्टिकोण हैं।
- हर छात्र को अपने ज्ञान का भंडार भरने और शिक्षा पूरी होने के बाद हर एक को 'मौलाना' और हर एक को सामूहिक मसलों में फ़तवा देने का अधिकारी ठहराने का वह तरीक़ा, जो अब तक चलन में है ख़त्म कर दिया जाए और उसकी जगह विशिष्ट शिक्षा (Specialized Education) का वह तरीक़ा अपनाया जाए, जो सालों साल के प्रयोगों और अनुभवों के बाद संसार में फ़ायदेमन्द पाया गया है। मनुष्य का ज्ञान अब इतना विकसित हो चुका है और इतने सारे

विभाग (संकाय) इसमें पैदा हो गए हैं कि किसी एक आदमी का इन सबको पढ़ना असम्भव है और अगर सभी विषयों में सिर्फ़ साधारण ज्ञान अर्जित करा दिया, तो वह किसी भी विषय के ज्ञान में पूर्ण नहीं हो सकता।

इसके बजाय बेहतर यह है कि पहले आठ या दस साल का कोर्स ऐसा रखा जाए कि एक बच्चे को दुनिया, इनसान और ज़िन्दगी के बारे में कम से कम जितनी जानकारियाँ प्राप्त होनी ज़रूरी हैं, वे उनको विशुद्ध इस्लामी दृष्टिकोण से दे दी जाएँ। —उसके दिमाग़ में कायनात की वह अवधारणा बैठ जाए, जो मुसलमान की अवधारणा होनी चाहिए। ज़िन्दगी का वह ख़ाका जम जाए, जो एक मुसलमान की ज़िन्दगी होनी चाहिए।

अमली ज़िन्दगी के बारे में वे सारी जानकारियाँ उसे हासिल हो जाएँ, जिनकी एक इनसान को ज़रूरत होती है और वह इन सब चीज़ों को एक मुसलमान के तरीक़े पर बरतने के लिए तैयार हो जाए। उसे अपनी मातृभाषा भी आ जाए।

अरबी भाषा भी वह इतनी जान ले कि आगे और अधिक अध्ययन में उसे मदद मिल सके और किसी एक यूरोपियन भाषा से भी अवगत हो जाए, ताकि ज्ञान के उस विशाल भंडार से लाभ उठा सके, जो उन भाषाओं में मौजूद है। इसके बाद विशिष्ट शिक्षा (Specialized Education) के अलग कोर्स हों, जिनमें छह या सात साल का शोधपूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त करके एक छात्र उस विषय का डॉक्टर क़रार दिया जाए, जिसकी शिक्षा उसने प्राप्त की है।

- इस नई प्रणाली में वह उद्देश्यहीन शिक्षा नहीं होगी, जो आजकल हमारे देश में दी जा रही है, बल्कि इसमें शिक्षा देनेवाले और शिक्षा पानेवाले दोनों के सामने जीवन का एक निश्चित और स्पष्ट उद्देश्य होना चाहिए और इसके लिए अन्तिम सीमा तक प्रयास और जी-तोड़

कोशिश करनी होगी यानी ईशपरायण नेतृत्व और प्रतिनिधित्व (इमामत) संसार में क़ायम करने के लिए इन सबको सर्वाधिक जी-तोड़ कोशिश करनी है।

यह उद्देश्य इस प्रणाली की हर चीज़ में इस तरह काम करे, जिस तरह आदमी के शरीर के हर रग, हर रेशे और हर हरकत में उसकी रूह काम करती है। छात्रों की निजी ज़िन्दगी, उनके आपसी मेल-मिलाप, उनके खेल-कूद और मनोरंजन, उनके पठन-पाठन, अध्ययन और शोध की सभी गतिविधियों में यही उद्देश्य काम कर रहा हो। इसी के मुताबिक़ उनके चरित्र और आचरण का निर्माण किया जाए। इसी पर उनके आचरण ढाले जाएँ और पूरा वातावरण ऐसा बनाया जाए कि हर इनसान को एक अल्लाह की राह के संघर्षशील राही में बदल दे।

समाप्त